अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Screening of Poultry Fecal Specimen for Salmonella spp. & Comparative Analysis of Antimicrobial Resistant Pattern (Dr. Dilip N. Zaveri,Anurag D. Zaveri, Avani A. Zaveri) 12

06. Vermicomposting : A Viable Option (Dr. Saroj Dubey) 19

07. Ethnic plants to cure stone disease of Shahdol District Central India (Dr. Radheshyam Napit) 24

08. Ethno-biological Studies of Traditional Knowledge of Medicine of Shahdol District Central India (Dr. Radheshyam Napit,Dr. P.D. Rawat) 28

09. Transmission of Groundnut (Arachis hypogaea L.) Mosaic Virus through vector (Dr. Madhu Mishra) 31

10. Legume Response To Fertilizer Nitrogen, Farm Yard Manure And *Rhizobium* Inoculation (Shobha Shrivastava) 33

11. Assessment Of Water Quality Of SirpurTalab, Indore (M.P.) (Malini Johnson,Dr. D.K Billore) 36

12. Thermodynamics (Dr. Neeraj Dubey) 38

13. Fixed Point In Fuzzy Metric Spaces (Dr. D. K. Sagar) 41

14. New Chemical Sensors In Environmental Analytical Chemistry (Dr. Rashmi Ahuja) 43

15. Effects Of Man-Made Diasters (Dr. Basanti Jain) 45

16. Noise Pollution Generated By Firecrackers (Dr. Sadhna Goyal) 46

17. ग्लोबल वार्मिंग - एक पर्यावरणीय समस्या (प्रो. एस.के. सिकरवार) 47

(Home Science / गृह विज्ञान)

18. Health Status Of Women In India :A Perspective Study (Dr. Manik Samvatsar Dange) 49

19. Expenditure Pattern Of Rural Households (Dr. Anju Bhatia, Aditi Vijay) 53

20. High Heels: The Biggest Culprit of Female Foot Pain (Dr. Smita Jain) 57

21. Principles of Organic Farming and its Effecton food and Health (Dr. Rashmi Verma) 59

22. कामकाजी एवं घरेलू महिलाओं में रक्ताल्पता का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. नमिता सक्सैना, डॉ. मंजू दुबे) 61

23. मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (ग्वालियर शहर के विशेष संदर्भ में) (अंर्जुमन बानो, कंचन दुबे, रश्मि पाण्डेय) 63

24. मानव शरीर भित्ति या एन्थ्रोपोमेट्री का महत्व एवं उपयोगिता (डॉ. रश्मि वर्मा) 65

25. बाल्यावस्था में सामाजिक संबंध (कृष्णा शर्मा) 68

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

26. Sugar Industry In India: State & Future Prospects (Archana Singhal) 70
27. Marketing Skill In Retail Banking And Insurance (Dr. Vandana K. Mishra) 73
28. Green Marketing Opportunity For Innovation (Dr. Rita Sachdev) 76
29. मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाऐं – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. प्रीति शाह) 79
30. भारत में कृषि संबंधी योजनाएं और कार्यक्रम (ऊॅंकार सिंह रावत) 81
31. पर्यटन उद्योग के विकास में शासन की भूमिका (डॉ. प्रवीण ओझा) 83
32. भारत में बाल श्रम शोषण के कारण एवं उन्मूलन के उपाय (लाजवंती सावदे) 86
33. भारत के आर्थिक विकास में उद्यमियों की भूमिका (डॉ. इफ्फत खान) 88
34. उद्यमिता विकास में विकासात्मक संस्थाओं की भूमिका – एक अध्ययन (डॉ. मनु श्रॉफ) 90

(Economics / अर्थशास्त्र)

35. Limited Liability Partnership; A Hope Of Revival In The Economy (Dr. N.S. Rao, Lalit Pipliwal) ... 92
36. खाद्यान्न, पर्यावरण और स्वास्थ्य – आर्गेनिक खेती द्वारा संभव (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 96
37. जनजातीय क्षेत्रों में आर्थिक समस्या का एक अध्ययन(मध्यप्रदेश के धार जिले के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. राजू बघेल) 99
38. मध्य प्रदेश में नगरीकरण –समस्यायें एवं समाधान (सुनील शर्मा) 102
39. मुरैना जिले के कृषि विकास में कृषि वित्त की भूमिका(डॉ. निशा मिश्रा) 107
40. प्राकृतिक आपदा – भूकंप (डॉ. सुनीता बाथरे) 110
41. वृद्धावस्था की समस्याओं के समाधान में – कानून की भूमिका (भारतीय समाज के संदर्भ में) (प्रो. सुजाता नाईक) 113
42. पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास (एक अध्ययन) (डॉ. प्रीति जोशी) 116
43. भूमण्डलीयकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (प्रो. एच. डुडवे) 118
44. भारत में बाल श्रम संशोधित अधिनियम – समीक्षात्मक अध्ययन (डॉ. शक्ति जैन) 120
45. पर्यावरण एक अनुशीलन (डॉ. टी. एम. खान) 122

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

46. निर्मल भारत अभियान में पंचायत राज संस्थाओं की भूमिका (मण्डला जिले के नैनपुर विकासखण्ड के संदर्भ में एक समीक्षात्मक अध्ययन) (डॉ. टी.पी. मिश्रा, रामसिंह धुर्वे) 123
47. बाल श्रम – एक अपराध कारण व निवारण के उपाय (महेश कुमार रचियता, संगीता रचियता) 127
48. लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की अवधारणा (डॉ. श्रीकांत दुबे) 130
49. संसद का मानसून सत्र और विपक्ष का हंगामा (डॉ. संदीप सिंह) 133

(Sociology / समाजशास्त्र)

50. Social Emotional Learning : A Key for Personality Development 135
(Prof. Akshata Amit kumar Gawade)

51. बसोर समाज की महिलाओं का आर्थिक - सामाजिक सर्वेक्षण(रतलाम नगर के सन्दर्भ में) (डॉ. राज श्री शाह) 137

52. ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धियो का अध्ययन (डॉ. दीपिका गुप्ता) ... 140

53. घरेलू हिंसा समस्या एवं समाधान (ऋचा एस. मेहता) 143

54. 'भगवान' श्रीकृष्ण और गीता की वर्तमान में प्रासंगिकता (डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव) 145

55. बच्चों के प्रति बढ़ते अपराध- एक सामाजिक चिंतन (म.प्र. के विशेष संदर्भ में) (डॉ. उषा सिंह, एच.पी. सिंह) 147

56. वर्तमान में मानवाधिकारों की व्यवहारिकता एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (डॉ. रश्मि दुबे) 149

57. आदिवासी स्त्रियों का सौंदर्यालंकार : गोदना : एक विश्लेषण (प्रो. विजया वधवा) 151

58. युवाओं में असंतोष (तनाव) (प्रिशिला अन्देय्स) 153

(History / इतिहास)

59. Religious Tourism In Madhya Pradesh (Dr. Madhumita Bhattacharya) 154

60. ग्वालियर -चम्बल संभाग के धार्मिक पर्यटन स्थल (डॉ. शुक्ला ओझा) 156

61. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडर का भारत के पुनर्निमाण में योगदान (डॉ. प्रकाश चन्द्र अलंसे) 159

62. दारा शिकोह का आध्यात्मिक जीवन और साहित्य साधना -एक अध्ययन (डॉ. पूर्णिमा शर्मा) 162

63. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में श्रमिक वर्ग की सहभागिता (डॉ. पद्मा सक्सेना) 164

64. 1893 का वर्ष एक परिवर्तन बिंदु (प्रो. बी. एल. डावर) 166

(Geography / भूगोल)

65. Geomorphology And Lineament Fabric Of Barwah Area, Madhya Pradesh, India - 167
Application Of Remotely Sensed Data (Rajendra Singh Raghuwanshi)

66. Sex Ratio Of Mandsaur District Madhya Pradesh (Dr. Akhtar Bano) 172

67. प्रतीक अध्ययन-ग्वालियर नगर के अन्तर्गत मांढरे की माता, कम्पू क्षेत्र में स्थित मलिन बस्ती का भौगोलिक अध्ययन 173
(कंचन दुबे, डॉ. अंजू गुप्ता)

68. भारत के चिकित्सा क्षेत्र में नारी योगदान (प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान काल तक) (सुकचैन सिंह धुर्वे) 179

69. वर्तमान परिपेक्ष्य में वृद्धजनो की स्थिति एवं समस्याएॅं (डॉ. एस. एस. बघेल, दीप्ति यादव) 182

(Psychology / मनोविज्ञान)

70. The Case Study Of A Gifted Child With Superior Intellectual Ability (Aged 4 Years 10 Months) ... 184
(Dr. Smita Jain)

71. पर्यावरणीय एवं शैक्षिक अभिवृत्तियों पर लिंग का प्रभाव (कमलेश उपाध्याय) 186

72. किशोरावस्था - समस्याएँ व समाधान (ज्योत्सना झारिया) 190

73. नैतिक मूल्यों के विकास का एक आयाम – नैतिक शिक्षा (सुधा शाक्य) 193
74. भारत में जनजाति समाज की प्रस्थिति (डॉ. ममता बर्मन) 195

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

75. 'कामायनी' छायावादी काव्यधारा का प्रतिनिधि काव्य (डॉ. साजिया खॉन) 197
76. वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्य परकता की आवश्यकता (डॉ सुनील शर्मा) 200
77. रघुवीर सहाय का काव्य – संसार (डॉ. सरोज जैन) 202
78. पर्यावरण – चुनौतियां एवं समाधान (डॉ. गुलाब सोलंकी, प्रो. वीणा बरड़े) 204
79. हिंदी आत्मकथा का जीवनी, संस्मरण और उपन्यास से तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. अमित शुक्ल) 206
80. जयशंकर प्रसाद की कहानियों की विवेचना (डॉ. रेणु अग्रवाल) 208
81. रीतिकाल – पौरुष का महापर्व (डॉ. सुभाष शर्मा, जयप्रकाश शर्मा) 210
82. बुंदेली लोक कवि 'ईसुरी' के काव्य में फागो के रंग (डॉ. अर्चना देवी अहलावत) 212
83. पुन: मूषको भव – त्रिपदी – आशापूर्णा देवी (डॉ. संध्या खरे) 213
84. समाचार पत्रों में हिन्दी विज्ञापनों की भूमिका (डॉ. संध्या टिकेकर) 215

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

85. The Experience of Reality (Dr. Vandana Bakshi) 217
86. Karnads wedding album: Blend of cultural stereotypes and modernity (Aparna Ray) 221
87. The Study Of Poetry (Dr. Rashmi Nagwanshi) 224

(Sanskrit / संस्कृत)

88. स्वस्थ्य शरीर के लिये योग (डॉ. भावना श्रीवास्तव) 226

(Philosophy / दर्शनशास्त्र)

89. नैतिक मूल्यों की स्थापना में संत कबीर का योगदान (डॉ. पुष्पा कपूर) 228

(Education / शिक्षा)

90. दृष्टि बाधित शिक्षा संस्था का व्यक्ति इकाई अध्ययन (डॉ. रमा त्यागी, इम्तियाज मंसूरी) 229
91. डी.एड. छात्राध्यापकों में गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ स्पष्ट करना 232
(डॉ. महेश कुमार तिवारी, प्रमोद कुमार सेठिया)
92. नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों के दृष्टिकोण का अध्ययन (खेमचन्द) 235
93. इक्कीसवीं सदी में महिला सशक्तिकरण (डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव) 237
94. ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक विद्यालयों में संसाधन संबंधित सुविधाओं का अध्ययन 240
(मन्दसौर जिले के संदर्भ में) (जयदीप महार, योगिता सोमानी)

95. ए.एल.एम. के क्रियान्वयन में आने वाली शिक्षकों की व्यवहारिक कठिनाइयों का अध्ययन 242
(बालेन्द्र श्रीवास्तव, डॉ. एम.के. तिवारी)

96. उच्च शिक्षा में नैतिक शिक्षा की आवश्यकताएँ (डॉ. ऋतु पोरवाल) 245

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

97. Comparative Analysis Of Physical, Physiological And Psychological Variables Among Government, Government Aided And Private School Students In Uttar Pradesh (Dr. Ramneek Jain, Nikhil Kumar Rastogi) 247

(Others / अन्य)

98. विकास का सुख पर्यावरण (डॉ. पी. पी. पाण्डेय) 252

99. Assesment Of Awerness About Pattern Making Software In Micro, Small And Medium Scale Apparel Manufacturing Units In Indore Region (Dr. Sonal Bhati) 253

100. सरकारों का मूल्यांकन- क्या हों आधार (डॉ. आदित्य कुमार सिंह) 256

101. Psychological Bullying, An Age Group, Upbringing and Societal Study (Dr. Sarita Mathur) 258

102. Studies on the Flowering Phenology of *Indigoferalinifolia* (L.f.) Retz at Sanganer Aerodrome Site of Jaipur District of Rajasthan (Ashok Nagar, Ashwani Kumar Verma, Laxmi Meena) 261

103. एक तत्व की ही प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन (डॉ. हजारी लाल मौर्य) 263

104. मालतीमाधव में प्रणय-चित्रण (डॉ. कौशल्या शर्मा) 266

105. Constraints in Adoption of the Improved Cultivation Practices of Mungbean Crop in Pisagan Panchayat Samiti Blcok of Ajmer District (Dr. Govind Prakash Acharya) 268

106. MONGODB : Role in Bigdata (Rajesh Soni) 270

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका

(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम

(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया

(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल

(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत

(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत

(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत

(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत

(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत

(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत

(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी .... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत

(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत

(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत

(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम............ प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत

(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत

(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी........... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे............ विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत

(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत

(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................. प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित .... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव..........प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय........प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे....................संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

*** विज्ञान संकाय ***

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

*** वाणिज्य संकाय ***

वाणिज्य :- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

*** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ***

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

*** विधि संकाय ***

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

*** कला संकाय ***

अर्थशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन ,** शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(4) **प्रो. डॉ. उमा लवानिया ,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... (1) **प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) **प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. कला जोशी,** श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:-......................... (1) **प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:-....................... (1) **प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... (1) **प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... (1) **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव,** महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर,** राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... (1) **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मधु गोयल,** स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. संध्या वर्मा,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:-................. (1) **प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. आभा तिवारी,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... (1) **प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) **प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर,** प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव,** बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... (1) **डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ....ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ....शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ....शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ....शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ....कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ....जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ....शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ....शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ....शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ....शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ....शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ....शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ....शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ....शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ....शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ....शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ....स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ....शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ....शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ....शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ....पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ....अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ....शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ....शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ....सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ....शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ....शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ....शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ....महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ....श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ....शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ....शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ....शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ....शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ....शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ....शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ....सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ....शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे.................................शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ....शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल.............................शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल...............................शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ....शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ....शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा..................................शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ....शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ....शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ....शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल...................................शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल..................................शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ....शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा.................................शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ....शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ....शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ....शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ....शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ....शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ....पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ....शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ....शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित................................छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ....एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ....सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ....शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल.............................शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ....शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन............................वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ....राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ....एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा..............................पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया...............................हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ....केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल...............................शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Screening of Poultry Fecal Specimen for Salmonella spp. & Comparative Analysis of Antimicrobial Resistant Pattern

Dr. Dilip N. Zaveri * Anurag D. Zaveri ** Avani A. Zaveri * Hemin Patel ******

Abstract - Human Salmonellosis is a major public health problem though mortality rate is low; the disease has important social and economic consequences. Salmonellosis is a zoonotic disorder with complex epidemiological cycle and infection is most commonly food borne. *Salmonellosis* is recognized as a major cause of food-borne illnesses in many countries that are closely associated with the consumption of contaminated poultry meat, eggs and eggs products. The use of poultry manure and excreta which are positive for *Salmonella species* lead to contamination of environments such as water, soil and agriculture and it is strongly recommended that the manure should be processed before used.

Lack or absence of data on the prevalence of *Salmonella species* among poultry farms might increase the incidence rate of disease. Data generated from this study would help in reducing the incidence of *Salmonella* associated diseases in Ahmedabad and also in India and reduce the health expenses. It would also provide idea about pattern of species variation and the antibiotic resistance of *Salmonella* isolates from poultry and for the Salmonellosis treatment in poultry. Antibiotic resistance pattern would help in reduction of cost of antibiotic treatment used to cure the disease.

The main objective of this study was to investigate the occurrence of *Salmonella species* in two different poultry farms of Ahmedabad. The following specific objectives were derived to be accomplished at the end of the study:

1. Screening of different poultry fecal specimens for *Salmonella species*
2. Comparative analysis of antimicrobial resistance pattern of *Salmonella species*

Introduction - Poultry food plays an important role in human diet. However consuming poultry meat, eggs and egg products have been associated with the rise of negative health impact on human health as they are improperly handled can be a source of food-borne diseases, such as salmonellosis [OIE Terrestrial Manual, May 2010, L. PlymForshell& M. Wierup].Salmonellosis is one of the most common and widely distributed food-borne disease.It constitutes to be a major public health burden and represents a significant cost in many countries. Millions of human cases are reported world-wide every year and the disease results in thousands of deaths.*Salmonella* is one of the most prevalent food-borne pathogens in the United States (U.S.), and it is estimated that 1.4 million infections and 31% deaths occur annually due to the consumption of foods contaminated with *Salmonella*.It is estimated that, in the U.S., *Salmonella* transmission through contaminated poultry meat, eggs or egg products results in 700,000 cases of salmonellosis and costs $1.1 billion annually.In India annual incidence of salmonellosis about 495 per 100,000 persons and cost ¹ 19.04 billion annually.[OIE Terrestrial Manual, May 2010, L. PlymForshell& M. Wierup, Mead Paul S. et al., 1999, Voetsch Andrew C, et al., 2004,Piperacillin and Tazobactam for Injection. DBL- Data Sheet – New Zealand, Chopra Ian, Roberts Marilyn, June 2001, Bhutta Z et al., 2007, Disease Burden and Implications for Control Typhoid Fever in Five Asian Countries, 2010,Ochiai R Leon, 2008,Ananthanarayan, Panikar. Text book of Microbiology.Seventh Edition. 290-305]. There were a total of 120 reported outbreaks of Avian Salmonellosis in the India from 2007-2012, which resulted in 275242 attacks and 16722 deaths.The prevalence rate of avian Salmonellosis in India is 6.07 % [Annual Report Department Of Animal Husbandry, Dairying & Fisheries, 2009-10, 2010-11, 2011-12, Philippe Velgea et al.].

There were a total of 06 reported outbreaks of Avian Salmonellosis in the Gujarat from 2009-2012, which resulted in 3927 attacks and 707 deaths. The prevalence rate of avian Salmonellosis in Gujarat is 18.00 % [Animal Disease Surveillance Report 2009-10, Animal Disease Surveillance Report 2010-11.Directorate of Animal Husbandry, Gujarat State, Ananthanarayan, Panikar. Text book of Microbiology.Seventh Edition.290-305].

The genus *Salmonella* is divided into two species, *Salmonella enterica*, which consists of six subspecies, and *Salmonella bongori,* currently the genus includes a total of 2,500 serotypes.*Salmonellaenterica subspecies enterica* (subspecies I) is responsible for 99.5 % of infection in man and animal.Most of the infections are zoonotic in origin but some serotypes like *Salmonella typhimurium* and *Salmonella paratyphi*infect only humans [Jain Sudeep, 2006., Jean

* Director, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
*** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA
**** Research Assistant, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat) INDIA

Guard-Petter, 2001., Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World Health Organization, 2002].

A wide range of foods have been implicated in food-borne illness attributable to *Salmonella enterica.* Foods of animal origin, especially poultry, poultry products and raw eggs, are often implicated in sporadic cases and outbreaks of human salmonellosis. Recent years have seen increases in salmonellosisassociated with contaminated poultry products, fruits and vegetables. Other sources of exposure include water, handling of farm animals and pets, and human person-to-person when hand-mouth contact occurs without proper washing of hands [Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World Health Organization, 2002].

Human illness by *Salmonella spp.*has increased world-wide in the last two decades, due to ingestion of contaminated poultry meat, eggs and egg products and it is currently considered the primary cause of salmonellosis in the world.In addition, the presence of *Salmonella*in poultry constitutes a public health hazard, and poses a considerable economic impact on the poultry and egg industries[Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World Health Organization, 2002].

In many countries, *Salmonellaspp*. is controlled in egg production chain. Egg-laying flocks are monitored for *Salmonella spp.,* and any flock confirmed with *Salmonella enteritidis* or *Salmonella typhimurium* is slaughtered and properly destroyed. In addition, both feed materials and compound feeding stuffs for poultry are tested for *Salmonella* in somecountries [Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World Health Organization, 2002].

It is also observed that the use of antibiotics have increased in poultry industries to control *Salmonella* infection, however the administration of antimicrobial agents in poultry creates selection pressure that favors the survival of antibiotic resistant pathogens. Multidrug-resistant phenotypes have been in-creasingly described among *Salmonella* species worldwide. Occurrence of antimicrobial resistant *Salmonella* in poultry and foods of ani-mal origin has been reported from India. Most other reports of antibiotic resistance among *Sal-monella* in India are from clinical isolates [HoszowskiAndrzej, WasylDariusz,2002.,Harsha HT, 2011].

Methodology -

Culture media - All required media, reagents and stains were acquired from Hi-media Laboratories, Mumbai, India.

Apparatus and Equipment - All calibrated equipment, glass & plastic wares along with electronic gazettes were provided by Biocare Research (I) Pvt. Ltd.

Sample collection and transport - Total 50 Poultry fecal samples were collected from two major poultry farms (15 samples from Idgah, Ahmedabad and remaining 35 samples from Intensive Poultry Development Project, Makarba) of Ahmedabad, Gujarat, India. Fecal sample collected from three different poultry types Aseel, Broiler and Turkey. Fresh poultry feces were collected from different poultry houses from respected areas. Samples were collected into sterile container and placed into a sterile plastic bag [Orji Mike et al., 2005]. Samples were then placed into sterile plastic container in ice box and transported to analyzing laboratory within 2 hours of collection [Orji Mike et al., 2005].

Sample Processing - 1 gram of poultry fecal sample wasmixed with 3 ml of Normal saline and homogenized as much as possible by manual mixing.Then 1 ml of the homogenized sample was added to freshly made buffered peptone water to make a 1:10 sample :buffer ratio. To disperse the sample, samples were shaken or stirred in the buffer. Samples were incubated for 24 h at 37ÚC.[OIE Terrestrial Manual, May 2010, Henderson S et al., 1999,Voogt N et al., 2001,Skov M. N. et al., 1999,RamyaPutturu, 2012, Ali Akbar, Anal Anil Kumar., 2013].

Selective Isolation of *Salmonella spp.* - One tenth ml from the homogenized mixture specified was transferred to 10 ml Rappaport-Vassiliadis*Salmonella* Enrichment (RVS) broth and incubated it for 24h at 42ÚC.

· RVS broth was observed after incubation, if growth observed then loopful of sample was streakedon to the MacConkey agar,*Salmonella Shigella* agar, Xylose lysine Deoxycholate agar and Brilliant Green agar. Plates were then incubatedat 37ÚC for 24-48 hours.Plates were examined for the presence of colonies that may resemble *Salmonella*. [OIE Terrestrial Manual, 2010, Henderson S et al., 1999,Voogt N et al., 2001,Skov M. N. et al., 1999, Ramya Putturu, 2012, Ali Akbar, Anal Anil Kumar., 2013].

Identification of *Salmonella spp.* - Identification of Salmonella spp. was carried out using manual (using colony characteristics (Figure 1,2,3), Gram's Staining, Motility test as well as biochemical methods (Oxidase Test, Sugar Utilization Test, Phenylalanine Deamination Test, Indole Test, Methyl Red Test, VogesProskauer Test, Simmons' Citrate Utilization Test, Gelatin Utilization Test, 7.5% NaCl Test, Lysine Decarboxylase Test and Urea Hydrolysis Test) (Figure 4 to 9) along with automated identification method (MINI API BioMérieux®) (Figure-10)

Colony characteristics - *Salmonella spp.* colonies appeared transparent red colonies with black centers owing to H_2S production on XLD, Colorless colonies with or without black Centers owing to H_2S production *Salmonella Shigella* agar, Low, convex, pale red, translucent colonies of 1–3 mm in diameter on Brilliant Green agar as shown in Figure-1,2,3.

Method employed for Comparative analysis of antimicrobial resistance pattern - Antibiogram of the poultry faecal sample *Salmonella* isolates were tested for antimicrobial resistance pattern using Kirby-Bauer method according to Clinical Laboratory Standard Institute (CLSI) Guidelines. All antibiotics used were according to table 1.

Inoculum preparation: 0.5 McFarland standard turbid suspension was prepared using well isolated colonies.

- Kirby-Bauer disk diffusion method was followed to test anti-microbial resistance

Automatic Identification system for Gram-negative rods:

1. **MINI API BioMérieux® -** [Catalogue number: REF 32 100 MINI API BioMérieux®: ID 32 GN TESTS KIT]

Procedure: Suspension from well isolated colonies was prepared in 0.85% NaCl medium, density of which was measured at 0.5 McFarland using densitometer. 200 µl of such suspension was added in all the wells of the strip and the same was read after incubation period mentioned in the manufacturer's instruction booklet (29ÚC ± 2ÚC for 24 hours (±2 hours) in our case).

Reading and Interpretation - Reading and interpretation was performed by ATB™ or mini API® automated instrument using the database V3.1.

***Salmonella* Positive Fecal Sample -** Out of 50 (Fifty) poultry faecal sample only 7 (Seven) strain of *Salmonella* was isolated. From Idgah, Ahmedabad there were 2 samples were *Salmonella* positive and 5 in IPDP, Makarba, Ahmedabad.

Results - From total 50 samples, 08 samples were collected from Aseels in which 01 (12.50 %) sample was *Salmonella* positive, 25 samples were collected from Broilers in which 03 (12.00 %) samples were *Salmonella* positive, whereas 17 samples were collected from Turkeys in which 03 (17.64 %) samples were *Salmonella* positive (Table-2). Out of 50 samples 07 samples were *Salmonella* positive whereas 43 samples were *Salmonella* Negative (Table-3)

There were 15 samples collected from Idgah, Ahmedabad in which 02 (13.33 %) samples were *Salmonella* Positive and from IPDP, Makarba, Ahmedabad 35 samples were collected in which 05 (14.28 %) samples were *Salmonella* Positive (Table-4) out of which 1 *Salmonella spp* isolated from Idgah and 02 from IPDP, Makarba. 0 *Salmonella typhimurium* isolated from Idgah and 02 from IPDP, Makarba. 01 *Salmonella pullorum* isolated from Idgah and 01 from IPDP, Makarba (Table-5). *Salmonella spp.* isolated from Broiler (28.57 %) and Turkey (14.28 %). *Salmonella typhimurium* isolated from Broiler (14.28 %) and Turkey (14.28 %). *Salmonella pullorum* from Aseel (14.28 %) and Turkey (14.28 %) (Table-6).

Discussion -

Screening - In our present study, it was found that out of 50 poultry faecal samples 07 (14.00%) poultry faecal sample were positive for *Salmonella.* There were 28.57 % isolates of *Salmonella pullorum* from poultry [Disease Burden and Implications for Control Typhoid Fever in Five Asian Countries, 2010]. In this study there were 03 (12 %) of the 25 flocks faecal samples were found to be *Salmonella* positive from broiler flocks. In our study prevalence of *Salmonella spp*. in Turkey flocks was 17.65 %.In present study there were 28.57 % isolates of *Salmonella pullorum*.

Comparative analysis of Antibiotic Resistance pattern of *Salmonella* isolates - In this study a total of 07 isolates were obtained on them we tested 12 different antibiotics by disc diffusion method to find out resistance pattern. All 07 strains were resistant to more than two drugs commonly used as prophylaxis. The all 07 (100 %) isolates from poultry faecal samples were resistant to mainly three groups of antibiotics Co-trimoxazole, Chloramphenicol and Tetracycline. All isolates were resistant to Co-trimoxazole and Chloramphenicol. Amikacin was also 100 % effective against all poultry flocks isolates. All isolates were resistant towards tetracycline and chloramphenicol, Co-trimaxazole.In Broiler 14.28 % *Salmonella typhimurium* isolates were resistant to antibiotics. In Turkey 14.28 % *Salmonella typhimurium*isolates were resistant to antibiotics. 100 % isolates were resistant to 3 major antibiotics Co-trimoxazole, chloramphenicol and tetracycline (Table-7).

Acknowledgements - We are extremely thankful to IPDP and Idgah for providing samples and Biocare Research (I) Pvt. Ltd. for providing excellent infrastructure, manpower and environment to perform this research.

References :-

1. OIE Terrestrial Manual. (May 2010). Chapter 2. 9. 9. Salmonellosis.1-18.
2. Henderson S. et al.,(July 1999).Early Events in the Pathogenesis of Avian Salmonellosis. Infection and Immunity, 0019-9567/99, p. 3580–3586 Vol. 67, No. 7.
3. Animal Disease Surveillance Report 2009-10.Directorate of Animal Husbandry, Gujarat State. Deputy Director (Epidemiology).Animal disease Surveillance Scheme.1-25.
4. Annual Report 2011-12. Department Of Animal Husbandry, Dairying & Fisheries. Ministry Of Agriculture. Government of India, New Delhi. 99.
5. Voogt N., Raes M., Wannet W.J.B., Henken A.M., Van de Giessen A.W.(2001). Comparison of selective enrichment media for the detection of *Salmonella* in poultry faeces. Letters in Applied Microbiology.32.89-92.
6. HoszowskiAndrzej, WasylDariusz. (2002). *Salmonella* serovars found in animaland feeding stuffs in 2001 and their antimicrobial resistance. Bull. Vet. Inst. Pulawy.46.165-178.
7. Skov M.N., Carstensen B., Tornoe N., Madsen M. (1999). Evaluation of sampling methods for the detection of *Salmonella* in broiler flocks. Journal of Applied Microbiology.86.695-700.
8. Jain Sudeep. (2006). Antibiotic resistance and cell surface components of *Salmonella.* Gujarat Agricultural University.1-153.
9. Harsha HT, Reshmi R, Rinoy Varghese, Divya PS, MujeebRahiman KM, (2011) Mohamed Hatha. Prevalence and antibiotic resistance of *Salmonella* from the eggs of commercial samples. Journal of Microbiology and Infectious Diseases. 1:3.93-100.
10. RamyaPutturu, MadhavaraoThirtham, RaoLakkineni Venkateswara. (2012). Study on the incidence of *Salmonella enteritidis* in poultry and meat samples by cultural and PCR methods. Veterinary world.5:9.541-545.
11. Ali Akbar, Anal Anil Kumar. (2013) Prevalence and antibiogram study of *Salmonella* and Staphylococcus aureus in poultry meat. Asian Pacific Journal of Tropical Biomedicine. 3:2 163-168.

12. Orji Mike Uche, OnuigboHenry C., MbataTheodore I. (2005). International Journal of Infectious Diseases. 9:86—89.
13. Annual Report 2009-10. Department Of Animal Husbandry, Dairying & Fisheries. Ministry Of Agriculture. Government of India, New Delhi.
14. Annual Report 2010-11. Department Of Animal Husbandry, Dairying & Fisheries. Ministry Of Agriculture. Government of India, New Delhi.
15. Mead Paul S., Slutsker Laurence , Dietz Vance, McCaig, Bresee Joseph S., Shapiro Craig, Griffin Patricia M., Tauxe Robert V. (Sept-Oct 1999)Food-Related Illness and Death in the United States Emerging Infectious Diseases.5: 5,607-625.
16. Voetsch Andrew C., Gilder Thomas J. Van, Angulo Frederick J., Farley Monica M., Sue Shallow, Marcus Ruthanne, Cieslak Paul R., Deneen Valerie C., Tauxe Robert V.(2004) Food Net Estimate of the Burden of Illness Caused by Nontyphoidal*Salmonella* Infections in the United States. Estimate of *Salmonella* Incidence.CID.38:(supply 3).S127-S134.
17. Jean Guard-Petter. (2001). Thechicken, the egg and *Salmonella enteritidis*. Environmental Microbiology.3:7,421-430.
18. Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World HealthOrganization. (2002)- Risk assessments of *Salmonella* in eggs and broilerchickens.
19. Food and Agriculture Organization of the United Nations/ World Health Organization. (2002)- Risk assessments of *Salmonella* in eggs and broiler chickens.
20. Philippe Velgea, Axel Cloeckaert, Paul Barrow. Emergence of Salmonella epidemics:
The problems related to Salmonella enterica serotype Enteritidis and multiple antibiotic resistance in other major serotypes.
21. PiperacillinandTazobactamfor Injection. DBL- Data Sheet – New Zealand.
22. Chopra Ian, Roberts Marilyn. (June 2001). Tetracycline Antibiotics: Mode of Action, Applications, Molecular Biology, and Epidemiology of Bacterial Resistance. Microbiology and Molecular Biology Reviews.65:2. 232–260.
23. Disease Burden and Implications for Control Typhoid Fever in Five Asian Countries: (12 Aug 2010).
24. Ochiai R Leon. (2008). A study of typhoid fever in five Asian countries: disease burden and implications for controls. 86.260–268.
25. Catalogue number: REF 32 100. Automatic Identification system for Gram-negative rods: MINI API BioMérieux®: ID 32 GN TESTS KIT. Invitro Diagnostics Medical Device-079921-ÕL-2006/04.
26. Animal Disease Surveillance Report 2010-11.Directorate of Animal Husbandry, Gujarat State. Deputy Director (Epidemiology).Animal disease Surveillance Scheme.1-28.

Figure 1 Salmonella on XLD agar media

Figure 2 Salmonella on BGA agar

Figure 3 Salmonella on SS agar

Figure 4 Simmon's Citrate Test

Figure 5 Vogus Prausker's Test

Figure 6 Methyl Red Test

Figure 7 Triple Sugar Iron Agar Test

Figure 8 Gelatin Utilization Test

Figure 9 Mobility Agar

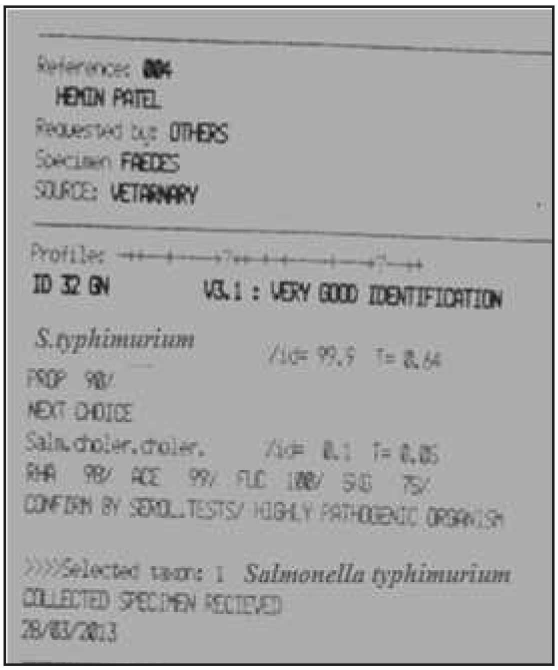

Reference: 004
HEMIN PATEL
Requested by: OTHERS
Specimen FAECES
SOURCE: VETARNARY

Profile: ++-+---+---?++-+-+---+---+?-++
ID 32 GN   V3.1 : VERY GOOD IDENTIFICATION
S.typhimurium   %id= 99.9 T= 0.64
PROP 98%
NEXT CHOICE
Salm.choler.choler.   %id= 0.1 T= 0.05
RHA 98% ACE 99% FUC 100% SAG 75%
CONFIRM BY SEROL.TESTS/ HIGHLY PATHOGENIC ORGANISM

>>>Selected taxon: 1 Salmonella typhimurium
COLLECTED SPECIMEN RECIEVED
28/03/2013

Figure 10 MINI API BioMérieux®: ID 32 GN STRIP Machine Print out Result

Tables - 1 Antibiotics used for antimicrobial resistance pattern

Name of antibiotics	Symbol	Strength
Ampicillin/Sulbactam	AS	020 mcg
Co-trimoxazole	BA	025 mcg
Cefotaxime	CF	030 mcg
Piperacillin	PC	100 mcg
Chloramphenicol	CH	030 mcg
Ciprofloxacin	RC	005 mcg
Ceftizoxime	CI	030 mcg
Tetracyclin	TE	030 mcg
Ofloxacin	ZN	005 mcg
Gentamicin	GM	010 mcg
Amikacin	AK	030 mcg
Levofloxacin	LF	030 mcg

Tables - 2 : Percentage of poultry type wise *Salmonella* positive samples.

S. No.	Poultry Type	No of Collected Sample	No of Salmonella Positive Samples	Percentage
1.	Aseel	08	01	12.50 %
2.	Broiler	25	03	12.00 %
3.	Turkey	17	03	17.64 %

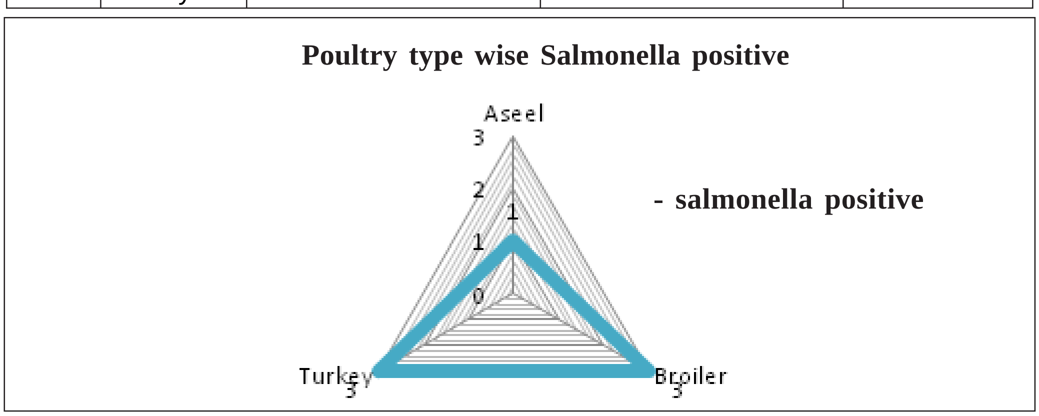

Table 3: Percentage wise distribution of *Salmonella* Positive and Negative Samples:

Total number of Samples	*Salmonella* PositiveSamples	*Salmonella* Negative Samples
50	07 (14.00 %)	43 (86.00%)

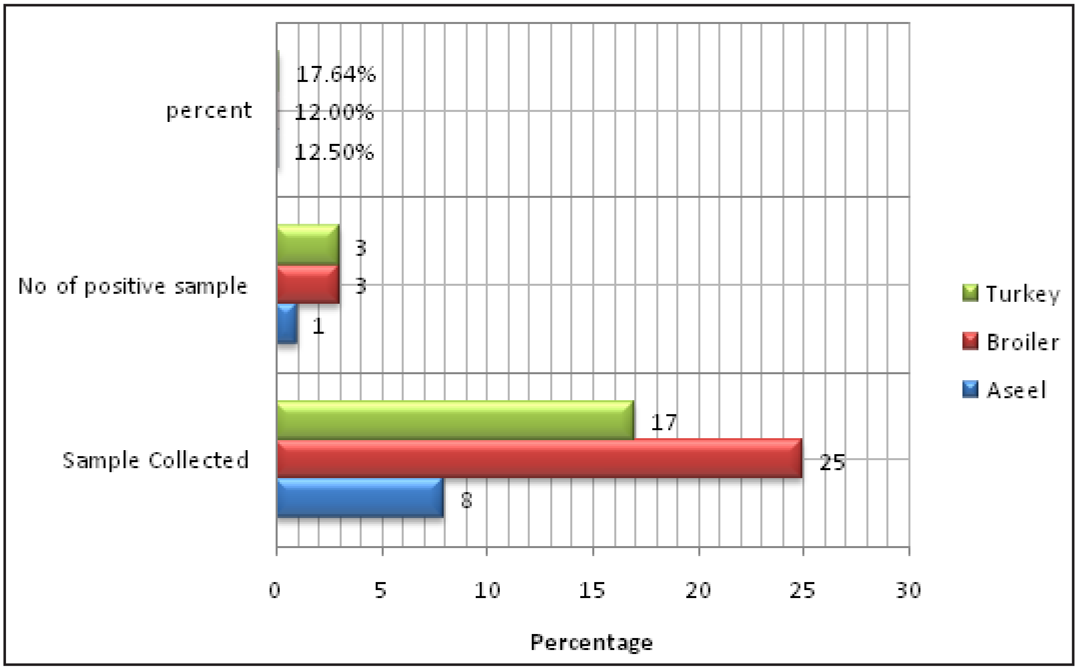

Table 4: Place wise distribution of *Salmonella* isolates

TOTAL SAMPLE	Idgah, Ahmedabad	IPDP, Makarba, Ahmedabad
50	02 (13.33%)	05 (14.28%)

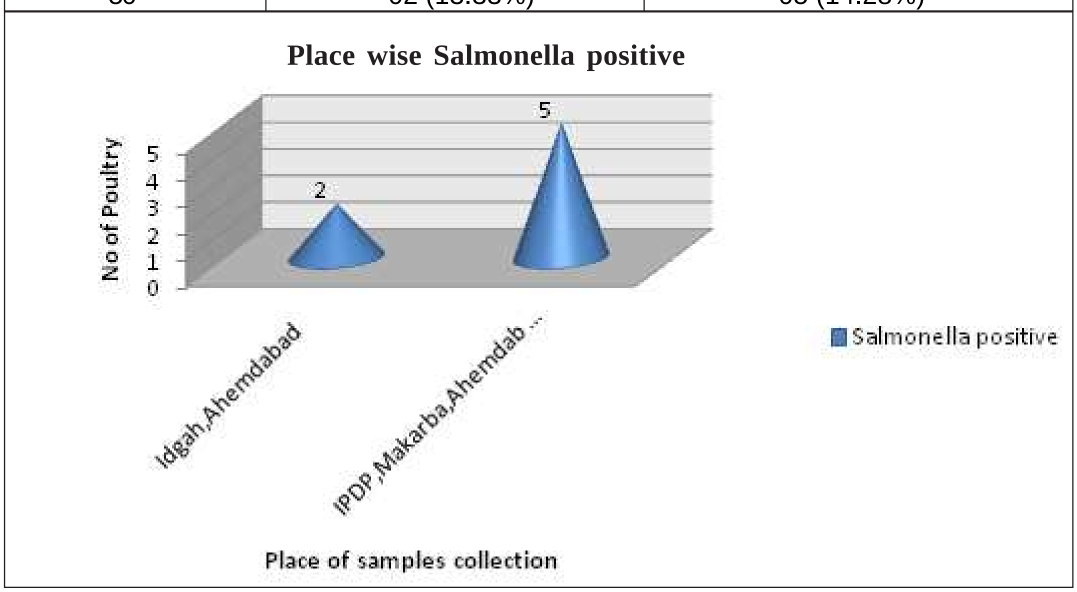

Table 5: Place wise distribution of different types of *Salmonella spp.*

S.No.	Place	*Salmonella spp*	*Salmonella typhimurium*	*Salmonella pullorum*
1.	Idgah	01	00	01
2.	IPDP, Makarba	02	02	01

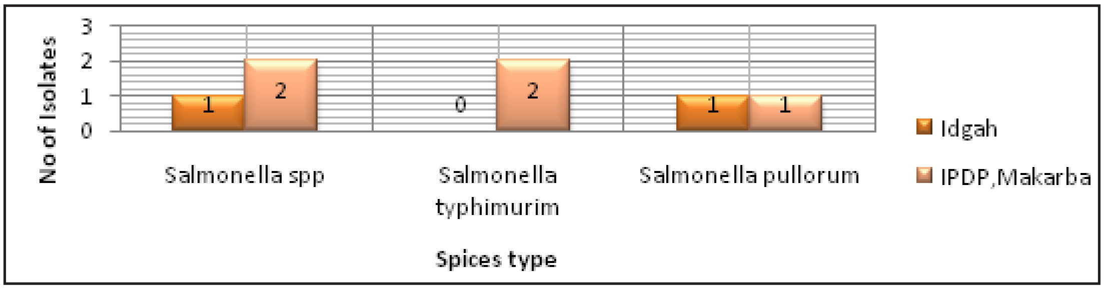

Table 6: Poultry type wise distribution of different types of *Salmonella spp*

S.No.	Poultry Type	*Salmonella spp*	*Salmonella typhimurium*	*Salmonella pullorum*
1.	Aseel	00	00	01
2.	Broiler	02	01	00
3.	Turkey	01	01	01

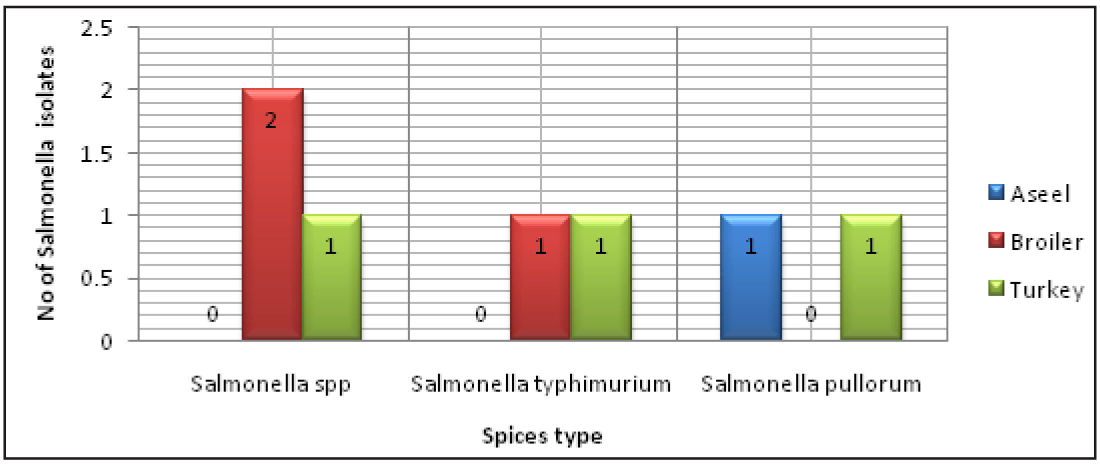

Table - 7: Resistance pattern for isolated Salmonella spp. of organism.

Name of antibiotics	Symbol	Sample Number						
		I 09	**I 12**	**M 04**	**M 17**	**M 22**	**M 23**	**M 32**
Ampicillin/Sulbactam	AS	S	S	S	S	S	S	S
Co-trimoxazole	BA	R	R	R	R	R	R	R
Cefotaxime	CF	S	S	S	S	S	S	S
Piperacillin	PC	S	S	S	S	S	S	S
Chloramphenicol	CH	R	R	R	R	R	R	R
Ciprofloxacin	RC	S	S	S	S	S	S	S
Ceftizoxime	CI	S	S	S	S	S	S	S
Tetracyclin	TE	R	R	R	R	R	R	R
Ofloxacin	ZN	S	S	S	S	S	S	S
Gentamicin	GM	S	S	S	S	S	S	S
Amikacin	AK	S	S	S	S	S	S	S
Levofloxacin	LF	S	S	S	S	S	S	S

****

Vermicomposting : A Viable Option

Dr. Saroj Dubey *

Introduction - Vermicomposting is a simple biotechnological process of composting, in which certain species of earthworms are used to enhance the process of waste conversion and produce a better end product. Vermicomposting differs from composting in several ways.It is a mesophilic process, utilizing microorganisms and earthworms that are active at 10–32°C. The process is faster than composting; because the material passes through the earthworm gut, a significant but not yet fully understood transformation takes place, whereby the resulting earthworm castings are rich in microbial activity and plant growth regulators, and fortified with pest repellence attributes as well. Vermicast, also called worm castings, worm humus or worm manure, is the end-product of the breakdown of organic matter by an earthworm These castings have been shown to contain reduced levels of contaminants and a higher saturation of nutrients than do organic materials before vermicomposting.

Importance of Vermicompost - Source of plant nutrients. Earthworms consume various organic wastes and reduce the volume by 40–60%. Each earthworm weighs about 0.5 to 0.6 g, eats waste equivalent to its body weight & produces cast equivalent to about 50% of the waste it consumes in a day. These worm castings have been analyzed for chemical and biological properties. The moisture content of castings ranges between 32 and 66% and the pH is around 7.0. Vermicompost provides all nutrients in readily available form and also enhances uptake of nutrients by plants. The worm castings contain higher percentage (nearly twofold) of both macro & micronutrients than the garden compost (Table 1).

Table 1. Nutrient composition of Vermicompost and garden compost.

Nutrient element	Vermicompost (%)	Garden compost (%)
Organic carbon	9.8–13.4	12.2
Nitrogen	0.51–1.61	0.8
Phosphorus	0.19–1.02	0.35
Potassium	0.15–0.73	0.48
Calcium	1.18–7.61	2.27
Magnesium	0.093–0.568	0.57
Sodium	0.058–0.158	<0.01
Zinc	0.0042–0.110	0.0012
Copper	0.0026–0.0048	0.0017
Iron	0.2050–1.3313	1.1690
Manganese	0.0105–0.2038	0.0414

Plant growth promoting activity. Growth promoting activity of vermicompost was tested and it indicated that plant growth promoting hormones are present in vermicompost (Table 2).

Table 2. Plumule length of maize seedlings.

Treatment	Initial length (cm)	Final length (cm)
Tank water	16.5	16.6
Vermicompost water	17.6	18.6

Improved crop growth and yield - Vermicompost plays a major role in improving growth and yield of different field crops, vegetables, flower and fruit crops. The application of vermicompost gave higher germination (93%) of mung bean compared to the control (84%). The application of vermicompost along with fertilizer N gave higher dry matter (16.2 g plant-1) and grain yield (3.6 t ha-1) of wheat and higher dry matter yield (0.66 g plant-1) of the following coriander crop in sequential cropping system. Similarly, a positive response was obtained with the application of vermicompost to other field crops such as sorghum and sunflower.

Reduction in soil C:N ratio - Vermicomposting converts household waste into compost within 30 days, reduces the C:N ratio andretains more N than the traditional methods of preparing composts. The resultssuggest that for use of vermicomposted dry olive cake as an organic soil amendment, the managementof vermicomposting process should be so adjusted as to ensure more favourable N mineralizationimmobilization.

Role in Nitrogen cycle - Earthworms play an important role in the recycling of N in different agroecosystems, especially undershifting cultivation where the use of agrochemicals is minimal. The total soil N made available for plant uptake was higher than the total input of N to the soil throughthe addition of slashed vegetation, inorganic and organic manure, recycled crop residues and weeds.

Improved soil physical, chemical and biological properties - Limited studies on vermicompost indicate that it increases macropore space ranging from 50 to 500 ìm, resulting in improved air-water relationship in the soil which favourably affect plant growth. The application of organic matter including vermicompost favourably affects soil pH, microbial population and soil enzyme activities. It also reduces the proportion of water-soluble chemical species,

* Asst. Professor, Govt. Degree College, Dhana, Distt. Sagar (M.P.) INDIA

which cause possible environmental contamination.

Types of Earthworms - Earthworms are invertebrates. There are nearly 3600 types of earthworms in the world and they are mainly divided into two types: (1) burrowing; and (2) non-burrowing. The burrowing types live deep in the soil. On the other hand, the non-burrowing types live in the upper layer of soil surface. The burrowing types are pale, 20 to 30 cm long and live for 15 years. The non-burrowing types are red or purple and 10 to 15 cm long but their life span is only 28 months.The non-burrowing earthworms eat 10% soil and 90% organic waste materials; these convert the organic waste into vermicompost faster than the burrowing earthworms. They can tolerate temperatures ranging from 0 to 40°C but the regeneration capacity is more at 25 to 30°C and 40–45% moisture level in the pile. The burrowing types of earthworms come onto the soil surface only at night. These make holes in the soil up to a depth of 3.5 m and produce 5.6 kg casts by ingesting 90% soil and 10% organic waste.

Earthworm Multiplication - Numerous organic materials have been evaluated for growth and reproduction of earthworms as these materials directly affect the efficacy of vermicompost. A mixture of cotton waste with cattle manure in the ratio of 1:5 was found to be the best. The use of grape cake alone increased earthworm weight slightly. Tobacco waste, used as substrate, increased earthworm weight but the earthworms failed to reproduce. A mixture of tobacco waste with rabbit manure in the ratio of 1:5 was found to be lethal to the earthworms. The earthworm population decreased when grown in mixture of *Gliricidia*stems and cattle manure. These results indicated that *Gliricidia*loppings could not be used for multiplication of earthworms. *Gliricidia*bark is known to possess toxic properties as it is used as rat poisoning bait. In another multiplication study, there was maximum increase in earthworm population (570%) and weight (109%) when grown in a feed material containing tree leaves (3 kg) and cow dung (6 kg). In contrast, mortality of earthworms (about 7 to 22%) was observed by growing them in a feed material containing soil (Table 5).

(Table 3, 4 & 5 see in last page)

Temperature changes during the process - Change in temperature was observed during the process of vermicomposting (from 5 to 65 days) with different farm residues (*Parthenium*and grass). In the beginning of the process, ie, up to 15 days, the temperature was high (32 to 33°C) in both *Parthenium*and grass substrates when compared to outside temperature (26 to 30°C). Later , there was a gradual decrease in temperature, which reached a minimum of about 24°C. However , higher temperature was recorded in *Parthenium* compost (decline from 32.8 to 27.5°C) than in grass compost (decline from 31.5 to 26.8°C) during the whole period of digestion process. Generally more heat was evolved from control treatment (without earthworms) than the vermicompost treatments (with earthworms). From these studies, it was suggested that the most suitable period for releasing the earthworms into organic residues would be between 15 and 20 days after heaping of the organic residues when the temperature is about 25°C

(Fig. 1: See in last page)

Methods of Vermicomposting :

Pits below the ground - Pits made for vermicomposting are 1 m deep and 1.5 m wide. The length varies as required.

Heaping above the ground - The waste material is spread on a polythene sheet placed on the ground and then covered with cattle dung.

Tanks above the ground - Tanks made up of different materials such as normal bricks, hollow bricks, shabaz stones, asbestos sheets and locally available rocks were evaluated for vermicompost preparation. Tanks can be constructed with the dimensions suitable for operations.

Cement rings - Vermicompost can also be prepared above the ground by using cement rings. The size of the cement ring should be 90 cm in diameter and 30 cm in height.

Commercial model - The commercial model for vermicomposting consists of four chambers enclosed by a wall (1.5 m width, 4.5 m length and 0.9 m height) (Fig. 2). The walls are made up of different materials such as normal bricks, hollow bricks, shabaz stones, asbestos sheets and locally available rocks. This model contains partition walls with small holes to facilitate easy movement of earthworms from one chamber to another. Providing an outlet at one corner of each chamber with a slight slope facilitates collection of excess water, which is reused later or used as earthworm leachate on crop. The four components of a tank are filled with plant residues one after another. The first chamber is filled layer by layer along with cow dung and then earthworms are released. Then the second chamber is filled layer by layer. Once the contents in the first chamber are processed the earthworms move to chamber 2, which is already filled and ready for earthworms. This facilitates harvesting of decomposed material from the first chamber and also saves labour for harvesting and introducing earthworms. This technology reduces labour cost and saves water as well as time.

Fig 2 : Commercial model of Vermicomposting

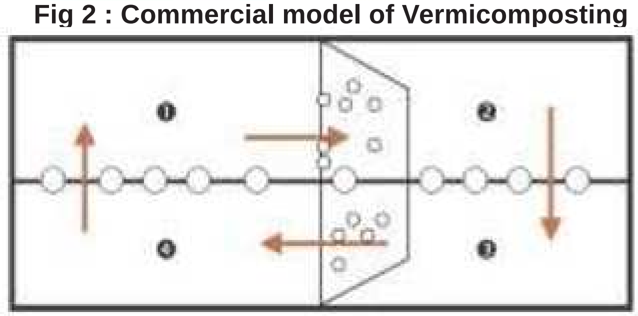

Figure 3. Diagrammatic representation of the commercial model with four chambers for vermicomposting.

Materials Required for Vermicomposting - A range of agricultural residues, all dry wastes, for example, sorghum straw and rice straw (after feeding cattle), dry leaves of crops and trees, pigeonpea stalks, groundnut husk, soybean residues, vegetable wastes, weed plants before flowering, fiber from coconut trees and sugarcane trash can be converted into vermicompost. In addition, animal manures, dairy and poultry wastes, food industry wastes, municipal solid wastes, biogas sludge and bagasse from sugarcane factories also serve as good raw materials for vermicomposting. The quantity of raw materials required using a cement ring of 90 cm in diameter and 30 cm in height or a pit or tank measuring 1.5 m × 1 m × 1 m is given below:

Dry organic wastes (DOW)	50 kg
Dung slurry (DS)	15 kg
Rock phosphate (RP)	2 kg
Earthworms (EW)	500–700
Water (W) 5 L	every three days

Steps in Vermicompost Process - Vermicomposting involves the following steps which are depicted in Figure 4(a–k):

1. Cover the bottom of the cement ring with a layer of tiles or coconut husk or polythene sheet (Fig. 4a).
2. Spread 15–20 cm layer of organic waste material on the polythene sheet (Fig. 4b). Sprinkle rock phosphate powder if available (it helps in improving nutritional quality of compost) on the waste material and then sprinkle cow dung slurry (Fig. 4c and d). Fill the ring completely in layers as described. Paste the top of the ring with soil or cow dung (Fig. 4e). Allow the material to decompose for 15 to 20 days.
3. When the heat evolved during the decomposition of the materials has subsided (15–20 days after heaping), release selected earthworms (500 to 700) through the cracks developed (Fig. 4f).
4. Cover the ring with wire mesh or gunny bag to prevent birds from picking the earthworms.Sprinkle water every three days to maintain adequate moisture and body temperature of theThevermicompost is ready in about 2 months if agricultural waste is used and about 4 weeks if sericulture waste is used as substrate (Fig. 4h).
5. The processed vermicompost is black, light in weight and free from bad odor.
6. When the compost is ready, do not water for 2–3 days to make compost easy for sifting. Pile the compost in small heaps and leave under ambient conditions for a couple of hours when all the worms move down the heap in the bed (Fig. 4i). Separate upper portion of the manure and sieve the lower
7. portion to separate the earthworms from the manure (Fig. 4j). The culture in the bed contains different stages of the earthworm's life cycle, namely, cocoons, juveniles and adults. Transfer this culture to fresh half decomposed feed material. The excess as well as big earthworms can be used for feeding fish or poultry. Pack the compost in bags and store the bags in a cool place (Fig. 4k).
8. Prepare another pile about 20 days before removing the compost and repeat the process by following the same procedure as described above.

Precautions during the process - The following precautions should be taken during vermicomposting:

1. The African species of earthworms, *Eiseniafetida*and *Eudriluseugenae*are ideal for thepreparation of vermicompost. Most Indian species are not suitable for the purpose.
2. Only plant-based materials such as grass, leaves or vegetable peelings should be utilized in preparing vermicompost.
3. Materials of animal origin such as eggshells, meat, bone, chicken droppings, etc are not suitable for preparing vermicompost.
4. *Gliricidia*loppings and tobacco leaves are not suitable for rearing earthworms.
5. The earthworms should be protected against birds, termites, ants and rats.
6. Adequate moisture should be maintained during the process. Either stagnant water or lack of moisture could kill the earthworms.
7. After completion of the process, the vermicompost should be removed from the bed at regular intervals and replaced by fresh waste materials.

How to Use Vermicompost - Vermicompost can be used for

1. For general field crops - Around 2–3 t ha-1 vermicompost is used by mixing with seed at the time of sowing or by row application when the seedlings are 12–15 cm in height. Normal irrigation is followed.

2. For fruit trees - The amount of vermicompost ranges from 5 to 10 kg per tree depending on the age of the plant. For efficient application, a ring (15–18 cm deep) is made around the plant. A thin layer of dry cow dung and bone meal is spread along with 2–5 kg of vermicompost and water is sprayed on the surface after covering with soil.

3. For vegetables - For raising seedlings to be transplanted, vermicompost at 1 t ha-1 is applied in the nursery bed. This results in healthy and vigorous seedlings. But for transplants, vermicompost at the rate of 400–500 g per plant is applied initially at the time of planting and 45 days after planting (before irrigation).

4. For flowers - Vermicompost is applied at 750–1000 kg ha-1.

Plastic sheet placed below the ring | Layer of raw material placed on polythene sheet

Rock phosphate powder sprinkled on organic material — Cow dung slurry

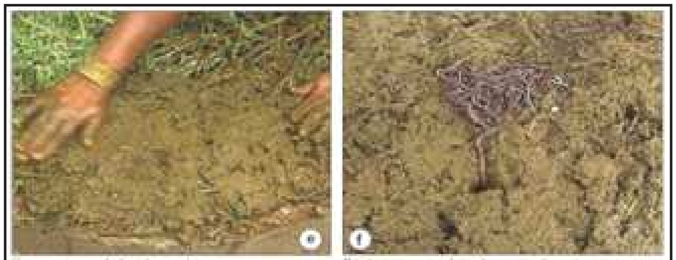

Cement ring sealed with cow dung — Earthworms are released near cracks

Cement ring covered with gunny bag — Processed vermicompost

Heaping of vermicompost — Compost sieved — Bag filled with vermicompost

Benefits of Vermicompost - The utilization of vermicompost results in several benefits to farmers, industries, environment and overall national economy.

To farmers:

1. Less reliance on purchased inputs of nutrients leading to lower cost of production.
2. Increased soil productivity through improved soil quality
3. Better quantity and quality of crops.
4. For landless people provides additional source of income generation.

To industries:

1. Cost-effective pollution abatement technology.

To environment :

2. Wastes create no pollution, as they become valuable raw materials for enhancing soil fertility

To national economy :

1. Boost to rural economy
2. Savings in purchased inputs
3. Less wasteland formation

To Soil :

1. Improves soil aeration
2. Enriches soil with micro-organisms.
3. Microbial activity in worm castings is 10 to 20 times higher than in the soil and organic matter that the worm ingests .
4. Attracts deep-burrowing earthworms already present in the soil.
5. Improves water holding capacity.

To Plant growth :

1. Enhances germination, plant growth, and crop yield.
2. Improves root growth and structure.
3. Enriches soil with micro-organisms.

To Economic :

1. Bio-wastes conversion reduces waste flow to landfills
2. Elimination of bio-wastes from the waste stream reduces contamination of other recyclables collected in a single bin.
3. Creates low-skill jobs at local level.
4. Low capital investment and relatively simple technologies make vermicomposting practical for less-developed agricultural regions.

To Environment :

1. Helps to close the “metabolic gap” through recycling waste on-site.
2. Large systems often use temperature control and mechanized harvesting, however other equipment is relatively simple and does not wear out quickly.
3. Production reduces greenhouse gas emissions such as methane and nitricoxide.

Conclusions - The production of degradable organic waste and its safe disposal becomes the current global problem. Meanwhile the rejuvenation of degraded soils by protecting topsoil and sustainability of productive soils is a major concern at the international level. Provision of a sustainable environment in the soil by amending with good quality organic soil additives enhances the water holding capacity and nutrient supplying capacity of soil and also the development of resistance in plants to pests and diseases. By reducing the time of humification process and by evolving the methods to minimize the loss of nutrients during the course of decomposition, the fantasy becomes fact.

References:-

1. Personal Survey

Table 3. Multiplication trial of earthworm species at ICRISAT, Patancheru, India in 2000[1].

Earthworm species	Initial population	Final population	Increase (%)
Mixed culture	900	15950	1612 (27)[2]
Eisenia fetida	90	1036	1051 (12)
Eudrilus eugenae	55	1007	1731 (18)
Perionyx excavatus	85	1192	1302 (14)

1. Mixture of legume tree leaves and cow dung was used as substrate.
2. Values in parentheses indicate increase in number of times at 90 days after incubation.

Table 4. Multiplication trials of earthworms using different organic materials at ICRISAT, Patancheru, India during 2000–02.

Earthworm species	Feed material	Initial		Final[1]	
		Population	Weight (g)	Population	Weight (g)
Eisenia fetida	Tree leaves (15 kg)	345	20	2510	207
	Cattle manure (15 kg)	510	207	1159	207
	Cattle manure (3 kg) + *Gliricidia* stem (6 kg)	1255	101	1000	50
Eudrilus eugenae	Tree leaves (15 kg)	311	21	2986	334
	Cattle manure (15 kg)	2986	334	1522	216
	Cattle manure (3 kg) + *Gliricidia* stem (6 kg)	2707	230	2249	100
Perionyx excavatus	Tree leaves (15 kg)	409	29	2707	230
	Cattle manure (15 kg)	2707	230	2650	187
	Cattle manure (3 kg) + *Gliricidia* stem (6 kg)	3356	365	1000	50

1. At 90 days after incubation.

Table 5. Multiplication trials of mixed culture of earthworms using soil and other organic substrates at ICRISAT, Patancheru, India, 2000–02.

Feed material	Initial		Final		Increase[1] (%)	
	Number	Weight (g)	Number	Weight (g)	Number	Weight
Cow dung (15 kg)	500	89	750	163	50	83
Tree leaves (3 kg) + cow dung (3 kg)	500	95	1545	125	21	32
Tree leaves (3 kg) + cow dung (6 kg)	500	110	3351	230	570	109
Pigeonpea leaves + pod shells + tree leaves (2 kg) + cow dung (2 kg)	500	98	2230	187	346	90
Pigeonpea leaves + pod shells + tree leaves (2 kg) + cow dung (4 kg)	500	115	1490	193	198	68
Soil (5 kg) + cow dung (5 kg)	1000	90	784	87	–22	–3
Soil (5 kg) + cow dung (5 kg) + pigeonpea leaves (1 kg)	1000	75	1023	241	2	223
Soil (5 kg) + cow dung (5 kg) + tree leaves (1 kg)	1000	160	929	170	–7	–6

1. At 90 days after incubation

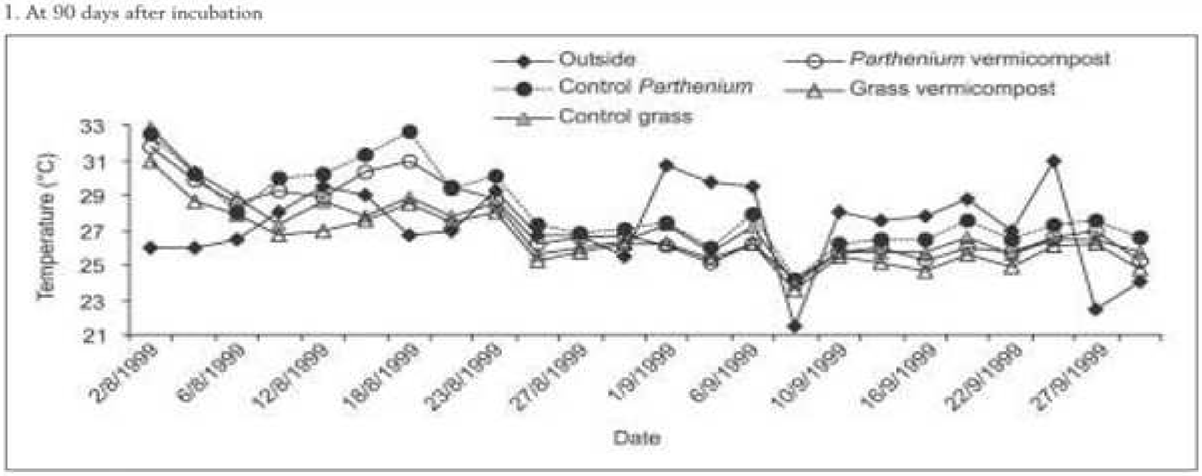

Figure 1. Temperature changes during biodigestion.

Ethnic plants to cure stone disease of Shahdol District Central India

Dr. Radheshyam Napit *

Abstract - For a long period of time plants have been a vulnerable sources of neutral products for maintaining Human health especially in the last decade with more intensive studies for natural treatments. Frequent Ethnobotanical surveys were conducted during January 2012 - December 2014 in Shahdol district. Results of these surveys indicated that three species ***Achyranthes aspera L.), Lawsonia alba Lam.),Euphorbia thymifolia L.), and Phyllanthus niruri Linn.,*** are interestingly used by the tribal and local peoples.
Key words - Ethnic plants to cure stone diseases.

Introduction - Shahdol district is situated in Maikal Plateau at an altitude of 489 m above the sea level between 23.15^{0} - 24.3^{0} N Latitude and 18^{0} - 81.45^{0} E Longitude. Shahdol situated on SER- South Eastern Railway Katni-Bilaspur. The district enjoys tropical monsoon average rainfall ranging from 309.33 to 1005.10 mm. per annum. The district has population 908148 and areas 14028 Sq. Km. Gond, Baiga, Kols, Kanvar, Bharia, Paliha etc. Scheduled cast are the main inhabitants and some other general peoples of the district. (District Statical book-2011)

Shahdol district villagers still practice herbal medicines for the treatment of their ailment. And here specially discussed administrations of Leucoderma the knowledge about these medicines is age-old for them, use of local plants is the cheapest way of treating various health disorders. Remote areas there are no Govt. Doctors in the villages. A review of literature reveals that through much work has been done on Ethno medicinal plants in India (Jain 1965, 1981, 1997, 2004, Jain S.K. 1991, 1996, 1967, Chopra 1933, Maheshwari 1970) still there are some interior areas which need to be surveyed intensively for searching new traditional medicines.

Study Site - For study site were selected in different parts of district as Block Jaisinghnagar, Gohparu, Beohari, Burhar and Sohagpur Block for the collection of plant's being used Ethnomedicinally. These areas were selected on the basis of varied altitude and richness of species, which also comprise rich cultural diversity.

Methodology (Ethnomedicinal Information) - The local healers and knowledgeable villagers were consulted during the field trips covering different season during 2003-2005 Ethnomedicinal information were collected following the methods discribed by Jain (1965). Knowledgeable people and medicine men use, part used method of drug preparation, dosage and local name. Under enumeration plant names have been alphabetically. The correct botanical name is followed by family within parentheses' local names and medicinal uses. All the specimens have been deposited in the department of Botany, Pt. S.N.S. Govt. P.G. College Shahdol (M.P.).

Description of plant species :

Achyranthes aspera L. **(Amaranthaceae) "L.N. - Chirchira"**

H.- Latjra; S.- Apmarga; E.- Rough Chaft flower; B.- Apang; P.- Kutri; Tam. - Nayurivi; Tel.-Uiiareni. Ass. - Apanga, Mar. - Aghada.

Habit - Annual or perennial herb, 1-3 ft. high, often woody below. A common weed of water places in winter. Root- Tap, branched, Stem-Erect, angular branched, Leaf- 1-5 inch long, elliptic, ovate, Inflorescence - Spikelet, spikes rigid, length 2ft. Flower - small 1/6-1/4 in log, greenish white, numerous, bracts and bracteoles shorter than the flowers. Perianth - 4-5 nearly free. Androecium - Stamens 5, Gynoecium-Bicarpellary, Syncarpus; Ovary superior, one celled, one ovule, stigma capitulate. Fruit - Achene utricle oblong. Seeds - brown.

Flowering - Throughout the year.

$$F.F. \ominus, ♀, \nearrow P_{(5)}, A_{5+5} \text{ Staminode}, G_{(2)}$$

Active constituents - These are hentriacontane, saponin, oleanolic acid (whole plant, seeds), betaine, linoleic, oleic, palmitic, stearic, behenic, arachidic, myristic and lauric acids (seed oil) ecdysteron (polypodine) ecdysone (roots), two oleanolic acid based saponin from (fruits) and dihydroxyketone, contanol (shoots).

References: Anonymous (1968): Bhattacharjee, (1998) Chopra et al. (1968) Dhar et al, (1968)

Euphorbia thymifolia L. **(Euphorbiaceae) "L.N. - Chhoti Dudhia"**

H.- Chhoti Dudhi; S.- Laghududhika; Dugidica; B.- Dudiya Shwetkeruee; Bo.- Nayeti Tam.- Sittrapaladi; Tel.- Reddivari, Manubala.

Habit - Annual or perennial, herbs Root-tap, Stem-herbaceous. Leaf-opposite, simple, stipulate, Inflorescence-

* Guest Faculty (Botany) I.G.N.T.U., Amarkantak (M.P.) INDIA

cyathium. Flower- bracteate, unisexual, incomplete, actinomorphic, hypogynous, perianth absent, Androecium-1 Gynoecium tricarpellary syncarpus superior trilocular.

F.F.♂, Po, A1, Go

F.F. ♀, Po, Ao, $G_{(3)}$

Flowering - Throughout the year

Active constituents - These are psimol, carvacrol, Lymonin and sailisilic acid, leafs and stem contains 5, 7, and 4-trihydroxy flavone 7 glycoside (J.agric chem. Soc. Japan 1941, 483.)

Lawsonia alba Lam. **(Lythraceae) "LN. - Mehndi"**

H.- Hena, S.- Mendika, B.- Mehedi, Bo.- Mendi, Mal.- Mayilanji, Mar.- Mendis, G.- Mendi, Tam.- Marudondri, Tel.- Gorinta, Oriya - Manghoti, P.- Mehndi.

Habit - They are cultivated hedge, Shrub Root-tap Stem-branched, woody. Leaf - oval lanceolate, simple, usually opposite and stipules like structure. Inflorescence - solitary, usually racemose. Flower - perfect, usually actinomorphic, calyx tube 3-6 Corolla-4 Androecium-stamens, 8 Gynoecium-2-6 styles long. Fruit-a capsule round, seeds - numerous, nonendospermic.

F.F. ⊕| ♀, K_{3-6}, C_4, $A_{8,\ G2}$

Reproduce cycle - (Flowering) May-June

Active constituents : Laxanthones I-III, -sitosterol glucoside â-Luteolin, Laxanthone I, Laxanthone II, Lawsone, isolated; apigenin 7-glucoside, apigenin-4, glucoside; luteolin-7 glucoside, luteolin-3, glucoside, fraxetin, scopoetin, esculetin, lawsone, Laxanthone II, luteolin, â-sitosterol and its 3-0 glucoside isolated from leaves.

Reference: Paranjpe (2001).

Phyllanthus niruri Linn. **(Euphorbiaceae) "LN. - Bhui amla"**

H. - Bhumi Avnla; Jar Amla; S. – Bhumyamalaki; B. - Bhui amla; Bo. - Bhui avala; Tel. - Nelavusari; Tam. - Kilkkaynelli

Habit- An erect 15-45 cm. tall, smooth, spreading annual, with leaf bearing branches. Leaves sub sessile, elliptical, oblong, obtuse, overlapping, branch, like a compound leaf. Stipules lanceolate, subulate, acute. Flowers small, axillary, clustered, minute, unisexual, greenish. Male flowers 3 to 4 in the axile of the lower leaves of the branch, sessile. Perianth 5-6, free in two whorls, stamens 3, female flowers borne singly in the leaf axile of upper leaves of the branch. Ovary tricarpalary, styles 3, trifid. Fruit schizocarpic regma. Flowering Sept.-Oct. A very common weed.

FF – ♂, P_{3+3}, A_3, G_0.
FF – ♀, $P3_{+3}$, A_0, $G_{(3)}$.

Reproduce cycle - (Flowering) Aug-Oct.

Active Constituents : Leaves mainly contain phyllanthin, hypophyllanthin, linetetralin, phyltetralin and hydroxyniranth.

History - The fresh root leafs, seed and whole plants or dry, of the plants have been used residing in and around the wild for checking stone disease and rapidly use. This is widely and local known healer among the tribal; and local inhabitants. The tribes have been using it since time immemorial. It is said that they used the together pasted that the stone disease had good result meat since than they have been using it for healing breaking stone diseases.

Folk use - Chirchira *(A. aspera (Linn.)* pasted of root and seeds both 1/2 spoon, mixed with Mehndi *(Lawsonia alba Lam.)*5, Leaves and "Chhoti Dudhi" (*Euphorbia thymifolia L.*) and (*Phyllanthus niruri Linn.)* Whole plant 1/2 tea spoon together given orally once a day for 7-21 days to cure stone.

Conclusion - ***Achyranthes aspera L., Euphorbia thymifolia L & Lawsonia alba Lam. And Phyllanthus niruri Linn.,*** has been found to be a wonderful Stone(Calculi) healer. Application of fresh root, seed, whole plant, stem and leaf stops Stone diseases. It is likely that some anti Stone diseases properties associated with the plant species prevent this disease. The conducted ethnobotanical studies on the plant's species of Shahdol, Umaria & Anuppur (Amarkantak) forest area? (Shahdol district present time divided into two districts Anuppur and Umaria.).

Acknowledgement - The research scholar R.S.Napit, thankful to the Dr. Smt. Darshan Thakur, Principal Govt. P.G. College Narsinghpur, Jabalpur and also thankful to the tribes (Medicine men) and local inhabitants who are provided the information.

References :-

1. Jain, S. K. (ed.) 1996. Ethnobotany in human welfare deep publications, New Delhi.
2. Jain, S. K. 1967. Plants in Indian medicine and folklore associated with healing of bones. Indian Med. J. 57:307-369.
3. Chopra, R. N. 1933. Indigenous Drugs of India. The Art press Kolkata.
4. Anonymous, 1968. Medicinal plants of India, Vol. 1.ICMR, and New Delhi.
5. Bhattacharjee, S. K. 1998 Handbook of medicinal plants. Pointer Publishers, New Delhi.
6. Chopra, R.N. Chopra, I.C. and Verma, B.S. 1968. Supplement to Glossary Indian Medicinal Plants CSIR, New Delhi.
7. Paranjpe, P. 2001. Indian Medicinal Plants Forgotten Healers. A guide to Ayurvedic Healer Medicine. Chakhamba Sanskrit Publishers.
8. Jain S.K. 1991.Dictionary of Indian Folk Medicine and Ethno botany Deep Publications , New Delhi, India P.135
9. Maheshwari, J.K. 1970. New vistas in ethnobotany. J. econ. Taxon Bot. (Addl.ser :1-11.
10. Napit, R. S. And Kumar K. 2012. Ethnomedicinal use Euphorbia Plants by Tribal Communities of Shahdol District of M. P. Agrobios News Letter Page. N0. 47-48.
11. Napit, R. S., Shrivastava D. K. & Mishra S. K. 2011. Ethno-medico Botanical Study of Paliha Tribe of Gohparu Block Distt. Shahdol M. P. (India) Journal of Tropical Forestry Vol. 27. Pag N0. 62-64.

12. Napit, Dr. Radheshyam, 2015.Ethnomedicinal Studies on Baiga Tribes in Jaisinghnagar Block District Shahdol M.P. Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I, Jan-Feb -2015 Pag. 9- 12.
13. Napit, Dr. Radheshyam, 2015. *Medicinal Plant King of Bitters* "Swertia chirata Buch.Ham." (Gentianaceae) Chirayata Used by Tribals of Amarkantak regions District Anuppur Central India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal,. Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.1-4.
14. Napit, Dr. Radheshyam, 2015. Ethnomedicinal Plants (Ptreridophytes) Study and Indegenous Knowledge of Pushprajgrah block with Special Reference to Amarkantak Anuppur District M.P. India. Research Hunt An International Multi Disciplinary e-journal, Vol.÷ Issue. I Jan-Feb -2015 Pag.5-8.
15. Napit,Dr. Radheshyam, 2015. Calotrapis (Asclepia daceae) Plants Used By The Tribal And Local Peopl- es. In The Administered Of Skin Disease "Leucoderma" District Shahdol Central India.Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) Jan. to March Vol.1 Pag.34-35
16. Sinha, A.1959 a, Chemical examination of the seeds of Jatropha curcas Linn. J. Inst. Chem. (India) 31, 213.
17. Ramachandran, V.S. and Nair, N.C. 1981 Ethnobotanical observation on rurals of Tamil Naidu (India). J.Econ. Taxon. Bot. 2:183-190.
18. Sinha, B.K. and Dixit, R.P. 2001 Ethnobotanical studies on Sarcostemma acidum (Asclepiadacea) from Kharg- aon Distt. Madhya Pradesh Ethnobotany 13:116-117.
19. Shah,N. C. 1987. Ethnobotany in the mountainous Region of Kumaon Himalaya. Thesis submitted to the Kumaon University, Nainital for the Degree of Doctor of Philosophy in Botany. 1-255.

Study Site - fig.shows position of shahdol distt.

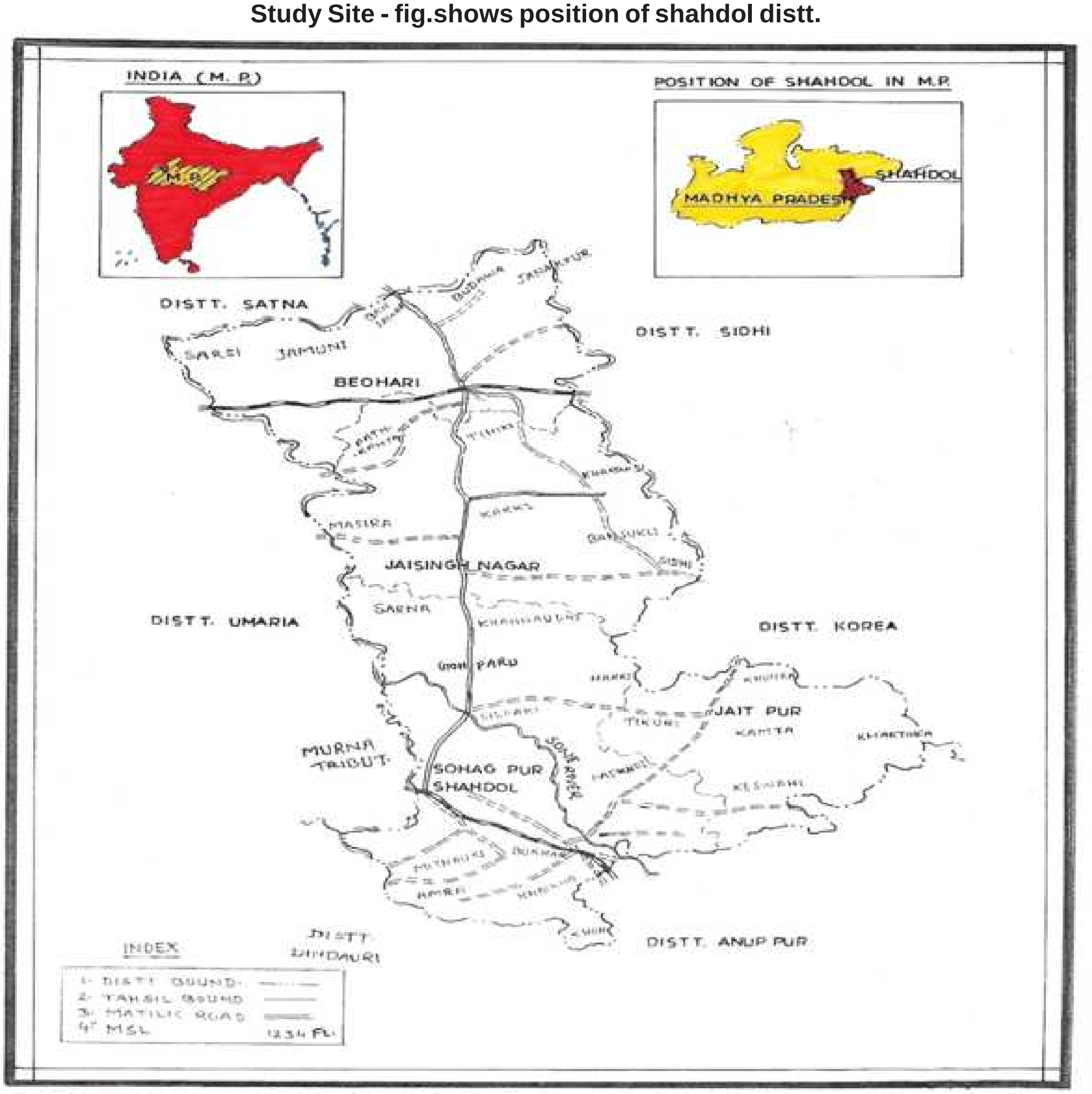

FIG.4.3 POSITION OF SHAHDOL DISTT.

Fig.3. A 'Gond' tribe, tehsil JaisinghnagarDistrict Shahdol

Euphorbia thymifolia Linn

Phyllanthus niruri Linn

Achyranthes aspera Linn

Lawsonia alba Lam

****

Ethno-biological Studies of Traditional Knowledge of Medicine of Shahdol District Central India

Dr. Radheshyam Napit * Dr. P.D. Rawat **

Abstract - Ethnobiology deals with the study of traditional medicinal plants & animals and their indigenous uses were carried out in Shahdol district. These areas are biologically rich with plants and animals of various categories.

The different tribal communities as Baiga, Gond, Kol, Agaria, Kanvar, Khairvar, Panika, Pav Pavia Bharia, and Paliha in this region are completely depending on forest product (Plants & Animals) for their survival and live in the forest, harmonious with nature. They are using their ancient knowledge of medicine for the treatment of various diseases and earning money.

During survey for 15 flora and 11 faunal species were identified treating different diseases like - Anaemia, Biliousness, Baldness, Heart problems, Stone, Asthma, Cancer, Appetite, Leucoderma, Leprosy, Scabies, Epilepsy, Skin diseases, Gas, Indigestion, Pneumonia, Joints Pain, Gout, , Skin diseases , Paralysis, Jaundice, Bleeding Piles, Liver Disorder, Worms, Hair Fall, Whooping Cough, Ulcer, Wounding Healing, Stomachic, Vomiting, Tumour, Cold ,Rheumatic, Tuberculosis etc. The diseases mentioned above were found to be treated by applying the various formulations of different identified wild plants and animals traditionally.

The survey focuses on need for sustainable conservation of ethno-biologically important flora and fauna.

Key words - Ethnobiological Studies of Traditional Medicine.

Introduction - Shahdol district is situated in Maikal Plateau at an altitude of 489 m above the sea level between 23.15^0 - 24.3^0 N Latitude and 18^0 - 81.45^0 E Longitude. Shahdol situated on SER- South Eastern Railway Katni-Bilaspur. The district enjoys tropical monsoon average rainfall ranging from 309.33 to 1005.10 mm. per annum. The district has population 908148 and areas 14028 Sq. Km. Baiga, Gond, Kol, Agaria, Kanvar, Khairvar, Panika, Pav, Pavia, Bharia and Paliha etc. Scheduled cast are the main inhabitants and some other general peoples of the district. (District Statical book-2001)

Shahdol district villagers still practice herbal medicines for the treatment of their ailment. And here specially discussed administrations of Leucoderma the knowledge about these medicines is age-old for them, use of local plants is the cheapest way of treating various health disorders. Remote areas there are no Govt. Doctors in the villages. A review of literature reveals that through much work has been done on Ethno medicinal plants in India (Jain 1965, 1981, 1997, 2004), still there are some interior areas which need to be surveyed intensively for searching new traditional medicines.

There are small rivers Banas, Odari, Chundi, Akhrar, Jhapar and one of Chhattisgarh (C.G.) state. Forest hill area is known as “Aratoji”, kakrandi hill (Kumarpur) village and Banas River originate from Barail hill range running through South West part of Koria district (C.G.).

Shahdol is a plateau area dominated by hills of vindhya mountain systems and Sone is the master river of the area, which is originated from Amarkantak district Anuppur. According to 2011 census the total population of Shahdol was 15, 75,303 out of which 700651 are scheduled tribe and115904 schedule caste. Literacy is about 27.6%.

Materials and Methods - Ethnobiological study of traditional knowledge of this area .Keeping in view the rich ethnomedicinal flora and fauna of district, Shahdol tours were conducted in different tribal localities inside reserve forest protected forest and agriculture land etc. Over a period of two year (2011-2012) voucher specimens and ethnomedicinal information were collected from the field. Vaidya, Gunia knowledgeable person were interviewed and cross-questioning etc. while noting ethnomedicinal information due care was taken to record the local name of the plants, parts of the plants used, method of drug preparation and dosage. The collected voucher specimens were critically identified with help of various floras in the enumeration; the plants have been arranged (Maheshwari et. al. 1980); Ethnobotany of tribals of Madhya Pradesh (Jain, 1963, 1981); Ethnobotany of wild and indigenous species of Vindhya plateau (Dwivedi and Pandey, 1991)., Ethnobotanical survey of Mandla District of M.P., (Maheshwari, 1984). The aim of this investigation was to study the social life with special reference to economic upliftment of tribals of the Shahdol.

* Guest Faculty (Botany) I.G.N.T.U., Amarkantak (M.P.) INDIA
** Deptt. of Botany, Govt. P.G. College, Shahdol (M.P.) INDIA

Enumeration of Fauna and Flora - The given fauna and flora are used important ethno-biologically like Baiga, Gond, Kol, Agaria, Kanvar, Khairvar, Panika, Pav Pavia Bharia, and Paliha etc.

Flora :

***1. Abrus precatorius* Linn. (Fabaceae) Ratti**
The root pest 2gm given after MC period of women's once a day for 5 days to treat family planning and seed use for rheumatic, paralysis diseases.

***2. Achyranthes aspera* Linn. (Amaranthaceae)** Chirchira
Below stem tooth stick or one spoon pasted is applied to the tooth ache diseases and root also use in various ailment like liver disorders, tumor, cancer, heart, stone etc.

***3. Adhatoda vasica Nees.* (Acanthaceae)** Adusa
The plant parts leaves, flower, and root bark powder equal amount ½ tea spoon mixed with honey given twice a day for 21 days to cure whooping cough.

***4. Anogeissus latifolia* (Roxb.ex.DC.) wall. Ex Guill. & Perr. (Combretaceae)** Dhawa
Stem bark is powdered half spoon given two times a day for 21 days to cure anaemia and piles.

***5. Asparagus racemose* Willd. (Asparagaceae)** satavar
Root powder 1 spoon is applied two times a day for 5-7 days to treat dysentery and also tuberculosis.

***6. Barleria prionitis* Linn.(Acanthaceae)** Bajradanti
The root pest is external used of glandular swelling and whole plant decoction ½ cup applied for paralysis.

***7. Boerhaavia diffusa* Linn. (Nyctaginaceae)** Punarnava
Leaves, stem decoction1/2 cup or juice 2 spoons given two times a day for 3 -5 weeks to treat jaundice, anaemia and epilepsy.

***8. Celastrus paniculatus* Willd. (Celastraceae)** Malkangni
Powdered of seeds ½ spoons applied two times a day for 2-5 weeks to cure Leucoderma, paralysis, rheumatism and bark is also used in brain tonic.

***9. Centratherum anthelminticum* (Willd.) Kuntze (Asteraceae)** Ban jeer.
Seed powder 3-4 gm given twice a day to treat gas, diagestion, worms and skin diseases.

***10. Eclipta alba* Hassak. (Asteraceae)** Ghmira
The whole plant juice/powder applied twice a day for 4-5 weeks to treat elephantiasis, jaundice, hair fall and wounds.

***11. Embelia ribes* Burm.f. (Myrsinaceae)** Bai bring
Seed powder ½ tea spoon given two times a day for 2-3 days to cur toothache, indigestion, cough and also apply for leprosy.

***12. Helicteres isora* Linn (Sterculiaceae)** Ainthi/ Murra
The fruit powder 3-4 gm given stomach ache, gas, indigestion, and scabies.

***13. Holarrhena pubescens (Buch. Ham.)* Wall. Ex G. Don. (Apocynaceae)** Koraya/ Kurchi
Bark powdered ½ spoons taken against piles, skin diseases, leprosy and also use in biliousness.

***14. Nyctanthes arbor-tristis* Linn. (Oleaceae)** Saherua.
Decoction of leaves mixed with black piper 2 peaces ½ cup twice a day given to cure bronchitis; cough, fever and also pest apply on baldness.

***15. Physalis minima* Linn. (Solanaceae)** Chirpoti
The whole plant juice applies for excessive itching and ulcer.

Fauna :

***1. Apis cerana indica* (Fabri.)** Honey bee / Madhu makkhi:
The honey 1 spoon mixed with "Kalimirch" ***(Piper nigrum L.)*** 2 -3 gm useful for whooping cough, coughs, pain, and also use for asthma.

2. Bos indica Linn. Syn. B. Taurus *Cow / Gaiya/Gay*
The dung and urine mixed and washes externally use for scabies, itches, boils and urine also taken liver disorder.

***3. Columba livia* (Gmel.)** Pigeon / Kabootar:
The waste matter (excreta substance) powdered to use for condition of bleeding, piles.

***4. Capra hircus* Linn.** She goat / Bakri
The milk 1 glass and mixed with "Bhuiamla" ***(Phyllanthus niruri Auct.non. Linn.)*** 1 spoon is given two times a day for 15-20 days cure jaundice

***5. Chamaeleo zeylanicus* Laur.** *Chameleon /* Girgit
Boil in mustard oil is applied on cut & wound healing

***6. Lepus nigricollis* F.Cuvier** (Hare) Kharha
Its dry blood 1-2 gm is used for pneumonia and flesh also used in cold.

***7. Macrobrachium malcolmsonii* (H. Milne-Edwa.)** Jhinga machhli
The cooked flesh is used 1-2 times a day for 1-2 weeks to treat stomachic and also powder used in tuberculosis.

***8. Pila globosa* Swai.** (Snail), Ghongha:
The cooked flesh is given to treat of tuberculosis diseases.

9. Pavo cristatus Linn. Peacock / Mor / Majur
Ash of feathers 2-3 mixed with jaggery twice a day for 3-7 days to treat cough and vomiting

***10. Cancer pagurus* Linn.** *(*Crab), Kekda:
Decoction of crab and vegetable taken to treat of cough, tooth diseases and also used in whooping cough.

***11. Sus scrofa* Linn.** (Wild Boar), Jungli suar:
The fat is applied to heal burns. Wound and joints pains.

Result & Discussion - The indigenous people of Shahdol district have rich and unique traditional knowledge about the use of natural resources, particularly the biological resources available in the surroundings for the treatment of various diseases. The present paper gives detailed information on 26 prescriptions, making use of 11 fauna and 15 flora species each have been discussed. It is evident from the present study that the tribal's (Baiga) are dependent on a variety of plants and animals to meet their requirement. It is also noted that some of the common Flora and Fauna are used only on their beliefs to cure many diseases by Baiga, Gond, Kol tribes. Baiga tribes are most dependent on forests.

Acknowledgements - The authors express their sincere thank to the remote people and villagers of Shahdol areas under study for providing valuable medicinal information about some animals and plants apply of medicine.

References :-

1. Anonymous, 1994 Ethno biology in India- A status report Ministry of Environment and forests Govt of India New Delhi.
2. Alves Romulo R. N. & Rosa I. L., Why study the use of animals product in traditional medicines —"
3. Jain, S.K (Ed.) 1990. Contribution to Indian Ethnobotany. Scientific Publishers, Jodhpur.
4. Jain, S.K. & Tarafder, C.R. 1970. Medicinal plant lore of the Santals. A. Revival of P.O. Bodings' works Econ. Bot. 24: 241-278.
5. Jain S.K. 1991 Dictionary of Indian Folk Medicine and Ethno botany Deep Publications, New Delhi, India P.135
6. Jain, S.K. 2001. Ethnobotany in Modern India. Phytomorphology. Golden Jubilee Issue, pp. 39-54.
7. Jain, S. K. (Ed.), Ethnobiology in Human Welfare. Deep Publications. New Delhi.
8. Jamir, N. S. & Lal P, Ethnozoological practices among Naga tribes, Indian J Traditional Knowledge, 4 (1) (2005) 100-104.
9. Rajendran, S. M. & Mehrotra, B. N. 1996. Unrecorded medicinal uses of plants among Parambikulum tribals, Kerala, India. In pp. 181-183.
10. Rajive, K. Singh & Sweta Sinha, Ethnobiology, (Surabhi Publications, Jaipur), 2001.

Fig.shows physical map of shahdol distt.

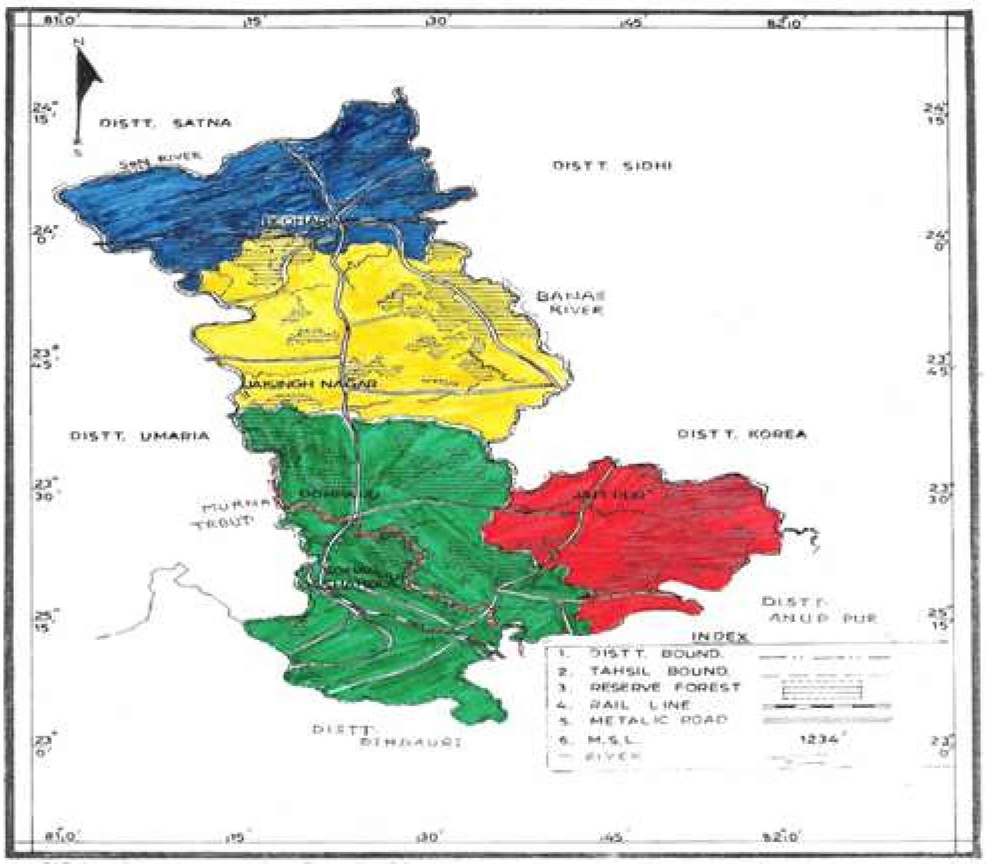

PHYSICAL MAP OF SHAHDOL DISTT.

****

Transmission of Groundnut (Arachis hypogaea L.) Mosaic Virus through vector

Dr. Madhu Mishra *

Abstract - : Potential infectivity of any viral disease on plant depends upon three factors; specificity of insect, virus-vector relationship and persistence of the virus in vector. In present study, above three aspects have been observed in mosaic disease of Groundnut. The study was conducted through three experiments. In first specificity of vector was studied, in second virus- vector relationship was studied and through the third experiment capability of the vector to retain the virus or its potential to infect in terms of time period was studied. Results of this study indicate that Cicadula indica Pruthi has been recorded as the only vector for the Groundnut Mosaic Virus. Second experiment revealed that with the increase in acquisition and test feed time, number of infected plants increased regularly. An acquisition feed of 8 hours even after a prolonged test feed of 12 hours gave only 25% infection while an acquisition feed of 12 hours gave 100% infection. Third experiment revealed that the virus remained within the vector up to 9 days indicating that it is of persistent type.

Keywords - Groundnut Mosaic Virus, Vector, Transmission.

Introduction - Vectors play an important role to serve as one of the most common agents for the transmission of the virus in nature. Vector transmission is a complex process involving the virus, the vector, the host plant and the environmental conditions. Muniyappa and Reddy (1983)[4] observed that adult **Bemisia tabaci** acquired cowpea mild mottle virus in 10 minutes and transmitted it within 5 minutes to soyabean in a non-persistent manner. Bharadwaj and Dubey (1987)[1] found that Urd bean leaf crinkle virus was transmitted by **Aphis craccivora** and **Acyrthosiphon pisum**. Nariani and Dhingra (1963)[5] reported a mosaic disease of groundnut which is not transmitted by **Aphis craccivora**. Storey and Bottomley (1928)[6] were the first to establish that rosette virus was transmitted by an aphid, **Aphis craccivora** (Koch) Murugesan and Chelliah (1977)[3] studied that mung bean (**Phaseolus aureus**) yellow mosaic virus was transmitted successfully by a single infectious **Bemisia tabaci** but maximum infection was imparted by 10 flies per test plant. Maximum infectivity was observed when vector had a pre-acquisition period of 3 hours followed by an acquisition feeding period of 24 hours. The virus was retained by the vector for a maximum of 4 days. **Bokx et al**; (1981)[2] found that **Macrosiphum euphorbiae** transmitted the potato spindle tuber viroid in a non-persistent manner.

Material and Methods - To observe the virus transmission by insects, study was planned in 3 stages.

(a) Preliminary screening of Insects - For this purpose insects were collected from the groundnut fields and also from the neighbouring fields. Various insects thus collected were employed in testing the possibility of their being the vector for the present virus. Care was taken so that insects of one species do not contaminate the other. For each experiment twenty five healthy groundnut plants were taken and each insect species in a group of 5 was fed an each plant giving a test feed ranging between 1 hour to 24 hours. Before the insects were fed on the healthy plants, each was given an acquisition feed of 12 hours and a post acquisition fast of one hour.

(b) Virus-Vector Relationship - In order to test the relationship between the present virus and **Cicadula indica**, a detailed experiment was designed in which 7 different acquisition feeds (1 hr., 2 hrs., 4 hrs., 8 hrs., 12 hrs., 24 hrs., 48 hrs.) each with a set of seven test feeds (1 hr., 2 hrs., 4 hrs., 8 hrs., 12 hrs., 24 hrs. and 48 hrs.) were given. For each combination of acquisition and test feed 20 healthy plants of 10-15 days age were used. For each plant, a batch of 5 insects was employed as infection unit. At the expiry of the test feed vectors were killed by spraying 0.1% Ektin-20 to check further contamination. These experiments were repeated twice.

(c) Persistence of the Virus in Vector - To study the persistence of the virus in vector, **Cicadula indica** were given 12 hours acquisition feed in group of five. Each group was then transferred to healthy, 10 to 15 days old groundnut plants immediately and after regular time intervals. 12 hours test feed was given to each group of insects.

Results and discussion - Results are presented in table-a,b and c.

* Principal, Anand Vihar College for Woman, Bhopal (M.P.) INDIA

Table- a,b,c (see in bottom)

It is evident from the table- a, that only **Cicadula indica** acted as a vector for the virus under study. Further experiments were, therefore, performed with **Cicadula indica** only. Results depicted in table-b shows that with the increase in acquisition and test feed time, the number of infected plants has increased regularly. An acquisition feed of 8 hours even after a prolonged test feed of 12 hours gave only 25% infection while an acquisition feed of 12 hours gave 100% infection. Table-c clearly indicates that the virus is retained within the vector up to 9 days, indicating that it is of persistent type.

References :-

1. Bharadwaj, S.V. and Dubey, G.S. (1984): Transmission of Urd bean leaf crinkle virus by two aphid vectors. Indian Journal of Plant Pathology; 2(1): 64-68.
2. Bokx, J.A.D.E. and Pirori, P.G.M (1981) : Transmission of potato spindle tuber viroid by aphids. Neth. Journal of Plant Pathology; 87(2): 31-34.
3. Murugesan, S. and Chelliah, S. (1977) : Transmission of green gram yellow mosaic virus by the whitefly **Bemisia tabaci** (Genn). Madras Agricultural Journal; 64(7) : 437-441.
4. Muniyappa, V. and Reddy, D.V.R (1983): Transmission of Cowpea mild mottle virus by **Bemisia tabaci** in a non persistent manner. Plant Disease; 67(4): 391-393.
5. Nariani, T.K. and Dhingra, K.L. (1963) : A mosaic disease of groundnut (**Arachis hypogaea L.**) Ind. Journal Agricultural Science, 33(1) : 25-27.
6. Storey, H.H and Bottomley, A.M. (1928) : The rosette disease of peanuts (**Arachis hypogaea L.**) Ann. Appl. Biol; 15: 26-45.

Table- a : Preliminary Screening of Insects for Possible Vector

S.	Insect species tested	Acquisition feed	Fasting	Test feed in hrs.			
				1 hr.	6 hrs.	12 hrs.	24 hrs.
1.	Aphis craccivora Koch.	12 Hrs.	1 hr.	-	-	-	-
2.	Bemisia tabaci Genn.	12 Hrs.	1 hr.	-	-	+	-
3.	Cicadula indica Pruthi.	12 Hrs.	1 hr.	+	+	+	+
- = symptoms did not appear, + = symptoms appeared.							

Table-b : Effect of varying acquisition and test feeds on the transmission of the virus by Cicadula indica

S.	Acquisition feed	Test Feed						
		Number of plants infected out of 20 inoculated						
		1 hr.	2 hrs.	4 hrs.	8hrs.	12 hrs.	24 hrs.	48 hrs.
1.	1 hr.	-	-	-	-	-	-	-
2.	2 hr.	-	-	-	-	-	-	-
3.	4 hr.	-	-	-	-	-	-	-
4.	8 hr.	-	-	-	-	5	11	20
5.	12 hr.	3	5	8	11	20	20	20
6.	24 hr.	6	12	15	17	20	20	20
7.	48 hrs.	8	13	17	19	20	20	20
- = Symptoms did not appear								

Table-c : Persistence of the Virus in Vector Cicadula indica

S.	T ransfer time after acquisition feed	Number of Plants		% Transmission
		Inoculated	Infected	
1.	Immediately	25	25	100
2.	1 day	25	25	100
3.	2 day	25	21	84
4.	3 day	25	19	76
5.	4 day	25	17	68
6.	5 day	25	16	64
7.	6 day	25	13	52
8.	7 day	25	10	40
9.	8 day	25	7	28
10.	9 day	25	3	12
11.	10 day	25	0	0
12.	11 days	25	0	0

****

Legume Response To Fertilizer Nitrogen, Farm Yard Manure And *Rhizobium* Inoculation

Shobha Shrivastava *

Abstract - Biological nitrogen fixation (BNF) plays positive and constructive role in maintaining soil nitrogen. So it needs use of chemical fertilizer in combination with the use of efficient and effective *Rhizobium* and other nitrogen fixing inoculants.

A field experiment was carried out during "Kharif season" of 2011 and 20121 at Raisen to find out the effect of nitrogen fertilizer, Farm yard manure (FYM) and *Rhizobium* inoculation on root nodulation, nitrogen fixation and also its residual effect to maintain soil nitrogen content on Soybean (Glycine max L.merril).

Native *Rhizobia* specific to soybean present in soil improve nodulation due to *rhizobial* inoculation and subsequently increase the yield[1]. Nitrogen fertilizer suppressed nodulation and was not better than eco-friendly *Rhizobium* inoculation. Increase in nitrogen doses beyond 100 Kg/ha was not found to be beneficial. Application of FYM and *Rhizobium* inoculation produced significantly increased the yield of more nodules and nitrogen fixation over control. Similarly, higher residual nitrogen content was obtained with application of fertilizer nitrogen, **FYM** and *Rhizobium* inoculation[2]. Thus the *Rhizobiu*m inoculation with chemical fertilizer & **FYM** can be prferred to achieve maximum nodulation as environment friendly low cost agricultural input with maximum output.

Introduction - Materials and method - Soil in India are in general poor in total nitrogen content and therefore, fertilizer nitrogen has proved to play a key role in augmenting India's food production. But the fertilizer nitrogen draws heavily on energy and financial resources of the country. An integrated nitrogen biologically fixed nitrogen and nitrogen residue is the call of the time. Legumes are the best sources for enrichment of soil by nitrogen fixation.

Soybean (Glycine max L. Merril) is the most predominant oil seed crop of Madhya Pradesh among various "Kharif" oil seeds. The feasibility of Soybean production depends on the legume-*Rhizobium* association [1]. The amount of nitrogen fixed by legumes are controlled by two factors-

(i) The proportion of plant nitrogen (N) derived from symbiotic nitrogen fixation (P fix) and

(ii) The amount of nitrogen accumulated during growth and can be expressed as-

Amount of N fixed = P fix legume x N yield.

So the final contribution of fixed N to the soil following harvest will depend upon the N – balance at har-vest [4]. Therefore, strategies which influence either P fix or legume growth will affect gross input or fixed input. Research conducted in the laboratories regarding Biological nitrogen fixation also require its extension From Lab., therefore, field experiment was carried out under the agro climatic conditions of this part of Madhya Pradesh to study the response of Soybean to fertilizer nitrogen, Farm yard manure (FYM) and *Rhizobium*-inoculation grown in medium black soil.

The field experiment was conducted during the rainy season (Kharif) of 2011and 2012 at farm house, Raisen district, in randomized block design, with 12 treatments including the control (Table-1).

The soil was black cotton soil in texture, alkaline in nature (pH 7.9), medium to normal level of fertility with respect to total nitrogen and organic carbon content, i.e.,80 ppm and 0.128 %, respectively, Available Phosphorus 0.82 ppm and available Phosphorus 0.82ppm and available potassium was found to be 200 ppm. Standard methods followed for physic-chemical studies [3, 4,].

Punjab-1 variety of soybean was sown on 28th June, 2011 in plots of 5 m X28 m, each having 7 rows, 40 cm apart. The seeds before sowing were treated with thiram @3g/Kg seed. Seeds were inoculated with a charcoal based culture of Rhizobium strain (sb 119) 500g/80 Kg. seed. Phosphorus and potash were applied at the time of sowing with 60Kg P_2O_5 & 40Kg K_2o per ha, respectively. The recommended dose of nitrogen fertilizers (urea) was given and all cultural practices were followed. Nitrogen content in soil after harvesting was determined by Kjeldahl's method[5].

Results and discussion - The observations on nodulation, nodule dry weight and shoot weight were taken after 35 and 60 days sowing, by uprooting 5 random plants from each plot. The roots were washed with water, and intact nodules were detached from the roots and counted. The nodule and shoots were dried separately in an oven at 60-80^{0}C for recording dry weight.

* Department of Botany, Govt. M.L.B. Girl's P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

Nodulation in uninoculated treatment indicated the presence of native rhizobial population specific to soybean. However, inoculation alone, as well as in combination with farm yard manure (**FYM)** resulted in significant increase in nodule number, dry weight and in residual nitrogen content over control. Maxi-mum nodulation (17.20 nodules/plant) with significant increase in dry weight and shoot weight was observed when inoculation was combined with application of **FYM** at the rate of 10 tones and fertilizer nitrogen 20 Kg/ ha.

Application of 100 Kg. nitrogen/ha, either in a single dose or two split doses suppressed the nodulation and reduced the shoot weight in comparison to the inoculated treatment with and without fertilizer nitrogen or **FYM**. The results indicated that –

Nodulation in soybean plant by the native *Rhizobium* could be improved.

Table-1. Response of Soybean to fertilizer Nitrogen**, FYM** and *Rhizobium* inoculation (See the next page)

By application of farm yard manure alone. Inoculation with or without FYM significantly increased the nodulation and shoot weight over the control

- Application of fertilizer nitrogen @ 100 Kg per ha, significantly reduced the nodulation and subsequently the yield over the inoculated treatments.
- Maximum residual nitrogen found in the presence of FYM and nitrogen fertilizer with inoculation of *Rhizobium*, whereas in case of nitrogen alone the residual nitrogen content is lowest in normal doses.

Rhizobium inoculation combined with judicious use of organic manures may prove a cheaper, effective and ecofriendly agronomic practice for ensuring adequate nitrogen nutrition of legumes including soybean[6].

Maximum residual nitrogen was also found in the presence of fertilizer nitrogen, FYM and *Rhizobium* inoculation. The residual nitrogen content was always found to remain whenever nitrogen fertilizer was present. Reduction in nodulation in the presence of nitrogen fertilizer as observed in the present study supports the earlier findings that presence of nitrogen in soil reduces the nodule number, as well as, molecular nitrogen fixation measured in the presence of different treatment of fertilizers[6, 7, 8].

Conclusion - Increase in nitrogen dose was not found suitable due to imbalance of nutrition caused by higher level of nitrogen, which might have caused adverse effect on physiological activities of plants which in turn reduced the yield. Excessive use of chemical fertilizers results in an imbalance between N gain and N losses. Thus, to sustain soil nitrogen fertility, it requires integration of Biological nitrogen fixation components which keep a good balance between nitrogen losses and gain[9].

The amount of biologically fixed nitrogen increases with the suitable *Rhizobium* inoculation. Legumes usually have some residual nitrogen which can be judged by the yield of the subsequent non legume crop. These results collaborate the earlier findings[7].

References:-

1. Burten, J.C. (1979). New Development in inoculating legumes, pp. 380-405, in Recent advances in biological nitrogen fixation Ed. N.S. Subba Rao, Oxford and Publishing Co.Pvt.Ltd.,New Delhi.
2. Dongerwar, U.R. and V.R. Thosar (1991). New Agric., 2:81-84.
3. Gharib Fatima A.A.Fatima, A.Lobana, Moussa and N.Osama, Massoud (2008). International Journal of Agriculture and Biology. 10(4): 381-387.
4. Mathivanan S., A.L.A. Chidambaram, P.Sundaramoothy and Kalaikandhan (2012). International J.of Research in Biological Sciences 2(2): 54-59.
5. Peoples, M.B. etc. (1995a). Pl. soil, 174: 3-28. Peoples, M.B. etc.(1995b). Pl, soil, 174: 83-101.
6. Shanthi J., V.Santhi, S. Ramya and R. Balagurunathan. (2012). Word Journal of Agricultural Research Sciences. 8(2): 218-222.
7. Singh R.K. and P.K.Ghosh (2006). Indian Journal of Fertilizers. 11: 25-32.
8. Statistical analysis (2011). SPSS Software version 20.
9. Tanimu, B., T.Y. Yayock and S.G.Ado, (1991). Crop. 4(1):1-10.

See table in next page

Table-1. Response of Soybean to fertilizer Nitrogen**, FYM** and *Rhizobium* inoculation

S. No	Treatment	At 30 days			At 60 days			
		Nodule No. /PI	Nodule dry wt./PI (mg)	Shoot wt./PI (mg)	Nodule No./PI	Nodule dry wt./PI (mg)	Shoot wt (mg)	Residual N content
1.	Control (No inoculation) No Nitrogen	14.15	52.90	2.31	22.83	151.00	8.17	1.06 PPM treated as 100%
2.	Inoculation alone	15.50'	55.15	2.68	22.70	161.80	8.27	30%
3.	Inoculation + **FYM** (10t/ha)	16.60	55.50	3.10	29.90	201.70	8.73	34.09%
4.	Uninoculated + **FYM** (10t/ha)	14.75	49.75	2.59	22.00	141.05	6.66	34.0%
5.	Inoculation + N (20 Hg/ha basal)	13.10	60.5	3.07	17.95	147.05	8.16	36.0%
6.	Uninoculated + N (20 Kg/ha basal)	13.30	43.20	3.58	20.35	158.70	9.99	06.0%
7.	Inoculation + **FYM** +N (10tha+20 Kg N/ha)	17.20	100.85	3.62	23.65	165.95	10.46	45.09%
8.	Uninoculated + **FYM** +N (10t/ha + 20 Kg N/ha)	16.90	95.5	3.10	29.95	200.70	8.65	9.9%
9.	Uninoculated + N (20 Kg N/ha 15 days)	14.75	49.75	2.59	22.00	141.05	6.66	8.0%
	Uninoculated + N 10 Kg.N/ha (15 days)+10 Kg N/ha (30 days)	13.30	43.20	3.58	20.35	158.70	9.99'	4.0%
10.	Uninoculated + N 100 Kg N/ha At 15 days	12.10	58.50	2.07	15.95	138.05	6.16	47.5%
11.	Uninoculated N 50 Kg N/ha 15 Days. 50 Kg N/ha 30 days	13.10	60.50	3.07	17.95	147.05	8.16	45.7%
	CD (P=0.05)	NS	5.83	0.31'	1.92	17.71	0.62	
	SEm +	0.91	2.00	0.10	0.66	6.08	0.21	

Average of five plants.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Assessment Of Water Quality Of Sirpur Talab, Indore (M.P.)

Malini Johnson * Dr. D.K Billore **

Abstract - water is basic unit of life for all living organism at this universe. Water is uses for many purposes irrigation, domestics, drinking. Water sample were collected in seven different stations and analysed in June 2010 to may 2011. The present study assesses the water quality of talab an analysis on the physico-chemical parameter of Sirpur talab the samples were analyzed for physico-chemical parameters like temperature, turbidity, pH, dissolved oxygen,total alkalinity,hardness, phosphate, nitrate-nitrogen and chloride.
Key-Words - Physico-chemical parameters, water quality.

Introduction - Water is one of the most valuable natural gift of mankind. Our planet is sometimes known as water planet as 71% of earth surface is covered by water. The rapidly growing population demand of water increases and on other hand depleting the source of water. The industrialization and advancement in agriculture are necessary to meet the basic requirement of people. At the same time it is necessary to preserve the environment. Yadav et al (2013). The talab serves as a rich source of water supply for irrigation,industry and drinking.

Pathk et. al.(2012), Khan and Ganaie(2014),Krishan et.al. (2015) is the groups of contributed to assessed the quality of water resources. Many people have given adverse effects of various effluents on the growth of plants. Its use needs appropriate planning and management. In freshwater bodies, nutrients play a major role for growth of micro-organism and other water bodies. Hujare(2008).

Assessment of water quality is the primary step to management and conservation of aquatic ecosystems. It is also true that the management and conservation of water by maintaining the physico-chemical quality of water within acceptable levels Kadam et. al.(2007)

Area Of Study - Indore city is the leading city in Madhya Pradesh state in central India. Sirpur Talab is constructed for obstructing the surface run off in year 1868 during the regime of Holkar State. The Sirpur Talab is located west of Indore city on NH- 53 near Sirpur village situated at 22°40°N latitude and 75°45°E longitude. The MSL is 421. Sirpur Talab is separated by a pal into chhota and bada talab.

Climate of Indore city is monsoonal. Years are clearly separable in three season's winter, summer and Rainy. Summer is the hottest season of the year. The water level is increase during rainy season and decrease during summer. Sirpur Talab has Maximum and minimum depth 5m and 1m respectively. It cover 117000 ha and water spread area has 4.5 km long shore line (Sharma and Belsara1997).

Material And Methods - The water samples were analysed in the field as well as in the laboratory after following the methodology given in APHA (1998).Temperature were recorded by mercury thermometer and pH by portable pH meter.

Result And Discussion - As per study of physico-chemical parameters of water bodies,(Table No-01) pH is the controlling factor for silicate Higher value of pH in Sirpur talab shows that talab water is alkaline in nature as a momentous role of dissolve oxygen amount in water quality of Sirpur talab.The pH in Sirpur talab varies from 6.2 to 7.3 and dissolve oxygen varies from 6.5mg/lit to 12.1 mg/lit respectively.The average concentration of dissolve oxygen was highest in post monsoon period. It is inversely proportional to temperature. The temperature affects the metabolic rate of living micro-organism in water.

Hardness was recorded comparatively highest in pre-monsoon and lowest in post- monsoon. Alkalinity may also be caused due to application of chemical fertilizer, run off from agricultural field and domestic waste are the mainly responsible for over degraded quality of Sirpur talab.

The total alkalinity in Sirpur talab varies from 90 mg/ lit to182 mg/lit respectively. The chloride content in talab water was higher in pre or post monsoon. Chloride is one of the important indicators of pollution. The high value of the nitrate–nitrogen in talab water may be due to run off and decom-positions of organic matter.

conclusion - The results of the present study it may be said that water quality analysis should be carried out from time to time to regulate the rate and kind of contamination. It is need of human to expand awareness among the people to maintain the water quality.

The results revealed that there was significant variation in some physico-chemical parameters and most of the

* Asst. Professor (Botany) Govt. College, Kannod, Distt. Dewas (M.P.) INDIA
** Professor (Botany) Govt. College, Mundi, Distt. Khandawa (M.P.) INDIA

parameters were indicated better quality of talab water.

References :-

1. APHA (1998): Standard methods for the examination of water and waste water,20th edition.
2. Hujare,M.S.(2008) :Seasonal variation of physico-chemical parameters in the perennial tank of Talsande, Maharashtra,Ecotoxicol. Env. Monit, 18(3),233-242.
3. Kadam,M.S.,Pampatwar, D.V. and Mali, R.P. (2007): Seasonal variations in different physico-chemical characteristics in Masoli reservoir of Parbhani distric, Maharashtra, J. Aqua. Biol. 22(1), 110-112.
4. Khan, M.U. and Ganaie, I.M.(2014): Assessment of physico-chemical parameters of Upper Lake Bhopal M.P. India. Int. J. Of Eng. Res. and Gen. Sci. Vol.(2) 354-363.
5. Krishan,G.,Saini, R.,Tuli,N.K. and Kaur,G.(2015): Assessment of Ground water quality in baddi catchment, Solan,Himachal Pradesh, India.IWRA India J Vol.(4)25-30 p.
6. Pathak, H., Pathak, D. and Limaye, S.N. (2012): Studies on the physico-chemical status of two water bodies at Sagar city under anthropogenic Influences. Advance in Applied Sci. Res. 3(I):31-44.
7. Sharma, S. and Belsaure,D.K. (1997) :A checklist of waterfowl of Sirpur Lake 1 nd Spect. 8 (2):39-42p.
8. Yadav,J., Pathak, R.K.,Rathour, J.and Yadav, A.(2013):Physico-chemical analysis of water and locked soil of Sadli reservoir region Kasrawad district Khargone (M.P.) India. Int. Res. J.of Env. Sci. Vol 2(4) 26-29.

Table-1 Water quality of Sirpur talab, Indore during study year 2010-2011

	Jun	July	Aug	Sept	Oct	Nov	Dec	Jan	Feb	Mar	Apr	May
Temperature (°C)	33	30	23	23	30	20	26	19	20	25	27	32
pH	7.3	7.2	7.1	6.9	7.3	6.7	7.1	6.2	6.9	7	7.2	7.3
Dissolved oxygen(mg/l)	6.5	6.9	6.8	7.8	6.8	9.9	8.1	12.1	11.5	7.32	7.2	6.8
Total Alkalinity(mg/l)	182	95	90	98	126	120	111	121	123	118	112	120
Hardness (mg/l)	210	156	110	112	151	126	100	132	150	128	152	158
Calcium (mg/l)	137	96	70	70	96	80	62	71	96	80	94	102
Magnecium (mg/l)	73	60	40	42	55	46	38	61	54	48	58	56
Chloride(mg/l)	30	30	26	22	35	28	21	24	29	30	37	42
Nitrate (mg/l)	0.7	0.6	0.61	0.6	0.81	0.82	0.85	0.73	0.71	0.8	0.8	0.7

****

Thermodynamics

Dr. Neeraj Dubey *

Introduction - Thermodynamics is a branch of physics concerned with heat and temperature and their relation to energy and work. It defines macroscopic variables, such as internal energy, entropy, and pressure, that partly describe a body of matter or radiation. It states that the behavior of those variables is subject to general constraints, that are common to all materials, not the peculiar properties of particular materials. These general constraints are expressed in the four laws of thermodynamics.Thermodynamics describes the bulk behavior of the body, not the microscopic behaviors of the very large numbers of its microscopic constituents, such as molecules. Its laws are explained by statistical mechanics, in terms of the microscopic constituents.

Thermodynamics applies to a wide variety of topics in science and engineering, especially physical chemistry, chemical engineering & mechanical engineering.Thermodynamics arose from the study of two distinct kinds of transfer of energy, as heat and as work, and the relation of those to the system's macroscopic variables of volume, pressure & temperature.Transfers of matter are also studied in thermodynamics.

The plain term 'thermodynamics' refers to a macroscopic description of bodies and processes. Reference to atomic constitution is foreign to classical thermodynamics. The qualified term 'statistical thermodynamics' refers to descriptions of bodies and processes in terms of the atomic constitution of matter, mainly described by sets of items all alike, so as to have equal probabilities.

Thermodynamic equilibrium is one of the most important concepts for thermodynamics. The temperature of a thermodynamic system is well defined, and is perhaps the most characteristic quantity of thermodynamics. As the systems and processes of interest are taken further from thermodynamic equilibrium, their exact thermodynamical study becomes more difficult. Relatively simple approximate calculations,however,using the variables of equilibrium thermo dynamics, are of much practical value. In many important practical cases, as in heat engines or refrigerators, the systems consist of many subsystems at different temperatures & pressures. In engineering practice, thermodynamic calculations deal effectively with such systems provided the equilibrium thermodynamic variables are nearly enough welldefined.

The etymology of *thermodynamics* has an intricate history. It was first spelled in a hyphenated form as an adjective (*thermo-dynamic*) in 1849 and from 1854 to 1859 as the hyphenated noun *thermo-dynamics* to represent the science of heat and motive power and thereafter as *thermodynamics*.

The components of the word *thermo-dynamic* are derived from the Greek words *therme*, meaning "heat," and *dynamis*, meaning "power"

The term ***thermo-dynamic*** was first used in January 1849 by William Thomson, later Lord Kelvin, in the phrase *a perfect thermo-dynamic engine* to describe Sadi Carnot's heat engine. In April 1849, Thomson added an appendix to his paper and used the term ***thermodynamic*** in the phrase *the object of a thermodynamic engine*.

Statistical thermodynamics, also called statistical mechanics, emerged with the development of atomic and molecular theories in the second half of the 19th century and early 20th century. It provides an explanation of classical thermodynamics. It considers the microscopic interactions between individual particles and their collective motions, in terms of classical or of quantum mechanics. Its explanation is in terms of statistics that rest on the fact the system is composed of several species of particles or collective motions, the members of each species respectively being in some sense all alike.

Thermodynamics states a set of four laws that are valid for all systems that fall within the constraints implied by each. In the various theoretical descriptions of thermodynamics these laws may be expressed in seemingly differing forms, but the most prominent formulations are the following:

1. **Zeroth law of thermodynamics** If two systems are each in thermal equilibrium with a third, they are also in thermal equilibrium with each other.
2. **First law of thermodynamics** *The increase in internal energy of a closed system is equal to the difference of the heat supplied to the system and the work done by the system:* $\Delta U = Q - W$ (Note that due to the ambiguity of what constitutes positive work, some sources state that U = Q + W, in which case work done on the system is positive.)
3. **Second law of thermodynamics** *Heat cannot spontaneously flow from a colder location to a hotter location.* The second law of thermodynamics is an expression of the universal principle of dissipation of kinetic and potential energy observable in nature. The second law is an observation of the fact that over time, differences in temperature, pressure, & chemical potential tend to even out in a physical

*Professor & Head (Physics) Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.) INDIA

system that is isolated from the outside world. Entropy is a measure of how much this process has progressed. The entropy of an isolated system that is not in equilibrium tends to increase over time, approaching a maximum value at equilibrium.

4. **Third law of thermodynamics** As a system approaches absolute zero the entropy of the system approaches a minimum value.

There are four fundamental kinds of entity in thermodynam- ics-states of a system, walls between systems, thermodyna- mic processes, and thermodynamic operations. This allows three fundamental approaches to thermodynamic reasoning -that in terms of states of thermodynamic equilibrium of a system, & that in terms of time-invariant processes of a system, and that in terms of cyclic processes of a system.When a system is at thermodynamic equilibrium under a given set of conditions of its surroundings, it is said to be in a definite thermodynamic state, which is fully described by its state variables.

If a system is simple as defined above, and is in thermodynamic equilibrium, and is not subject to an externally imposed force field, such as gravity, electricity, or magnetism, then it is homogeneous, that is say, spatially uniform in all respects.The macroscopic variables of a thermodynamic system in thermodynamic equilibrium, in which temperature is well defined, can be related to one another through equations of state or characteristic equations. They express the **constitutive** peculiarities of the material of the system. The equation of state must comply with some thermodynamic constraints, but cannot be derived from the general principles of thermodynamics alone.

A thermodynamic process is defined by changes of state internal to the system of interest, combined with transfers of matter and energy to and from the surroundings of the system or to and from other systems. A system is demarcated from its surroundings or from other systems by partitions that more or less separate them, and may move as a piston to change the volume of the system and thus transfer work.

A central concept of thermodynamics is that of energy. By the First Law, the total energy of a system and its surroundings is conserved. Energy may be transferred into a system by heating, compression, or addition of matter, and extracted from a system by cooling, expansion, or extraction of matter. In mechanics, for example, energy transfer equals the product of the force applied to a body and the resulting displacement.

Conjugate variables are pairs of thermodynamic concepts, with the first being akin to a "force" applied to some thermodynamic system, the second being akin to the resulting "displacement," and the product of the two equalling the amount of energy transferred. The common conjugate variables are:

1. Pressure-volume (the mechanical parameters);
2. Temperature-entropy (thermal parameters);
3. Chemical potential-particle number (material parameters).

Thermodynamic potential are different quantitative measures of the stored energy in a system. Potentials are used to measure energy changes in systems as they evolve from an initial state to a final state. The potential used depends on the constraints of the system, such as constant temperature or pressure. For example, the Helmholtz and Gibbs energies are the energies available in a system to do useful work when the temperature and volume or the pressure and temperature are fixed, respectively.

4. where is the **T** temperature, **S** the entropy, **P** the pressure, **V** the volume, the chemical potential, **N** the number of particles in the system, and **i** is the count of particles types in the system.

Scope of thermodynamics - Originally thermodynamics concerned material and radiative phenomena that are experimentally reproducible. For example, a state of thermodynamic equilibrium is a steady state reached after a system has aged so that it no longer changes with the passage of time. But more than that, for thermodynamics, a system, defined by its being prepared in a certain way must, consequent on every particular occasion of preparation, upon aging, reach one and the same eventual state of thermodynamic equilibrium, entirely determined by the way of preparation. Such reproducibility is because the systems consist of so many molecules that the molecular variations between particular occasions of preparation have negligible or scarcely discernable effects on the macroscopic variables that are used in thermodynamic descriptions. This led to μBoltzmann's discovery that entropy had a statistical or probabilistic nature. Probabilistic and statistical explanations arise from the experimental reproducibility of the phenomena.

Gradually, the laws of thermodynamics came to be used to explain phenomena that occur outside the experimental laboratory. For example, phenomena on the scale of the earth's atmosphere cannot be reproduced in a laboratory experiment. But processes in the atmosphere can be modeled by use of thermodynamic ideas, extended well beyond the scope of laboratory equilibrium thermodynamics. A parcel of air can, near enough for many studies, be considered as a closed thermodynamic system, one that is allowed to move over significant distances. The pressure exerted by the surrounding air on the lower face of a parcel of air may differ from that on its upper face. If this results in rising of the parcel of air, it can be considered to have gained potential energy as a result of work being done on it by the combined surrounding air below and above it. As it rises, such a parcel usually expands because the pressure is lower at the higher altitudes that it reaches. In that way, the rising parcel also does work on the surrounding atmosphere. For many studies, such a parcel can be considered nearly to neither gain nor lose energy by heat conduction to its surrounding atmosphere, and its rise is rapid enough to leave negligible time for it to gain or lose heat by radiation; consequently the rising of the parcel is near enough adiabatic. Thus the adiabatic gas law accounts for its internal state variables, provided that there is no precipitation into water droplets, no evaporation of water droplets, and no sublimation in the process. More precisely, the rising of the

parcel is likely to occasion friction and turbulence, so that some potential and some kinetic energy of bulk converts into internal energy of air considered as effectively stationary. Friction and turbulence thus oppose the rising of the parcel.

References :-

1. Cengel, Yunus A.; Boles, Michael A. (2005). Thermodynamics – an Engineering Approach. McGraw-Hill. ISBN 0-07-310768-9.
2. Landsberg, P.T. (1978). Thermodynamics and Statistical Mechanics, Oxford University Press, Oxford UK, ISBN 0-19-851142-6,
3. Khanna, F.C., Malbouisson, A.P.C., Malbouisson, J.M.C., Santana, A.E. (2009). Thermal Quantum Field Theory. Algebraic Aspects and Applications, World Scientific, Singapore, ISBN 978-981-281-887-4,
4. North, G.R., Erukhimova, T.L. (2009). Atmospheric Thermodynamics. Elementary Physics and Chemistry, Cambridge University Press, Cambridge UK, ISBN 978-0-521-89963-5.
5. Mak, M. (2011). Atmospheric Dynamics, Cambridge University Press, Cambridge UK, ISBN 978-0-521-19573-7.

****

Fixed Point In Fuzzy Metric Spaces

Dr. D. K. Sagar *

Abstract - in this paper well-known Fixed Point theorem of Banach and Edelstein are extended to Fuzzy Metric Space in the sense of Kramosil and Michalek.
Keywords - Fixed point, Banach Fixed point, Fuzzy Metric Space.

Introduction: The Banach Fixed Point Theorem states that each self mapping T of a complete metric space (X, d) such that
$d(Tx, Ty) < K\, d(x, y)$
$(x \neq y, 0 < K < 1)$

Has a unique Fixed Point. The Assumption $k < 1$ is non superfluous. With $k = 1$ the mapping of that sort need not have a Fixed point. However, if X is compact, then T has a unique Fixed point (Edelstein [3])

In this note we extended Fixed point theorem of Banach and Edelstein to contractive mapping of a complete and compact Fuzzy Metric Space, respectively, we shall deal with Fuzzy metric spaces introduced by Kramosil and Michalek [6].

Preliminaries –

Definition 2.1 - A binary operation
$*: [0,1] \times [0,1] \to [0,1]$
is a (continuous) t-norm if
{[0,1,] *} is an abelian (topological) monoid with unit 1 such that
$a * b \leq c*d$ whenever $a \leq c$ and $b \leq d$ for $a, b, c, d \in [0, 1]$.

Definition 2.2 – The 3-tuple (X,M,*) is a Fuzzy Metric Space if X is an arbitrary set, M is a Fuzzy set in $X^2 \times [0, \infty)$ satisfying the Following conditions:

(i) $M(x, y, 0) = 0$,
(ii) $M(x, y, t) = 1$ for all $t>o$ if $x = y$,
(iii) $M(x, y, t) = M(y, x, t)$
(iv) $M(x, y, t) * M(y, z, s) \leq M(x, z, t + s)$
(v) $M(x, y, .) : [0, \infty) \to [0, 1]$ is left continuous, for all x, y, z $\in$ X and t, s > o.

Definition 2.3 – A sequence $\{x_n\}$ in X is a Cauchy if
$$\lim_{n \to \infty} M(x_{n+p}, x_n, t) = 1$$
for each t > o and p > o. A Sequence $\{x_n\}$ in X is convergent to $x \in X$ if
$$\lim_{n \to \infty} M(x_n, x, t) = 1$$
for each t > o.

Notation: $\lim_{n \to \infty} x_n, = x$.

(Since * is continuous, it follows from (2.4) that the limit is uniquely determined)

Fuzzy Metric space in which every Cauchy sequence is convergent is called complete. It is called compact if every sequence contains a convergent subsequence.

Lemma -
$M(x, y, .)$ is non-decreasing for all $x, y \in X$

Proof.- Suppose $M(x, y, t) > M(x, y, s)$
for some $0 < t < s$.
then $M(x, y, t) * M(y, y\, s\text{-}t)$
$\leq M(x, y, s) < M(x, y, t)$
By (2.2)
$M(y, y, s\text{-}t) = 1$,
Therefore $M(x, y, t) < M(x, y, t)$, a contradiction. Note Kramosil and Michalek [6]
Assumed actually * to be measurable only and consequently, they assumed
$M(x, y, .)$ to be non-decreasing note also that the condition (4.1) below is included in their definition of a Fuzzy Metric Space.

Theorem -

(Fuzzy Banach contraction theorem). Let (X,M, *) be a complete Fuzzy Metric Space such that

(4.1) $\lim_{t \to \infty} M(x, y, t) = 1$

for all $x, y \in X$.

let $T: X \to X$ be a Mapping satisfying

(4.2) $M(Tx, Ty, Kt) \geq M(x, y, t)$

For all $x, y \in X$. where $0 < K < 1$.

Then T has a Unique Fixed Point.

Proof –

Let $x \in X$ and let $x_n = T^n x$ $(n \in N)$ By a simple induction we get
$$M(x_n, x_{n+1}, k\, t) \geq M\left(x, x_1, \frac{t}{K^{n-1}}\right) \quad (4.3)$$
for all n and t > o.

Thus for any positive integer p we have
$M(x_n, x_{n+p}, t) \geq M(x_n, x_{n+1}, t) *$

*Asst. Prof. (Mathematics) Shri Sitaram jaju Govt. Girls' College, Neemuch (M.P.) INDIA

p
———————* M (x_{n+p-1}, x_{n+p}, t)
P

≥ M (x, x_1, t) *——————— ≥
pk^n

M (x, x_1, t)
pk^n

by (4.3) According to (4.1)
we now have

lim M (x_{n+p}, x, t) ≥ 1 * …….* 1 = 1
n → ∞

i-e {x_n} is a Cauchy hence convergent. Call the limit y.
thus we have

M (Ty, y, t) ≥ M (Ty, T_{xn}, t)
2

* M (x_{n+1}, y, t)
2

≥ M (y, x_n, t) * M (x_{n+1}, y, t)
2k 2

→ 1 * 1 = 1

By (2.4) and (2.2) we get
Ty = y a Fixed Point To show uniqueness, assume
Tz = z for some z ∈ X
Then

1 ≥ M (z, y, t) = M (Tz, Ty, t)
≥ M (z, y t)
k
= M (Tz, Ty t)
k
≥ M (z, y t) > ———————— >
k^2
M (z, y t) → 1
k^n

as n → ∞. By (2.2) z = y.

Lemma -

If lim x_n = x and
n → ∞
lim y_n = y then
n → ∞
M (x, y, t - ∈) <
lim M (x_n, y_n, t)
n → ∞
< M (x, y, t + ∈)
For all t > 0 and 0 < ∈ < t
2

Proof – by (2.4)

M (x_n, y_n, t) ≥ M (x_n, x, ∈)
2
* M (x, y, t - ∈)
* M (y, y_n, t).
2

Thus

lim M (x_n, y_n, t) ≥ 1 * M (x, y, t- ∈)
n → ∞
* 1 = M (x, y, t- ∈)

On the other hand

M (x, y, t + ∈) ≥ M (x, y_n, ∈) *
2
M (x_n, y_n, t) * M (y_n, y, ∈),
2

Hence M (x, y, t + ∈)
≥ lim M (x_n, y_n, t).
n → ∞

References :-

1. G. Artico, R. Moresco, on Fuzzy Metrizability, J. Math. Anal. Appli. 107 (1985), 144-147.
2. Deng – zi- ke, Fuzzy pseudo Metric spaces, J. Math. Anal. Appl. 86 (1982), 74-95.
3. M. Edelstein, on Fixed and periodic points under contractive mapping, J. London Math. Soc. 37 (1962), 74-79.
4. M.A. Erceg, Metric spaces in Fuzzy set theory, J. Math. Anal. App. 69 (1979), 205-230.
5. O. Kalevea, S.Seikkala, on Fuzzy Metric Spaces, Fuzzy sets and systems 12 (1984), 215-229.
6. J. Kramosil, J. Michalek, Fuzzy Metric and statistical Metric Spaces, kibernetika 11 (1975), 336-344.
7. B.K. Ray, H. Chatterjee, some results on Fixed Points in Metric and Banach spaces bull. Acad. Polon. Math. 25 (1977), 1243-1247.
8. B.Schweizer, A. SKlar, Statistical metric spaces, pacific J. Math. 10 (1960), 314-334.

****

New Chemical Sensors In Environmental Analytical Chemistry

Dr. Rashmi Ahuja *

Abstract - One of the challenges that an analytical chemist often encounters is the characterization of unknown compound when it is present in small amount ie. nanograms to few micrograms in a mixture of a compound. Such situation arises when one wants to determine the structure of an impurity in trace level in a final product or a metabolite that forms after the durg administration. Conventional Spectroscopic tools such Mass Spectrometry, Nuclear Magnetic Resonance (NMR) Spectroscopy requires pure samples at a higher amount. NMR typically requires more than 10.0 mg in a pure form to do all kinds of experiments to determine the structure of unknown compounds. Now it has become possible to get not only a simple proton information of the compound but one can get connectivity information by carrying out 2D NMR experiments viz cosy, HSQC, experiment by SPE/MS/LC "all in one" and by Lasers and Electro optical Techniques as new chemical sensors.

Introduction - Since mid – 1990s, the limitations of spectroscopic techniques have been overcome by hyphenation of high performance liquid chromatography (HPLC) with NMR as well as improvement in NMR Spectrometer hardware while hyphenation of MS with HPLC is known. Further in recent years, it has become possible to enhance sensitivity of NMR with the introduction of cryoprobes (1) and also now it is commercially possible to do simutaneous hyphenation between HPLC, MS and NMR (1,2) The incorporation of solvent suppression pulse sequences allows characterization of small molecules at microgram levels.

Though the above advancements in analytical instrumentation has enabled the analytical chemists to provide structural information at micro level, the running cost of the analysis has remained high as one has to use deuterated solvents to effects the separation and to record the spectrum It has also limitations in terms certain protons, undergoing H-D exchange because of which the structural details of the compound have remained incomplete.

Environmental Analysis by Laser Plasma Spectroscopy – Time resolved laser induced plasma spectroscopy is a promising analytical method for studying environmental samples, since it performs direct solid analysis without sample preparation, It provides fast and simultaneous information on many elements of interest. This method is developed for trace heavy-metal analysis in sand and soils, direct aerosol analysis as well, and established that the main limitation is caused by signal fluctuations. Although several different setups have already been suggested for obtaining detailed plasma information,this is new approaches , which provides excellent spectral and temporal resolutions, together with acceptable spatial information. The instrument is characterized and employed for a study of plasma dynamics in direct relation to analytical issues. The detailed information obtained from this multifiber spectrometer is used for investigation of matrix effects in laser plasma spectuscopy.

Direct Environmental Analysis using Laser Multiphoton Ionization - laser multiphoton ionization is a well established research technique in physical chemistry However, environmental applications under embient conditions represent a new and modern research field in analytical chemistry. This method is extremely sensitive and can be rather selective in the resonant operational mode. The first multiphoton ionization analysis on a non-conducting particulate material is the analysis of trace aromatic compound on environmental (soil) samples. Special emphasis was placed on establishment correlation between sample water content and detection of polycyclic aromatic hydrocarbon (PAH) contamination.

Laser Induced Fluorescence for Environment Analysis - This is a powerful analytical method which can be used for sensitive environment mentoring. An important, yet unstudied, effect related to environmental applications of laser inducted fluorescence is caused by the inevitable presence of particulates in the analysed liquid samples. A research was conducted for understanding analytical effects associated with a suspension of microparticals in Liquid which clearly affects the induced fluorescence signals and distubs the analytical results.

Chemical Imaging - Chemical imaging is a new and powerful tool that precisely maps chemical constituents in a sample by combining traditional analytical spectroscopy with two-dimensional visualization. It enables simulfoneous spectroscopy at each pointy in the sample, thus obtaining information on Chemical composition with spatial resolution. Chemical imaging device based on fourier transform imaging

* **Professor (Chemistry) Swami Vivekanand Govt. College, Berasia (M.P.) INDIA**

spectroscopy was constructed which provide information in visible range. This powerful research method was applied in several analytical studies.

Multichannel extraction of ions for Time-of-flight Mass Spectrometry - Direct introduction of samples into high vacuum MS System is important for on line monitoring, however the current techniques are rather difficult. A promising method for achieving this goal is based on multichannel extraction through a track membrane.

Chemometry – Kinetic analysis in often applied for simultaneous determination fish. To establish conditions for optimum analytical performance a general theory was developed. The proposed model is based on the angle between the kinetic vectors involved and on their norm ratio.

Wavelength selection method for simultaneous spectroscopic Analysis: Simultaneous multicomponent is usually carried out by multivariate calibration models based on full spectra, Better results can be obtained by a proper wavelength selection An error indicator function was developed which predicts the analytical performance under given experimental conditions, using a certain spectral range. A different approach has been attempted where the concept of solid phase extraction (SPE) has been added in the process of hyphenation to trap the eluting analytes which not only enhance concentration of the sample, but also reduces the consumption of deuterated solvents.

Conclusion - At present, modern analytical chemistry is on its new stage of change. Due to demands resulted from development of life science, environmental science, New materials, as well as the introduction of biology, information technology, analytical chemistry has entered into a new phase. For instance, Bio active substances such as DNA, proteins, Chiral medicines and environmental poisons, are more and more chosen as analytical objects. The system of analytical studies have turned from simple to complex ones. New chemical sensors by Lasers and electro optical techniques. and SPE, NMR, MS approaches for environmental analytical studies and characterization of compounds are the needs of hour.

References :-

1. Audrius Pukalskas, etal, J Chromatography, A 43, 681, (2008)
2. Martin Sandvoss, Magn Reson Chem. 34;762 (2005)
3. Dr. V. Manohar, Lead Lecture. Vision (2010)
4. Anal Chim Acta 136, 372-378 (2001)
5. A.B. Chaudhary and S.Nirupa , J.Chin SOC. 49 (2) 2002.

****

Effects Of Man-Made Diasters

Dr. Basanti Jain *

Abstract - The disaster caused by human activities are included in man-made disasters. Some man-made disasters are a kind of accidents, nuclear disasters, chemical and Biological disasters, etc. Man-made disasters can be well predicted so precaution may be taken to reduce the impact. Man made disasters rarely cause massive destruction of lives and properties.
Key Words - Disasters, Destruction, Damage, Poisonous.

Types Of Diasters

Accidents : Accidents occur suddenly and are caused due to human error. Some accidents are :-

- Traffic accidents
- Collapse of bridge and buildings
- Accident with fire crackers and fires breaking out in the buildings.
- Collision of ships, aircraft accidents, sinking of boats and electrical related accidents.

Effects :

- The casualties are very few in the accidental cases.
- The effects due to accidents are not long lasting.
- The damaging capability is very less.

Nuclear disaster - Nuclear disasters are more destructive and harmful to all living creatures and properties. It is caused due to accident in nuclear power plants or deliberate use of nuclear weapons by the humans.

Effects -

- It causes mass destruction to lives and livestocks.
- It makes many people disabled both physically and mentally.
- it reduces the productivity of all young living organisms as it kills the reproductive cells.
- It causes cancer and other diseases.

There was the big nuclear disaster in August 1945 when USA dropped atom bombs on Hiroshima and Nagasaki in Japan during the World war-II. About 1 to 1.5 lakh people died.

Chemical Disaster - Chemical disasters are one type industrial accidents which are caused due to leakage of poisonous gases from industries during the handling of hazardous gases. Since the chemical hazards are gaseous substances, they spread very rapidly and to a very vast area.

Effects: It cases death and disability to many human lives, eg : Bhopal Gas tragedy. The gruesome tragedy that overtook Bhopal on the night of December 2-3, 1984 has been described as history's worst environmental disaster in the world.

The poisonous gas which gushed out of the Union carbide Pesticide factory formed into a huge mass of white clouds and moved menacingly towards the densely populated areas, spreading death and devastation in the city. More than 40 tons of liquid stored in a Union Carbide tank, turned into toxic Methyl Isocyandate (MIC) gas and escaped.

MIC has damaged lungs eyes, central nervous system, neuromuscular system and the brain. The chemicals are strongly suspected to be toxic to genetic cells. The Bhopal gas tragedy killed more than 3000 persons and severely affected more than three lakh persons.

Biological Disasters : It is related to use of biological weapons that produce disease microbes or toxins to kill human beings and other living organisms. This is also known as poor man's bomb.

Effects -

- It causes many diseases to living organisms.
- It causes death and disability to many human lives

References :-

1 Methyl Isocyanate, Newyork, Union Carbide Corporation, F-41443A - 7/76, 1976.
2 Agarwal, S.K., "Environmental Awareness", Bansi Prakashan, Jodhpur pg.no. 89, 1995
3 Eckerman, Ingrid, The Bhopal Saga causes and consequences of the World's largest Industrial Disaster, India; Universities Press, ISBN 81 - 7371 - 515 - 7, 2005.
4 Deswal Surinder, Deswal Anupama, "Energy Ecology, Environment and Society", Dhanpati Rai & Co. (P) Ltd.. Educational & Technical Publishers, Delhi, 2005.
5. Pani Balram, "Text Book of Environmental Chemistry", I.K. International Publishing House, Pvt. Ltd., New Delhi, 20-21, 2007.
6 "Madhya Pradesh Government", Bhopal Gas Tragedy Relief and Rehabilitation Department, Bhopal M.P. Gov. in Retrieved 28 August 2012.

* Professor (Chemistry) Govt. Girls M.L.B. (P.G.) Autonomous College, Bhopal (M.P.) INDIA

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Noise Pollution Generated By Firecrackers

Dr. Sadhna Goyal *

Introduction - Diwali is a festival of lights. Traditionally people of all ages enjoy firecrackers. Some accidents do occur every year claiming a few lives. Besides, noise generated by various firecrackers is beyond the permissible noise levels of 125 decibels as per the environmental. We hear various type of sounds every day. Sound is mechanical energy from a vibrating source. A type of sound may be pleasant to someone and at the same time unpleasant to others. The unpleasant and unwanted sound is called noise. The source of noise can be classified as mobile sources and stationary sources. Mobile sources are various modes of transportation and stationary sources include industrial operations and celebrations.

Noise can cause temporary or permanent hearing loss. It depends on intensity and duration of sound level. Auditory sensitivity is reduced with noise level of over 90 dB. in the mid-high frequency for more than a few minutes. Continuous exposure to noise affects the functioning of various system of the body. It may result in high per tension insomnia, gastro intestinal and digestive disorders, behavioral changes emotional changes etc.

Besides maintaining the sound levels on each of the types of firecrackers or banning the production of such firecrackers which produce noise above permissible level, it is important to educate people about the harmful effects of noise during festivals.

Suggestion for control of noise pollution

1. Sources of noise pollution like heavy vehicles and old vehicles may not be allowed to ply in the populated areas.
2. Noise making machines should be kept in containers with sound absorbing media. The noise path will be interrupted and will not reach the workers.
3. Proper oiling will reduce the noise from the machinery.
4. Silencers can reduce noise by absorbing sound. For this purpose various types of fibrous material could be used.
5. Planting more trees having broad leaves.
6. Legislation can ensure that sound production is minimized at various social functions. Unnecessary horn blowing should be restricted especially in vehicle congested areas.

References :-

1. Anubha Kaushik, C.P. Kaushik, Perspectives in Environmental Studies. Vth edition 2015.
2. O.P.Tyagi and Mehra, Environmental Chemistry 2nd Edition (2000), pp.25
3. B.K.Sharma, Analytical Chemistry, 2nd Edition (2006), pp.104-125
4. P.S.Sindhu , Environmental Chemistry, 2nd Edition (2010), pp.3-35
5. A.K.Dey, Environmental Chemistry, 7th Edition(2010), pp.277
6. H.Kaur, Environmental Chemistry,3rd Edition(2009), pp.187
7. Gray W Vanloon, Stephen J Duffy Oxford, 2nd Edition(2008), pp.101
8. Current Science, Vol 108 No 8, 25 April (2015), pp 1421-1465
9. M.C.Vachanth & N.karthi, Journal of ECO Toxicology & Environmental Monitoring, Volume 22, Nos 1&2 Jan. & Mar. (2012), pp.198-200
10. R.M.Verma, Analytical Chemistry, 3rd Edition(1994) pp.89-90

Table – 1 Noise levels generated by firecrackers

Type of fire cracker	Manufacturer	Generated noise level in decibels
Atom bomb (timing bomb)	Coronation Fireworks, Sivakashi	135 ± 2
Chinese crackers (a string of 1000 in one piece)	Sri Kaliswari Fireworks, Sivakashi	128
Chinese crackers (a string of 600 in one piece)	Sri Kaliswari Fireworks, Sivakashi	132
Nazi (Atom Bomb)	Coronation Fireworks, Sivakashi	135 ± 0
Magic formula (flower bomb)	Rajan Fireworks, Sivakashi	136 ±1
Atom bomb (foiled)	Sri Kaliswari Fireworks, Sivakashi	131 ±2
Hydrogen bomb	Sri Patrakali Fireworks, Sivakashi	134 ±2
Rajan Classic Dhamaka (foiled bomb)	Rajan Fireworks, Sivakashi	136 ±0
Samrat Classic Bomb (Deluxe)	Venketeswara Fireworks, Sivakashi	136 ±0
Hydro Foiled (bomb)	Sri Kaliswari Fireworks, Sivakashi	132 ±2
* Three Sound (bomb)	Coronation Fireworks, Sivakashi	119 ±7
Atom Bomb	Local	136 ±0

* **Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidhyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA**

ग्लोबल वार्मिंग - एक पर्यावरणीय समस्या

प्रो. एस.के. सिकरवार *

प्रस्तावना - पर्यावरण भौतिक वातावरण का द्योतक है। आजकल के यान्त्रिक और औद्योगिक युग में इसको प्रदूषण से बचाना अनिवार्य है। सामान्य जीवन प्रक्रिया में जब अवरोध होता है तब पर्यावरण की समस्या जन्म लेती है। यह अवरोध प्रकृति के कुछ तत्वों के अपनी मौलिक अवस्था में न रहने और विकृत हो जाने से प्रकट होता प्रदूषण भी एक पर्यावरणीय समस्या है जो आज एक विश्वव्यापी समस्या बन गई है। पशु-पक्षी, पेड़-पौधे और इंसान सब उसकी चपेट में हैं। उद्योगों और मोटरवाहनों का बढ़ता उत्सर्जन और वृक्षों की निर्मम कटाई प्रदूषण के कुछ मुख्य कारण हैं। कारखानों, बिजलीघरों और मोटरवाहनों में खनिज ईंधनों (डीजल, पेट्रोल, कोयला आदि) का अंधाधुंध प्रयोग होता है। इनको जलाने पर कार्बनडाइआक्साइड, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड आदि गैसें निकलती हैं। इनके कारण हरितगृह प्रभाव नामक वायुमंडलीय प्रक्रिया को बल मिलता है, जो पृथ्वी के तापमान में वृद्धि करता है और मौसम में अवांछनीय बदलाव ला देता है। अन्य औद्योगिक गतिविधियों से क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी) नामक मानव-निर्मित गैस का उत्सर्जन होता है जो उच्च वायुमंडल के ओजोन परत को नुकसान पहुंचाती है। यह परत सूर्य के खतरनाक पराबैंगनी विकिरणों से हमें बचाती है। सीएफसी हरितगृह प्रभाव में भी योगदान करते हैं। इन गैसों के उत्सर्जन से पृथ्वी के वायुमंडल का तापमान लगातार बढ़ रहा है। साथ ही समुद्र का तापमान भी बढ़ने लगा है। पिछले सौ सालों में वायुमंडल का तापमान 3 से 6 डिग्री सेल्सियस बढ़ा है। लगातार बढ़ते तापमान से दोनों ध्रुवों पर बर्फ गलने लगेगी। अनुमान लगाया गया है कि इससे समुद्र का जल एक से तीन मिमी प्रतिवर्ष की दर से बढ़ेगा। अगर समुद्र का जलस्तर दो मीटर बढ़ गया तो मालद्वीप और बंग्लादेश जैसे निचाईवाले देश डूब जाएंगे। इसके अलावा मौसम में बदलाव आ सकता है - कुछ क्षेत्रों में सूखा पड़ेगा तो कुछ जगहों पर तूफान आएगा और कहीं भारी वर्षा होगी। आज ये सब पर्यावरणीय समस्याएं विश्व के सामने मुंह बाए खड़ी हैं। विकास की अंधी दौड़ के पीछे मानव प्रकृति का नाश करने लगा है। सब कुछ पाने की लालसा में वह प्रकृति के नियमों को तोड़ने लगा है। प्रकृति तभी तक साथ देती है, जब तक उसके नियमों के मुताबिक उससे लिया जाए। प्रकृति से हमें उतना ही लेना चाहिए जितने से हमारी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है। पर्यावरणीय समस्याओं से पार पाने का यही एकमात्र रास्ता है। ग्लोबल वार्मिंग महज कोई सैद्धांतिक शब्द नहीं है जिसे किताबों में पढ़ लिया और फिर दिमाग से निकाल दिया। पृथ्वी के वातावरण का निरन्तर बढ़ता तापमान चिंता का विषय है। पर्यावरण संबंधी संयुक्त राष्ट्र की समिति **इंटरगवर्नमेंट चैनल ऑन क्लाइमेट चेंज** (IPCC) ने सख्त चेतावनी दी है कि इस शताब्दी के अंत तक भारत जैसे कई देशों को सूखे, बाढ़, तूफान जैसी कई आपदाओं का सामना करना पड़ सकता है। इसी साल के मध्य में अभी इस रिपोर्ट के मुताबिक आने वाले कुछ दशकों में समुद्र के जलस्तर में 89 सेंटीमीटर की बढ़ोत्तरी होगी। इस कारण इंडोनेशिया को लगभग दो हजार द्वीपों से हाथ धोना पड़ेगा। पिछले 50 वर्षों में अंटार्कटिका में पेंग्विनों की संख्या आधी रह गई है। ग्लेशियरों की मोटाई के अनुसार पिछले 30-40 सालों में चालीस प्रतिशत कम हो गई है। विश्व मौसम संगठन के अनुसार भी हमारी धरती का औसत तापमान 0.6 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ गया है।

इसी प्रकार गाड़ियों के द्वारा होने वाले प्रदूषण, कारखानों की धुँआ उगलनी चिमनियाँ उद्योगों से निकला खतरनाक रसायनों से भरा जल सभी कुछ प्रदूषण बढ़ाने में सहायक है। बढ़ते हुए प्रदूषण के कारण तथा पेड़ो की अंधाधुंध कटाई से वैश्विक तापमान में वृद्धि हुई। इसके चलते ग्लेशियर पिघलते हैं जिससे समुद्र का जलस्तर खतरनाक ढंग से बढ़ रहा है। अभी हाल ही की बात है जब अंटार्कटिका में एक बहुत बड़ा हिमखण्ड मात्र 35 दिनों में टूटकर समुद्र में समाहित हो गया। समुद्री जलस्तर में वृद्धि के कारण अनिश्चित व ज्यादा वर्षा तो होती ही है इसका सबसे बड़ा खतरा दुनिया भर के तटीय शहरों को भी होता है। सऊदी अरब में हुई बेमौसम बरसात व बर्फबारी पर्यावरण के गिरे स्वास्थ्य की ओर इशारा करता है संयुक्त राष्ट्र संघ ने पहले हमारे देश भारत की पहचान उन सत्ताईस देशों में की है जिनको समुद्र के बढ़ते जल स्तर से सबसे ज्यादा खतरा है। जैव विवधता के मुद्दे पर विश्व में छठा स्थान रखने वाले देश भारत के लिये यह और भी ज्यादा सोचनीय है।

आईपीसीसी के प्रमुख आर.के.पचोरी ने जलवायु परिवर्तन के लिये निम्न कारकों को उत्तरदायी बताया है

1. औद्योगिकरण (1880) से पूर्व $C0_2$ की मात्रा 280 पी पी एम थी जो अब 2005 के अंत में बढ़कर 379 पीपीएम हो गई है।
2. औद्योगिकरण से पूर्व मीथेन की मात्रा 715 पार्ट्स पर बिलियन (पीपीबी) थी ओर 2005 में बढ़कर 1734 पीपीबी हो गई है।
3. मीथेन की सान्द्रता में वृद्धि के लिये कृषि एवं जीवाश्म एवं ईंधन को उत्तरदायी माना गया है।
4. उपरोक्त वर्षों में नाइट्रसऑक्साईड की सान्द्रता क्रमश: 270 पीपीबी से बढ़कर 319 पीपीबी हो गई है।
5. समुद्री तापमान में भी 3000 मि.मी. वृद्धि हुई है।
6. समुद्री जलस्तर में वृद्धि 1961 के मुकाबले 2003 में औसतन वृद्धि 1.8 मिमी. हुई है।
7. पिछले 100 वर्षों में अंटार्कटिका के तापमान में दोगुनी वृद्धि हुई है तथा भूमध्य सागर, दक्षिणी एशिया और अफ्रीका में सूखा वृद्धि दर्ज की गई है।
8. मध्य अक्षांशो में वायु प्रवाह में तीव्रता आती है।
9. उत्तरी अटलांटिक से उत्पन्न चक्रवातों की संख्या में वृद्धि हुई है।

आईपीसीसी की रिपोर्ट इस बात की चेतावनी दी गई है कि समस्त विश्व के पास ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन कम करने के लिये मात्र 10 वर्ष का

* सहायक प्राध्यापक (रसायन शास्त्र) शहीद चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

समय और है। यदि ऐसा नहीं होता है तो समस्त विश्व को इसका परिणाम भुगतना पड़ेगा।

ग्रीन हाऊस प्रभाव – वायुमण्डल के संघटन में एक महत्वपूर्ण कारक है। कुछ और अन्य गैसे और CO_2 सूर्य की किरणों का अवशोषण करके वायुमण्डल को अपेक्षित ताप तक गर्म रखती है। इसे ही ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं। इस प्रभाव में मुख्य भूमिका CO_2 के अलावा CH_2, CFC , N_2O और O_3 गैसें हैं। ये गैसें पृथ्वी के चारों और एक आवरण बना लेती है। जिसमें सौर विकिरण प्रवेश तो कर लेता है लेकिन वापस नहीं जा पाता है और पृथ्वी तथा वायुमण्डल दोनों का ताप बढ़ता है। ग्रीन हाउस प्रभाव की घटना बहुत पुरानी है। लेकिन इस पर पहले ध्यान नहीं दिया जाता था। जब औद्योगीकरण की शुरूआत हुई तो यह प्रभाव चर्चा में आया। **(सारणी देखे)**

ग्लोबल वार्मिंग के संकेत –

- फैलती बीमारियां
- ऋतुओं का समय पूर्व आगमन
- वनस्पति और जीवों के क्रियाकलाप में परिवर्तन
- पानी के ताप में वृद्धि से मूंगा भित्ती संकट में
- भारी वर्षा, बाढ़, बर्फबारी सूखा आदि

ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव

- तापमान में तीव्र बढ़ोत्तरी
- समुद्री जल स्तर में वृद्धि
- पहाड़ो से पिघलते ग्लेशियर
- जल संकट

ग्लोबल वार्मिंग कम करने के उपाय

- CO_2 का स्तर कम किया जाये।
- विभिन्न माध्यमों से कूड़ा कड़कट कम करे।
- बिजली के उपकरणों के अनावश्यक प्रयोग से बचे।
- वनों का संरक्षण करे।
- आम बल्बों के स्थान पर सी.एफ.एल. का प्रयोग करे।
- आक्सीजन के लिये वनों का बचाव आवश्यक

यदि वर्तमान गति से पर्यावरण प्रदूषण जारी रहा तो आने वाले 75 वर्षों में पृथ्वी के तापमान में 3.6^0C की वृद्धि हो सकती है। जिसके बर्फ के पिघलने से समुद्री जल स्तर में 1 से 2 फीट तक की वृद्धि हो सकती है और मुम्बई, न्यूयार्क पेरिस, लंदन, मालदीव, हालैण्ड और बांग्लादेश जैसे देशों के अधिकांश भूखण्ड समुद्र में जलमग्न हो सकते हैं।

कुछ वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि वैश्विक तापन से पृथ्वी की अपनी धुरी पर घूमने की गति में लगातार कमी होती जा रही है। जर्मनी के वैज्ञानिकों के एक शोध के अनुसार भविष्य में पैदा होने वाली संतान में लड़को की संख्या बढ़ेगी जिसका कारण लड़को का लिंग निर्धारण करने वाले Y गुण सूत्र में गर्मी को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। अभी तक के इतिहास में 1990 का दशक सर्वाधिक गर्म रहा।

करीब दो दशक पहले से ही वैज्ञानिक हमें पर्यावरण के बारे में मसलन ग्लोबल वार्मिंग और ओजोन परत के क्षरण आदि खतरों से आगाह करते रहे हैं। कई वैश्विक नीतियों के बावजूद हम आज भी इस पर कोई संतोषजनक अंकुश लगा पाने में सफल नहीं हो सके हैं। ये खतरे हर देश हर व्यक्ति हर प्राणी सभी के सामने है। अत: जरूरत है कि हम पर्यावरण के प्रति जागरूक रहें तथा ईमानदारी से इसके संरक्षण के लिये कदम उठायें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पर्यावरण प्रदूषण – डॉ. वी. के. कुडेशिया।
2. कुरूक्षेत्र (ग्रामीण विकास को समर्पित) पत्रिका ।
3. विज्ञान प्रगति पत्रिका।
4. टाइम्स ऑफ इण्डिया।

क्रं.	वायु प्रदूषण	मुख्य स्त्रोत
1	ओजोन (O_3)	वायुमण्डलीय परिवर्तन से उत्पन्न जो स्वयं चालित वाहनों से उत्सर्जित नाइट्रोजन डाईऑक्साईड व हाइड्रोकार्बन के प्रति क्रिया से उत्पन्न पदार्थ।
2	सल्फर डाईऑक्साईड (SO_2)	फैक्ट्रियों में ऊर्जा उत्पादक यंत्रो/मशीनों अथवा कसी ठोस पदार्थों के पिघलाने वाले संयंत्र से उत्पन्न।
3	नाइट्रोजनडाईऑक्साईड(NO_2)	उच्च तापक्रम पर उत्पन्न ज्वलन प्रक्रिया के उपरांत सीधे उत्पन्न या वायुमण्डलीय परिवर्तन द्वारा उत्पन्न अथवा उर्वरक के संयंत्रो / उत्पाद द्वारा उत्सर्जित।
4	हाइड्रोजन फ्लोराईड (HF)	सुपर फास्फेट, एल्यूमिनियम गनल के दौरान
5	इथिलीन	ज्वलनशील प्रक्रिया अथवा प्राकृतिक उत्पाद
6	नाइट्रस ऑक्साईड (NO)	ज्वलनशील प्रक्रिया अथवा प्राकृतिक उत्पाद
7	क्लोरीन (Cl_2)	द्रव्य बहाव/निर्माण से उत्पन्न द्रव्य
8	हाइड्रोजन क्लोराइड	प्लास्टिक पदार्थों के ज्वलन से उत्पन्न पदार्थ।
9	विषैली पदार्थ	पिघलन एवं ज्वलन प्रक्रिया से उत्पन्न
10	अमोनिया	प्राकृतिक रूप से उत्पन्न अथवा चारे समुच्चय के सड़न से पैदा
11	सल्फेट	सल्फरडाईऑक्साईड के परिवर्तन से उत्पन्न
12	हाइड्रोजन फैरा ऑक्साईड	अखबार/पेपर उत्पाद मशीनों से उत्पन्न
13	नाइट्रेट	प्राकृतिक रूप से उत्पन्न या ज्वलीनशील प्रक्रिया से उत्पन्न
14	कार्बनडाईऑक्साईड	वायुमण्डलीय परिवर्तन से उत्पन्न या स्वयं चालित वाहनों से निकले (NO_2) व हाइड्रोकार्बन के प्रतिक्रिया से उत्पन्न पदार्थ

****

Health Status Of Women In India : A Perspective Study

Dr. Manik Samvatsar Dange *

Abstract -The health concerns of women are paramount for the well being of a country and are an important factor in gauging the empowerment of women in a country. However there are alarming concerns where maternal health care is concerned. A report of UNICEF in 2009 came up with shocking figures on he status of new mothers in India, the maternal mortality report of India stands at 301 per 1000, with as many as 78,000 women in India dying of child birth complications in that year. The purpose of present paper will explore the women empowerment through health status viz. sex ratio, life expectancy, reproductive health, maternal mortality rate through various related factors.

Introduction - The fundamental right to the highest attainable standard of health, including physical, mental and social well being has been recognized in many global, regional and national declarations and charters. There is now substantial evidence that – healthy populations are a foundation for sustainable social, economic and environmental development and for peace and security and vice versa. However, despite many advances over the previous decades, large numbers of disadvantaged people still suffer ill health, thousands dying every day from preventable cause, women and children from underserved communities bear a particularly high burden of preventable disease and health. (Inter ministerial conference on south-south cooperation in post ICDP and MDGs, Beijing- 22-23 Oct. 2013)

Everyday, approximately 1000 women die due to complications of pregnancy and childhood nearly all of there deaths are preventable. Access to family planning also known to play an important role in reducing maternal mortality. Health services include all services dealing with the diagnosis and treatment of disease or the promotion, maintenance and restoration of health. Every year, 99% of maternal deaths occur in developing countries. (Kushwah, Vandana, 2013)
India is one of the countries in the world where women and men have nearly the same life expectancy at birth. The fact that the typical female advantage in life expectancy is not seen in India suggests there are systematic problems with women's health. Indian women have high mortality rates, particularly during childhood and in their reproductive years. (Velkoff, Adlakha 1998)

The health of Indian women is intrinsically linked to their status in society. Research on women's status has found that the contributions Indian women make to families often are overlooked and instead they are viewed as economic burdens. There is a strong son preference in India, as sons are expected to care for parents as the age, this sons preference, along with high dowry costs for daughters, sometimes results in the mistreatment of daughters. Further Indian women have low levels of both education and formal labor force participation.
They typically have little their autonomy, living under the control of first their fathers then their husbands and finally their sons (Chatterjee, 1990, Desai 1994, Horowitz Kishwar 1985, The World Bank, 1996) All these factors exert a negative impact on the health status of Indian women.

What is women empowerment ?

In the simplest of words it is basically the creation of an environment- where women can make independent decisions on their personal development as well as shine as equals in society.

Women want to be treated as equals so much so that if a women rises to the top of her field it should be a common place occurence that draws nothing more than a raised eye at the gender. This can only happen if there is a channelized route for the empowerment of women.

Thus it is no real surprise that women empowerment in India is a hotly discussed topic with no real solution looming in the horizon except to doubly redouble our efforts and continue to target the source of all the violence and ill-will towards women.

The health and safety concerns of women are paramount for the well being of a country and is an important factor in gauging the empowerment of women in a country. However there are alarming concerns where maternal health care is concerned.

In its 2009 report, UNICEF came up with shocking figures on the status of new mothers in India. The maternal mortality report of India stands at 301 per 1000, with as many as 78,000 women in India dying of child birth complications in that year. Today due to the burgeoning population of the country, that number is sure to have

* Deptt. of Home Science, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.) INDIA

multiplied considerably. The main causes of Maternal Mortality are –

- Haemorrhage - 30%
- Anaemia - 19%
- Sepsis - 16%
- Obstructed Labour - 10%
- Abortion - 8%
- Toxaemia - 8%

The center of expertise in women's health and empowerment, believes that advances in women's health globally are impeded by poverty, limited access to educational and economic opportunities gender bias and discrimination, unjust laws, and insufficient state accountability. There forces intersect to restrict access to vital women's health services and the information at women need to improve their lives. By prioritizing women's health concerns, rights and empowerment. (UC Global Health institute, 2014)

Women Data

1. Women account for 50% of all people living HIV/AIDS globally.
2. In the year 2000, there were -
   - 80 Million unwanted pregnancies.
   - 20 Million unsafe abortions
   - 5 Lacs Maternal deaths

99% of there cases were reported in developing countries.

Child sex ratio (0-6 Yr) -

Child sex ratio has dropped from –

945 females / 1000 males in 1991

927 females / 1000 males in 2001

The United Nations children fund, estimated that up to 50 million girls and women are missing from India's population because of termination of the female foetus or high mortality of the girl child due to lame of proper care.

The average nutritional intake of women is 1400 calories daily. The necessary requirement is approximately 2200 calories.

38% of all HIV positive people in India are women yet only 25% of beds in AIDS care centres in India are occupied by them.

92% of women in India suffer from gynaecological problems.

300 women die everyday due to child birth and Pregnancy related causes.

The MMR/100,000 live birth in the year 1995 was 440.

Health - The average female life expectancy today in India is low compared to many countries, but it has shown gradual improvement over the years. In many families, especially rural ones, girls and women face nutritional discrimination within the family and are anaemia and malnourished.

The maternal mordtality in India is the 56th highest in the world (88), 42% of births in the country are supervised in medical institution. In rural areas, most of women with the help of women in the family, contradictory to the fact that unprofessional or unskilled deliver lacks the knowledge about pregnancy. (35)

Family Planning - The average women living in a rural area in India has little or no control over becoming pregnant. Women particularly women in rural areas, do nto have access to safe and self-controlled method of contraception. The public health system emphasises permanent methods like sterlisation, or long-term methods like IUDS that do not need follow-up. Sterlization accounts for more than 75% of total contraception with female sterlisation accounting for almost 95% of all sterlization.

Sex Ratio - India has a highly skewed sex ratio, which is attributed to sex selective abortion and female infanticide affecting approximately one million female babies per year. (89) In 2011, Government stated India was missing three million girls and there are 48 less girls per 1000 boys. (90). Despite this, the government has taken further steps to improve the ratio and the ratio is reported to have been improved in recent years.

Women for both physiological and social reasons are more vulnerable than man to reproductive health problems, reproductive health problems, including maternal mortality and morbidity represent a major but preventable cause of death and disability for women in developing countries failure to provide information, services and conditions to help women protect their reproduction health therefore constitutes gender based discrimination and a violation of women's righths to health and life.

Women's status and reproductive health Care - Examines whether women's use of antenatal, delivery and post natal care services from health workers various by their level of empowerment as measured by the two indicators of empowerment. In societies where health care is widespread, women's empowerment many not affect their access to reproductive health service, in other societies, however, increased empowerment of women is likely to increase their ability to seek out and use health services to better meet their own rep. health goals, including the goal of safe motherhood.

Table indicates that none of the two indicators of empowerment is strongly associated with antenatal care, although the high coverage of ANC in the.

Gender inequality index

Value	-	0.610 (2012)
Rank	-	132nd out of 148
Maternal mortality (per 100,000)	-	200 (2008)
Women in parliament	-	10.9% (2012)
Females over 25 with secondary education	-	26.6% (2010)

Health and well being in 2012 -

1. The IMR was 49 compared with the male IMR of 46 and the overall IMR of 47 (2010). Among the major states, the highest overall IMR of 62 was observed in Madhya Pradesh and the lowest of is in Kerala in 2002-06 LEB for males was 62.6 Yr compared to 64.2 Yr of females.
2. LEB at birth has increased more among women compared to men. It is observed that in 2002-06 LEB for males was 62.6 Yr compared to 64.2 Yr for females.

3. 47% of the deliveries took place at a health facility in 2007-08. share of women who received antenatal care was 76.9% during this period.
4. The MMR has come down from 254 during 2004-06 to 212 during 2007-09.
5. 57.4% women in rural areas and 50.9% women in when areas suffered from anaemia during 2005-06. The share of anemic women across the age-groups is 15-19 years, 20-29 years, 30-39 years and 40-49 years is centred around 55% during the same period. Among the states, prevalence and anemia was he highest in Assam and Jharkhand, both at 69.5% and it was the lowest in Kerala at 32.8%
6. The share of deliveries in hospitals, maternity/nursing homes, health centers, etc. is 40.8 % while the deliveries assisted by doctors, trained 'dais', trained mid-wives, trained nurses etc. constitute another 48.8 %
7. over 99% of married women knwo about any of the method of contraception. The awareness about the female sterlization is very high in both urban and rural areas. The rural women are found to be less aware about the traditional methods of contraception (55.5%) compared the urban women (62.4%).
8. During 2010-11, the share of unprotected couples was 59.6% at 26.7%, sterlization was the most preferred method of family planning. Followed by IUD at 5.7% oral pill at 4.1% and C.C. at 3.9%.

Conclusion - To truly understand what is women empowerment, there needs to be a sea change in the mind-set of the people in the country. Not just the women themselves, but the men have to wake up to a world that is moving towards equality and equity. It is better that this is embraced earlier rather than later, for our own good.

Swami Vivekananda once said, "arise away and stop not until the goal is reached". Thus our country should thus be catapulted into the horizon of empowerment of women and revel in its glory.

We have a long way to go, but we will get there someday. We shall overcome.

References :-

1. Chatterjee, Meera, 1990, 'Indian women : their health and economic productivity', World Bank Discussion Papers, 109, Washington D.C.
2. Desai, Sonalde, 1994, 'Gender Inequalities and Demographic Behavior', India, New York.
3. Ganjiwale Jaishree, 2012, 'Current Health Status of Women in India – Issues and Challenges', Healthline, ISSN 2229-337X,3(2) July-Dec. 2012, P. 60-63
4. Horowitz, Beny and Madhu Kishwar, 1985, 'Family Life – The Unequal Deal', in Madhu Kishwar and Ruth Vanita, eds., in search of answers, Indian women's voices from Manushi, London.
5. Kalynai Menon – Sen, A.K. Shiva Kumar (2001) 'Women in India : How free ? How Equal ?' United Nations.
6. Kumar Ajith N, Devi Radha D (2010), 'Health of Women in Kerala : Current Status and Emerging Issues', Centre for Socio-economic and Environment Studies.
7. Kushwah Vandana (2013), 'The health status of women in India', Research Journal of chemical and environmental sciences, vol. I, (3) Aug. 2013, P. 66-69. http://www.aelsindia.com
8. Velkoff, Vicotoria A., Ad lakha Arjun (1998), 'Women of the World', 'Women's health in India', U.S.Deptt. of commerce, economics and statistics administration, Census Bureau, the official statistics. Dec. 10, 1998.
9. www.womenempowermentinindia.com
10. ucghi.universityofcaliforniaedu/coes/womens-health/index.aspx
11. www.opml.co.uk/sites/opml/files
12. www.iosjr.journals.org
13. Indian Girl Infanticide – Female fetocide; 1 million girls killed before or after birth per year. Rupee News. 2009-9-8.
14. PTI (2012-10-9) News/National; India loses 3 Million girsl in infanticide. Chennai, India : The Hindu.
15. Sex Ratio in India showing improvement. Nationalturk.com
16. A handbook statistical indicators on Indian women 2007, Ministry of Women and Child Development.

See Table in next page

Table
Progress of Indian Women, 2008

Development Indicators	Women	Men	Total	W	M	To
DemographyPopulation (in Million) 1971 and 2001	264.1	284.0	548.1	495	531.2	1027.1
Decennial growth1971 and 2001	24.9	24.4	24.6	21.7	20.9	21.34
Vital StatsSex Ratio 1971-2001	930	-	-	933	-	-
Expectations of life at birth 1971, 2001-06	50.2	50.5	50.9	66.91	63.87	-
Mean age at marriage 1971-1991	17.2	22.4		19.3	23.9	-
Health and Family welfare						
Birth Rate 1971-2001	-	-	36.9	-	-	22.8
Death Rate 1971-2001	15.6	15.8	15.7	6.8	8.0	7.4
IMR (1978and2008)Per 1000 live birth	131	123	127	55	52	53
Child Death Rate (2007) 0 to 4 Yr.	-	-	-	16.9	15.2	16.0
Child Death Rate (2007) 5 to 14 Yr.	-	-	-	1.2	1.1	1.2
MMR – 1980 and 2006	468	-	-	254	-	-

Statistics on women in India-2010 NIPCCD, New Delhi- Sulochana Vasudeva.

Female Statistics 2008-12

Life Expectany : Female as a % of males 2012	105.4
Antenatal Care (%) at least one visit	74.2
Antenatal Care (%) at least Four visit	37
Delivery care (%) skilled attendant at birth	52.3
Delivery care (%) Institutional delivery	46.9
Delivery care (%) C-Section	8.5
MM Ratio	210
Women living HIV (thousands) 2012	750
Early initiation of breast feeding (%)	40.5

****

Expenditure Pattern Of Rural Households

Dr. Anju Bhatia * Aditi Vijay **

Abstract - In India, poverty is the chief characteristics of rural households. Every rural household has limited income. Expenditure is payment of cash or cash-equivalent for goods or services, or a charge against available funds in settlement of an obligation as evidenced by an invoice, receipt, voucher, or other such document. The main objective of the study to assess their socio-economic profile and expenditure pattern of the rural households. Data were generated through self constructed interview schedule. The study was conducted near Jaipur city, in Sanganer Tehsil, at Charanwala village. Convenience sampling was done to select 90 households out of 210 households. The head of the households were taken as the respondents. The major findings of the study are the mean income of the households was Rs.8361.1 per month. On an average, the households were spending less than half of their income on food, nearly one-fourth on electricity and nearly one-sixth on transportation per month. Majority of the households were saving money.
Key-words - Income, Expenditure, Households, Socio-economic profile.

Introduction - Household income is a valuable welfare indicator. Expenditure patterns change as household income grows. For lower income households, the emphasis is on basis needs and food items but as their disposable income groups, purchase of durable, expenditure on health and education and investment related spending come into play.

Types of family expenditure:

Money spent for the fulfilment of family goals and requirements is known as expenditure depends upon the capacity of family members to earn money and their real and psychic income.

Family expenditure is of three types:

1. **Fixed expenditure -** This fixed expenditure and no reduction is possible in it, e.g., house rent, school fees, pay of the servant, etc.
2. **Semi-fixed expenditure -** Expenditure on certain items can be increased or decreased such as expenditure on food, clothes, etc. In case of marriage or festival at home, expenditure on clothes increases. Similarly if there are some guests at home, then expenditure on food also increases.
3. **Other expenditure -** It is not a compulsory expenditure. Such expenditure is made if some money is left after spending on fixed and semi-fixed expenditure.

Such expenditure is made on entertainment or on veins of luxury and comfort.

Methodology - This study was conducted near jaipur city, in Sanganer Tehsil, at Charanwala village. Sanganer tehsil is 15 km far from Jaipur city and Charanwala village is 15 km far from Sanganer Tehsil. So, Charanwala village is 30 km far from jaipur city. Charanwala village consists of total 210 households, out of which 90 households were taken by convience sampling. The head of the household were taken as the respondents. Data were collected through interview schedule. After completion of the field work, a master plan was constructed for systematically entering the recorded data. Then the data were transferred on work tables and tally sheets. They were then processed, tabulated and analysed and using statistical techniques. Frequency, percentage and mean were used to analyse the data. Mean is used to know the general or average of expenditure.

Results -

Table-1 (See in the last page)

Table -1 shows that in this study more than one-third (35.6 percent) of the respondents were illiterate. Very few (4.4 percent) of them were graduate. Looking towards the occupational pattern of the households a few (10 percent) of them engaged in agriculture. Less than half (43.3 percent) of them were in service sector. Due to urbanization, interest of households towards agriculture is decreasing. Less than two-third (56.7 percent) of the households were earning between Rs. 5000-10,000 per month, while only a few (4.4 percent) were earning approximately Rs. 20,000-30,000 a month. About one-fourth (24.5 percent) of them were earning upto Rs. 5,000 per month because they were doing work as labour. The mean income per month was Rs.8361.1.

Expenditure Pattern - (See next page) The Graph-1 clearly depicts that all of the households were spending less than half (45.7 percent) on food, less than one-fourth (22.2 percent) on electricity, nearly one-sixth (17.3 percent) on transportation, less than one-tenth (6.9 percent) on education, very few (2.3 percent) on entertainment, very few (2.4 percent) on clothes & foot wears and a few (3.4 percent)

* Professor (Home Science) University of Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Home Science) Jai Narayan Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

on water bills of their income. With the change in social scenario of the village, they were spending more on transportation & electricity.

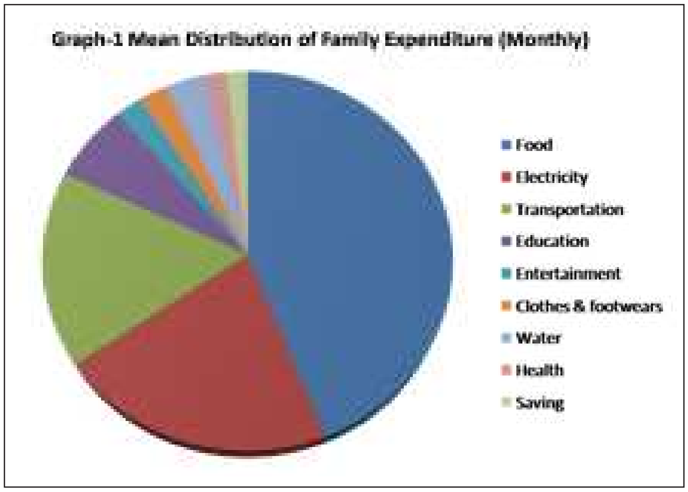

Table-2 (See in the last page)

Table-2 shows that according to Engel's law, medium income group should spend half (50 percent) of their income on food items but households of village were spending less than half (46 percent) on food items per month. They were spending fewer amounts (2.4 percent) of money on clothes & foot wears as compared to Engel's law. Village was well equipped with modern techniques of electricity, so they were spending nearly one-fourth (22.2 percent) of their income on playing electricity bill. The households were used facility of government health centre. So, they were spending very few (1.8 percent) on health services per month. With the change in social scenario, they were going city for job and studies. Thus, they were spending approximately one-sixth (17.3 percent) on transportation and a few (6.9 percent) on education per month. According to Engel's law should save 7 percent but they saved only few (4.3 percent) of their income per month. The households of village were spending more than income. Therefore, they were taking loan to fulfil their needs.

Table-3 (See in the last page)

Table-3 shows the distribution of the households according to expenditure on food. Food is our basic need, so all of the households were spending less than half (45.7%) of their income on food items per month. Cereal is the most important food item, so majority (70%) of the households were spending a big amount (more than Rs.1000) of their income on cereals per month. About one-sixth (16.7%) of them were spending between Rs. 700-1000 per month. A very few (1.1%) of them were spending less than Rs. 250 on cereals.

A few (6.7%) of the households were spending more than Rs. 1000 on grocery. While less than three- fourth (64.5%) of them were spending Rs. 700-1000 per month. It has been also observed that majority (75.6%) of the households were spending less than Rs. 250 on fruits monthly.

Most of the households grow the vegetables on their own in their kitchen garden. So, they spend less on vegetables. Majority of the households had livestock. So, they spend less money on milk. The data also depicts that nearly three-fourth (66.7%) of the households were spending Rs. 500-700 on other food items. While nearly one-fourth (21.1%) of them were spending Rs. 700-1000. Other items are ghee, oil and nuts.

Table-4 Distribution of the households according to Expenditure on Clothes and Foot wears (Annually)
N=90

S.No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Rs. 1000-2000	18	20
2.	Rs. 2001-2500	35	38.9
3.	More than Rs. 2500	37	41.1

Mean= Rs. 2408, Monthly mean= Rs. 200.6

Table-4 reveals that less than half (41.1%) of the households were spending more than Rs. 2500 per year on clothes and foot wears. Less than one-fourth (20%) of them were spending between Rs. 1000-2000. The mean expenditure of the households on clothes & foot wears was Rs. 200.6 per month.

Table-5 Distribution of the households according to Expenditure on Electricity Bill (Monthly)
N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Rs. 500-1000	13	14.5
2.	Rs. 1001-1500	7	7.8
3.	Rs. 1501-2000	29	32.2
4.	Rs. 2001-2500	30	33.3
5.	Rs. 2501-3000	11	12.2

Mean= Rs. 1855.6

Table-5 shows that one-seventh (12.2%) of the households of the were spending between Rs. 2500-3000 on electricity per month. More than one-third (33.3%) of them were spending between Rs. 2000-2500 and nearly one-third (32.2%) of the households were spending between Rs. 1500-2000 monthly.

Table-6 Distribution of the households according to Expenditure on water (Monthly)
N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Rs. 200-250	38	42.2
2.	Rs. 251-300	19	21.1
3.	Rs. 301-350	-	-
4.	Rs. 351-400	9	10
5.	Rs. 401-500	9	10
6.	Nil	15	16.7

Mean=Rs. 282.6

Table-6 shows that there was problem of water in village. Only 4-5 houses had bore well facility. The data reveals that majority (83.3%) of the households were taking water from paid water tankers. Cost of the paid water tankers was Rs. 200-250 for 1000 litres water. Less than half (42.2%) of the households were taking only one tanker per month. While less than half (41.1%) of them were taking more than one tanker per month. Whereas one-sixth (16.7%) of the households had no resources of water. They were taking water from bore well's of other households.

Table-7 Distribution of the households according to Expenditure on Health Services (Monthly)

N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Less than Rs. 100	22	24.4
2.	Rs. 101-200	22	24.4
3.	Rs. 201-400	3	3.3
4.	More than Rs. 400	5	5.6
5.	No expenses	38	42.3

Mean= Rs.150

The table-7 shows that less than half (42.3%) of the households were spending no money on health services. About one-fourth (24.4%) of the households were spending less than Rs. 100 per month on health services, because they use the facility of government health centre. While a few (5.6%) of them were spending more than Rs. 400, because they use the facilities of private hospitals and clinics.

Table-8 Distribution of the households according to Expenditure on Transportation (Monthly)

N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Less than Rs. 500	12	13.3
2.	Rs. 501-1000	10	11.1
3.	Rs. 1001-1500	20	22.3
4.	Rs. 1501-2000	31	34.5
5.	Rs. 2001-2500	13	14.4
6.	Rs. 2501-3000	4	4.4

Mean= Rs. 1444.4

The villagers were going city for job and study. Thus according to table-8 more than one third (34.5%) of the households were spending between Rs. 1500-2000 on transportation monthly. While one-sixth (14.4%) of them were spending between Rs. 2000-2500.

Table-9 Distribution of the households according to Expenditure on Entertainment (Monthly)

N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Rs. 100-250	37	41.4
2.	Rs. 251-500	3	3.3
3.	No expenses	50	55.6

Mean=Rs.190

The table-9 reveals that more than half (55.6%) of the households were spending nothing on entertainment. Less than half (41.1%) of the households were spending between Rs.100-250 on entertainment. Entertainment sources were dish T.V., films, tour and travels etc.

Table-10 Distribution of the households according to Expenditure on Education (Annually)

N=90

S. No.	Amount (Rs.)	Frequency	Percentage
1.	Less than 1000	13	14.4
2.	1001-2500	16	17.8
3.	2501-5000	2	2.2
4.	5001-7500	7	7.8
5.	7501-10000	23	25.6
6.	More than 10000	27	30
7.	No expenses	2	s2.2

Mean= Rs. 7096.5, Monthly Mean= Rs. 578.2

The table-10 shows that one-seventh (14.4%) of the households were spending less than Rs. 1000 on education because parents sent their children in government school. While one-fourth (25.6%) of them were spending between Rs. 7500-10000, because parents sent their children in private schools for learning.

Conclusion - The study found that people of Charanwala village were engaged in service sector. The infrastructure of the households found to be good. The village was well equipped with modern techniques like T.V., mobile, electricity, cooler, vehicles etc.

It can be noted that the expenditure pattern of rural households is changing. A considerable share of family budget spends towards transportation, electricity and education of children. Expenditure of the households was more as compared to their income. So, they were taking loan to fulfil their needs.

Suggestions -

1. The knowledge of the monthly/ annually budget plan of family expenditure should be given to the rural households.
2. The government should provide job opportunities to the individuals of rural areas.

References :-

1. Datta and Choudhary, Income, Consumption and Saving in Urban and Rural India, Review of Income and Wealth, 1968; Vol. (14); pp.37-56.
2. Govt. Of Mauritius, Report of Household Budget Survey, The Department of Statistics, 2002
3. Hendriks S.L. and Lynee M.C., Expenditure pattern and elasticities of rural household sampled in two communal area, Developement Southern Africa, 2003; Vol.20; pp.105-127.
4. Report, Survey Result on household expenditure, Department of Statistics Government of Malaysia, 1999.
5. http://www.ieke.com
6. http://www.preservearticles.com
7. http:// www.thewisdomjournal.com/blog/saving-vs-investing/
8. http://www.business-standard.com/india/news/

Table-1 Socio-economic profile of the households

N=90

S. No.	Attributes	Category	Frequency	Percentage
1.	Educational status (head of the family)	(a) Graduation	4	4.4
		(b) Higher school	9	10
		(c) High school	11	12.2
		(d) Middle school	13	14.5
		(e) Primary school	21	23.3
		(f) Illiterate	32	35.6
2.	Occupational pattern	(a) Agriculture	9	10
		(b) Business	23	25.6
		(c) Service	39	43.3
		(d) Labour	19	21.1
3.	Income (Monthly)	(a) <Rs.5000	22	24.5
		(b) Rs.5001-10,000	51	56.7
		(c) Rs.10,001-20,000	13	14.4
		(d) Rs.20,001-above	4	4.4
	Mean income	Rs. 8361.1		
4.	Type of house	(a) Pakka	87	96.7
		(b) Semi-pakka	3	3.3
		(c) Kaccha	-	-
5.	Type of family	(a) Joint family	59	65.6
		(b) Nuclear family	31	34.4
6.	Number of livestock	(a) More than 4	32	35.6
		(b) 2 or 3	30	33.3
		(c) Less than 2	12	13.3
		(d) Nothing	16	17.8

Table-2 Comparison between Engel's law and family consumption

Total income	**Rs.8000/-**		**Rs.8361.1/-**	
Items	**According to Engel's law**		**Consumption of the family**	
	Income	**Percentage**	**Income**	**Percentage**
Food	4000	50	3824.7	45.8
Clothes & footwear	1200	15	200.6	2.4
Electricity	300	3.8	1855.6	22.2
Water	100	1.2	282.6	3.4
Health services	360	4.5	150	1.8
Transportation	-	-	1444.4	17.3
Entertainment	200	2.5	190	2.8
Education	400	5	578.2	6.9
Saving	560	7	359.6	4.3

Table-3 Distribution of the households according to Expenditure on Food (Monthly)

N=90

S. No.	Items	<Rs.250	Rs. 251-350	Rs. 351-500	Rs. 501-700	Rs. 701-1000	Rs. 1001-2000	Mean
1.	Cereals	1(1.1%)	-	-	11(12.2%)	15(16.7%)	63(70%)	1267
2.	Grocery	-	-	4(4.4%)	22(24.4%)	58(64.5%)	6(6.7%)	813
3.	Fruit	68(75.6%)	20(22.2%)	2(2.2%)	-	-	-	227.2
4.	Vegetables	4(4.4%)	24(26.7%)	32(35.5%)	24(26.7%)	6(6.7%)	-	456.7
5.	Milk	13(14.4%)	31(34.5%)	31(34.5%)	4(4.4%)	8(8.9%)	3(3.3%)	430.8
6.	Other food items	-	1(1.1%)	10(11.1%)	60(66.7%)	19(21.1%)	-	630
Total Mean								3824.7

****

High Heels: The Biggest Culprit of Female Foot Pain

Dr. Smita Jain *

Introduction - In the world of fashion, women's shoes are iconic. High heels are no exception. They have come a long way since their origination in ancient Egypt. Originally worn primarily for ceremonial purposes, they were a status symbol of the time. Earlier High-heeled shoes were limited to those of a higher social status. Now, centuries later, high heels have evolved into various shapes and styles that can be worn by everyone. Among some of the most popular are pumps, peep-toe, evening sandals, sling backs and the ever-famous stiletto.

There are hundreds of thousands of nerves in your foot and 28 bones (that's 13.5 percent of all the bones in your body). They hold you up from morning 'til night and take the repetitive stress of 10,000 steps each day. And how do we repay them? By shoving them into uncomfortable shoes that exacerbate the stress they're already under. More than 90 percent of women who wear heels suffer from pain, soreness and fatigue..

High heels, though a staple of nearly every woman's closet these days, aren't exactly the most reasonably designed footwear. We wobble and slip and turn our ankles on every uneven stone, but refuse to trade them in for more sensible flats and sneakers.

More women are wearing higher heels, and for longer, and experts are increasingly concerned about the long-term damage they are doing to their feet. High heels are fashionable, but uncomfortable, and can even lead to chronic foot damage.

Recent research suggests that up to a third of women suffer permanent problems as a result of their prolonged wearing of 'killer heels', ranging from hammer toes and bunions to irreversible damage to leg tendons.

Many of the problems - which can occur simultaneously - are caused by the increased pressure high heels put on the ball of the foot; the higher the heel, the greater the pressure. The knee and back can also be affected. One in ten women wears them at least three days a week, and a recent survey found a third had hurt themselves falling while wearing high heels.

There are other consequences, as 'High heels' make us raise our heel and as soon as we do that our centre of gravity is pushed forward. 'What happens then is we bend our lower back to compensate for this and that changes the position of our spine, putting pressure on nerves in the back.' This can cause sciatica, a painful condition where nerves become trapped, triggering pain and numbness as far down as the feet. Another common problem, is that the Achilles tendon - which runs up the back of the leg from the heel - becomes permanently damaged. 'This tendon is designed to be flexible, so the foot can lie flat or point. But many women who wear high heels too often suffer a shortening of the tendon because once the heel is pointed upwards, it tightens up. Stretching it again can be very painful.

'When you try to put your foot into flat shoes we get a lot of pain in the back of the heel. Most women can avoid this by sticking to heels no higher than 1.5 inches. But 3inches or more can shorten the Achilles tendon.

Other common complaints include bunions, bony growths at the base of the big toe caused by tight, ill-fitting shoes, & socalled 'pump bumps', where straps and the rigid backs of pump-style shoes cause a bony enlargement on the heel. Many women also develop hammertoes, where tight-fitting shoes force them to crumple up their toes, shortening the muscles inside and leaving them permanently bent.

Muscle Development and Chronic Injury - Podiatrists warn that elevated heels can hurt muscle development in growing bodies, causing leg and back problems at an earlier age. Significant time spent in high heels can also cause plantar fasciitis, heel spurs and shortening of the Achilles tendon, which makes this tendon vulnerable to injury. High heels are also a source of Morton's neuroma, a painful condition that affects the ball of your foot. While heels don't cause bunions, they can exacerbate the condition due to the "forefoot pinch." All these conditions are aggravated by weight and can lead to inner knee pain, hip pain and lower back pain.

Circulation Problems - Even adults can experience significant leg health problems after wearing high heels too often, so it reasons that children should not develop a fondness for these impractical shoes. Heels restrict the calf pump, which acts as the heart for your legs by pumping blood out of your lower extremities. High heels position your foot in a way that limits your ability to flex your calf, paralyzing this vital muscle movement.

* **Assisstant Professor (Home Science) Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA**

Walking Mechanics - Even the mechanics of walking, which are developed during these early years, can be negatively impacted and create lifelong issues. According to a recent study of frequent heel wearers and rare heel wearers, those who wear heels at least 40 hours a week put more mechanical strain on their calf muscles, even when walking barefoot. Researchers found these changes in walking mechanics lead to shortened calf muscle fibers, increasing the risk of muscle strain. Beginning this trend of shortening calf muscles and changing the wearer's gait before adulthood may cause even more dramatic physical consequences.

Injury Risks - With high heels, falls and other injuries are also a big possibility, particularly for young children who do not understand the balance and stability limitations of heels. Young kids are also very physically active and may engage in sports and other active games with this improper footwear. Without the experience or maturity of adults, children may not even realize when their heels put them in a dangerous position.

"High heels don't promote proper foot posture," says Phillip Vasyli, a podiatrist and founder of Vionic, a brand of biomechanically correct kicks with built-in orthotics. When we wear heels, our arch becomes higher, and yet the profile of the shoe itself is a flat ramp that doesn't follow our foot's curvature. Some surprising facts about Women wearing High Heels should know :

Small heels are good for you. Most people over-pronate, which means their arches and ankles collapse inward on each step. Going up on your toes—like when you slip into a pair of heels—turns your ankles slightly outward, counteracting the collapse. A stable 1- to 2-inch heel is ideal for this. A low heel also takes the strain off tight calf muscles, relieving pain.

You don't need more shock absorption. Pronation is your foot's natural way to absorb the shock of hitting the ground. The foot essentially unlocks itself, softening to absorb the blow, then rolls outward, becoming rigid again to support your weight as you lift your other foot and begin to propel forward. People who over-pronate remain in the unstable, unlocked position even when all of their weight is on one foot. For them, shock-absorbing cushioning just adds to the instability.

Every inch of heel height can put another 25 percent of your body weight onto your forefoot. That means, if you're rocking 4-inch heels, you're effectively walking on your tippy toes all day.

That burning sensation under the ball of your foot is actual heat. When your feet slip forward in high heels, you naturally claw your toes to try to stay in place. This pushes the head of your second metatarsal (the base of your second toe) into the sole of your shoe. The pressure and friction create a literal increase in temperature, according to studies.

Running in heels may lead to knee arthritis. Running witrh 2 ¾-inch heels increases lateral movement of the knees (toward and away from each other), which could contribute to arthritis.

High heels push the center of gravity forward, taking the hips and spine out of alignment.

Knee joint pressure can increase by as much as 26 percent when a woman wears high heels.

Calf muscles contract and adjust to the angle of the high heels. Muscles may shorten and tighten.

The position of the ankle in a high heel causes the Achilles tendon to shorten and tighten and can cause heel pain. High heels force your body weight to redistribute on the ball of the foot, which can lead to joint pain.

Survey conducted in Indian Colleges shows girls have an extensive shoe collections, still only two percent of girls say they wear high heels every day, and just five percent say they wear high heels five days a week. Almost half say they wear heels rarely or never which may give them a leg up when it comes to preventing permanent damage to their feet.

Heel height also plays an important role in preventing foot pain. Almost half of women say they can withstand wearing heels that are three inches or higher, though podiatrists recommend staying more grounded.

"Wearing heels three inches or higher shifts body weight forward, and puts great pressure on the ball of the foot and the toes."

"Foot pain is never normal, and it's critical that anyone experiencing chronic pain—from footwear or otherwise—seeks care from an expert.

The risks to today's teenagers are thought to be particularly great as they begin wearing high heels at an early age, before their bodies are fully developed. They run the risk of hip trouble in adulthood and problems with back pain from the stress placed on their spines as youngsters.

To minimise the risks of high heels, choose a slightly thicker heel as this will spread the load more evenly. Wear soft insoles to reduce the impact on your knees - and make sure your shoes are a snug fit so the foot doesn't slide forward, putting even more pressure on the toes. Finally, 'wear high heels around the house for a few hours before you go out'. 'That gives feet a chance to get used to them before you try something more strenuous like dancing.'

References :-

1. High heels horrors! The hidden cost to your body of those crucial extra inches By Pat Hagan. 2014.
2. Stylish or Scary? Four dangers of High Heels for little girls By : Samuel P Martin.2013.
3. Are your shoes healthy? By: Katie.2014 .
4. The Complete book of shoes By: Marta Morales. 2013.
5. Shoes: A Celebration of Pumps, Sandals and Slippers By: Linda O'Keeffe.
6. Shoes A - Z : Designers, Brands, Manufacturers and Retailers By: Jonathan Walford.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Principles of Organic Farming and its Effect on food and Health

Dr. Rashmi Verma *

Introduction - Organic farming is a holistic approach to food production .making use of crop rotation ,environmental management and good animal husbandry to control pests and disease . processed organic food use ingredients that were produced organically and organic ingredients must make up at least 95% of the food there are only limited number of additives used in organic food production . some key aspects of organic food and farming 1) restricted use of artificial fertilizer for pesticides . 2)emphasis on animal welfare ,and prevention of ill health , including stoking densities free range choice of suitable breeds .3)use of conventional veterinary medicine is focused on treating sick animals .4)emphasis on soil health and maintaining this through application of manure ,compost and crop rotation . 5) processor of organic food have a restrict set of additives to use . 6) no use of GMO(genetically modified organism) or their products allowed.

Principles of Organic Farming and agriculture - Health, Ecology, Fairness and Care.

These principles are the roots from which Organic Agriculture grows and develops. They express the contribution that Organic Agriculture can make to the world. Composed as inter-connected ethical principles to inspire the organic movement — in its full diversity, they guide our development of positions, programs and standards

1. **The Principle Of Health -** This principle points out that the health of individuals and communities cannot be separated from the health of ecosystems - healthy soils produce healthy crops that foster the health of animals and people. Health is the wholeness and integrity of living systems. It is not simply the absence of illness, but the maintenance of physical, mental, social and ecological well-being. Immunity, resilience and regeneration are key characteristics of health. The role of Organic Agriculture, whether in farming, processing, distribution, or consumption, is to sustain and enhance the health of ecosystems and organisms from the smallest in the soil to human beings. In particular, organic agriculture is intended to produce high quality, nutritious food that contributes to preventive health care and well-being. In view of this it should avoid the use of fertilizers, pesticides, animal drugs and food additives that may have adverse health effects.

2. **The Principle Of Fairness -** Organic Agriculture should build on relationships that ensure fairness with regard to the common environment and life opportunities. Fairness is characterized by equity, respect, justice and stewardship of the shared world, both among people and in their relations to other living beings .This principle emphasizes that those involved in Organic Agriculture should conduct human relationships in a manner that ensures fairness at all levels and to all parties - farmers, workers, processors, distributors, traders and consumers. Organic Agriculture should provide everyone involved with a good quality of life, and contribute to food sovereignty and reduction of poverty. It aims to produce a sufficient supply of good quality food and other products .This principle insists that animals should be provided with the conditions and opportunities of life that accord with their physiology, natural behavior and well-being. Natural and environmental resources that are used for production and consumption should be managed in a way that is socially and ecologically just and should be held in trust for future generations. Fairness requires systems of production, distribution and trade that are open and equitable and account for real environmental and social costs.

3. **The Principle Of Ecology -** Organic Agriculture should be based on living ecological systems and cycles, work with them, emulate them and help sustain them. This principle roots Organic Agriculture within living ecological systems. It states that production is to be based on ecological processes, and recycling. Nourishment and well-being are achieved through the ecology of the specific production environment. For example, in the case of crops this is the living soil; for animals it is the farm ecosystem; for fish and marine organisms, the aquatic environment. Organic farming, pastoral and wild harvest systems should fit the cycles and ecological balances in nature. These cycles are universal but their operation is site-specific. Organic management must be adapted to local conditions, ecology, culture and scale. Inputs should be reduced by reuse, recycling and efficient management of materials and energy in order to maintain and improve environmental quality and conserve resources. Organic Agriculture should attain ecological balance through the design of farming systems, establishment of habitats and maintenance of genetic and agricultural

* Asst. Professor (Home Science) Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

diversity. Those who produce, process, trade, or consume organic products should protect and benefit the common environment including landscapes, climate, habitats, biodiversity, air and water.

4. The Principle Of Care - Organic Agriculture should be managed in a precautionary and responsible manner to protect the health and well-being of current and future generations and the environment. Practitioners of Organic Agriculture can enhance efficiency and increase productivity, but this should not be at the risk of jeopardizing health and well-being. Consequently, new technologies need to be assessed and existing methods reviewed. Given the incomplete understanding of ecosystems and agriculture, care must be taken. This principle states that precaution and responsibility are the key concerns in management, development and technology choices in Organic Agriculture. Science is necessary to ensure that Organic Agriculture is healthy, safe and ecologically sound. However, scientific knowledge alone is not sufficient. Practical experience, accumulated wisdom and traditional and indigenous knowledge offer valid solutions, tested by time. Organic Agriculture should prevent significant risks by adopting appropriate technologies and rejecting unpredictable ones, such as genetic engineering. Decisions should reflect the values and needs of all who might be affected, through transparent and participatory processes. Organic Agriculture is a living and dynamic system that responds to internal and external demands and conditions.

Effect on nutritive value of food and Health - There are many different reason why consumer choose to buy organic food. these can include for example , concern for the environment and animal welfare. eating organic food is one way to reduce consumption of pesticides residues and additives. consumer may also choose to buy organic food because they believe that it is safer and more nutritious than other food, new research show significant nutritional differences between organic and non- organic food (Dian Bourn and John Prescott 2002) ,organic food also increase nutritional value, sensory Qualities, and food safety (Dr William Lockerefz 2010) . According to Denis Lairoh (2006) study nutritional quality and safety of organic food are more important because 1)organic plants products contain more dry matter and minerals (Fe,Mg) and contain more oxidant , micronutrient such as phenols and salicylic acid . 2)organic animal products contain more polyunsaturated fatty acid .

References :-

1. Dian Bourn and John Prescott (2002) " significant nutritional differences between organic and non- organic food".
2. Dr. William Lockerefz (2010) " A comparison of the nutritional value, sensory qualities, and food safety of organically and conventionally produced food".
3. Denis Lairoh (2006) "nutritional quality and safety of organic food" A review.

****

कामकाजी एवं घरेलू महिलाओं में रक्ताल्पता का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. नमिता सक्सैना * डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – लोहे की कमी से होने वाली रक्तालाप्तता भारत में एक बड़ी पोषण समस्या है। यह समस्या अन्य विकास शील देशों में भी व्याप्त है। 'रक्तालाप्ता का प्रतिशत महिलाओं व छोटें बच्चों में 60 से 70% के मध्य है। कुछ सर्वेक्षण दर्शाते हैं। कि ग्रामीण क्षेत्रों में रक्तालाप्तता ग्रसित लोगों की संख्या अत्यधिक है। शरीर में लोहे की कमी आहार में लोहा कम लेने के कारण हो सकती है अथवा शरीर से अधिक मात्रा में रक्त निकल जाने के कारण हो सकती है। शरीर में रक्त की कमी के कारण गर्भावस्था में माता तथा भ्रूण की मृत्यु की संभावनायें बढ़ जाती हैं। भारत रक्तालाप्ता के कारण लगभग 19% मातृ मृत्यु होती है। रक्तालाप्ता के कारण रोगप्रतिरोधक क्षमता में कमी आती है व संक्रामक बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। खून की कमी महिलाओं की कार्यक्षमता को भी प्रभावित करती है। इससे उनकी कार्यक्षमता, क्रियाशीलता व उत्पादकता में कमी आती है शीघ्र थकान, सांस फूलना कमजोरी के रूप में इसके लक्षण परिलक्षित होते हैं। चूंकि महिलायें घर व बाहर दोनों ओर महत्वपूर्ण भूमिकायें निभाती हैं वे परिवार का केन्द्रबिंदु है। जिन पर जिम्मेदारियों का प्रतिशत अत्यधिक है अत: शोधार्थी ने आने शोध का विषय 'कामकाजी एवं घरेलू महिलाओं में रक्ताल्पता का तुलनात्मक अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य –

1. कामकाजी व घरेलू महिलाओं में रक्ताल्पता का स्तर ज्ञात करना।
2. कामकाजी व घरेलू महिलाओं की रक्ताल्पता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना – 'कामकाजी व घरेलू महिलाओं के हिमोग्लोबिन के स्तर में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा'।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में 150 कार्यशील व 150 घरेलू महिलाओं का चयन ग्वालियर शहर से दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया। जैवरासायनिक परीक्षण द्वारा उनके रक्त का परीक्षण किया गया। तत्पश्चात् तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण कर महिलाओं का पोषण स्तर ज्ञात किया गया। सांख्यिकी विशलेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, एवं टी परीक्षण का उपयोग किया गया। (तालिका क्रमांक 1, ग्राफ क्रमांक 1)

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

तालिका क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

ग्राफ क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि अधिकतर कामकाजी और गैर कामकाजी महिलाएँ रक्ताल्पता से पीड़ित हैं। आई.सी.एम.आर. के मापक से मूल्यांकन करने पर पाया गया कि 21 प्रतिशत कामकाजी व 18 प्रतिशत घरेलू महिलाएँ सामान्य श्रेणी के अंतर्गत आती हैं। सामान्य से कम हीमोग्लोबिन के स्तर वाली महिलाओं में 16.4% कामकाजी महिलाओं तथा 14.4% घरेलू महिलायें पाई गईं। हीमोग्लोबिन के मध्यम स्तर की श्रेणी में 9.3% कामकाजी तथा 12% गैर कामकाजी महिलायें पाई गईं। गम्भीर रक्ताल्पता से ग्रसित महिलाओं में 3.3% कामकाजी तथा 5.6% गैर कामकाजी पाई गई। इस प्रकार 39% महिलायें स्वस्थ्य पाई गई उनमें हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य पाया गया। 30.6 प्रतिशत महिलाओं में हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम पाया गया अत: उनमें मामूली खून की कमी पाई गईं। 21.4% महिलाओं में मध्यम श्रेणी की रक्ताल्पता पाई गई तथा 9% महिलाओं में गम्भीर रक्ताल्पता पाई गई।

तालिका क्रमांक – 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 2 स्पष्ट होता है कि टी–परीक्षण का परिगणित मूल्य 298 स्वातंत्र्यांश पर 0.116 है जो 0.05 स्तर असार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना 'कामकाजी और घरेलू महिलाओं के हीमोग्लोबिन के स्तर में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा स्वीकृत होती है। तालिका से स्पष्ट है कि कामकाजी महिलओं के हीमोग्लोबिन का माध्य 10.52 है जबकि गैर कामकाजी महिलाओं के हीमोग्लोबिन का माध्य 10.50 है जो कामकाजी महिलाओं के माध्य से कम है। अत: महिलाओं के हीमोग्लोबिन के माध्य में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

निष्कर्ष – उपरोक्त शोध कार्य से निष्कर्ष निकलता है कि ग्वालियर शहर की चयनित महिलाओं में 61% महिलायें रक्तालाप्तता ग्रासित पाई गई जिनमें 9% महिलाओं में गम्भीर, 21.4% महिलाओं में मध्यम एवं 30.6% महिलाओं में मामूली रक्त की कमी पाई गई। केवल 39% महिलायें सामान्य स्वस्थ्य अवस्था में पाई गई तथा कार्यशील महिलाओं में रक्त की कमी का स्तर घरेलू महिलाओं की तुलना में मामूली अधिक पाया गया किंतु सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सुझाव – रक्तालाप्तता दूर करने के लिये प्रोटीन युक्त भोज्य पदार्थ दूध, दालें, अण्डा, पनीर का प्रतिदिन सेवन करना चाहिये। आहार में हरी पत्तोदार सब्जियाँ, गहरे रंग की सब्जियाँ, सेव, केला बेर व अंगूर आदि का सेवन करना चाहिये। किशमिश सूखे मेवे, अंजीर व गुड़ का सेवन नियमित करना चाहिये।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पार्क, के सामुदायिक स्वास्थ्य विज्ञान' पंचम संस्करण प्रकाशक में बनारसीदास भनोत 1167 प्रेमनगर जबलपुर 2009.

* प्रशिक्षक, महिला एवं बाल विकास विभाग, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

2. कानगो, मंगला 'पोषण एवं पोषण स्तर' रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर 2008.
3. पल्टा, अरूणा 'आहार एवं पोषण' शिवा प्रकाशन इन्दौर 2004.
4. स्नेहलता, 'पोषण स्तर' डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली 2010
5. सिंह, अनीता 'उपचारात्मक पोषण' प्रकाशक स्तर पब्लिकेशन आगरा।

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

तालिका क्रमांक – 1

महिलाओं के हीमोग्लोबिन का स्तर

हीमोग्लोबिन का स्तर (ग्राम प्रतिशत)	कामकाजी महिलाएँ संख्या	प्रतिशत	घरेलू महिलाएँ संख्या	प्रतिशत	कुल योग संख्या	प्रतिशत
11 सामान्य	63	21	54	18	117	39
9-11 सामान्य से कम	49	16.4	43	14.4	92	30.6
7-9 मध्यम	28	9.3	36	12	64	21.4
<7 से गम्भीर	10	3.3	17	5.6	27	9
कुल योग	150	50	150	50	300	100

(आई.सी.एम.आर. 1993)

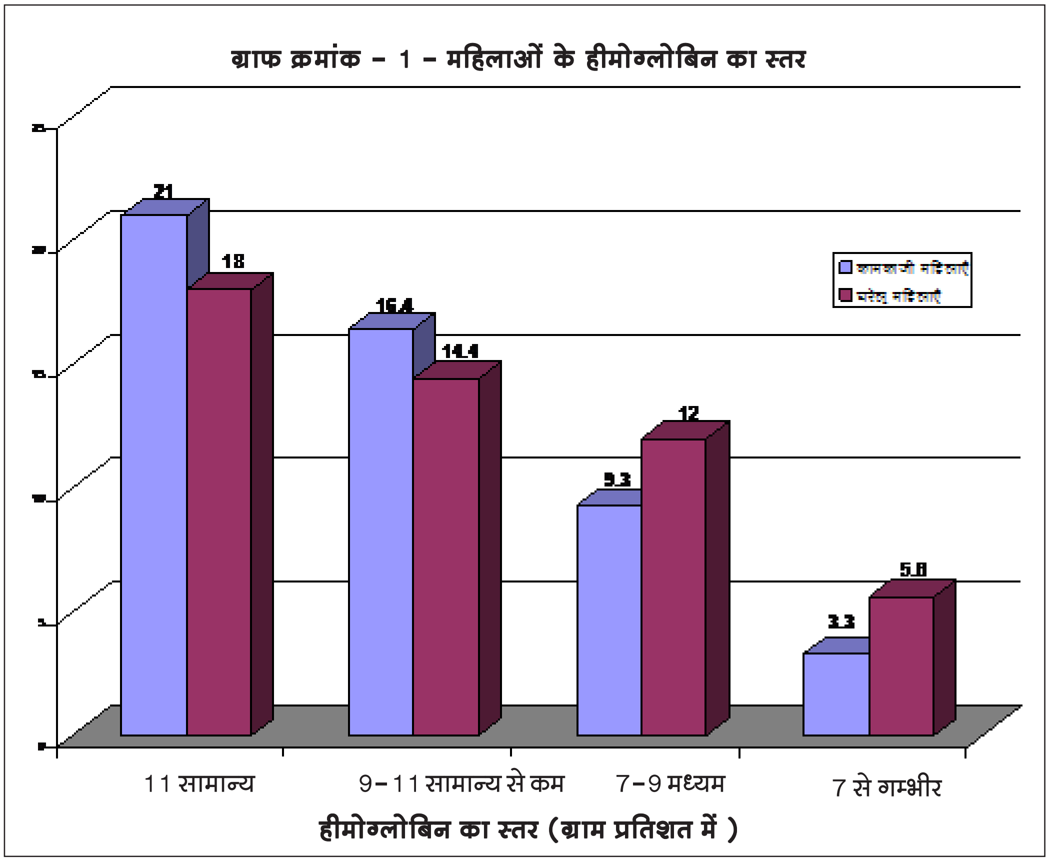

तालिका क्रमांक – 2

महिलाओं के हीमोग्लोबिन का माध्य, मानक विचलन एवम् टी-परीक्षण

व्यवसाय	माध्य	मानक विचलन	स्वातंत्र्यांश	टी-मूल्य	रिमार्क
कामकाजी महिलाएँ (150)	10.52	1.294	298	0.116	(≥ 0.05)
गैरकामकाजी महिलाएँ (150)	10.50	1.195			

(0.05 स्तर पर असार्थक)

****

मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (ग्वालियर शहर के विशेष संदर्भ में)

अंर्जुमन बानो * कंचन दुबे ** रश्मि पाण्डेय ***

प्रस्तावना – स्वास्थ्य एवं पोषण का गहरा सम्बन्ध है। कोई विद्यार्थी स्वस्थ्य तभी रह सकता है जब वह पर्याप्त मात्रा में संतुलित आहार लेता हो। असंतुलित एवं अल्प पोषण, विद्यार्थियों में कुपोषण उत्पन्न करते हैं। उत्तम पोषण स्तर के विद्यार्थी नियमित पठन एवं पाठ्येत्तर गतिविधियों में रूचिपूर्वक भाग लेते हैं। वे हमेशा प्रसन्नचित्त, स्फूर्तिवान, कार्यकुशल व व्यवहार कुशल होते हैं। वे दूरदर्शी होने के साथ–साथ तुरन्त निर्णय लेते हैं। उनमें बड़ों के प्रति आदरभाव व सहपाठियों के प्रति सहयोग की भावना पाई जाती है। हमारे देश के विद्यार्थियों को स्वस्थ्य कुशल, निपुण व होनहार बनाना शिक्षकों, अभिभावकों, समाज व राष्ट्र की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है क्योंकि आज के विद्यार्थी कल के जिम्मेदार पदाधिकारी एवं नागरिक बनेंगे।

विद्यार्थियों के प्रति सरकार ने मध्यान्ह भोजन व्यवस्था के माध्यम से अपनी भूमिका सुनिश्चित की है। इस व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में सहयोग करना हम सबका परम कर्त्तव्य है। मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों का पोषण स्तर ज्ञात करना, उनके पोषण स्तर को उन्नत बनाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना शोधार्थी अपना कर्तव्य समझती है। अत: शोधार्थी ने अपने शोध का विषय 'मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं को पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (ग्वालियर शहर के विशेष संदर्भ में)' चुना है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य है –

1. मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों का पोषण स्तर ज्ञात करना।
2. मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना – शोध अध्ययन हेतु निम्नानुसार शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया।

'मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा'

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु शासकीय विद्यालयों में संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित ग्वालियर शहर के 300 विद्यार्थियों (150 बालक + 150 बालिकायें) का चयन दैव निदर्शन विधि से किया गया। विद्यार्थियों का पोषण स्तर ज्ञात करने हेतु लक्षण परीक्षण विधि (Clenical Examination Method) का उपयोग किया गया। परिकल्पना की सार्थकता ज्ञात करने हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–परीक्षण (T-Test) का उपयोग किया गया।

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

तालिका क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि मध्यान्ह भोजन से लाभान्वित विद्यार्थियों में 11.33% बालक तथा 11.0% बालिकायें कुल 22.33% विद्यार्थियों का पोषण स्तर उच्च पाया गया। मध्यम पोषण स्तर के अंतर्गत 24.33% बालक तथा 25.0% बालिकायें कुल 49.33% विद्यार्थी पाये गये। निम्न पोषण स्तर वाले विद्यार्थियों में 14.33% बालक तथा 13.99% बालिकायें कुल 28.33% विद्यार्थी पाये गये। इस प्रकार मध्यम पोषण स्तर वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत सर्वाधिक पाया गया तथा उच्च पोषण स्तर वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत न्यूनतम पाया गया।

ग्राफ क्रमांक – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 2 से स्पष्ट है कि बालकों के पोषण स्तर का माध्य 15.92 तथा बालिकाओं के पोषण स्तर का माध्य 14.75 है अर्थात बालिकाओं के पोषण स्तर का माध्य बालकों के पोषण स्तर के माध्य की तुलना में कम है। तालिका दर्शाती है कि टी परीक्षण (T - Test) का परिगणित मूल्य 298 स्वांतत्रयांश पर 1.331 है जो कि 0.05 स्तर पर असार्थक है अत: शून्य परिकल्पना मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभांवित बालक एवं बालिकाओं के पोषणक स्तर में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता स्वीकृत होती है। इस प्रकार मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। इससे स्पष्ट है कि मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों के पोषण स्तर पर लिंग का प्रभाव नहीं पाया गया।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

1. ग्वालियर शहर के शासकीय विद्यालयों से संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों में मध्यम पोषण स्तर वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत सर्वाधिक तथा उच्च पोषण स्तर वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत न्यूनतम पाया जाना चिंताजनक है। जिसका कारण विद्यार्थियों का घर से भूखे पेट आना और केवल मध्यान्ह भोजन पर ही निर्भर रहना है विद्यार्थियों एवं अविभावकों को संतुलित आहार नियमित मध्यान्तर पर लेने तथा भोजन सम्बन्धी अच्छी आदतों के प्रचार प्रसार की आवश्यकता है।
2. बालक एवं बालिकाओं के पोषण स्तर में सार्थक अंतर नहीं पाया जाना लिंग भेद की असमानता न होने की ओर इंगित करता है इस प्रकार

* शोधार्थी (गृह विज्ञान)शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
*** शोधार्थी (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

बालक बालिकाओं के खान पान एवं पोषण स्तर में समानता परिलक्षित होती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पार्क, के सामुदायिक स्वास्थ्य विज्ञान पंचम संस्करण प्रकाशक में बनारसीदास भनोत 1167 प्रेमनगर जबलपुर 2009.
2. कानगो, मंगला 'पोषण एवं पोषण स्तर' रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर 2008.
3. पल्टा, अरूणा 'आहार एवं पोषण' शिवा प्रकाशन इन्दौर 2004.
4. स्नेहलता, 'पोषण स्तर' डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली 2010
5. सिंह, अनीता 'उपचारात्मक पोषण' प्रकाशक स्तर पब्लिकेशन आगरा।

तालिका क्रमांक – 1

मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों का पोषण स्तर

पोषण स्तर	बालक		बालिकायें		कुल	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
उच्च	34	11.33%	33	11.00%	67	22.33%
मध्यम	73	24.33%	75	25.00%	148	49.33%
निम्न	43	14.33%	42	13.99%	85	28.33%
योग	150	50%	150	50%	300	100%

मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों का पोषण स्तर

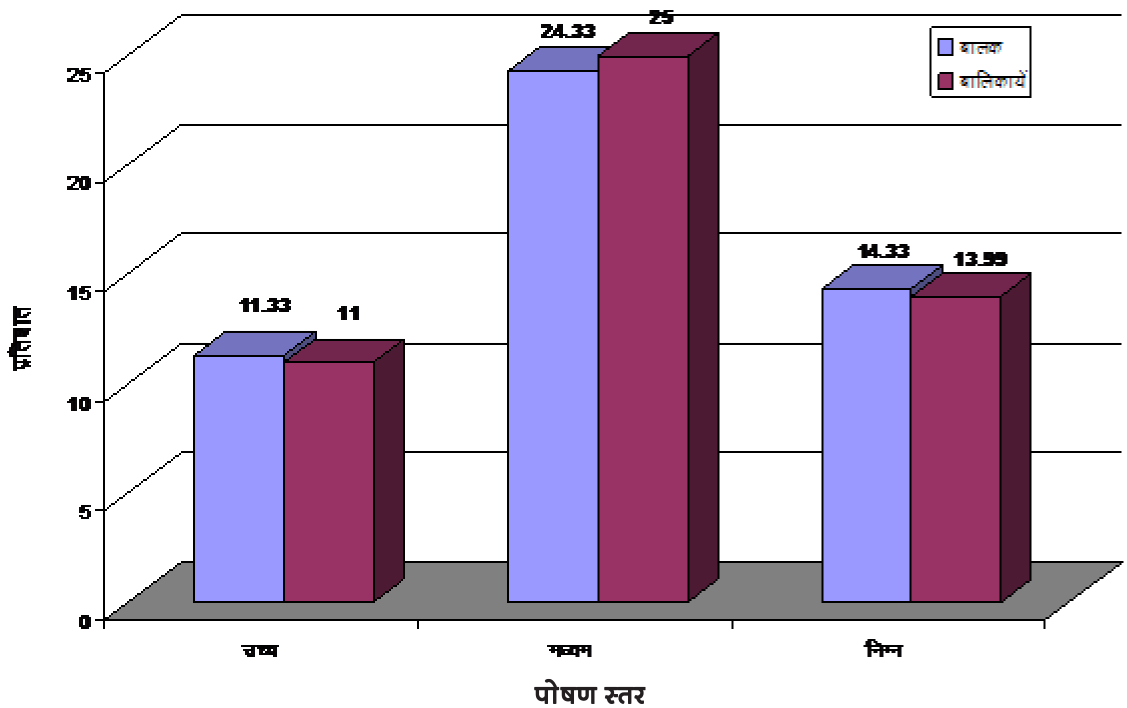

तालिका क्रमांक – 2

मध्यान्ह भोजन व्य. स. ला. बालक एवं बालिकाओं के पोषणिक स्तर के माध्य, मानक विचलन एवं 'टी परीक्षण का विवरण'

लिंग	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	स्वातंत्र्यांश	T परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
बालक	15.92	7.71	.63	298	1.331	P 70.05
बालिका	14.75	7.45	.60			

0.05 स्तर पर असार्थक

****

मानव शरीर भित्ति या एन्थ्रोपोमेट्री का महत्व एवं उपयोगिता

डॉ. रश्मि वर्मा *

प्रस्तावना – मानव मस्तिष्क ईश्वर की श्रेष्ठ कृति है, जो सदैव खोज व अनुसंधान में रत रहता है। इसी के द्वारा मनुष्य ने अपने लिए एक सुखमय सुविधायुक्त सृष्टि बना ली है। उसके सुख में वृद्धि हेतु Ergonomics मानव उसकी मशीन तथा उसके पर्यावरण के मध्य अनुकूलतम संबंध स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील है और उसके इस उद्देश्य में सबसे महत्वपूर्ण सहायक है मानव शरीर भित्ति या **एन्थ्रोपोमेट्री** प्रत्येक मनुष्य अपने अस्तित्व को बनाने हेतु कार्य करता है और उसके कार्य को उसके उपकरण और कार्य सतह व संग्रह स्थल का आकार प्रभावित करते है। विभिन्न व्यक्तियों की शारीरिक रचना में अंतर होता है। अत: यह आवश्यक है कि उपकरण की डिजाईन इस प्रकार की जाये या कार्य केन्द्र की जो लोग उसके उपयोग में लाने वाले है। उनके शरीरिक मापों का विशेष ध्यान रखकर की जाये। इस कार्य को पूर्ण करने में **एन्थ्रोपोमेट्री** सहायता करती है। वास्तव में यह Industrial Engineering की शाखा है जो मानव शास्त्र के भौतिक पक्ष का अध्ययन करती है। अत: **एन्थ्रोपोमेट्री** घरों को सुनिर्धारित बनाने में सहायक है। इसलिए हमें **एन्थ्रोपोमेट्री** का ज्ञान होना आवश्यक है। तत्पश्चात ही हम कार्यस्थल व केन्द्र संग्रह स्थानो को अधिक वैज्ञानिक रूप से निर्मित कर सकते है।

एन्थ्रोपोमेट्री का अर्थ – साधारण शब्दों में वह अध्ययन जिसके द्वारा कार्यकर्ता के विभिन्न मापों के बारे में जानकारी दी जाती है वह विज्ञान **एन्थ्रोपोमेट्री** कहलाता है। OXFORD DICTIONARY के अनुसार – **एन्थ्रोपोमेट्री** अर्थात 'मानव शरीर माप विज्ञान वह मनुष्य के उद्‌विकास का अध्ययन वाली जीवन का अध्ययन करती है।

P.N. SAHA 1987 के अनुसार – इसके अंतर्गत मानव शरीर के विभिन्न माप आते है। साथ ही शरीर के विभिन्न क्रिया–कलापों, मुद्राओं का अध्ययन होता है व कार्य के लिए व्यक्तिगत आवश्यकताओं का अध्ययन किया जाता है। कार्यकर्ता कार्य को कुशलतापूर्वक कर सके तथा उसके लगने वाले प्रयास व तनाव को न्यूनतम किया जा सके। अत: कार्यस्थल उपकरण या यंत्रों का Design करते समय कार्यकर्ता के शारीरिक नापे, विशेषताऐं, सीमाओं को ध्यान में रख सके। अत: एन्थ्रोपोमेट्री हमे आवश्यक ज्ञान प्रदान करती है। इस प्रकार यह इस इरगोनॉमिक्स की महत्वपूर्ण शाखा है।

एन्थ्रोपोमेट्री की परिभाषाऐं H.T.E. Hertzberg (Vancart and Kinkade) के अनुसार –एन्थ्रोपोमेट्री विभिन्न शारीरिक नापों को ज्ञात करने की तकनीक है। सामान्य तौर पर आकार गतिशीलता है व शक्ति है। इंजीनियरिंग एन्थ्रोपोमेट्री की सहायता से ऐसे तथ्यों का प्रयोग उपकरण, कार्य–स्थल तथा वस्त्र डिजाइन में किया जाता है ताकि कार्यकता की दक्षता व आराम को बढ़ाया जा सकें।

NITIE BOMBAY– एन्थ्रोपोमेट्री मानव शरीर की उन मुख्य विशेषताओं का अध्ययन है जो उसके द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले उपकरणों की संरचना की दृष्टि से महतवपूर्ण है।

K.H.E. MURRELL (1971)–Ergonomics के उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए उपकरणों एवं मानव शरीर के मापों का व्यस्थित ज्ञान जो विशिष्टकरण यंत्रों द्वारा प्राप्त किया जाता है। उसे Anthropometry कहा जाता है।

KROEMA 1978 के अनुसार –Anthropometry को Engineering से जोड़कर परिभाषित किया है। Engineering Anthropometry मनुष्य के शरीर की विभिन्न वैज्ञानिक तरीके से लिये गये मानो को बनाने हेतु उपयोग में लाने संबंधी कार्य करती है। जिसके अंतर्गत मानव शरीर के स्थिर स्थित व गतिमान स्थिति के विभनन माप सम्मिलित होते है। क्योंकि अलग–अलग आयु, लिंग, व्यवसाय के मनुष्य का शारीरिक भिन्न–भिन्न स्थितियों में भिन्न–भिन्न स्थान घेरता है।

एन्थोपोमेट्री की शाखाऐं –P.N. Saha (1987) के अनुसार दो प्रकार होते है–

1. **स्थितिज एन्थ्रोपोमेट्री** (STATIC ANTHROPOMETRY)
2. **गतिज एन्थ्रोपोमेट्री** (DYNAMIC ANTHROPOMETRY)

1. **स्थितिज एन्थ्रोपोमेट्री**–यह **एन्थ्रोपोमेट्री** की वह शाखा है जिसमें शरीर की उन विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है। जो एक आयु विशेष में व्यक्तियों में लगभग स्थिर रहती है। इस पर कार्यस्थल, वातावरण कार्य दशा या उपकरण की बनावट का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, शरीर की इन्हीं विशेषताओं को स्थितिज एन्थ्रोपोमेट्री कहते है। इसमें शारीरिक माप, शारीरिक गोलार्द्ध, शारीरिक वजन आते है। इनका प्रयोग व्यक्ति के कार्य केन्द्र की योजना उपकरण आवागमन व क्रियाकलापों के लिए आवश्यक स्थान की योजना के लिए किया जाता है। साथ ही स्थितिज एन्थ्रोपोमेट्रीविशिष्ट शारीरिक माप से संबंधित होता है।

2. **गतिज एन्थ्रोपोमेट्री** –कार्य करने की दशा में व्यक्ति के शरीर की स्थिति में लगातार परिवर्तन होता रहता है। जैसे–शारीरिक मुद्रा, गुरूत्वाकर्षण केन्द्र, अंगों के गति करने की सीमायें व कोणा, व्यक्ति द्वारा घेरा जाने वाला स्थान लगाया जाने वाला बल आदि का अध्ययन करने वाली शाखा ही गतिज एन्थ्रोपोमेट्रीकहलाती है। यह क्रियात्मक माप पर फोकस करता है।

सामान्य शारीरिक माप – विभिन्न कार्यो में कम से कम शक्ति व्यय हो और अधिकतम उत्पादन हो। जिसमें न्यूनतम थकान उत्पन्न हो इसके लिए व्यक्ति विशेष के कार्य करने के लिए उसके कार्य सतहों, कार्य स्थलों की ऊंचाईयाँ और उपकरण की व्यवस्था उसके शरीर के माप तथा कार्य के दौरान उसके द्वारा की जाने वाली गतियों को ध्यान में रखकर की जाना चाहिए।

शारीरिक मापको प्रभावित करने वाले तत्व–व्यक्ति का आहार, उम्र , कार्य , जलवायु ,लिंग एवं वंशानुक्रम आदि भी भिन्न–भिन्न रूप से व्यक्ति केऔसत शारीरिक माप को प्रभावित करते है।

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

आहार– भोजन महत्वपूर्ण तत्व है जो शारीरिक माप को प्रभावित करता है। व्यक्ति को अगर उसकी आवश्यकता के अनुसार भोजन प्राप्त नहीं होगा तो इसका सीधा प्रभाव उसकी शारीरिक माप पर पड़ेगा जिससे उसका विकास सामान्य विकास नहीं हो पाएगा व उसकी सामान्य शारीरिक के उसके माप नहीं होगी कम होगी।

उम्र– उम्र भी BODY DIMENSION को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण तत्व है। भिन्न–भिन्न उम्र में BODY DIMENSION अलग–अलग होते है। बाल्यावस्था में बालक की शारीरिक माप में परिवर्तन आता रहता है। वयस्क अवस्था में BODY DIMENSION लगभग स्थिर हो जाते है व प्रौढ़ अवस्था में शरीर षिथिल पड़ता जाता है। व्यक्ति की कार्य पहुंच कम होती जाती है व उसकी BODY DIMENSION में भी कुछ Change आता है।

कार्य –कार्य का सीधा प्रभाव BODY DIMENSION पर पड़ता है जो अधिक शारीरिक कार्य करते है उनका BODY DIMENSION मानसिक कार्य करने वाले व्यक्ति से भिन्न होगा।

जलवायु –जलवायु भी BODY DIMENSION को प्रभावित करने का महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि अलग–अलग जलवायु प्रदशों में अलग–अलग जलवायु के अनुसार भोजन व कार्य किए जाते हैं व इसी के अनुसार उनकी शारीरिक माप भी भिन्न होती है।

लिंग–यह अत्यन्त ही महत्वपूर्ण तत्व है। BODY DIMENSION को प्रभावित करने वाले स्त्री व पुरूषों की शारीरिक माप भिन्न–भिन्न होती है।

वंशानुक्रम – वंशानुक्रम भी BODY DIMENSION को प्रभावित करती है। कई व्यक्तियों का हेरिडिटी के कारण ही ऊंचाई वजन सामान्य व्यक्तियों से अधिक होता है। अत: उनकी शारीरिक माप भी भिन्न होगी।

7. IMPORTANCE OF BODY DIMENSION FOR THE STUDY OF REACHING HEIGHT - प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक कार्य करने के लिए कुछ मात्रा में ऊर्जा व्यय करनी होती हैं। कुछ स्थितियाँ ऐसी होती है जिसमें कार्य करने पर शरीर नयूनतम ऊर्जा व्यय करता है। इन स्थितियों को बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि कार्यकर्ता के कार्य केन्द्र उसकी पहुंच के भीतर बनाये जाये इसलिए कार्य केन्द्रों को वैज्ञानिक निर्माण हेतु उस पर कार्य करने वाले व्यक्ति की पहुंच की जानकारी होना अनिवार्य है।

पहुंच या REACH- किसी भी कार्य की स्थिति में एक स्थान पर व्यक्ति खड़े होकर या बैठकर जिस बिन्दु तक अपने अंगो को विशेषकर हाथ एवं पैर को पहूंचा सकता है उस बिन्दू तक का क्षेत्र उस व्यक्ति विशेष की पहुंच का क्षेत्र कहलाता है। यह पहुंच बहुत सी बातों पर निर्भर हैं, परन्तु मुख्य रूप से व्यक्ति के शारीरिक मापों पर निर्भर है जो कि निम्न प्रकार की होती है –

1. Reach Height in Horizontal Plane
2. Reach Height in Vertical Plane

क्षेतिज तल में पहुंच –Reach Height in Horizontal Plane जब हम टेबल या प्लेटफार्म पर कार्य करते है तो प्राय: क्षेतिज के समानान्तर कार्य करते है। अत: इस क्षेतिज के समानान्तरण हम जिस बिन्दु तक अपने अंगों को पहुंचाकर काम कर सकते है। वह क्षैतिजक तल में हमारी पहुंच कहलायेगी। यह दो प्रकार की होती है।

आरामदायक क्षेतिज तल में पहुंच Normal या Comfortable– या आरामदायक क्षेतिज तल में बैठकर या खड़े होकर कार्य करते समय हमारी भुजाओं को सामान्य या प्राकृतिक तौर पर लटके रहने देकर हम भुजा के अग्र भाग से या Forearm से एक Sweep में हम जितने क्षेत्र तक हाथ के पंजे को पहुंचा सके। गृह क्षेत्र हमारी सामान्य पहुंच का क्षेत्र होगा क्षेतिज तल में इसमें भुजा गति नहीं करती है। कोहनी से गति करती है।

अधिकतम पहुंच–Maximum Reach Area **–** जब हम भुजा को आगे बढ़ा कर कोहनी से अग्रबाहु को सीधा करके अपने सम्पूर्ण हाथ को फैलाकर एक Sweep करते है तो उससे हम जितने क्षेत्र तक पहुंच सकते है। वह हमारी Maximum Reach होती है इसमें गति कंधे से होती है।

लम्बवत तल में पहुंच– जब हम खड़े होकर ऊपर से कोई सामान निकालते या रखते है या ऊंचे अलमारियों, खिड़कियों की सफाई करते है तो में गति करते है। अत: हमारे संग्रह स्थान व कार्य सतह उसी के अनुसार बनाये जाने चाहिए। इस तल में भी दो प्रकार की पहुंच होती है।

सामान्य पहुंच Normal Reach–हम अपनी कोहनी को किसी कांउटर या टेबल पर टिका कर केवल अग्र बाहु की गति से जिस ऊंचाई तक पहुंच सके। उसे हम लम्बवत तल में अपनी सामान्य पहुंच कह सकते है।

अधिकतम पहुंच Maximum Reach–या – जब हम अपनी भुजाओं से गति करते है। हाथ को बिल्कुल सीधा रखा अपने हाथों की कहां तक पहुंचा सकते है। उसे अधिकतम पहुंच कहते है। इस मुद्रा में ऊर्जा अधिक व्यय होती है। दोनों ही तलों में Normal Reach कि क्षेत्र में कार्य करते समय हमे अपेक्षाकृत कम ऊर्जा व्यय करना होती है। जबकि अधिकतम पहुंच में कार्य करते समय अधिक ऊर्जा व्यय होती है। अत: कार्य केन्द्रों की व्यवस्था जहां तक संभाग हो Normal Reach में ही होनी चाहिए। कार्यकर्ता के लिए कुर्सी सर्वोच्च ऊंचाईयाँ विभिन्न होती है। अत: जहां तक संभव हो बैठने की कुर्सी Adjustable होनी चाहिए तथा कुर्सी एवं टेबल के बीच इतना स्थान अवश्य हो कि कार्यकर्ता की जांघों को आरामदायक रूप में रखा जा सकें।

figure (1) IMPORTANCE OF BODY DIMENSION FOR THE STUDY OF REACHING HEIGHT **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

8. CONCLUSION–उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि घर हो या फैक्ट्री या अन्य स्थान में कार्य करने के विभिन्न केन्द्रों जैसे कार्य स्थल, कार्य सतह, संग्रह स्थान आदि स्थानों की डिजाइन मानव शरीर के मापों व उसकी रीचिंग हाइट को ध्यान में रखकर करने से न केवल कार्यकर्ता के उत्पादन में वृद्धि होती है। वरन् उसके आराम व सुविधा में भी वृद्धि होगी। अत: यह कार्यकर्ता पर डिजाइन के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक कार्य स्थल का निर्माण Anthropometry के अनुसार किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Aksoy O.et.al.1977- Applied Ergonomics
2. Arnea Ordinars 1978- Ergonomics VD 137. No.6
3. Elftmen H.- Body Dynamics and Dynamic Anthropometry
4. Gilmer B.V.H. (1996)- Ergonomic Industrial Psychology.
5. Grendjeen E. (1972) Ergonomic of the Hoome
6. Halt Mang (1987) – Ergonomics
7. Verghese M.A., Chhaterjee et.al. (1990)- Anthropometry and its Ergonomical Implications.

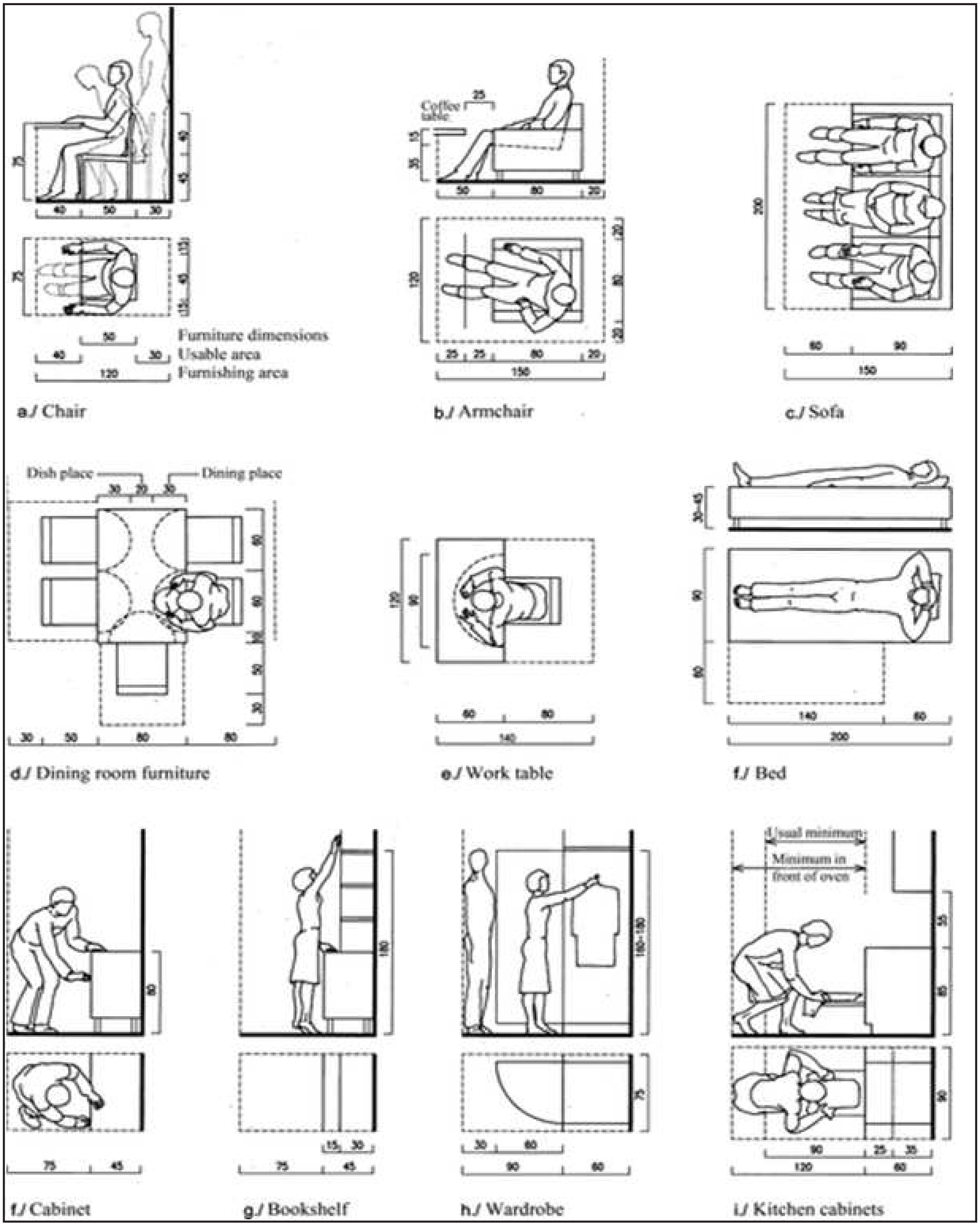
Furniture dimensions
Usable area
Furnishing area
a./ Chair
Coffee table
b./ Armchair
c./ Sofa
Dish place
Dining place
d./ Dining room furniture
e./ Work table
f./ Bed
Usual minimum
Minimum in front of oven
f./ Cabinet
g./ Bookshelf
h./ Wardrobe
i./ Kitchen cabinets

****

बाल्यावस्था में सामाजिक संबंध

कृष्णा शर्मा *

प्रस्तावना – बाल्यावस्था में सामाजिक संबंध सीखने की प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चे समाज के तत्वों को सीखते है।

जॉनसन ने इसे समझाते हुये कहा है कि बच्चा सामाजिक संबंधो को जानकर और समझकर सामाजिक कार्य करने योग्य बनता है।

परिभाषा –

1. किम्बॉल यंग के अनुसार – 'सामाजिक संबंधो सामाजिक, सांस्कृतिक संसार में परिचय कराने की प्रक्रिया से, उसको समाज में सहभागिक सदस्य बनाने से उसके विभिन्न समूहों, विभिन्न प्रतिमानों एवं मूल्यों को स्वीकार करने से है''।

2. बोगर्डस के अनुसार – 'सामाजीकरण एक प्रक्रिया के रूप में प्रयुक्त है जहां एक बच्चा, अपनी वृद्धावस्था तक मानव कल्याण के लिये साथ-साथ निर्भरतापूर्वक व्यवहार करना सीखता है और ऐसा करने में उसको सामाजिक स्व नियंत्रण, सामाजिक दायित्व, और संतुलन का ज्ञाना होता है।

सामाजिक संबंधो के विभिन्न माध्यम होते है ये निम्नलिखित है –

1.	परिवार	2.	आयु-समूह
3.	पड़ोस	4.	नातेदारी समूह
5.	पाठशाला	6.	अन्य प्राथमिक समूह
7.	द्वितीयक समूह		

1. **परिवार –** सामाजिक संबंधो में सबसे महत्वपूर्ण पारिवारिक संबंध होता है। परिवार विशेष रूप से सामाजिक संबंधो को संभव बनाता है, सामाजिक संबंध मध्य बाल्यावस्था के बच्चों के लिये अधिक महत्वपूर्ण होता है, हमने जंगली बच्चों और अन्य समाज के पृथक बच्चों के उदाहरण देखे उनसे स्पस्ट रूप से यह ज्ञात होता है कि प्रारंभ के वर्षो में यदि सामाजिक संबंधो के द्वारा सीखने का अवसर न मिले तो बाद में सीखना कठिन हो जाता है।

इस तरह बाल्यावस्था में सामाजिक संबंधो को सीखना, मानना, सामाजीकरण की नींव होती है।

अधिकतर देखा गया है कि सामाजिक संबंधो पर परिवार की आर्थिक स्थिति का अत्याधिक प्रभाव पड़ता है। जैसे कि – उच्च वर्ग के बच्चे सामाजिक संबंध, निम्न वर्ग के बच्चे की तुलना में अधिक अच्छे होते है।

2. **आयु समूह –** बच्चा परिवार के बाहर अपनी आयु के अन्य बच्चों के साथ खेलता है जिससे उसे अनेक अनुभव प्राप्त होते है। बच्चे का अपने आयु-समूह के साथ रहने से उनके सामाजिक संबंधो में विस्तार आता है। जिन बच्चों को किसी कारणवश यह समूह नहीं मिल पाता उनका स्वतंत्र विकास रूक जाता है और वे अपने में ही लीन रहने लगते है।

3. **पड़ोस –** बच्चे पड़ोस के माध्यम से भी सामाजिक संबंधो की गहराई को समझते है। पड़ोस एक प्रकार से विस्तृत परिवार का रूप से लेता है जिसमें बालक के पारिवारिक सदस्यों के साथ रहने से उनकी संस्कृति और सभ्यता के बारे में जानकारी मिलती है और उनके संबंधो का क्षेत्र भी विस्तृत होता है।

4. **नातेदारी समूह –** बालक अपने परिवार के रिश्तेदारों जैसे – दादा-दादी, नाना-नानी, मामा-मामी आदि के संपर्क में आने से विभिन्न संबंधो के बारे में आसानी से और अतिशीघ्र सीखता है।

अत: नातेदारी-समूह भी सामाजिक संबंधो के लिये अधिक महत्व रखते है।

5. **पाठशाला –** आधुनिक युग में पाठशाला सामाजिक संबंधो का विशेष माध्यम है। शिक्षक की भूमिका इस संबंध को निखारने में अहम होती है। बालक पाठशाला में विभिन्न वर्ग, जाति, धर्म व आयु समूहो से मिलता है जिससे उसके सामाजिक संबंधो का विकास अधिक विस्तृत हो पाता है।

6. **अन्य प्राथमिक समूह –** इस तरह के समूहो से मित्र मण्डली, क्लब, मनोरंजन केन्द्र आदि आते है। यहां पर बालक को मनोरंजन के साथ-साथ संबंधो को सीखने का भी अवसर मिलता है।

7. **द्वितीयक समूह –** द्वितीयक समूह भी सामाजिक संबंधो को सीखने में प्रभावशाली होते है। वर्ग,जाति, राष्ट्रीयता, राष्ट्र, व्यवसायिक क्षेत्र इसके लिये महत्वपूर्ण माध्यम है।

मनुष्य के सामाजिक संबंधो में संस्कृति का विशेष महत्व होता है। व्यक्ति इस तरह के संबंधो द्वारा समाज की विभिन्न संस्कृति को ही सीखता है। व्यक्ति का व्यक्तित्व जो भी, जैसा भी होता है वह उसके बाल्यावस्था में सीखे गये अनुभवों व उसकी संस्कृति के अनुसार ही होता है।

The effect of early Experience – जीवन के प्रारंभिक कुछ वर्षो अर्थात शैशवास्था तथा बाल्यावस्था के अनुभव बालक के लिये बहुत महत्वपूर्ण होते है। इन्हीं अनुभवों के आधार पर बालक का शारीरिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास, आदि होते है। इन्हीं अनुभवों के आधार पर बालक दूसरों के प्रति अपनी भावनाएं और धारणायें कायम करता है, दूसरों से संबंध बनाता है और स्वयं का व्यक्तित्व विकास करता है। अर्थात् इन सामाजिक संबंधो का अनुभवों का सीधा संबंध व्यक्तित्व से होता है।

यदि बालक को इस समय प्राप्त होने वाले अनुभव अच्छे होते है तो यह बालक के सर्वागीण विकास में सहायक सिद्ध होते है इसके विपरीत यदि बालक को इस समय कुछ अनुभव प्राप्त होते है तो इसका उनके सामाजिक संबंधो और व्यक्तित्व पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

यदि इस समय अर्थात बाल्यावस्था के दौरान बालक को समाज से पूर्णत: पृथक कर दिया जाये तो न तो बालक समाज के तौर-तरीके सीख पाता है और न ही उसमें सामाजिक गुणों का विकास हो पाता है।

इस तथ्य को नि.लि. उदाहरण द्वारा अच्छी तरह समझा जा सकता है–

1. **अरेबान का जंगली लड़का –** फ्रांस के अरेबान जंगल से एक लड़का मिला। वह बिल्कुल जंगली था। वह दूसरों को काटता था। उसको बोलना नहीं आता था। केवल कुछ तरह की आवाजें ही (जानवरों की तरह) किया

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान) शासकीय श्या.सुं.ना.मु.महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

करता था।

' एक फ्रांसिसी मनोवैज्ञानिक ने इसे जंगली कहकर छोड़ दिया क्योंकि वह 11 साल का होकर भी एक साल के बच्चे की तरह मानसिक क्षमताएं रखता था। परंतु 'इटार्ड (Itared) नाकम मनोवैज्ञानिक ने कहा कि यदि वह बालक जड़बुद्धि होता तो जंगल में जीवित नहीं रह सकता था। उन्होने इस बालक का लालन-पालन प्रारंभ किया, उसे नहलाया और कपड़े पहनाये गये। धीरे-धीरे वह गर्मी व सर्दी में भेद करने लगा। वह बातें भी समझने लगा। संवेगो के बारे में जानने लगा, लेकिन वह बोलना नहीं सीख पाया बल्कि सांकेतिक भाषा का ही प्रयोग करता था।

2. अन्ना- अन्ना एक अवैध लड़की थी। उसकी मां ने उसे समाज से सदैव दूर रखा, उसे एक कमरे में बंद करके रखा गया था। 1938 में जब वह 5 वर्ष की थी तो एक कमरे में कुर्सी से बंधी पाई गई। उसका शरीर केवल हड्डियों का ढांचा था, वह बोलना और चलना नहीं जानती थी।

जब उसे हॉस्पिटल में रखकर उसका इलाज किया गया तो उसकी हालत में सुधार होने लगा। उसने सीखना और समझना भी शुरू कर दिया। 1942 में उसकी मृत्यु हो गई।

3. ईजाबेल - ईजाबेल 1938 में मिली थी, उस समय वह साढ़े छः साल की थी। उसे समाज से पृथक रखा गया था। उसकी मां गूंगी व बहरी थी, जिससे वह भी बोलना और सुनना नहीं सीख पाई। वह किसी भी प्रकार के सामाजिक संबंधो से परिचित नहीं थी। उसे बोलना सिखाने पर वह धीरे-धीरे बोलने लगी। 7 महीने बाद वह 1500-2000 शब्द तक बोल सकती थी और कई तरह के सवाल भी पूंछ सकती थी।

बाद में ईसाबेल को एक पब्लिक स्कूल में पढ़ाया गया, वह स्कूल में विभिन्न कार्यक्रमों में भी भाग लेने लगी थी। सन् 1952 में उसने 6 वीं कक्षा को पास किया। अर्थात् काफी प्रयासों के बाद वह सामान्य जीवन व्यतीत करने में सक्षम हो गयी।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि मनुष्य एक पशु के रूप में जन्म लेता है और समाज ही उसे मानव बनाता है। यदि जीवन के प्रारंभिक वर्षों में ही बालक समाज में न रहे तो उसका मानव बनना कठिन हो जाता है।

इस प्रकार जीवन के प्रारंभिक कुछ वर्षो के अनुभव बालक के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इन्हीं के आधार पर बालक का सामाजिक विकास तथा उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. द नर्सरी स्कूल - कैथरीन रीड।
2. द चाइल्ड एण्ड एजूकेशन - लोगन।

****

Sugar Industry In India: State & Future Prospects

Archana Singhal *

Abstract - Starting with the targets for sugarcane and sugar production for the 8th and 9th Five Year Plans, the report highlights the various technical aspects of sugar industry. The report describes in detail the instruments and methods for energy measurements at various process stages for energy audit and management. Future technologies for cane handling, milling, juice treatment, evaporation system & crystallisation etc. have been highlighted. Different uses of bagasse, molasses and press cakes have been recommended giving the economics of the various products to be derived out of these. Methodology has been given for working out the cost of production, R&D and automation at various process stages, policy issues, pollution control measures, co-generation of power, integrated complex and instrumentation aspects are adequately covered.

Introduction - Sugar industry is an important agro-based industry that impacts rural livelihood of about 50 million sugarcane farmers and around 5 lakh workers directly employed in sugar mills. Employment is also generated in various ancillary activities relating to transport, trade servicing of machinery and supply of agriculture inputs. India is the second largest producer of sugar in the world after Brazil and is also the largest consumer. Today Indian sugar industry's annual output is worth approximately 80000 crores. Surplus production over domestic consumption in the last three sugar seasons and low exports due to subdued international sugar prices have led to building up of sugar stocks with the mills and low realization from sale of sugar. This has adversely affected the financial health of the mills and resulted in accumulation of cane price arrears.

Methodology - The need for increasing exports both for increasing foreign exchange and promoting overall economic growth of the country is well recognized. The share of agricultural export in total export is substantial. With the growth of the economy, this share is projected to decline. An analysis of agricultural export and their future potential is therefore of great importance especially when export earnings are going to play critical role in coming phase of economic development. Sugar is an important commodity of agricultural export and plays an important role in export earning in India. Also, India is major sugar producing country and it ranks second in the world sugar production. Hence, the sugar commodity has been considered in the present investigation in order to know the dynamics of sugar export from India. The present study is based on secondary data.

Production Of Sugar - Sugar production in India has been cyclic in nature. Every 2-3 years of high sugar production are followed by 2-3 years of low sugar production. From the sugar season 2010-11 onwards the country could consistently achieve sugar production more than the domestic requirements and could also generate surpluses for export. Maharashtra and Uttar Pradesh contribute over 60 percent of total sugar production while rest comes from States like Tamil Nadu, Karnataka, Gujarat and Andhra Pradesh. In the 3rd Advance Estimates of the Department of Agriculture and Cooperation (DAC), released in May 2014, the sugarcane production is estimated at 3,483.8 lakh tons in the current sugar season. The production of sugar during 2013-14 season was estimated at 243 lakh tons as against the estimated domestic consumption of 240 lakh tons. The Production of sugar from 2001-02 to 2013-14 is as under:

Total Sugar Production Quantity (in lakh Tons)

Sugar season	Production of Sugarcane	Production of Sugar
2001-02	2972.08	185.28
2002-03	2873.83	201.45
2003-04	2338.62	135.46
2004-05	2370.88	126.90
2005-06	2811.72	192.67
2006-07	3555.20	283.67
2007-08	3481.88	263.57
2008-09	2850.29	145.39
2009-10	2923.02	189.12
2010-11	3423.82	243.94
2011-12	3610.37	263.43
2012-13	3389.63	251.41
2013-14	3500.21	243.73

Source: National Federation of Cooperative Sugar Factories Limited, Cooperative Sugar, November,2014, p.26

India's Trade In Sugar - India has been a net exporter of sugar. However, it has been occasional net importer of sugar depending upon demand and supply situation in the country. As per the data provided by the Directorate General of Commercial Intelligence and Statistics (DGCIS), India's export of sugar was highest in 2007-08 and import was on its peak in 2009-10. Import and Export of Sugar from 2005-06 to 2013-14 is as under:

* Lecturer , D.A.V. College, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

Import and Export of Sugar

Quantity (in lakh Tons)**

Sugar Season (Oct-Sept)	Export of Sugar	Import of Sugar
2005-06	15.039	0.07**
2006-07	24.90	0.005**
2007-08	58.23	0.004**
2008-09	2.165	24.47***
2009-10	2.371	41.80***
2010-11	28.14	3.65**
2011-12	36.735	1.886**
2102-13(P)	12.02	17.120**
2013-14(P) uptoJuly2014	24.457	6.100**

** As per Data furnished by DGCIS Kolkata.

*** As reported by Department of Revenue.(P) provisional

Source: Note of Directorate of Sugar 2014 p.13

Sugarcane Pricing Policy - With the amendment of the Sugarcane (Control) Order 1966 on 22 October 2009 the concept of Statutory Minimum Price (SMP) of sugarcane was replaced with the 'Fair and Remunerative Price (FRP) of sugarcane for 2009-10 and subsequent sugar seasons. The cane price announced by the Central Government is decided on the basis of the recommendations of the Commission for Agricultural Costs and Prices (CACP) after consulting the State Governments and associations of sugar industry.

Under the FRP system, the farmers are not required to wait for the end of the season or for any announcement of the profits by the sugar mills or the Government. The new system also assures the margins on account of profit and risk to farmers irrespective of the fact whether the sugar mills generate profit or not and is not dependent on the performance of any individual sugar mill. In order to ensure that higher sugar recoveries are adequately rewarded and considering variations amongst sugar mills the FRP is linked to a basic recovery rate of sugar with a premium payable to farmers for higher recoveries of sugar from sugarcane6. Citing difference in the cost of production productivity levels and also as a result of pressure from farmers' groups some States like Uttar Pradesh, Punjab, Haryana, Tamil Nadu and Uttrakhand declare State specific sugarcane prices called State Advised Prices (SAP) usually higher than the FRP. Statutory Minimum Price/Fair and Remunerative Price for the last ten years given as under:

Statutory Minimum Price/Fair & Remunerative Price

(Rs./Quintal)

Sugar season	SMP/FRP	Minimum Recovery %	Premium for every 0.1% increase
2002-03	69.50	8.50	0.82
2003-04	73.00	8.50	0.85
2004-05	74.50	8.50	0.88
2005-06	79.50	9.00	0.88
2006-07	80.25	9.00	0.90
2007-08	81.18	9.00	0.90
2008-09	81.18	9.00	0.90
2009-10*	107.76 (SMP) 129.84 (FRP)	9.50 9.50	1.13 1.37
2010-11	139.12 (FRP)	9.50	1.46
2011-12	145.00 (FRP)	9.50	1.53
2012-13	170.00 (FRP)	9.50	1.79
2013-14	210.00 (FRP)	9.50	2.21
2014-15	220.00 (FRP)	9.50	2.32

* The Government of India on October 22 2009 amended the Sugarcane (Control) order 1966 vide SO2665 (E)/Ess.com/ Sugarcane introducing Fair & Remuneration Price (FRP) for sugarcane vice SMP for the year 2009-10

Source: www. Indiansugar.com

Challenges For Sugar Industry - Sugar is an agro based industry so the prices always fluctuate with monsoon. The low yield of sugarcane, short crushing season, unsatisfactory location of industry in Uttar Pradesh and Bihar and inadequate supply of cane create problems for sugar mills having low milling efficiency. Low Recovery of sugar from sugarcane also poses a problem for sugar industry. Further Indian sugar mills do not have sugar plantations of their own and hence do not have control over quantity and quality of sugarcane supplied by various cane growers. Another problem of sugar industry is that the by-products of sugar mills are not fully utilized like molasses and bagasse. Levy sugar obligations causes huge financial burden on mills under which mills are bound to sell sugar for distribution under public distribution system at price determined by the Government which is way below the cost of production. Arbitrary fixation of cane prices by the State Governments above the Fair Remunerative Price (FRP) fixed by the Centre has been adversely affecting the sugar mills. Due to all these reasons 189 mills were out of operation in 2013-14 sugar season while 166 mills were not operating in 2012-13

Current Scenario (Sugar Season 2014-15) - The sugar season 2014-15 has started from October 2014 with a carryover stock of 75 lakh tons. The production in new season is estimated to be around 250-255 lakh tons. Thus there will be about 330 lakh tons of sugar available as against consumption requirement of 245 lakh tons. The cane price arrears of about Rs.5900 crores of 2013-14 still remain unpaid. Sugar prices are ruling around Rs.2650 per quintal much below the cost of production. Meanwhile The Central Government has increased the FRP by Rs.10 per quintal leading it to Rs.220 per quintal for 2014-15.

In Karnataka Hon'ble High Court has upheld the notification of the State Government notifying cane price at Rs.2500 per ton for 2013-14. The mills have only paid FRP fixed by the Centre at Rs.210 per quintal. The Uttar Pradesh Government has decided to maintain previous years State Advised Price of Rs.280 per quintal for 2014-15 season but farmers in Uttar Pradesh are demanding cane price at Rs.350 per quintal while in Maharashtra farmers are demanding Rs.2700 per ton in current sugar season.

The 2014-15 sugar season has started with a lot of uncertainties, as to whether the mills would be able to begin

operation due to their grave financial constraints and due to cane pricing policy implemented by State Governments. Mills in all States including in Uttar Pradesh, Karnataka and Maharashtra are facing issues relating to cane pricing and payment to the cane farmers.

Conclusion - In order to ensure sustainable good health of the Sector, a revenue sharing formula should be evolved between the sugar mills and the cane farmers in the ratio of their relative cost as per the recommendation of the Rangarajan Committee. As per Committee recommendations the ideal value-sharing is 70 per cent for cane growers and 30 per cent for mills including revenue from sugar and its by-products. Few States like Maharashtra and Karnataka have already constituted Sugar Control Board to implement the revenue sharing formula. For successful implementation, cane growers are to be guaranteed FRP payments, irrespective of the sugar market behaviour. In case the revenue in a particular season warrants higher payments to growers, they should be entitled to a second payment.

References :-

1. RBI ,Handbook of statistics on the Indian Economy ,2013-14.
2. Govt. of India 2014.A reference Annual(New Delhi 2013-14) .
3. www. Indiansugar.com.
4. India. Ministry of Consumer Affairs & Food and Public Distribution, Note of Directorate of Sugar, 2014, p.1.
5. Indian Sugar: The Complete Sugar Journal, Indian Sugar Mills Association, November 2014, p.40.
6. Indian Journal of Research, 'Problems of Indian Sugar Industry' by Dr.Venkateswara Rao, January 2014, pp.126-127.
7. Directorate of Economic and Statistics, Ministry of Agriculture, Hand Book of Sugar Statistics.
8. Agricultural Statistics at a Glance, APEDA, FAO Trade Year Books, FAO Production Year Books.

****

Marketing Skill In Retail Banking And Insurance

Dr. Vandana K. Mishra *

Abstract - Retail banking and Insurance in India has fast emerged as one of the major drivers of the overall banking industry and Insurance Company has witnessed enormous growth in the recent past. Traditionally banking industry employs highly skilled people with specialized education qualification for most of its functions. However, over the last few years there has been an increasing trend to outsource some of the activities through DSAs. This outsourcing has resulted in creation of employment opportunities for minimally educated people which were not earlier part of the banking system in the form of customer care support and tele-marketing/tele-sales persons. These people are expected to possess good communication (spoken, written) skills, high level of perseverance, high energy level, emotional intelligence, and aptitude for repetitive work, integrity and managing customer's expectations. And Majority of the employment (on-rolls) in insurance industry is in highly skilled class with specialized job responsibilities. Apart from the on-rolls employment there is huge number of people employed as selling agents and advisors and they require basic knowledge on insurance, finance and selling skills. The major employment potential exists in the agent/advisors function in insurance industry.
Key Words - Marketing Skill, Retail Banking, Insurance.

Introduction - There is a need of constant innovation in retail banking and Insurance. In bracing for tomorrow, a paradigm shift in bank financing through innovative products and mechanisms involving constant up gradation and revalidation of the banks' internal systems and processes is called for Banks now need to use retail as a growth trigger. This requires product development and differentiation, innovation and business process reengineering, micro-planning, marketing, prudent pricing, customization, technological up gradation, home / electronic /mobile banking, cost reduction and cross-selling.

Retail banking can be defined as "Retail banking is typically mass market banking where individual customers use local branches of larger commercial banks. Services offered include savings and checking accounts, mortgages, personal loans, debit cards, credit cards and so". The concept of Retail Banking is not new to banks but is now viewed as an important and attractive market segment that offers opportunities for growth and profits.

The inauguration of a new era of insurance development has seen the entry of international insurers, the proliferation of innovative products and distribution channels, and the raising of supervisory standards. Insurance has two sub-segments, life insurance and non-life insurance. Total premium collected by the insurance segment for all the life and non-life insurance policies has grown at a CAGR of 24.27% over the period 2002 to 2008. LIC is the largest player in the life insurance segment contributing to74.39% to the total life insurance premium collected.

Objective :
1. To study of Marketing Skill**.**
2. To find the Marketing skill requirement in retail banking and insurance.
3. To study the various challenges and opportunities of Retail banking and Insurance.

Research Methodology - The researchers have adopted descriptive methodology for this study Research has been placed on secondary data sources such as books, journals, newspapers and online database.

What Is Marketing Skill - Marketing Skill could be broadly broken down into three core components:
1. An understanding of the business to which you've applied and others like it, and what makes them successful.
2. Knowledge of the market place in which the business operates and who it interacts with, such as clients, customers, regulators, investors etc.
3. The ability to identify competitors and factors that could impact the employer's overall business performance.

Process Flow And Profile Of People Employed - The banking operations can be categorized under the following three broad categories :
1. Corporate Banking .
2. Treasury.
3. Retail Banking ; Retail banking is primarily branch based banking and it caters to retail public at large.

Table:- 1 Distribution of human resource by functions (for on-roll employee only)

* Assistant Professor, Smt. L.R.T. College of Commerce, Akola (Maharashtra) INDIA

Sr.	Function	Percentage of people
1	Operations	55-60%
2	Sales & Marketing	25-30%
3	Support functions	10-15%
	Total	100%

Source: Primary Research and IMaCS analysis

As seen from the above table majority of the people, 55-60%, are involved in the operational activity in the banks. Apart from the on-rolls employee there are also contractual workers, mostly in private banks, through Direct Sale Agency (DSA) model. These agencies works on contract basis and is involved in the following functions

1. Sales pitch, mostly through phone calls and primarily in the retail segment
2. Field activity to collect documents and meeting potential client
3. Call centre activities.

Marketing Skill Requirement In Retail Banking - Traditionally banking industry employs highly skilled people with specialised education qualification for most of its functions. However, over the last few years there has been an increasing trend to outsource some of the activities through DSAs. This outsourcing has resulted in creation of employment opportunities for minimally educated people which were not earlier part of the banking system in the form of customer care support and tele marketing/ tele sales persons. These people are expected to possess good communication (spoken, written) skills, high level of perseverance, high energy level, emotional intelligence, and aptitude for repetitive work, integrity and managing customer's expectations.

Executive Sales :

1. Detailed understanding of various retail banking product
2. Understanding of the bank procedures and documentation related with each products.
3. Awareness of regulatory norms.
4. Orientation towards generating high volumes.
5. Ability to work in regulated environment.
6. Good communication skills.
7. Ability to meet and chase targets.
8. Ability to understand customer need and suggest suitable product.
9. Patience and perseverance.
10. Presentable and pleasing personality.

Branch Manager :

1. Complete knowledge of banking operations, regulations and products.
2. Legal norms.
3. People management.
4. Deciding on sales targets for individual executives based on overall branch target.
5. Focus on branch profits.
6. Trouble shooting.
7. Motivating people.
8. Escalating critical issue zonal/regional office.

Field Executive (Under DSA)

1. Knowledge of the various products.
2. Knowledge of the various documents including KYC.
3. High level of perseverance.
4. High energy level.
5. Emotional intelligence.
6. Aptitude for repetitive work.
7. Integrity.
8. Managing customer's expectations.
9. Selling skills.
10. Good communication (spoken, written) skills.

Insurance :

Current employment pattern - An estimated 0.2 - 0.3 million people are employed as on-rolls employee in the insurance industry. On the other more than 2.5 million people are employed as intermediaries, either in the form of agents or brokers, in insurance industry. Thus the major employment in the insurance industry is driven by intermediaries who sell the insurance policies for the companies on commission basis. Various forms of intermediaries employed in the industry are

1. Individual agents.
2. Corporate agents (including Banks).
3. Insurance brokers.

Among the above the majority category is individual agents. As per Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA), currently 2.5 million individual life insurance agents are employed in the industry. The number of life insurance corporate agents and brokers are 2415 and 281 respectively. Non-life insurance also has a similar structure; however, as life insurance intermediaries can also sell non-life insurance products, there will be very few stand alone non life insurance agents. Thus we have not considered non-life agents separately for employment estimation. Also two major segments of non-life insurance, auto & health insurance, is covered separately under the auto and healthcare sector reports. Thus we have focused on life insurance for our analysis.

Table No- 2 :State wise distribution of life insurance agents

Sr.	State	Percentage of total people employed
1	Uttar Pradesh	12%
2	Andhra Pradesh	11%
3	Maharashtra	10%
4	Tamil Nadu	7%
5	West Bengal	7%
6	Gujarat	6%
7	Kerala	6%
8	Karnataka	5%
9	Rajasthan	5%
10	Madhya Pradesh	4%
11	Others	28%
	Total	100%

Source:- IRDA and IMaCS analysis

Top 10 states accounts for 72% of the total life insurance agents employed, with Uttar-Pradesh accounting for the maximum number of individual life insurance agents.

Table- 3 : Geographical distribution of life insurance offices

Sr.	Region	Private Companies	LIC
1	Metro	10%	12%
2	Urban	18%	19%
3	Semi-urban	42%	34%
4	Others	30%	35%
	Total	100%	100%

Source:- IRDA and IMaCS analysis

The geographic distribution of life insurance office suggests that both LIC as well as private companies have approximately 70% of the offices in the semi-urban and rural areas.

Marketing Skill Requirements In The Insurance Industry Marketing Manager

1. Sound understanding of the insurance concept
2. Understand competencies required to become an agent/ advisor and bring agent/advisor on-board
3. Train the agents/advisors and monitor their progress
4. Understanding of the organization requirements and pushing and promoting the required product mix
5. Direct selling in case of group policy Ability to handle multiple sales channels – e.g. through dealerships, agents, bank partners, referrals, brokers and other intermediaries
6. Leadership and team management skills
7. Excellent motivation communication skills.

The key is to demonstrate that you have most if not all of these key skills so as to get your foot in the door.

Challenges And Opportunities Of Retail Banking And Insurance In India - Retail banking and Insurance in India has vast opportunities and challenges. The rise of the middle class is an important contributory factor in this regard. Improving consumer purchasing power, coupled with more liberal attitudes toward personal debt is contributing to India's retail banking and insurance segment. Increase in purchasing power of the younger population would give an immense opportunity. It has been found that younger generation is more comfortable in acquiring debt than the previous generation, thereby improving-purchasing power and liberal attitude towards personal debt, and contributing to India's retail segment. The SEZs will also provide growth opportunity for retail banking. The combination of these factors promises growth in the retail sector, which at present is in the nascent stage. As retail banking and insurance sector offers phenomenal opportunities for growth, the challenges are equally daunting.

The Insurance Industry has to market their products aggressively. The challenge is to design and innovative the financial products which cater to the target segment needs. In future, retail banking scenario will see a huge proliferation of products. This will in turn require devising product which is easy to understand and at the same time meet the financial goals of the customers. The entry of new generation private sector banks has changed the entire scenario. The retail segment, which was earlier ignored, is now the most important of the lot, with the banks jumping over one another to give out retail loans. With supply far exceeding demand it has been a race to the bottom, with the bank sunder cutting one another.

Conclusion - However, the kind of technology used and the efficiency of operations would provide the much needed competitive edge for success in retail banking and Insurance business. Furthermore, in all these customers' interest is of paramount importance. So, it is vital for Retail banks to improve their customer services and cut off predatory lending strategies, particularly in the area of interest on credit cards. Finally we say that Retail banking is one of the most tremendous areas now days to be looked after by the banking industry.

The insurance industry in India has come a long way since the time when businesses were tightly regulated and concentrated in the hands of a few public sector insurers. Following the passage of the Insurance Regulatory and Development Authority Act in 1999, India abandoned public sector exclusivity in the insurance industry in favour of market-driven competition. This shift has brought about major changes to the industry. The inauguration of a new era of insurance development has seen the entry of international insurers, the proliferation of innovative products and distribution channels, and the raising of supervisory standards.

References :-

1. Ojha. Smiksha (2012), growth and development of retail banking in India drivers of retail banking.
2. Mishra, R. and Prabhu, D. (2010) „ Introduction of Retail Banking in India, 1st Edition, and New Delhi, India: Tata McGraw Hill.
3. Murthy, K.S.N; "Modern Law of Insurance"; 4th Edition. LexisNexis Butter worths, New Delhi, 2002.
4. http://www.bis.org/review/r050531f.pdf
5. IBA Buletin, December.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Green Marketing Opportunity For Innovation

Dr. Rita Sachdev *

Abstract - Marketing managers stumble upon with consumers sensible to environmental issues. The old perception on how businesses are establishments with no other objective but to profit leaves its place rapidly to a new perception which defines companies as establishments that are sensible to social problems. Green marketing has become a confront to keep the customers as well as consumers in fold and even keep our natural environment safe and that is the biggest need of the time. A number of factors have caused business firms in some industries to incorporate an environmental ethic into their operations. The term Green Marketing is the buzzword used in industry which is used to describe business activities which attempt to reduce the negative effect of the products/services offered by the company to make it environmentally friendly. With environment and environmental problems gaining importance for people, companies have started to change their production, goods or service generation, and hence marketing strategies accordingly. Environmentalism has fast materialized as a worldwide phenomenon. Business firms too have risen to the occasion and have started responding to environmental challenges by practicing green marketing strategies. Apart from producing environment-friendly products and selecting environment friendly markets, essentially understanding of 'Environmentally Friendly" is required to be integrated into the corporate culture. Consumers encounter with terms such as ozone-friendly, environment-friendly and recyclable products in green marketing. However, green marketing is n't restricted to these terms but is a much wider concept of marketing activity which can be applied to consumer goods, industrial goods and even to services. This paper highlights the consumers' perception and preferences towards green marketing practices and products.

Introduction - While globalization process continues in its full pace across the world, this process has also brought some problems with it. Green marketing is an observable fact which has developed particular important in the modern market and has emerged as an important concept in India. Leading one of these problems is environmental problems that affect all living beings negatively. These aforementioned environmental problems have started to come to the agenda more and more in the recent years and people have started to talk these negativities. Though still a minority, there is an ever-growing segment of the population that bases much of their consumption decisions on their perceptions of how a product will affect the environment and themselves. Consumers now have worries about the future of the world and as results of this mostly prefer environment-friendly products. The concept of green or ecological marketing called upon businesses to follow ethical and green practices while dealing with customers, suppliers, dealers, and employees. Environmental marketing, more popularly known as green marketing or sustainable marketing can be defined as the effort by a company to design, promote, price and distribute products in a manner which promotes environmental protection. Green or Environmental Marketing consists of all activities planned to generate and facilitate any exchanges intended to satisfy human needs or wants, such that the satisfaction of these needs and wants occurs, with minimal harmful impact on the natural environment. Green marketing concepts is a prospect for your business to do the right thing and be rewarded for it. Trends suggest that businesses that don't identify as ecologically friendly or local in the next decade will risk being labeled as low-rent or hopelessly out of date.

Green marketing term was first talk about in a seminar on "ecological marketing" organized by American Marketing Association (AMA) in 1975 and took its place in the literature. Climate change; environmental issues and social problems will challenge the leaders of future generation for taking efficient and widespread decisions. In the process of taking these decisions, the priority of business people should be based on the principal of protecting the environment rather than profitability of the business. Although the notion of marketing is more expansive, this paper employs the term green marketing to refer to the strategies to promote products by employing environmental claims either about their attributes or about the systems, policies and processes of the firms that manufacture or sell them. The green consumers are the motivating forces behind the green marketing process. It is they who drive consumer demand, which in turn promotes enhancements in the environmental performance of many products and companies. The question of why green marketing has increased in importance is quite simple and relies on the basic definition of Economics:

*Asst. Prof. (Commerce) Govt. Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA

"Economics is the study of how people use their limited resources to try to satisfy unlimited wants". Green marketing looks at how marketing activities utilize these limited resources, while satisfying consumers wants, both of individuals and industry, as well as achieving the selling organization's objectives.

Businesses and Green Marketing - There are serious changes for awakening in the business world regarding the responsibility towards the environment and the society. Strategies targeting not only making a profit for the day but also for long-term profitability and environmentally friendly sustainability have started to become agendas of the companies. If a business already competitive in terms of price, quality and performance, adding sustainability and green marketing to its business strategy may enhance its brand image and secure your market share among the growing number of environmentally concerned consumers. Main problem of green marketing is that companies must ensure that their activities are not vague to the consumers or the industry, and do not violate any of the regulations or laws dealing with environmental marketing. Before launching a green marketing campaign, there are some key things you need to know to avoid major missteps that could bring your business down. Specifically, consumers are distrustful of companies' green claims, with just 44% trusting companies about their green credentials. So how do you trample the straight and narrow when marketing green? Understand what motivates green purchases. It's not just about doing well. Although 88 % of green shoppers want to do what's right and 85 % want to preserve the environment for future generations, the biggest factor cited by 90 % is the desire to save time or money in the long run. In other words, your product or service has to meet the same criteria as any purchase would don't get special treatment for being green.

Consumers are highly skeptical about green claims, so you need to spell out in simple language exactly what makes your product or service environmentally friendly. Instead, keep it simple. Using symbols of any green certifications you possess is a smart move; these influence 80 percent of consumers to buy. You can also explain how the product helps the environment, such as "uses less water." Education is key when differentiating many green products and services from the competition. Your website, packaging, ad copy and other marketing materials should explain the benefits of your product or service, not just to the environment but to the customer as well. If your product is priced higher than similar, non-green products, that's not necessarily a deal breaker. Just be sure you spell out how your product is a better value in the end because it lasts longer, saves on energy costs or can be re-used.

Evolution of Green Marketing - As resources are scarce and human wants are unlimited, it is important for the manufactures to utilize the resources efficiently without waste as well as to achieve the organization's objective. So green marketing is our need. Green marketing has now evolved as one of the major area of interest for marketers as it may provide competitive advantages. However it requires investment in terms of technology enhancement, process modification, communicating benefits to customers etc. Many of the companies in India have now started marketing themselves as green organizations due to certain government regulations and shift in the preference of the consumers worldwide. There is growing interest among the consumers over the globe regarding protection of environment. Worldwide evidence indicates people are concerned about the environment and are changing their behavior. As a result of this, green marketing has emerged which speaks for growing market for sustainable and socially responsible products and services.

Three phases in the evolution of green marketing are:

- Ecological Green Marketing: focus on reducing Environmental Problems & providing Remedies.
- Environmental Green Marketing: focus on innovations through Clean Technology.
- Sustainable Green Marketing: focus on preservation of Environment through Sustainable Development.

Early research suggests that ads with green claims were more effective in generating favorable brand attitudes than were ads without green claims. Green has become a central part of the business discussion for a lot of reasons. Companies are realizing pressure from a whole range of stakeholders, including customers, employees and vendors. Then there are substantial mega environmental pressures such as climate change and water shortages that are evolving no matter what the economic situation is. Combine all these forces, and there really is no choice anymore. But there are great proactive reasons to look at the business through a green lens. It saves money, reduces risk, drives innovation and new product development, and builds brand value and loyalty. Finally, it's a great way to endure this recession. Leading companies in green business are not slowing down. They are still pursuing and, in some cases, motivating their green efforts. Companies that consider putting their green efforts aside to wait out the economic downturn are making a big mistake. The smartest companies are recommitting to sustainability and using environmental thinking not only to stay profitable but also to drive innovation and help their customers. Green thinking can help companies get out of these challenges. Sustainability is at the very core of survival. Green is about doing more with less, which can save you money quickly.

Conclusion - It's not about backing up any claims you might make as to the environmentally loving nature of your business. It's important not to rely on comprehensive overview about the green consumer. With the appearances of a large number of environmental problems and issues all over the world, there begins a need to preserve and protect the earth's natural environment and finite resources. Green marketing is still in its infancy in India and more research needs to be undertaken on different aspects of green marketing to explore its potential to the maximum possible extent. They are not

gigantic. In fact, you need to make sure that you live up to your claims without surrendering your faithfulness. The more your customers realize why what you do is important in their lives, the more likely they will remain your customers. Manufacturers also have the accountability to make the consumers recognize the need for and remuneration of green products as compared to non-green ones. In green marketing, consumers are eager to pay more to maintain a cleaner and greener environment. Consumers' level of awareness about green products found to be high but at the same time consumers are not aware about green initiatives undertaken by various government and non-government agencies signifying need for more efforts from organizations in this regard. Finally, consumers, industrial buyers and suppliers need to compel to minimize the negative effects on the environment-friendly. Green marketing assumes even more importance and significance in developing countries like India. Consumers, by not remaining insensitive to environmental problems such as environment pollution and global warming, they have started to consider whether the products they purchase are environment-friendly or not apart from price and quality features of the products. Thus an environmental dedicated organization may not only produce goods that have reduced their negative impact on the environment, they may also be able to force their suppliers to behave in a more environmentally "accountable" fashion. With environment and environmental problems gaining importance for people, companies have started to change their production, goods or service generation, and hence marketing strategies accordingly. They have started to produce environment friendly products and have tried to reach green marketing concept to the consumers.

References :-

1. Anirban Sarkar, International Journal of Marketing, Financial Services & Management Research Vol.1 Issue 9, September 2012, ISSN 2277 3622.
2. Alsmadi, S. (2007), ¯Green Marketing and the Concern over the Environment: Measuring Environmental Consciousness of Jordanian Consumers, Journal of Promotion Management, Vol. 13(3–4), 2007.
3. Sanjay K. Jain & Gurmeet kaur (2004), Green Marketing: An Attitudinal and Behavioral Analysis of Indian Consumers, Global Business Review, Vol.5 no. 2 187-205.
4. Kilbourne, W.E. & Beckman, S.C. (1998). Review and Critical Assessment of Research on Marketing and the Environment. Journal of Marketing Management, 14(6), July, pp. 513-533
5. http://www.greenmarketing.net/stratergic.html
6. Mathur, L.K., Mathur, I. (2000).An Analysis of the wealth effect of green marketing strategies, Journal of Business Research, 50(2), 193-200
7. Davis, Joel J. 1993. "Strategies for Environmental Advertising." Journal of Consumer Marketing 10 (2): 19-36.
8. Prakash, A. (2002). Green Marketing, public policy and managerial strategy.
9. Polonsky, M. J., & Rosenberger, P. J. III. (2001) Reevaluating green marketing: a strategic approach, Business Horizons, 44(5), 21-30. http://dx.doi.org/10.1016/S0007-6813(01)80057-4

****

मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाऐं - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रीति शाह *

प्रस्तावना – सोयाबीन को सुनहरे बीन या चमत्कार फसल के रूप में जाना जाता है। यह प्रोटीन और तेल का एक पूर्ण स्त्रोत है। सोयाबीन का जन्म प्राय: चीन में हुआ था और कई वर्ष पूर्व यह हिमालय पर्वत के पार भारत के लिए पेश किया गया था। सोयाबीन मुख्य रूप से उसके बीजों की वजह से उगाया जाता है और भारत में मूंगफली के बाद दूसरा बड़ा तेल बीज है। अत: इसे वनस्पति तेल के रूप में प्रयोग के साथ, सोयाबीन से दूध, आटा आदि के लिए भी प्रयुक्त होता है। सोयाबीन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक माना जाता है। कोलेस्ट्रॉल वसा को तो कम करता ही है बल्कि यह कैल्शियम व विटामिन-12 का भी अच्छा स्त्रोत माना जाता है। यह दिल, कैंसर व ओस्टियोपोरोसिस रोगों को कम करने में मदद करता है।

सोयाबीन की भारत के पिछले कई राज्यों जैसे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में खेती की जाती है। पिछले वर्षों में सोयाबीन का उत्पादन मध्यप्रदेश से सर्वाधिक प्राप्त हुआ। इसलिए मध्यप्रदेश को सोया स्टेट के नाम से जाना जाता है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध-पत्र मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाओं से संबंधित है, जिसमें यह जानने का प्रयास किया गया है कि :

1. सोयाबीन उत्पादन के लिए अनुकूल दशाऐं कौन-सी है ?
2. मध्यप्रदेश में किन अनुकूल दशाओं के कारण उत्पादन सर्वाधिक होता है।
3. देश के अन्य राज्यों का उत्पादन कम होने के कारणो को जानना।
4. सोयाबीन की जातियों का अध्ययन करना।
5. वर्ष 2014 के सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका का अध्ययन करना।
6. उत्पादन में आने वाली समस्याओं को जानकर आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पनाऐं –

1. देश के सोयाबीन उत्पादन में मध्यप्रदेश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है....अध्ययन करना।
2. म.प्र. में सोयाबीन उत्पादन हेतु अनुकूल परिस्थितियां प्रकृति की देन है....तथ्य का अवलोकन करना।
3. महाराष्ट्र, राजस्थान, अन्य राज्यों में सोयाबीन उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है, नहीं...उपरोक्त तथ्यों को उजागर कर सुझाव प्रस्तुत करना।

क्षेत्र व सीमाऐं – प्रस्तुत शोध में राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राज्यों को मुख्य रूप से अध्ययन हेतु शामिल किया है। अध्ययन हेतु 2014 के सर्वेक्षित आंकड़ों को सम्मिलित किया गया है।

शोध विधि – शोध पत्र आंकड़ों के संकलन हेतु द्वितीयक संमको, इंटरनेट पर संबंधित वेब साइट्स, उपलब्ध पुस्तकालय एवं प्रत्यक्ष रूप से संबंधित अधिकारियों से पूछताछ पर आधारित है।

सोयाबीन की विभिन्न राज्यों में पाई जाने वाली प्रजातियां –

जोन	राज्य	प्रजातियां
नार्थ जोन	उत्तरप्रदेश व राजस्थान	अलंकार, अंकुर, क्लार्क-63, पीके-1042, 262, 308, 327, इंदिरा सोया-9, जेएस-2, जेएस-71-05, जेएस-75-46, जेएस-76-205, जेएस-79-81, जेएस-80-21, जेएस-335, जेएस-90
सेंट्रल जोन	मध्यप्रदेश व महाराष्ट्र	एमएसीएस-13, एमएसीएस-58, एमएयूएस-47 (पंजाबी सोना) ,एमएस-335, एनआरसी-12, एनआरसी-2, एनआरसी-7, पीके472, पीयूएसए-37, एमएसीएस-57, एमएसीएस-450, एमएयूएस-32, जेएस9560, जेएस9305, जेएस335
साउथ जोन	कर्नाटका	एमएसीएस-124, पीयूएसए-40

देश में सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका : (तालिक देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका का विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य उजागर होते है।

1. मध्यप्रदेश में 55.462 (लाख हेक्टेयर) सोयाबीन बोया गया था। जिसमें 1086 प्रति किलो हेक्टेयर की उपज प्राप्त होकर कुल उत्पादन 60.249 (लाख रू.) प्राप्त हुआ।
2. महाराष्ट्र में म.प्र. की तुलना में सोयाबीन का जोता गया क्षेत्रफल कम था एवं 808 प्रति किलो हेक्टेयर प्राप्त हुई जो म.प्र. की तुलना में 25.60 प्रतिशत कम प्राप्त हुई।
3. राजस्थान में बोया गया क्षेत्रफल म.प्र. एवं महाराष्ट्र की अपेक्षा काफी कम था परंतु यहां पर प्रति किलो हेक्टेयर उपज म.प्र. की तुलना में कम परंतु महाराष्ट्र की तुलना में 2.35 प्रतिशत की वृद्धि थी।
4. आंध्रप्रदेश में जोता गया क्षेत्रफल म.प्र. की तुलना में 52.742 (लाख हेक्टेयर) कम था एवं उपरोक्त राज्यों की तुलना में भी सर्वाधिक कम था परंतु महाराष्ट्र एवं राजस्थान की तुलना में प्रति किलो हेक्टेयर की उपज प्राप्ति सर्वाधिक थी।

कर्नाटका, चंडीगढ़, गुजरात राज्यों की स्थिति पर प्रकाश डाले गए तो यहाँ पर जोता गया क्षेत्र ऊपर दिखाए गए राज्यों की तुलना में कम रहा परंतु

* शोधार्थी (वाणिज्य) 63/1, बनियावाड़ी, धार (म.प्र.) भारत

उपज प्रति किलो हेक्टेयर प्राप्ति म.प्र. की तुलना में कम परंतु महाराष्ट्र एवं राजस्थान राज्यों की तुलना में सर्वाधिक प्राप्त हुई।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि –

1. देश के सोयाबीन उत्पादन में म.प्र. का योगदान अन्य राज्यों की तुलना में सर्वाधिक है।
2. तत्पश्चात क्रमश: राजस्थान एवं महाराष्ट्र राज्यों में सोयाबीन की खेती अधिक की जाती है जिससे प्राप्त उपज कुल सोयाबीन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
3. आंध्रप्रदेश, कर्नाटका, चंडीगढ़, गुजरात राज्यों में सोयाबीन की खेती म.प्र., महाराष्ट्र राज्यों की तुलना में कम की जाती है। अंत इसके कारण प्राकृतिक दशाओं का अनुकूल दशाओं का न होना है। चूंकि इन राज्यों में प्रति किलो हेक्टेयर उपज प्राप्ति अधिक है जो मानव प्रयासों की ओर संकेत करती है।

विभिन्न राज्यों में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल व प्रतिकूल दशाऐं –

मध्यप्रदेश –

1. मध्यप्रदेश में सोयाबीन की खेती उज्जैन, भोपाल, होशंगाबाद, इंदौर, जबलपुर, सागर, ग्वालियर संभागों में की जाती है।
2. यहां पर 85 प्रतिशत सोयाबीन की जेएस–9560, जेएस–9305 किस्में देखने को मिलती है।
3. खंडवा, बुरहानपुर, खरगोन, बड़वानी, अलीराजपुर जिलों में जेएस–335, जेएस–9560 और जेएस–9305 सोयाबीन किस्में देखी जाती है। जेएस–335 प्रजाति छोटे आकार होने के कारण पानी की जरूरत अधिक पड़ती है। पानी की कमी के कारण यह प्रजाति का उत्पादन कम होता है।

परंतु मध्यप्रदेश अन्य राज्यों की अपेक्षा सोयाबीन उत्पादन करने में प्रथम रहा है। क्योंकि –

1. सोयाबीन के लिए यहां पर मानसून की अनुकूल परिस्थितियां है।
2. यहां के किसानों द्वारा सोयाबीन उत्पादन हेतु नवीन तकनीकों को अधिक अपनाया गया है।
3. खरपतवार प्रबंधन।
4. प्लांट संरक्षण।
5. मालवा पठार के अंतर्गत पाई जाने वाली मिट्टी में संतुलित मात्रा में नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की मात्रा पाई जाती है जो सोयाबीन के लिए अनुकूल है।

महाराष्ट्र – महाराष्ट्र में सोयाबीन की खेती अमरावती, नागपुर, नासिक, पुणे, औरंगाबाद, कोल्हापुर संभागों में होती है। क्षेत्र के करीबन 90 प्रतिशत भाग में जेएस–335 किस्म सोयाबीन देखने को मिलती है। जेएस–335 को अधिक पानी की आवश्यकता होती है। परंतु महाराष्ट्र में पानी की कमी की वजह से सोयाबीन उत्पादन में कमी आती है। इसी प्रकार जेएस–335 सोयाबीन किस्म प्राय: 100–105 दिन में परिपक्व होती है, परंतु किसान द्वारा 80–90 दिन में कटाई कर दिए जाने की वजह से भी प्रतिकूल उत्पादन प्राप्त होता है। पिछले वर्षो (2012 एवं 2013) में सोयाबीन उत्पादन में कमी होने के कारण, आवश्यकता से अधिक वर्षा, जल जमाव, कीड़ों का फसल पर आक्रमण जैसे अन्य रहे।

राजस्थान – राजस्थान में सोयाबीन की खेती कोटा, उदयपुर, भीलवाड़ा संभागों में होती है। यहां प्रतापगढ़ व झालावाड़ जिलों में अधिकतर सोयाबीन की जेएस–335 व जेएस–9305 की किस्में पाई जाती है। पूरे राजस्थान में सोयाबीन की स्थिति कमजोर है। कमजोर होने का कारण मुख्यत: पानी का अभाव है। साथ ही जेएस–335 किस्म की परिपक्वता 100–105 दिन लेती है, परंतु यहां के किसान 80 से 90 दिन में कटाई कर लेते है, जिसकी वजह से सोयाबीन उत्पादन अपेक्षाकृत कम प्राप्त होता है।

निष्कर्ष – किसी भी फसल उत्पादन के लिए दो महत्वपूर्ण कारक प्रकृति एवं मानव अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, किसी भी एक कारक का न होना, कुल उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। अत: उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि इसमें कोई संशय नहीं है कि म.प्र. का सोयाबीन उत्पादन में अन्य राज्यों की अपेक्षा महत्वपूर्ण योगदान रहा है, इसका कारण यहां पर प्रकृति प्रदत्त मानसून, मिट्टी, जल आदि फसल के लिए अनुकूल दशाओं का निर्माण करती है, साथ यहां पर किसानों का फसल के प्रति जागरूकता एवं प्रबंधन को भी नकारा नहीं जा सकता है। अत: प्रकृति एवं मानव प्रयासों के द्वारा म.प्र. सोया स्टेट कहलाता है। तत्पश्चात अन्य राज्य महाराष्ट्र, राजस्थान क्रमश: देश के सोयाबीन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। यदि यहां पर सरकार एवं किसान द्वारा प्रयास किए जाए तो सोयाबीन उत्पादन में कुछ सीमा तक वृद्धि की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. wwww.sopa.org
2. Soyabeen processors Association of India
3. Department of Agriculture and Co-operation
4. Ministry of Agriculture Govt. of India

देश में सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका

राज्य	जोता गया क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	उपज प्राप्ति (प्रति किलो हेक्टेयर)	कमी/वृद्धि	उत्पादन (लाख रू. में एमटी)
मध्यप्रदेश	55.462	1086	–	60.249
महाराष्ट्र	38.008	808	–25.59 %	30.721
राजस्थान	6.820	827	+2.35 %	5.639
आंध्रप्रदेश	2.720	975	+17.89 %	2.652
कर्नाटका	2.928	823	–15.58 %	2.418
चंडीगढ़	1.470	915	+11.17 %	1.345
गुजरात	0.742	945	+3.28 %	0.701
शेष भारत	0.693	925	–2.11 %	0.641
कुल योग	**108.834**		**104.366**	

****

भारत में कृषि संबंधी योजनाएं और कार्यक्रम

ऊँकार सिंह रावत *

प्रस्तावना – भारत की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। यहां की कुल ज.सं. 102.70 करोड़ है, अत: देश की कुल ज.सं. का 75 प्रतिशत भाग गॉवो में निवास करता है, जो लगभग 5,75,000 गॉवो में फैला हुआ है, अत: ग्रामीण ज.सं. का लगभग 90 प्रतिशत भाग प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि कार्य में संलग्न है। इस प्रकार हमारे देश की कुल ज.सं. का लगभग 64 प्रतिशत भाग जीविकोपार्जन के लिए कृषि कार्य में संलग्न है, इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था को कृषि प्रधान अर्थव्यस्था भी कहा जाता है, अत: भारतीय अर्थव्यवस्था मूलत: कृषि प्रधान है। डॉ0 क्लाउन्सटन ने लिखा है कि 'भारत में यदि परिगणित जातियां है तो यहां परिगणित उद्योग की भी कमी नही है, दुर्भाग्यवश कृषि भी उनमें से एक है। 'आज भारतीय कृषि पर ध्यान दे तो जिस स्तर से औद्योगिक विकास को गति दी गई है, उसी स्तर से कृषि क्षेत्र पर उतना ध्यान आर्थिक नियोजन में दिया गया होता तो भारत की आर्थिक तस्वीर ही दूसरी होती। डॉ0 वी.के. आर. वी. राव ने भी कहा है कि 'यदि पंचवर्षीय योजनाओ के द्वारा विकास रूपी पहाड़ को लांघना है, तो कृषि के निर्धारित लक्ष्यो को पूरा करना आवश्यक है।

अत: स्वतंत्रता से पूर्व आर्थिक दृष्टि से कृषि जगत के लिए किसी प्रकार की विकास परक नीति की घोषणा एवं क्रियान्वयन तो दूर बल्कि कृषको पर ऊँचे लगान वसूल कर उत्पीड़न किया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि सोने की चिड़िया कहलाने वाला कृषि प्रधान भारत आर्थिक दरिद्रता को प्राप्त हुआ।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्ता को स्वीकारते हुये आजादी के पश्चात से ही कृषि की दशा सुधारने एवं उसे सही दिशा की ओर गमित करने हेतु कई प्रयास किये गये। वर्ष 1949 में आधिक अन्न अपजाओ कार्यक्रम वर्ष 1960-61 में भूमि सुधार (चकबंदी) कार्यक्रम 'प्रथम हरित क्रांति' वर्ष 2007 में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (2007) एवं राष्ट्रीय बागवानी मिशन (2004) आदि ऐसे ही अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये।

इन कार्यक्रमो के क्रियान्वयन से अप्रत्याशित रूप से खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि हुई, कृषि एवं कृषको की दशा में अपेक्षित सुधार भी आया फिर भी कई अवसर ऐसे भी सामने आये जब कृषकों ने अपनी अच्छी फसल न होने या प्राक्रतिक आपदा से त्रस्त होकर आत्महत्या जैसे अमानवीय कृत्य को भी स्वीकारा। देश भर की जनता की क्षुधा को मिटाने वाला कृषक खुद क्षुधा से ग्रस्त हो, अनैतिक कृत्य को अंजाम देने को मजबूर हो जाता है। कृषको के हितों के रक्षार्थ सरकार समय-समय पर कई प्रसास भी करती है, परन्तु उन योजनाओं एवं नीतियों का सफल क्रियान्वयन न हो पाने के कारण न समाज के कृषक और न ही राष्ट्र अपेक्षित परिणाम को प्राप्त कर पाता है, इसलिए कृषि के चहुँमुखी विकास हेतु आवश्यक है कि पूर्व से संचालित योजनाओं और नीतियों का स्वस्थ मानसिकता के साथ क्रियान्वयन किया जाये जिस उद्देश्य पूर्ति हेतु यह कार्यक्रम संचालित किये जा रहे है, वे उद्देश्य पूर्ण होने चाहिये। वर्तमान में संचालित नीतियों में यदि कोई विडम्बनायें है, तो उनका सकारात्मक हल ढूँढकर नवीन रूपरेखा निर्मित की जाये। जहॉ तक संभव हो अधिकाधिक नीतियों परियोजनाओ एवं कार्य योजना के स्थान पर दो या तीन नीतियो को ही राष्ट्र स्तर पर एक साथ लागू किया जाना चाहिए तथा उन्ही में कृषि एवं कृषक संबंधी संपूर्ण हितो का समावेश किया जाये ताकि कृषक को भिन्न-भिन्न स्थानो पर भटकना न पड़े। यदि अति आवश्यक हो तो जगह-जगह पर उसके उपकेन्द्र स्थापित कर दिये जाने चाहिए या आन-लाईन व्यवस्था को लागू कर भीड़ को नियंत्रित किये जाने का प्रयास करना चाहिये।

भारत गॉवो का देश है, 'या ' भारत एक कृषि प्रधान देश है, ऐसे वाक्य हम दशकों से पढ़ते सुनते आ रहे है किन्तु ऐसा परिदृश्य भी बदलने वाला है। कारण साफ है, कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान काफी कम हो रहा है, ऐसा नही है कि आगामी दशको में खेती-किसानी कार्य बन्द हो जाएगा बल्कि राष्ट्रीय उत्पाद में योगदान देने वाले अन्य क्षेत्र एवं विकल्प अधिक तेजी से उभरेगें। आजादी के समय देश के सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में खेती का हिस्सा 55 प्रतिशत था जो अब मात्र 14 प्रतिशत रह गया है। यद्यपि भारत की कुल जनसंख्या का आधे से अधिक हिस्सा आज भी मुख्यत: कृषि पर निर्भर करता है। किन्तु सरकारी एवं निजी क्षेत्र के माध्यम एवं निम्न स्तर के मानव श्रम के कार्य इन्हीं गांवो के कृषक परिवारो से आए नौजवान करते है, अर्थात नौकरी या मजदूरी के माध्यम से सेवा क्षेत्र में योगदान बढ रहा है। वैसे भी तकनीकि विकास के कारण भारत में सेवा क्षेत्र कल्पनातीत ढंग से विस्तार हुआ है।

सकल घरेलू उत्पात में योगदान (क्षेत्रवार)

वर्ष	कृषि	उद्योग	सेवा क्षेत्र
1950-51	54.4	12.8	31.8
1972-73	42.8	22.8	34.8
1990-91	30.9	25.4	43.7
1999-2000	25.5	22.1	52.4
2003-04	22.1	26.9	51.0
2009-10	17.5	20.0	62.5
2012-13	13.7	21.5	64.8

विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाए क्रमश: कृषि उद्योग तथा सेवा क्षेत्र की ओर अग्रसर हुई है, किन्तु भारत में सेवा क्षेत्र का महत्व एकदम बढ़ा है। हो सकता है, यह विपरीत प्रभाव डाले।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात कृषि पर ध्यान देने की बात तो कही गई परन्तु उद्योगों के विकास ने कृषि की प्राथमिकता को तिरोहित कर दिया।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बुदनी जिला- सीहोर (म.प्र.) भारत

साठ के दशक में जब हरित क्रांति को अपनाया गया तो कृषि में देखे गये अप्रत्याशित परिणामों ने सरकार का रूझान कृषि की ओर परिवर्तित कर दिया तब से लेकर वर्तमान समय तक सरकार ने कृषि एवं कृषको के हितो की रक्षा हेतु अनेक प्रयास किये है।

जो निम्न प्रकार के है –

1. **रूपांतरित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना –** केन्द्र सरकार की ओर से किसानो के हितो को ध्यान में रखकर रूपांतरित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को मंजूरी प्रदान कर दी गई है। इसके तहत किसानो की विभिन्न समस्याओ का विस्तारण करते हुये संबंधित क्षेत्र में फायदेमंद खेती कराने की योजना है, इसके तहत वर्ष 2010–11 और 2011–12 के लिए 358 करोड रूपये खर्च किए गए। रूपांतरित योजना के आरंभ होने से बडी संख्या में किसान कृषि उत्पादन में होने वाले जोखिम का प्रबन्धन बेहतर तरीके से कर पा रहे है, और कृषि से होने वाली आय को स्थित रखने में खासकर प्राक्रतिक आपदा से फसल बर्वाद होने की स्थिति में सक्षम हुए है।

2. **किसानों की मदद के लिए ऋण –** केन्द्र सरकार की ओर से किसानों को विभिन्न योजनाओं के तहत ऋण सुविधा भी मुहैया करायी जा रही है, किसान क्रेडिट कार्ड के अलावा औषधीय खेती के लिए भी ऋण का प्रावधान किया गया बजट में वित्तमंत्री ने 2015–16 के दौरान 8.5 करोड रूपये के कृषि ऋण का लक्ष्य रखा है।

अल्पकालिक कृषि कर्ज (करोड रूपये में)

वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि
2010–11	3,75,000	4,68,291
2011–12	4,75,000	5,11,029
2012–13	5,75,000	6,07,375
2013–14	7,00,000	7,30,765.61
2014–15	8,00,000	3,70,828.60
2015–	8,50,000	–/–

30 सितम्बर 2014 तक के ऑकडे स्त्रोत बजट दस्तावेज

3. **फसल ऋण के लिए ब्याज सहायता योजना –** किसान आखिरकार दिवालिया क्यों हो जाता है, बदहाली क्यों आ जाती है, या फिर गरीबी के दुश्य चक्र में कैसे फंस जाता है, इसका कारण साफ है। मानसून पर अत्याधिक निर्भरता, सिंचाई सुविधाओं की कमी, बेहतर बीजो का अभाव, उन्नत तकनीक का इस्तेमाल नही होना, पैदावार के समुचित विपणन में परेशानी जैसे कारण किसानो की बिगड़ती स्थिति के लिए जिम्मेदार है। तो केन्द्र सरकार ने वित्त वर्ष 2006–07 में किसानों के लिए रियायती शर्तो पर फसल ऋण के लिए ब्याज सहायता योजना की शुरूआत की। यह ऋण छोटी अवधि (एक वर्ष या उससे कम) के लिए दिया जाता है। इस सुविधा में किसान ज्यादा से ज्यादा तीन लाख रूपये का ऋण ले सकते है, जिस पर सालाना ब्याज की दर 7 प्रतिशत होती है, बाद में एक और सुविधा दी गई है। जो किसान समय पर ऋण चुका देते है, उन्हें अगला ऋण महज चार प्रतिशत ब्याज मिल जाता है। उस समय ऐसे कुल ऋण खातो की संख्या 5.72 करोड है।

जाहिर है, कि रियायती ऋण की व्यवस्था शुरू होने के नौ वर्षो के दौरान ज्यादा जोर लक्ष्य ज्यादा से ज्यादा और करने पर रहा। लेकिन नई सरकार ने अपनी रणनीति बदली मकसद है कि किसानो को केवल ऋण लेने में ही सहुलियत नहीं मिले, बल्कि ऋण चुकाने में भी उसे सहूलियत हो। इस कडी में पहली कोशिश ये थी कि ज्यादा से ज्यादा किसानो को संगठित वित्तीय व्यवस्था के दायरे में लाया जाए। यहॉ प्रधानमंत्री जन–धन योजना मददगार बनी। इस योजना में बैकिंग सुविधा से वंचित एक–एक परिवार पर ध्यान देने का फायदा ये हुआ कि 28 फरवरी 2015 तक कुल 13.68 करोड बैंक खाते खुले उसमें करीब 60 प्रतिशत यानी 6.16 करोड से भी ज्यादा ग्रामीण इलाको में है, यानी भारी तादाद में किसान संगठित वित्तीय व्यवस्था में आ सके।

4. **प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना–**भारत में एक बडी समस्या सिंचाई की है, अभी भी तमाम प्रदेशो में सिंचाई की माकूल व्यवस्था न होने की वजह से जमीन का एक बडा हिस्सा खाली पडा रहता है। इस हिस्से में भी फसल लहलहाने लगे, इसके लिए केन्द्र सरकार की ओर से लगातार प्रयास किये जा रहे है। इसी प्रयास की दिशा में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) शुरू की गई है। पीएमकेएसवाई के कार्यान्वियन के लिए पूरे देश में बजट घोषणा में 2015–16 के लिए 4300 करोड़ रूपये तथा जल संसाधन मंत्रालय नदी विकास एंव गंगा पुनरूध्दार मंत्रालय के बजट में त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम (एआईवीपी) हेतु 1000 करोड रूपये आवंटित किए गए है। इसके तहत किसानो को सालभर सिंचाई के लिए पर्याप्त पानी की सुविधा मुहैया कराने की योजना है। देश की आधी से ज्यादा जमीन पर खेती सिर्फ भगवान के भरोसे होती है। यानी सिंचाई वर्षा पर आधारित है। इस तरह की जमीन को सिंचाई की सुविधा की वजह से फसल उत्पादन में बढोत्तरी हो सकती है। ऐसे में प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना इस तरह की समस्याओं से निपटने में कारगर साबित हो सकती है।

5. **मूल्यांकन –** उपरोक्त अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि देश की अर्थव्यवस्था के मजबूत आधार कृषक एवं कृषि है। कृषि एवं इससे संबंधित उद्योगों से देश के लगभग दो तिहाई व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है। वर्तमान सरकार भी कृषि उत्पादकता सिंचित क्षेत्र बढाने व कृषि संबंधी योजनाओं की कार्यकुशलता व किसानों की आमदनी बढानें वाली योजनाओ पर ज्यादा जोर दे रही है। सिंचाई क्षमता व खेत की जल धारण करने की क्षमता में सुधार लाने के लिए प्रधानमंत्री ग्राम सिंचाई योजना शुरू की गई है। किसानों को उनके उत्पाद का सही मूल्य दिलाने के लिए राष्ट्रीय कृषि बाजार की स्थापना के लिए बजट में राज्यो के साथ मिलकर काम करने की भी घोषणा की गई है। प्रधानमंत्री ग्रामीण सडक योजना से सुदूरवर्ती गांवो को जोडा गया। पहाडी क्षेत्रो व बीच जंगलो में बसे गांवो को आसानी से जिला मुख्यालय तक पहुॅचने में आसानी हुई। अब किसान सब्जियों और फसलों के अलावा सरकारी योजनाओं का लाभ लेने में पीछे नही रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कटारिया डां. सुरेन्द्र ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज. आर. बी. एस. एए. पब्लिशर्स जयपुर,
2. मिश्र एवं पुरी (2000) भारतीय अर्थव्यवस्था हिमालय पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली,
3. दास हरसन (1998) कृषि अर्थशास्त्र रमा पब्लिशिंग हाउस बडोत (मेरठ),
4. कुरूक्षेत्र ग्रामीण विकास मंत्रालय जून 2015,
5. कुरूक्षेत्र ग्रामीण विकास मंत्रालय अप्रैल 2015
6. प्रतियागिता घटना चक्र अगस्त 2015 302 दक्षता आपर्टमेंट 57, गोडवोले कॉलौनी अन्नपूर्ण मन्दिर के सामने इन्दौर,

****

पर्यटन उद्योग के विकास में शासन की भूमिका

डॉ. प्रवीण ओझा *

प्रस्तावना – भारत में पर्यटन उद्योग यहां की संस्कृति से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। यहां के पर्यटन में वैविध्यता के दर्शन होते हैं। यहां के पर्यटन स्थलों में यहां के इतिहास, लोक संस्कृति, वैभव, रहन-सहन, मेले, उत्सव की झलक दिखाई देती है। यद्यपि वर्तमान में भारत में पर्यटन उद्योग ने सुस्थापित उद्योग के रूप में पहचान बना ली है तथापि इस का विकास वैश्विक आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाना अभी भी अपेक्षित है। अभी भी विकास को ऐसा रूप प्रदान किया जाना आवश्यक है जिससे यह विकास का स्थायी साधन बन सके। इसमें अभी भी और अधिक निवेश से रोजगार के अवसर बढ़ने की संभावना है। इसमें पर्यटकों द्वारा किया गया व्यय स्थानीय लोगों की आय बनता है, उनके द्वारा उसमें से किया गया व्यय अन्य व्यक्ति की आय बनकर स्थानीय अर्थव्यवस्था के विकास में सहयोगी बनता है। अतएव इस उद्योग का और अधिक विकास देश के विकास हेतु उपयोगी सिद्ध होगा।

यद्यपि यहां पर्यटन उद्योग के विकास की सतत प्रक्रिया के साथ-साथ उसे और अधिक विकसित बनाने के प्रयास जारी हैं जिसमें नीति निर्धारण एवं उसके क्रियान्वयन में शासन की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। वाणिज्यिक दृष्टि से पर्यटन को विपणन की वस्तु मान लेने के कारण विकसित किये जाने वाले स्थल, सेवाओं की मांग एवं बाजार की पहचान करना एवं पर्यटकों को उन्हें खरीदने के लिये प्रेरित करना, रोजगार एवं आय की प्रत्याशा में विकास हेतु नीति निर्धारण करना, मांग बढ़ाने के साथ आपूर्ति एवं पूंजी निवेश बढाना, लागत-लाभ का मूल्यांकन करना आदि कार्य करने का दायित्व शासन का होता है। यहां पर्यटन उद्योग के विकास के मार्ग की कमियों को दूर कर उसे और अधिक उन्नत बनाने हेतु सर्वप्रथम शासन को सुविधा प्रदाता के स्थान पर योजनाओं के परिपालन कर्ता की भूमिका को अपनाना होगा। इस दिशा में शासन की भूमिका को निम्न सुझावों द्वारा और अधिक प्रभावषाली बनाया जा सकता है।

1. **क्षेत्रीय संसाधनों के अनुरूप विकास की नीति –** शासन को पर्यटन योजनाओं का निर्माण यहां की क्षेत्रीय प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुये किया जाना चाहिए। जहां ऐतिहासिक, धार्मिक एवं वन्य जीव सम्बन्धी पर्यटन की अपार संभावनाएं हैं वहाँ जिनके पर्याप्त दोहन की व्यवस्था शासन को करनी चाहिये। ऐसे पर्यटन स्थल भी रेखांकित करने चाहिये जो समय की दृष्टि से साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक या वार्षिक प्रकृति के हों,उसी के अनुरूप नियोजन होना चाहिए।

2. **पर्यटन संभावनाओं का आकलन –** पर्यटन उद्योग के विकास हेतु पर्यटन की नवीन संभावनाओं का पूर्ण आकलन करना अपेक्षित है। इसके लिये विस्तृत सर्वेक्षण कर महत्वपूर्ण स्थलों की पहचान, उनका समूह निर्धारण एवं विस्तृत रिपोर्ट के आधार पर योजना लागू की जानी चाहिये

3. **विविध विभागों में तालमेल की स्थापना –** पर्यटन विकास की महती जिम्मेदारी का निर्वहन विभिन्न विभाग यथा पर्यटन, पुरातत्व, पुलिस, विद्युत, नगर निगम, वन विभाग, जल संसाधन विभाग इत्यादि मिलकर कर रहे हैं। जिनके मध्य पारस्परिक तालमेल की कमी दिखाई देती है। इनके मध्य समन्वय स्थापित कर योजनाओं का क्रियान्वयन में भी होने चाहिये।

4. **योजनाओं की समीक्षा –** शासन का पर्यटन उद्योग के विकास संबधी योजनाओं, प्रस्तावों का समय-समय पर निरीक्षण, बैठक, संगोष्ठी के माध्यम से मूल्यांकन किया जाना भी आवश्यक है जिससे उनके क्रियान्वयन में भूल न हो। जिला पुरातत्व संघ को और अधिक प्रभावी बनाकर इसकी बैठकों का अन्तराल कम करना चाहिये।

5. **बजट सम्बन्धी विसंगतियां दूर करना –** पर्यटन संबंधी किसी भी प्रस्ताव को योजना का रूप धारण करने में बजट सम्बन्धी अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। योजना हेतु समुचित बजट की स्वीकृति होनी चाहिए स्वीकृति में अधिक समय नहीं लगना चाहिये। बजट राशि के आहरण के प्रश्न पर भी यहां पुरातत्व एवं सार्वजनिक निर्माण विभाग के मध्य मतभेद रहते हैं। ऐसे गतिरोध दूर कर बजट आबंटन की प्रक्रिया का सरलीकरण किया जाना चाहिये।

6. **निजी सहभागिता का विकास–** पर्यटन क्षेत्र में निजी क्षेत्र की सहभागिता बढ़ाने हेतु मध्यप्रदेश सरकार ने जो 'हेरिटेज टूरिज्म पॉलिसी' बनायी है उसका यहां व्यापक प्रचार-प्रसार होना चाहिये। उद्यमियों को उससे जुड़ने हेतु प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। प्राचीन विरासतों को सम्पत्ति एवं आर्थिक लाभों में बदलने हेतु निजी सहभागिता बढ़ाना आवश्यक है। होटलों के विकास हेतु निजी उद्यमियों, विदेशी होटल श्रृंखलाओं एवं अप्रवासी भारतीयों को विशेष सुविधा पैकेज देकर आकर्षित किया जा सकता है।

7. **पर्यावरण संरक्षण के साथ विकास –** शासन को यह तथ्य सुनिश्चित करना चाहिए कि पर्यटन उद्योग के विकास का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। इसके लिये समुचित दिशा निर्देशों का गंभीरतापूर्वक परिपालन सुनिश्चित होना चाहिये। उचित जल प्रबंधन, वाटर हार्वेस्टिंग, उचित अपशिष्ट प्रबंधन, पर्यावरण चेतना विषयक कार्यक्रमों का आयोजन एवं प्रचार, कागज के थैलों का प्रयोग आदि उपायों को लागू करना चाहिये। शासन को अमानक पॉलिथिन का प्रयोग रोकने के लिये उनकी उत्पादक फैक्ट्रियों पर रोक लगानी चाहिये।

8. **सुरक्षा व्यवस्था संबंधी सुझाव –** पर्यटक उसी स्थल पर भ्रमण करना चाहते हैं जहां वे पूर्णत: सुरक्षित हो। पर्यटन स्थलों पर सुरक्षा उपायों पर विशेष ध्यान देना अधिक आवश्यक है। पर्यटन स्थलों एवं पर्यटकों दोनों की ही सुरक्षा का दायित्व शासन का है। सुरक्षा व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिये कि पर्यटकों को भारी संख्या में पुलिस देखकर भय भी न उत्पन्न हो

* प्राध्यापक व संकायाध्यक्ष (वाणिज्य) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

और सुरक्षा भी मजबूत हो। इसके लिये पर्यटन पुलिस के रूप में सादा कपड़ों में सिपाही तैनात होने चाहिये, खुफिया तंत्र मजबूत बनाना चाहिये जिससे अपराध कम हो सकें। स्वयंसेवकों द्वारा भी सुरक्षा को सुनिश्चित करने का प्रयास होना चाहिये तथा पर्यटन स्थलों पर पर्याप्त प्रकाश व्यवस्था होनी चाहिये। पर्यटकों के सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का पुलिस वेरीफिकेशन होना चाहिये। इस दिशा में पर्यटक सहायता बल योजना भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

9. उचित ड्रेनेज व्यवस्था एवं कूड़ा-करकट निपटान व्यवस्था (वेस्ट मैनेजमेंट) सम्बन्धी सुझाव – अधिक संख्या में पर्यटकों को आकर्षित करने के लिये शासन को ड्रेनेज सिस्टम, वेस्ट मैनेजमेंट या कूड़ा-करकट निपटान व्यवस्था एवं सफाई व्यवस्था पर और अधिक ध्यान देना उचित होगा। पॉलिथिन का प्रयोग इन सभी व्यवस्थाओं की बड़ी बाधा है जिनके स्थान पर कागज व कपडे के थैलों का प्रयोग, परिशोधित तथा प्रयुक्त कागजों का प्रयोग आदि उचित होगा जो कचरे को कम करने में सहायक होंगे। नष्ट हो सकने वाले कचरे को अन्यत्र ले जाकर नष्ट करने की व्यवस्था की निगरानी होनी चाहिये। शौचालय सुविधा की व्यवस्था जल स्त्रोत से 30 मीटर की दूरी पर करनी चाहिये तथा अवशेषों को ठीक से ढक देना चाहिये। झरनों, जलाशयों में डिटर्जेन्ट के प्रयोग पर रोक का कठोरता से पालन होना चाहिये। कूड़ा करकट निपटान व्यवस्था हेतु प्रयोज्य या अप्रयोज्य (प्रयोग में लाये जाने एवं न लाये जा सकने वाले) कचरे को अलग करने की प्रणाली को अपनाना एवं उस पर पूर्ण निगरानी रखना उचित होगा।

10. मनोरंजन सुविधाओं का विस्तार – भ्रमण के अतिरिक्त पर्यटकों को अन्य मनोरंजन के साधनों की भी आवश्यकता होती है यथा सिनेमाघर, मॉल, पार्क इत्यादि। इस दिशा में शासन की भूमिका महत्वपूर्ण होती है उसे मनोरंजन के साथ-साथ आधारभूत संरचना विषयक अन्य सुविधाओं के विकास की ओर भी ध्यान देना होता है। सबसे महत्वपूर्ण बिजली एवं पानी की आपूर्ति व्यवस्था है जिसके कारण विशेषकर निकटवर्ती क्षेत्रों के पर्यटक बहुत परेशान होते हैं। इन्टरनेट सुविधा संबंधी कमियां एवं परेशानियां भी दूर की जानी चाहिये। पर्यटक स्थलों पर कुछ दूरी पर ही डाक की उचित व्यवस्था होनी चाहिये व मोबाइल के रीचार्ज वाउचर, एस.टी.डी., पी.सी.ओ., आई.एस.डी. कॉल सुविधा आदि को ओर भी अधिक ध्यान देना अपेक्षित है।

11. पर्यटन प्रबन्धन सम्बन्धी भूमिका – पर्यटन स्थलों के रख-रखाव, अन्य पर्यटन स्थलों से उनके जुड़ाव एवं उपलब्ध सुविधाओं के सर्वोत्तम उपयोग हेतु शासन द्वारा पर्यटन प्रबन्धन के विकास की महती आवश्यकता है। इस क्षेत्र में निम्न सुझाव अपेक्षित हैं:-

(i) समंक एकत्र करना – यदि पर्यटन में पर्यटक प्रवाह, पर्यटक अभिरुचि, पर्यटन उद्योग संबंधी मांग एवं पूर्ति, पर्यटन स्थलों, उनकी कमियों आदि का परीक्षण किया जाये तो यहां पर्यटन उद्योग के विकास की गति को बढ़ाया जा सकता है।

(ii) पूर्वानुमान एवं योजना पर आधारित विकास – पर्यटन उद्योग के समुचित विकास हेतु यहां संभावित पर्यटन प्रवाह, पर्यटक अभिरुचियों, पर्यटन स्थल के विकास के संभावनाओं का पूर्वानुमान लगाकर उसके आधार पर योजनाओं का निर्माण किया जाना अपेक्षित है। जैसे ग्वालियर में ग्रीष्मअवकाश में किले आदि पर पेयजल का उचित प्रबंध, तानसेन समारोह के समय यातायात प्रबन्धन, मेले के समय शीतकालीन अवकाश में कुकिंग गैसे आपूर्ति आदि पर विशेष ध्यान देकर पर्यटन क्षेत्र को समस्याओं से बचाया जा सकता है।

(iii) मानवीय संसाधनों का अधिकतम प्रयोग – पर्यटन एक उद्योग न होकर उद्योगों का समूह है जिसमें होटल, परिवहन, यात्रा संचालक, सरकारी संगठन आदि के साथ सर्वाधिक मानव संसाधन उपलब्ध है। पर्यटन प्रबंधन द्वारा यहां लोगों का सही चुनाव, प्रशिक्षण व उपयोग होना चाहिये। इस क्षेत्र में कार्य का वैज्ञानिक संगठन, लोगों की उत्पादकता, सृजनशीलता तथा कार्यक्षमता को बढ़ाने के प्रयास अपेक्षित हैं।

(iv) डिजास्टर मैनेजमेंट या आपदा प्रबंधन का विकास –प्राकृतिक आपदा, दुर्घटना आदि के समय भी पर्यटक एवं पर्यटन स्थल सुरक्षित रहें इसके लिये यहां डिजास्टर मैनेजमेंट संबंधी गतिविधियों का विस्तार एवं तत्संबंधी प्रशिक्षण की दिशा में शासन द्वारा सकारात्मक प्रयास होने चाहिये क्योंकि प्रत्येक पर्यटक एवं पर्यटन स्थल का अस्तित्व अमूल्य है। फायर ब्रिगेड एवं अग्निशमन यन्त्र सदैव तत्पर एवं तैयार अवस्था में होने पर ध्यान देना चाहिये।

12. जन जागरूकता के विस्तार संबंधी भूमिका – पर्यटन उद्योग में जन चेतना की कमी को दूर करने हेतु शासन के प्रयास जारी हैं। पर्यटन स्थलों पर गंदगी, संरक्षण के प्रति बेरूखी, पर्यटकों के साथ दुर्व्यवहार आदि को जन जागरूकता के विस्तार द्वारा ही दूर किया जा सकता है, जो निम्न उपायों से संभव है।

(अ) जन अपराधों पर रोक – जहां डकैती, लूटपाट, गुण्डागर्दी के समाचार मीडिया की सुर्खियां बनते हैं, जिससे वहां की छवि पर्यटकों के समक्ष बिगड़ जाती है। इन अपराधों पर रोक लगाने के सशक्त प्रयास होने चाहिये। बस, ट्रेन में जहरखुरानी की घटना से जुड़े गिरोहों का सफाया किया जाना चाहिये जिससे पर्यटक स्वयं को सुरक्षित अनुभव कर सकें।

(ब) पर्यटन शिक्षा का विकास – पर्यटकों के साथ स्थानीय जन का व्यवहार किस प्रकार का हो, इसका ज्ञान पर्यटन शिक्षा के माध्यम से संभव है। अतिथि देवो भव अभियान के अन्तर्गत पर्यटकों के साथ आत्मीयता से पेश आने तथा पर्यटन का बेहतर वातावरण बनाने संबंधी कार्यक्रम अधिक संख्या में आयोजित होने चाहिये। शालेय तथा महाविद्यालयीन पाठ्यक्रम में पर्यटन शिक्षा को जोड़ना चाहिये तथा उपाधि पाठ्यक्रम एवं डिप्लोमा कोर्स की संख्या बढ़ाना भी उपयोगी होगा।

(स) प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन – पर्यटन उद्योग जुड़े कर्मियों का बेहतर प्रदर्शन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के विस्तार से संभव है। यहां गाइड, कुली, टैक्सी चालकों, कर्मचारियों, अधिकारियों, प्रशासकों, आमजन, नियोजकों के लिये पृथक-पृथक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन अधिक संख्या में होना चाहिये जिससे पर्यटकों एवं स्थानीय वासियों के मध्य सकरात्मक घनिष्ठ संबंध स्थापित हो सकेंगे।

(द) संरक्षण संबंधी जन चेतना का विकास – प्राय: अनेक पर्यटन स्थल जनता की उपेक्षा, अतिक्रमण एवं उन्हें नुकसान पहुंचाने की प्रवृत्ति के शिकार हो रहे हैं। जनता उनमें से पत्थर, ईटें, फर्शी आदि निकाल कर ले जाती है। आम जनता के मध्य जागरूकता का संचार कर उसके मन में स्थलों के प्रति आदरभाव, पर्यटकों के प्रति प्रेम भाव तथा संरक्षण के प्रति समर्पण का भाव जागृत करना होगा तथा स्मारकों के संरक्षण संबंधी जन चेतना का विकास करना आवश्यक है अन्यथा अतिक्रमण संबंधी कोर्ट केस में ही प्रशासन उलझा रहेगा।

(इ) जनता को पर्यटन के आर्थिक लाभों से अवगत करना – आम जन को पर्यटन के आर्थिक लाभों, सम्बद्ध उद्योगों के विकास, पर्यटन जनित रोजगार, लोक कलाओं एवं ग्रामोद्योगों के विकास आदि की व्यापक जानकारी दी जानी चाहिये जिससे जनता में चेतना का संचार हो तथा वह पर्यटन उद्योग से खुलकर जुड़ सके।

13. शासन से अन्य अपेक्षाएं – उपर्युक्त अपेक्षाओं के अतिरिक्त शासन से कुछ अन्य बिन्दुओं पर भी ध्यान दिया जाना अपेक्षित है।

(i). पर्यटन का बाजारोन्मुखी विकास – पर्यटन स्थलों का बाजारोन्मुखी विकास करना उचित होगा क्योंकि तभी पर्यटकों से क्षेत्रीय जन को लाभ होगा एवं उनकी वस्तुओं एवं सेवाओं की बिक्री होगी। इसके लिये बाजार दिवसों का एक साथ होना, नवीन बाजार केन्द्रों की स्थापना, शासकीय दुकानों का संचालन, बाजार नियमितीकरण आदि उपाय उपयोगी हैं।

(ii). पर्यटन का संस्कृति के अनुरूप विकास – इस तथ्य का विशेष रूप से ध्यान रखा जाये कि पर्यटन का विकास हमारी सांस्कृतिक परम्पराओं के अनुरूप हो वे इस विकास से बाधित न हों। संस्कृति से परिचित कराने वाले मेले, उत्सवों की भूमिका इसमें प्रमुख होना चाहिये।

(iii). मार्गदर्शक पट्टिकाएं लगाना – पर्यटन स्थलों तक आसानी से पहुंचने हेतु मार्ग में थोड़े-थोड़े अन्तराल पर मार्गदर्शक पट्टिकाएं लगायी जानी चाहिये जिससे पर्यटक को वहां जाने की प्रेरणा मिल सके तथा कोई भी पर्यटन स्थल उपेक्षित न रह सके।

(iv). राजस्थान के पैटर्न पर विकास – राजस्थान में छोटी से छोटी वस्तु या स्थल को संवारकर प्रस्तुत करने तथा उत्तम प्रबन्धन ने उसे सर्वाधिक लोकप्रिय पर्यटन राज्य बना दिया है। वही पैटर्न अपनाकर सभी स्थलों का विकास करना चाहिय तथा कला एवं संस्कृति पर आधारित पर्यटन व्यवस्था के विकास पर बल देना लाभकारी होगा।

(v). नवीन तकनीक का प्रभावी प्रयोग – पर्यटन उद्योग के विकास हेतु नवीन तकनीक यथा मोबाइल, इन्टरनेट, व्हाटसैप, फेसबुक, ट्विटर, टचस्क्रीन, थ्रीडायमेंशन स्क्रीन आदि का व्यापक प्रयोग किया जाना चाहिये। यद्यपि इस दिशा में पहल हो चुकी है तथपि अभी इस क्षेत्र में तकनीक को और अधिक व्यापक स्तर पर अपनाना लाभदायक होगा।

यदि उपर्युक्त सुझावों को व्यवहारिक रूप में परिणित कर दिया जाये तो निश्चय ही शासन पर्यटन उद्योग को विकसित करने में आशातीत सफलता प्राप्त कर सकेगा। जिसका देश की अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पडेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेगी, जगमोहन – पर्यटन – मार्केटिंग एवं विकास, वर्ष 2008, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. सम्पादक मण्डल – ए टू जेड पर्यटन गाइड, रवि पब्लिकेशन, मेरठ।
3. रिजवी, इमरान – तीर्थ एवं पर्यटन स्थल, वर्ष 2012, साधना बुक्स, दिल्ली।
4. व्यास, राजेश कुमार – सांस्कृतिक पर्यटन, वर्ष 2011,राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी,जयपुर।
5. व्यास, राजेष कुमार – पर्यटन : उद्गम एवं विकास, वर्ष 2010, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
6. Bhatiya, A.K. – Tourism Development – Principles & Practices, Year 2012, Sterling PublishersPvt. Ltd., New Delhi.
7. Read, H.N. – Tourism Policy and Suggestions for It's Future,Madhya Pradesh Men Paryatan, Year 2000, Aditya Publishers, Bina.
8. शर्मा, श्रीकमल – पर्यटन विकास में समसामयिक विचारणीय प्रश्न, संकलित मध्यप्रदेश में पर्यटन, वर्ष 2000 आदित्य पब्लिशर्स, बीना।

****

भारत में बाल श्रम शोषण के कारण एवं उन्मूलन के उपाय

लाजवंती सावदे *

प्रस्तावना – विश्व बैंक की प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार पूरे एशिया महाद्वीप के देशों में बाल मजदूरों की संख्या 15 करोड़ है। जिसमें सबसे ज्यादा 6 करोड़ बाल मजदूर– भारत में हैं। जिन बच्चों में 1.5 करोड़ बच्चे बन्धुआ बाल मजदूर हैं। ये बच्चे बाल वैश्यावृत्ति से लेकर खतरनाक उद्योगों तक में झोक दिए जाते हैं। भारत के नेशनल सेम्पल सर्वे आर्गेनाइजेशन ने बताया है कि – देश में 4.5 करोड़ से लेकर करीब 11 करोड़ के बीच बाल श्रमिक हैं। भारत के बाल श्रमिकों में बिहार के बालकों की संख्या सर्वाधिक है। बाल मजदूरी बच्चों की किलकारी के विरूद्ध किया गया एक ऐसा षड़यंत्र है– जिसकी जड़ें बहुत व्यापक और गहरी है जो बच्चों के नैसर्गिक और बुनियादी अधिकारों के विरूद्ध हमारा सामाजिक अपराध है। बाल मजदूर निरंतर अपने छोटे–छोटे हाथों से निरंतर जोखिम भरे कार्यों से अपने परिवार का बोझ उठाये वयस्कों का भ्रम पैदा करने की जी–जान से कोशिश करते हैं। अपने जीवन का अभिशाप ढोते ये बाल मजदूर हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में हमेश रूबरू होते रहते हैं। चाय की होटलों में, हाथ में थैला लटकाए ब्रुश और पॉलिश की डिब्बी लिए– हुए आपके जूतों की ओर लपकते हुए, आपकी गाड़ी पार्क होते ही उसे साफ करने के लिए हाथ में कपड़ा लेकर झपटते हुए, रेल के डिब्बों में झाड़ू लगाकर भीख मांगते हुए, पानी और कुल्फी बेचते हुए, कचरे के ढेरों में से कचरा बीनते हुए, होटलों में आपकी मेजें साफ करते हुए, बर्तन मांजते हुए। और घरेलू नौकरों के रूप में एक बड़ा तबका बाल मजदूर का लगा हुआ है। वहीं भवन निर्माण, दिया सलाई उद्योग, मरम्मत कार्यों, पटाखा उद्योग, बीड़ी उद्योग, रसायन उद्योग, कालीन उद्योग, कृषि कार्यों, चूड़ी उद्योग, ईंट उद्योग, ईंट भट्टा उद्योग, स्लेट बत्ती उद्योग आदि। भारत सरकार ने स्वयं ही स्वीकार किया है कि आज देश में अधिकांश बच्चे कोयले की खानों, भवन निर्माण, बीड़ी तथा कालीन उद्योगों में वयस्कों से ज्यादा काम करते हैं।

'रोजाना कमाने–खाने वाले फुटपाथ पर सोने वाले आसमान की चादर ओढ़ने वाले करीब 4.5 करोड़ बाल–श्रमिक बच्चों को बाल दिवस की नहीं बल्कि कल्याण दिवस की आवश्यकता है।'

बालिकाओं से संबंधित मामलें – भारत में बालिकाओं से संबंधित शोषण के मामलों में आंकड़े इस प्रकार हैं –

1. अबोध बच्चियों की बिक्री के सबसे अधिक मामले बिहार में (33.5 प्रतिशत), दूसरे स्थान पर महाराष्ट्र (21.8 प्रतिशत) एवं तीसरे स्थान पर गुजरात (13.1 प्रतिशत) हैं। इसका कारण मुख्य रूप से गरीबी है।
2. वैश्यावृत्ति के लिए बच्चियों की बिक्री के सबसे अधिक मामले दिल्ली (44.2 प्रतिशत), दूसरे स्थान पर आन्धप्रदेश (33.5 प्रतिशत) एवं तीसरे स्थान पर बिहार (14.7 प्रतिशत) है। इसका कारण भी मुख्यत: गरीबी हैं।
3. बलात्कार के सबसे ज्यादा मामले मध्यप्रदेश में (20.3 प्रतिशत), दूसरे स्थान पर उत्तरप्रदेश (13.5 प्रतिशत) एंव तीसरे स्थान पर महाराष्ट्र (12.3 प्रतिशत) हैं।
4. भ्रूण हत्या के सबसे अधिक मामले महाराष्ट्र (37.8 प्रतिशत) दूसरे स्थान पर म.प्र. (37.8 प्रतिशत), तीसरे स्थान पर गुजरात (13.3 प्रतिशत) तथा चौथे स्थान पर राजस्थान (8.9 प्रतिशत) भ्रूण हत्या भी प्राय: बच्चों के भ्रूणों की होती है।
5. शिशु हत्या के सबसे अधिक मामले महाराष्ट्र (37.4 प्रतिशत), दूसरे स्थान पर बिहार (17.6 प्रतिशत) एवं तीसरे स्थान पर मध्यप्रदेश (16 प्रतिशत) हैं। प्राय: बच्चियों की ही शिशु हत्याएँ होती हैं।

इतना ही नहीं सभी मामलों में से यदि बच्चियों के साथ किए गए वहशीपन पर नजर डाले तो हम पाएँगे कि यह अनुपात पिछले कुछ वर्षो में बढ़ा है। इसी तरह पिछले 5 वर्षों में 10 वर्ष के नीचे की बालिकाओं और 10 से 16 वर्ष की बालिकाओं के साथ मामले क्रमश: (84 प्रतिशत) एवं (55 प्रतिशत) बढ़े हैं।

बाल मजदूरी के दुष्परिणाम

तालिका क्र. 1

क्र.सं.	शीर्ष संबंधी कार्य	पैदा होने वाली बीमारियाँ एवं खतरे।
1	ईंट भट्टा	सिलिकोसिस, ऐंठन।
2	पीतल बर्तन निर्माण उद्योग	तपेदिक, जलन, श्वांस संबंधी रोग।
3	बीड़ी उद्योग	टी.बी., श्वांस नली शोध।
4	हस्तकरघा उद्योग	टी.बी. श्वांस नली शोध, रीढ़ की हड्डी की बीमारी, दमा, जलन, नेत्र दोष।
5	जरी एवं कढ़ाई उद्योग	नेत्र–दोष।
6	रूबी और हीरा कढ़ाई उद्योग	नेत्र–दोष।
7	रद्दी उद्योग	संक्रामक रोग, टिटेनस, चर्म रोग, दमा, श्वांस नली, शोध, सिलिकोसिस, टी.बी., सर्दी एवं खाँसी।
8	माचिस उद्योग	दुर्घटना तुरंत मृत्यु।
9	कालीन उद्योग	बिसिनोसिस, दमा, टी.बी.।

1. भारत में बाल श्रम के कारण –

1. अशिक्षा
2. गरीबी
3. अज्ञानता
4. वृहद् परिवार
5. परिवार में किसी कमाने वाले वयस्क का ना होना।
6. सामन्ती प्रवृत्तियाँ
7. परिवार का नकारात्मक व्यवहार।
8. आपदाएँ।
9. बेरोजगारी
10. अनिवार्य शिक्षा का ना होना।
11. महँगाई/कर्ज
12. जनसंख्या का दबाव।

* शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

भारत में बाल श्रमिकों में प्रतिशत वृद्धि

तालिका क्रमांक 2

क्र.सं.	राज्य	बाल श्रमिक	बालिका श्रमिक
1	आन्ध्रप्रदेश	3.30	29.02
2	बिहार	21.44	– 0.76
3	गुजरात	–11.18	– 2.85
4	हरियाणा	– 9.30	99.71
5	कर्नाटक	5.47	54.24
6	केरल	– 41.12	32.56
7	मध्यप्रदेश	9.69	52.81
8	महाराष्ट्र	13.43	49.05
9	उड़ीसा	– 8.40	84.58
10	पंजाब	– 24.21	132.62
11	राजस्थान	– 10.05	31.78
12	तमिलनाडु	– 0.12	69.88
	संपूर्ण भारत	– 3.51	32.83

स्त्रोत – एनालिसिस ऑफ वर्कफोर्स इन इण्डिया आकेजनल।

2. बाल श्रम उन्मूलन के उपाय –

1. रोजगार की गारंटी। 2. अनिवार्य शिक्षा।
3. जन जागृति।
4. कानूनों को प्रभावशाली ढंग से लागू करना।
5. छोटा परिवार। 6. सामाजिक सुरक्षा।
7. सामंती और जमींदारी प्रवृत्तियों पर रोक लगाना।
8. लाइसेंस प्रणाली में बदलाव। 9. महंगाई पर नियन्त्रण।
10. बाल यौनाचार के विरूद्ध कठोर दंड।

बाल श्रम उन्मूलन पश्चात् स्थापित विद्यालय

तालिका क्रमांक 3

क्र. सं.	बाल श्रम परियोजना का नाम	विशेष विद्यालयों की संख्या	लाभान्वित बच्चों की संख्या
1	शिवकांशी (तमिलनाडु)	24	1700
2	मंदसौर (म.प्र.)	8	600
3	जयपुर (राजस्थान)	20	1000
4	मरकापुरी (आन्ध्रप्रदेश)	20	1000
5	मिर्जापुर–भदोही (उ.प्र.)	10	500
6	फिरोजाबाद (उ.प्र.)	10	500
7	अलीगढ़	10	500
	कुल	**120**	**5800**

स्त्रोत – कुरू क्षेत्र मासिक पत्रिका।

बाल श्रम रोकने हेतु सुझाव –

1. बाल श्रम निषेध संबंधी कानूनों को कठोरता से लागू किया जाना चाहिए ताकि बच्चों को श्रम पर लगाने में नियोक्ता भी डर सके।
2. न्यूनतम मजूदरी कानून का कठोरता से पालन करना चाहिए ताकि नियोक्ता निर्धन मजदूर का शोषण न कर सके।
3. समय–समय पर बाल–श्रमिकों का वास्तविक सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। ताकि इस कुप्रथा को हटाने में पंचायती राज संस्थाओं और स्वयंसेवी संस्थाओं का भी सहयोग मिल सके।
4. उन स्थानों में जहाँ गरीबी बेरोजगारी अधिक है। वह वयस्कों को समुचित रोजगार उपलब्ध कराना चाहिए – ताकि वे अपने बच्चों को बाल श्रम में न लगाएँ, साथ ही गरीबी रेखा से ऊपर उठ सके और अपने बच्चों को श्रम पर ना लगाकर स्कूल भेज सके।
5. मजदूरी की बजाये बच्चे पढ़ाई की और अधिक आकर्षित हो, इसके लिए उन्हें नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकें, वर्दी, दोपहर भोजन, छात्रवृत्ति आदि प्रदान की जानी चाहिए। इस दिशा में 15 अगस्त 1995 से चालू की गई दोपहर भोजन एक अच्छी पहल है।
6. बाल श्रम जिन इलाकों में अधिक हैं। वहाँ साक्षरता का प्रतिशत बढ़ाने का उपाय किया जाना चाहिएं जहाँ एक ओर शिक्षा की व्यापकता बाल श्रम कम करने में सहायक होगी, वहीं दूसरी ओर बाल विवाह जैसी कुप्रथा पर भी अकुशल लगाने में कामयाब होगी।
7. प्रौढ़–शिक्षा कार्यक्रम को व्यापक अभियान के रूप में चलाया जाना चाहिए। ताकि बाल–श्रमिकों के माता–पिता की मानसिकता बदली जा सकी।
8. बाल श्रम समस्या सामाजिक कुप्रथा भी है। अत: केवल कानून द्वारा ही इस पर रोक लगा पाना संभव नहीं है। इसके लिए जन जागरूकता लाना अनिवार्य है।
9. बाल श्रम श्रम की समाज में फलती प्रथाओं को रोकने के लिए संचार माध्यम का उपयोग भी एक अच्छा प्रयोग है, जैसे – प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, टी.वी., रेडियो और विज्ञापन आदि।
10. बाल श्रमिकों की बढ़ती संख्या को कम करने के लिए सर्वशिक्षा अभियान जो सरकार द्वारा चलाया जा रहा है, उसे संपूर्ण भारत में लागू किया जाना चाहिए। और जो व्यक्ति इसका पालन न करते पाया जाए तो उसे कड़ी सजा सुनाने का प्रावधान रखा जाये।
11. बाल श्रम को कम करने के लिए गाँवों में सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए– जिसमें कुछ नाटकों का मंचन भी करना चाहिए। जो बाल–श्रमिकों से संबंधित हो।
12. देश में जहाँ कहीं भी बाल–श्रमिक हो, उन्हें वहाँ से हटा कर शिक्षा की ओर अग्रसर करना चाहिए। उन्हें शिक्षा की महत्ता के संबंध में समझाना चाहिए।

निष्कर्ष – बाल श्रम से राष्ट्र की भावी समृद्धि तो खतरे में पड़ती है। साथ ही सांस्कृतिक दृष्टि से समाज अवनत हो जाता है। बच्चों का सुखद जीवन, विकास, भविष्य बनाना हमारा दायित्व है। और बच्चों का अधिकार भी अत: हमें अपने कर्तव्य से मुँह नहीं मोड़ना चाहिए। बच्चों को अपने स्वार्थ के लिए जोखिम में डालना उनके भविष्य और विकास की बलि देना है। मानव का यह कदम मानव–जाति के उत्थान में आत्मघाती होगा। अत: **'वसुधैव कुटुम्बकम'** के कल्याण हेतु बाल–श्रम प्रतिबंधित किया जाना आज की प्राथमिक आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. बाल श्रम चुनौतियाँ – रविशंकर कुमार।
2. सामाजिक परिवेश में बाल–विकास – आशा कुमारी।
3. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका।
4. योजना मासिक पत्रिका।

****

भारत के आर्थिक विकास में उद्यमियों की भूमिका

डॉ. इफ्फत खान *

प्रस्तावना – उद्यमिता आर्थिक समृद्धि का आधार है। यह आर्थिक विकास का मूलमंत्र है। उद्यमिता केवल व्यवसाय या पेशा नहीं है, यह जीवन की एक कार्य-प्रणाली है जो समाज की भावी आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य करता है। उद्यमिता व्यासायिक संभावनाओं की खोज करके विकास को गति देती है। यह जीवन जीने के तरीके सिखाता है एवं धैर्य के गुण विकसित करने में योगदान देता है। उद्यमि भूमि, श्रम, पूंजी एवं संगठन को उपयोगी बनाता है। उद्यमिता असंभव को संभव बनाने की क्षमता जागृत करता है। ड्रेकर ने ठीक ही कहा है उद्यमी वह व्यक्ति है जो सदैव परिवर्तन की खोज करता है.......तथा अवसर के रूप में उसका लाभ उठाता है।

शोध का उद्देश्य एवं अध्ययन विधि – शोध का उद्देश्य भारत के आर्थिक विकास में उद्यमी की भूमिका एवं योगदान का पता लगाना एवं नवप्रवर्तक के रूप में भूमिका की खोज करना है।

परिकल्पनाएं –

1. उद्यमिता के विकास से देश में नये-नये उद्योग खुलते हैं जिससे रोजगार के अवसर बढ़ते हैं।
2. नवप्रवर्तक के रूप में नये उद्यमों की स्थापना होती है । उद्यमी नवप्रवर्तक के रूप में आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. संसाधनों के विदोहन में सहायक होता है।
4. उद्यमी संतुलित आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करते हैं।
5. महिला उद्यमियों के कारण 50 प्रतिशत जनसंख्या का देश के विकास में योगदान बढ़ा है।

परिकल्पना के बिना वैज्ञानिक अनुसंधान संभव नहीं। परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु समंकों के संकलन की आवश्यकता होती है। प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीयक समंक तथा साक्षात्कार पद्धति का उपयोग किया गया। शोध पत्र में पत्रिकाओं, वेबसाइट तथा सूक्ष्म, छोटी एवं मध्यम इकाईयों के मंत्रालय द्वारा जारी समंकों का संकलन किया गया।

उद्यमी शब्द फ्रेन्च भाषा Enterprender से लिया गया है। फ्रांस में 16 वीं शताब्दी में उद्यमिता का उपयोग सैन्य अभियान के अन्तर्गत किया गया। उद्यमिता के प्राचीन मत जोखिम वहन एवं व्यवसाय के प्रवर्तन से संबंधित था। आधुनिक विचारक उद्यमिता को व्यावहारिक दृष्टिकोण से देखते हैं। व्यवसाय में नवीन प्रवर्तनों एवं अवसरों की खोज करना, व्यवसाय को गतिशील नेतृत्व प्रदान करना, सामाजिक मूल्यों के अनुसार निर्णय लेना आधुनिक अर्थ में उद्यमिता व्यवसाय को वातावरण एवं समाज से जोड़ता है। आधुनिक विचारधारा उद्यमिता जीवन को व्यवस्थित तरीके से जीने का तरीका बताती है।

उद्यमी ही आर्थिक विकास को बढ़ावा देती है। अर्थव्यवस्था की मजबूती उद्यमियों के योगदान पर निर्भर करती है। अधिकांश आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने उद्यमिता का तीव्र आर्थिक विकास का मूल आधार माना है। हरविज के अनुसार 'जिस प्रकार बिना विचारशीलता के व्यक्ति नष्ट हो जाता है ठीक उसी प्रकार उद्यमिता के बिना अर्थव्यवस्था एवं व्यवसाय बर्बाद हो जाते हैं।'

सूक्ष्म, छोटे एवं मध्यम स्तर की इकाईयां भारत के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। सूक्ष्म, छोटी एवं मध्यम अधिनियम 2006 के अनुसार इकाईयों को विनियोग के आधार पर विनिर्माण एवं सेवा क्षेत्र में बांटा जा सकता है जैसा निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका-1

सूक्ष्म, छोटे, मध्यम इकाईयों में विनियोग सीमा

विनिर्माण क्षेत्र

सूक्ष्म इकाईयां	25.00 लाख रूपये से अधिक नहीं।
छोटी इकाईयां	25.00 लाख रूपसे से अधिक परन्तु 5.00 करोड रूपये से अधिक नहीं।
मध्यम इकाईयां	5.00 करोड़ रूपये से अधिक लेकिन 10.00 करोड़ रूपये से अधिक नहीं।

सर्विस क्षेत्र

सूक्ष्म इकाईयां	10.00 लाख रूपये से अधिक नहीं।
छोटी इकाईयां	10.00 लाख रूपसे से अधिक परन्तु 2.00 करोड रूपये से अधिक नहीं।
मध्यम इकाईयां	2.00 करोड़ रूपये से अधिक परन्तु 5.00 करोड़ रूपये से अधिक नहीं।

स्त्रोत – सूक्ष्म, छोटी एवं मध्यम इकाईयों का मंत्रालय ।

आर्थिक विकास में उद्यमी की भूमिका – राष्ट्र के आर्थिक विकास में उद्यमी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वह व्यवसाय एवं संबंधित घटकों को चलित रखता है एवं आर्थिक विकास को गति प्रदान कर रहा है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एल्फ्रेड मार्शल ने ठीक ही कहा है, 'उद्यमी उद्योग का कप्तान होता है, क्योंकि वह जोखिम एवं अनिश्चितता का वाहक ही नहीं होता वह एक प्रबंधक, नवीन उत्पादन विधियों का अविष्कारक तथा देश के आर्थिक ढ़ाचे का निर्माता भी होता है।' आर्थिक विकास की रीढ़ उद्योग होते हैं एवं उद्योगों की स्थापना उद्यमी द्वारा की जाती है। भारत के आर्थिक विकास में उद्यमी निम्न प्रकार से अपनी भूमिका निभा रहा है।

1. **नव उत्पाद का परिचय –** उद्यमी नवप्रवर्तक के रूप में नये उत्पाद को उपभोक्ताओं से परिचित कराता है। उद्यमी नवकरण द्वारा नयी वस्तुओं को निर्माण करते हैं। नया उत्पाद हेतु वह नये बाजारों की खोज करता है, उपभोक्ताओं की रूचि एवं फैशन को ध्यान में रखकर उत्पादन करता है।
2. **रोजगार के अवसरों का सृजनकर्ता –** उद्यमी अपने व्यवसाय में रोजगार के अवसरों का सृजन करते हैं। एक प्रगतिशील उद्यमी रोजगार के

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

अवसर का सृजनकर्ता माना जाता है। नये उद्योगों की स्थापना करके, विद्यमान इकाईयों का विस्तार करके आधुनिक तकनीक का प्रयोग करके रूग्ण इकाईयों को पुनर्जीवित करके रोजगार के अवसर प्रदान करता है। प्रसिद्ध प्रबंधशास्त्री रिव्यन ने सही कहा है 'विकासशील देशों में उद्यमी रोजगार के अवसर प्रदान करने वाला होता है।'

3. **उद्योगों का संतुलित विकास –** उद्यमी सदैव उद्योगों को उन स्थानों पर स्थापित करता है जो लाभप्रद हों चाहे वह किसी भी स्थान व क्षेत्र में आते हों। वह प्रत्येक क्षेत्र में उद्यम स्थापित करता है एवं स्वयं इस प्रकार नियोजित करता है कि उद्योगों की स्थापना प्रत्येक क्षेत्र के संसाधनों का पूर्ण उपयोग हो सके। इस प्रकार उद्यमी आत्मनिर्भर समाज की रचना में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। इस सन्दर्भ में एलवर्ट केली ने ठीक ही कहा है 'उद्यमिता आर्थिक विकास का श्रृंखला–प्रतिक्रिया के द्वारा किसी भी राष्ट्र को आत्मनिर्भरता की दहलीज पर पहुंचा देता है।'

4. **पूंजी निर्माण में सहायक –** उद्यमी अपनी नवप्रवर्तनशील क्रियाओं से लोगों को निवेश हेतु प्रोत्साहित करते हैं। वो व्यावसायिक क्रियाओं में वृद्धि करके पूंजी निर्माण में भूमिका निभा रहे हैं। उद्यमी बड़े विनियोजको, बैंकों, वित्तीय संस्थाओं को उपयोगी सुविधाएं प्रदान करके पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन प्रदान कर रहा है।

5. **सेवा क्षेत्र का विस्तार –** उद्यमियों द्वारा सेवा क्षेत्र में नयी विधियां, नयी योजनाओ, सूचनाओं के विक्रय की सेवाएं एवं विक्रय उपरांत सेवाओं द्वारा आर्थिक विकास को गति प्रदान कर रहा है। उद्यमी सेवा क्षेत्र के माध्यम से व्यवसाय व उद्योग की अन्य क्रियाओं द्वारा आर्थिक विकास में योगदान दे रहा है।

6. **निर्यात संवर्धन –** सार्वभौमिकरण की नीति के लागू होने के पश्चात उद्यमी नयी उत्पाद तकनीक को विकसित करके निर्यात को बढ़ावा दे रहा हैं। आर्थिक उदारीकरण एवं सार्वभौमिकरण के कारण भारतीय उद्योगों के माल विदेशों में बिक रहे हैं क्योंकि हमारा उद्यमी पूर्ण कौशल के साथ कार्य कर रहा है।

निष्कर्ष – उद्यमी आर्थिक विकास का संपूरक बनकर भारत के संसाधनों का विदोहन करता है एवं लोगों को स्वरोजगार के अवसर देकर उनके जीवन स्तर में वृद्धि कर रहा है। भारत में उद्यमी के विकसित होने के कारण कई समस्याओं जैसे बेरोजगारी, गरीबी, आर्थिक समानता एवं निम्न जीवन स्तर से छुटकारा मिला है। भारत के आर्थिक विकास और औद्योगिक विकास में उद्यमी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। महिला उद्यमिता के कारण देश की आधी जनसंख्या के उर्जा के सदुपयोग से आर्थिक विकास में योगदान बढ़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Khanka S, S: Entrepreneurial Development S. Chand & Company Ltd.
2. Dubey, V & Dubey M, Women Entrepreneurship in India, 2015
3. Sharma S, Akhouri M, Small Entrepreneurial Development, Site Institute, Hyderabad.
4. Malyadri, G: Role of Women Entrepreneur in Economic Development of India, Indian Journal of Research, March 2014.
5. Annual Report, Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises, Govt. of India, 2012-13.

****

उद्यमिता विकास में विकासात्मक संस्थाओं की भूमिका - एक अध्ययन

डॉ. मनु श्रॉफ *

प्रस्तावना - उद्यमिता विकास आर्थिक विकास तथा सामाजिक प्रतिष्ठा का वह मूल तंत्र है जिसके प्रसारण मात्र मानवीय प्रेरणाओं को सार्थक अभिव्यक्ति मिलती है। उद्यमशीलता एक कला है, ऐसा सुव्यवस्थित तरीका है जो नवीन जीवन जीने के गुर सिखलाता है। उद्यमिता से ही साहस के गुण विकसित होते है, असंभव को संभव बनाने की दक्षता, क्षमता जागृत होती है। उद्यमिता विकास का मुख्य उद्देश्य उद्यमिता को बढ़ावा देना है जिससे शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में स्व-रोजगार के अवसर उत्पन्न हो सके। औद्योगिकीकरण को बढ़ावा देने एवं स्वरोजगार की स्थापना में विकासात्मक संस्थाएँ भी महत्वूपर्ण सहयोग प्रदान करती है। प्रमुख विकासात्मक संस्थाएँ इस प्रकार है -

1. **मध्यप्रदेश वित्त निगम -** प्रदेश में लघु उद्योगों की स्थापना हेतु वित्त प्रदान करने वाली प्रमुख संस्था मध्यप्रदेश वित्त निगम है। यह संस्था नई तथा पूर्ववर्ती इकाईयों को मध्यम तथा लम्बी अवधि का ऋण देती है। पिछड़े क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना के साथ-साथ सेवा क्षेत्र की इकाईयों जैसे होटल, अस्पताल, डिपार्टमेंटल स्टोर, आवासीय कॉलोनियों का विकास, व्यावसायिक केन्द्रों की स्थापना इत्यादि के लिये ऋण प्रदान करता है।

निगम द्वारा किसी भी संस्था को प्रदान की जाने वाली आर्थिक सहायता की रकम, लिमिटेड कम्पनियों,प्रायवेट लिमिटेड कम्पनियों एवं सहकारी समिति अधिनियम 1912 के अन्तर्गत पंजीकृत समितियों के प्रकरण में अधिक से अधिक 5 करोड़ रूपये तथा अन्य प्रकरणों में 2 करोड़ रूपये सीमित होगी। निगम औद्योगिक संस्था की स्थायी सम्पत्ति जैसे भूमि, भवन एवं निगम द्वारा संचालित की जा रही विभिन्न ऋण योजनाएँ निम्नलिखित है-

1. औद्योगिक ऋण योजना
2. उपकरण वित्त योजना
3. असेट क्रेडिट योजना
4. शार्ट टर्म लोन योजना
5. कार्यशील पूंजी हेतु मध्यम अवधि ऋण
6. रिप्लनिशमेंट ऑफ टर्म लोन योजना
7. अस्पताल/ नर्सिंग होम हेतु योजना
8. व्यावसायिक केन्द्रों/सिनेमा हॉल हेतु योजना
9. एकल खिड़की योजना
10. स्मॉल लोन स्कीम

2. मध्यप्रदेश महिला वित्त एवं विकास निगम -मध्यप्रदेश महिला वित्त विकास निगम महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु समर्पित एक संस्था है, जिसकी स्थापना वर्ष 1988 में हुई निगम की स्थापना का मुख्य उद्देश्य है -

1. महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बनाने हेतु विभिन्न योजनाओं तथा कार्यक्रमों का संचालन करना।
2. महिलाओं को आर्थिक गतिविधियॉ संचालित करने हेतु प्रशिक्षण तथा मार्गदर्शन प्रदान करना।
3. महिलाओं को उनके उत्पादों के विपणन में सहायता प्रदान करना।
4. महिलाओं को आर्थिक गतिविधियॉ संचालित करने हेतु ऋण मार्जिन मनी तथा अनुदान के रूप में सहायता प्रदान करना।

महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु निगम उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निम्नलिखित योजनाओं का संचालन करता है -

1. ग्राम्या योजना
2. फोटो कॉपियर योजना
3. हाट बाजार योजना
4. ममत्व मेला
5. टंकण प्रशिक्षण योजना
6. संशोधित कौशल उन्नयन योजना
7. समर्थ योजना

इन योजनाओं में निगम ऋण के साथ - साथ अन्य आवश्यक सहयोग भी प्रदान करता है, जिससे महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वावलंबी बन सके।

3. राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम - राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार के अधीन एक सार्वजनिक उपक्रम है, जो कि पिछड़े वर्गो के व्यक्तियों को राज्य चैनलाईजिंग एजेन्सियों के माध्यम से ऋण सहायता उपलब्ध कराता है। मध्यप्रदेश में इस हेतु मध्यप्रदेश पिछड़ा तथा अल्पसंख्यक वित्त एवं विकास निगम भोपाल को चैनेलाईजिंग एजेन्सी बनाया गया है, जबकि जिला स्तर पर योजनाओं के क्रियान्वयन का दायित्व जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों को सौपा गया है। जो व्यक्ति गरबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं वे व्यवसाय हेतु निम्न क्षेत्रों के अन्तर्गत ऋण सहायता प्राप्त कर सकते हैं -

1. कृषि एवं सहायक योजनाएँ
2. लघु व्यापार क्षेत्र, हस्तकला, तकनीकी व्यवसाय
3. अन्य व्यवसाय क्षेत्र
4. परिवहन क्षेत्र इत्यादि

ऋण लेने के इच्छुक अभ्यर्थी निम्न प्रकार की योजनाओं के अन्तर्गत ऋण प्राप्त कर सकते है -

1. टर्म लोन
2. मार्जिन मनी लोन
3. सूक्ष्म ऋण योजना

4. **राष्ट्रीय अल्पसंख्यक विकास एवं वित्त निगम -**राष्ट्र के अधिसूचित अल्पसंख्यकों के आर्थिक विकास में वृद्धि करने के लिये भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय अल्पसंख्यक विकास एवं वित्त निगम की स्थापना की गई है। निगम

*सहायक प्राध्यापक, मा.च.शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्ड्वा (म.प्र.) भारत

की प्रमुख योजनाएँ निम्नानुसार है –

1. राज्य चैनलाईजिंग एजेन्सी कार्यक्रम के अन्तर्गत सहयोग

अ. आवधिक ऋण योजना

ब. मार्जिन सहयोग राशि

2. गैर सरकारी संगठन कार्यक्रम के अंतर्गत – निगम द्धारा बांगला देश के ग्रामीण बैंक, देश के नाबार्ड तथा मानव संसाधन मंत्रालय के महिला एवं बाल विकास विभाग के अंतर्गत राष्ट्रीय महिला कोष के पेटर्न पर माइक्रो फाईनेंस योजना को शुरू किया गया है। यह योजना चयनित और प्रमाणित गैर सरकारी संगठनों और स्व–सहायता समूहों के नेटवर्क के माध्यम से गरीब से गरीब लोगों को लघु ऋण उपलब्ध कराती है।

5. राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम – राष्ट्र में विकलांगता से ग्रस्त व्यक्तियों द्धारा की जा रही आर्थिक एवं विकासात्मक गतिविधियों को बढावा देने के लिये राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम की स्थापना की गई। निगम विकलांग व्यक्तियों को स्व–रोजगार एवं आर्थिक कार्यो के लिये ऋण उपलब्ध कराकर इनकी सहायता करता है। निगम सेवा अथवा व्यापार के क्षेत्र में लघु उद्यम स्थापित करने हेतु 3 लाख रूपये तक, लघु उद्यम इकाई की स्थापना के लिये 20 लाख रूपये तक तथा कृषि संबंधी गतिविधियों के लिये 5 लाख रूपये तक ऋण प्रदान किया जाता है। निगम विकलांग व्यक्तियों के राज्य कार्यकारी संस्थाओं (स्टेट चैनलाईजिंग एजेन्सियों) के माध्यम से ऋण देता है।

निगम सूक्ष्म वित्त योजना के अंतर्गत विकलांगों के कमजोर वर्ग के व्यक्तियों को आय अर्जन वाली आर्थिक गतिविधियॉ शुरू करने के लिये वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाता है। इस कार्य के लिये निम्नलिखित गतिविधियों के लिये ऋण दिया जाता है –

1. लघु व्यापार या व्यवसाय का प्रारम्भ करना।
2. लघु कुटीर उद्यम या सेवा गतिविधि शुरू करना।
3. दस्तकारी के कार्य करना।
4. कृषि एवं सम्बन्धित कार्य करना।
5. परिवहन गतिविधियॉ संचालित करना।

6. म.प्र. राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम – मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्थापना 1989 में अनुसूचित जाति वर्ग के आर्थिक विकास के लिये की गई। निगम इस वर्ग के आर्थिक विकास के लिये योजनाएँ संचालित कर रहा है। निगम चैनलाईजिंग एजेन्सी के रूप में अनुसूचित जाति के गरीबी रेखा से नीचे एवं गरीबी रेखा की दुगुनी आय सीमा तक के परिवारों को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करता है। इस वर्ग को निम्न क्षेत्र में स्वरोजगार हेतु ऋण सहायता प्रदान की जाती है –

1. कृषि क्षेत्र – ट्रेक्टर ट्राली, थ्रेशर, डीजल/विद्युत पम्प, जनरेटर, डेयरी, पशुपालन गतिविधि।

2. लघु एवं कुटीर उद्योग क्षेत्र – अगरबत्ती बनाना, मोमबत्ती निर्माण, वर्मीकम्पोस्ट निर्माण, रेडीमेड गारमेंट निर्माण, मसाला निर्माण आदि।

3. सेवा क्षेत्र – किराना दुकान, जनरल स्टोर, जुते चप्पल दुकान, साइकिल स्कूटर मरम्मत कार्य।

4. परिवहन क्षेत्र – ऑटो रिक्शा, जीप टेक्सी, मिनी बस संचालन। निगम का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति वर्ग के सदस्यों का आर्थिक विकास करना है। निगम सफाई कामगारों के लिये पुनर्वास योजनाओं का भी संचालन करता है। निगम द्धारा बैंकों से वित्तपोषित योजनाएँ इस प्रकार है –

1. अन्त्योदय स्वरोजगार योजना
2. प्रतिष्ठा पुनर्वास योजना

निगम के माध्यम से सीधे वित्त पोषित योजनाएँ निम्नलिखित है –

1. सामान्य योजना
2. महिला समृद्धि योजना
3. लघु वित्त योजना

इन योजनाओं में निगम विभिन्न कार्यो के लिये ऋण प्रदान करता है

7. मध्यप्रदेश आदिवासी वित्त विकास निगम – मध्यप्रदेश सरकार ने प्रदेश के अनुसूचित जनजाति परिवार के सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक जीवन स्तर में सुधार के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिये 1994 में आदिवासी वित्त विकास निगम की स्थापना की। निगम निम्नलिखित कार्यो के लिये वित्तीय सहायता प्रदान करता है –

क. कृषि क्षेत्र से सम्बन्धित योजनाएँ – ट्रेक्टर ट्राली, बकरी पालन, मूर्गीपालन, सुअर पालन, डेयरी फार्मिंग, कृषि उत्पादकता, लघु वनोपज क्रय–विक्रय।

ख. यातायात क्षेत्र से संबंधित योजनाएँ – मिनी ट्रक, जीप टेक्सी, डम्पर, मिनी बस, ऑटो रिक्शा, ट्रक, बस, साईकिल रिक्शा, ट्रेवल एजेन्सी

ग. सेवा क्षेत्र से सम्बन्धित योजनाएँ – फोटो कॉपीयर, जनरल स्टोर, मिनी राईस मिल, आटा चक्की, एस.टी.डी. पी.सी.ओ., टेन्ट हाउस, इन्टरनेट सेवा, मेडिकल स्टोर, पान दुकान।

घ. उद्योग क्षेत्र से सम्बन्धित योजनाएँ – ईट निर्माण, झाडू निर्माण, प्रिंटिंग प्रेस, ढाबा निर्माण, कालीन बुनाई, बॉस टोकरी निर्माण आदि।

8. मध्यप्रदेश अन्त्यावसायी वित्त विकास निगम – मध्यप्रदेश अन्त्यावसायी वित्त विकास निगम की स्थापना गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों को स्वरोजगार उपलब्ध कराकर उनका आर्थिक उत्थान करने के लिये की गई है। निगम, बेरोजगारों को लघु कुटीर उद्योग, कृषि, पशुपालन एवं फूटकर व्यापार के लिये बैंकों से ऋण उपलब्ध कराता है प्रदत्त ऋण का 50 प्रतिशत अधिकतम 10,000 रूपये का अनुदान जो कम हो दिया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. उद्यम मार्गदर्शिका 2014 उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश भोपाल
2. उद्यमिता एवं व्यक्तित्व विकास 2014 – उ़द्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश, भोपाल
3. Annual Reports. District Trade and Industry Centre. Khandwa
4. Annual Reports Distric Statistical office Khandwa
5. A Guide ot Industry. 2014 CEDMAP Bhopal Journal of Madhya Pradesh Economic Association
6. Journal of Madhya Pradesh Economic Association

****

Limited Liability Partnership; A Hope Of Revival In The Economy

Dr. N.S. Rao * Lalit Pipliwal **

Abstract -In India, business mainly operates as companies, sole proprietorships and partnerships. Each of these is subject to different regulatory and tax regimes reflecting their organization and ownership. Introducing LLP (Limited Liability Partnership), as a new business structure would fill the gap between business firms such as sole proprietorship and partnership, which are generally unregulated and Limited Liability Companies, which are governed by the Companies Act, 1956. In addition to an alternative business structure, LLPs would foster the growth of the services sector. The regime of limited liability partnership will provide a platform to small and medium enterprises and professional firms of Company Secretaries, Chartered Accountants, Advocates etc. to conduct their business/profession efficiently which would in turn increase their global competitiveness. This paper deals with the experiences of LLB in some countries like USA ,UK and Singapore and the incorporation process.
Keywords - Limited Liability Partnership, business, tax etc.,

Introduction - Changing business dynamics and emergent need to tackle with globalize competition post 1991, forced the government to introduce new legislations in order to eliminate inherent disadvantages of old business structure say, partnership and joint stock company. In this background, enactment of Limited Liability Partnership (LLP) Act, 2008 in India, is a big milestone because it preserves unlimited personal liability and the statute-based governance structure of the limited liability company on the other hand. The new structure of LLP encourages entrepreneurs and professionals to set up their own ventures which are both more flexible and tax efficient than earlier structure of partnership and limited liability company.

The legislative structure of LLP is leveraged with the benefit of limited liability of a company and the flexibility of a partnership. It is a separate legal entity, which is liable to the full extent of its assets but liability of the partners is limited to their agreed contribution in the LLP. Apart from that, it can continue in existence, irrespective of the changes in the constitution of partners and also enter into contracts and hold property in its own name. Further, no partner is liable on account of the independent or un-authorized actions of other partners, thus individual partners are shielded from joint liability created by another partner's wrongful business decisions or misconduct.

Thus, LLP is enriched with the associated benefits of big corporate (joint stock company) and partnership firm at the same time eliminate inherent disadvantages of both the same.

International experiences -

United states - 'In the United States, each individual state has its own law governing their formation. LLPs emerged in the early 1990s: while only two states allowed LLPs in 1992, over forty had adopted LLP statutes by the time LLPs were added to the Uniform Partnership Act in 1996. The limited liability partnership was formed in the aftermath of the collapse of real estate and energy prices in Texas in the 1980s. This collapse led to a large wave of bank and savings and loan failures. Because the amount recoverable from the banks was small, efforts were made to recover assets from the lawyers and accountants that had advised the banks in the early-1980s. The reason was that partners in law and accounting firms were subject to the possibility of huge claims which would bankrupt them personally, and the first LLP laws were passed to shield innocent members of these partnerships from liability.

UK - The Limited Liability Partnerships Act 2000 is an Act of the Parliament of the United Kingdom which introduced the concept of the limited liability partnership into English and Scots law. It created an LLP as a body with legal personality separate from its member which is governed under a hybrid system of law partially from company law and partially from partnership law. As per the LLP Act, A person may become a new member of an LLP with the agreement of existing members and cease to be a member with their agreement as well. As with a normal partnership a partner of an LLP is not regarded as being employed by the LLP—they are self employed. The relationship between members is governed by agreement between the members.

A part from that, members of an LLP are subject to income tax on their income as trading income in the same way as a normal partnership. They also pay class 4 National Insurance contributions in the same way as anyone else who is self employed. Capital gains tax applies to members

* Research Guide, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA

of LLPs as to those in a normal partnership. Within one year of incorporation of an LLP there is an exception to stamp duty on land transferred to the LLP if the person transferring the property is a member of the LLP and that the proportions of the property are the same as those before the transaction. LLP's are wound up and subject to insolvency in much the same way as companies.

Singapore - In Singapore an LLP is a form of business entity that permits one partner to be shielded from individual joint liability for partnership obligations created by another partner's or person's misconduct. A partner's liability is not limited, except, when the misconduct took place under the supervision or control of the partner. Only liability arising from the misconduct of other partners or persons is covered by this law; the partnership is not relieved from liability for other partnership obligations and individual partners are liable for their own misconduct.

The salient features of LLP Act (Singapore) are:

1.There must be a minimum of 2 partners. There is no maximum number of partners in a LLP.

An LLP is a legal entity which can hold any property, sue or be sued in its own name and can own.

2.Profits form part of each partner's personal income and are taxed at personal income tax rates.

Registration number of the LLP must be printed on all letterheads, invoices, bills or other documents used for the purposes of the business.

3.The personal assets of the partners are protected. In addition, owners are not personally accountable for the wrongful acts of other owners. However, partners can be personally accountable for debts and losses resulting from their own careless actions.

Key Benefits Of Setting Up Llp In India -

Easy to Form - It is very easy to form LLP, as the process is very simple as compared to Companies and does not involve much formality. Its cost of formation is also lesser in comparison to companies.

Liability - The liability of partner is limited up to the amount of contribution mentioned in LLP agreement. A Partner is personally liable for his own wrongful act i.e. act which is not authorized by LLP or for fraud on his part.

Separate Property - The LLP as legal entity is capable of owning its funds and other properties. The LLP is the real person in which all the property is vested and by which it is controlled, managed and disposed off. The property of LLP is not the property of its partners. Therefore partners cannot make any claim on the property in case of any dispute among themselves.

Investment - LLP can invest in shares of other Company in its name.

Flexible to Manage - LLP Act 2008 gives LLP the freedom to manage its own affairs. Partner can decide the way they want to run and manage the LLP, in form of LLP Agreement. The LLP Act does not regulate the LLP to large extent rather than allows partners the liberty to manage it as per their will.

Compliances - There is minimum compliance required to complied under LLP Act in comparison to companies.

Raising Money - Financing a small business like sole proprietorship or partnership can be difficult at times. The LLP being a regulated entity like company can attract finance from PE Investors, financial institutions etc.

No Mandatory Audit Requirement - Under LLP, only in case of business, where the annual turnover/contribution exceeds Rs 40 Lacs/ Rs 25 Lacs are required to get their account audited annually by a chartered accountant. This provides great relief to small businessmen.

Capacity to sue*:* As a juristic legal person, the LLP can sue in its name and be sued by others. The partners are not liable to be sued for dues against the LLP.

Highlights of tax treatment -

LLP's will be treated as Partnership Firms for the purpose of Income Tax w.e.f assessment year 2010-11.

- No surcharge will be levied on income tax.
- Profit will be taxed in the hands of the LLP and not in the hands of the partners.
- Minimum Alternate Tax and Dividend Distribution Tax will not be applicable for LLP.
- Remuneration to partners will be taxed as "Income from Business & Profession".
- No capital gain on conversion of partnership firms into LLP.
- Designated Partners will be liable to sign and file the Income Tax return.
- LLP shall not be eligible for presumptive taxation.
- Capital Gain on conversion of Company into LLP will be exempt from tax, if prescribed conditions are complied with.

On conversion, the successor LLP , will be allowed to carry forward and set off of accumulated loss and unabsorbed depreciation allowance. On conversion, the successor LLP will be allowed to amortize the expenditure incurred under voluntary retirement scheme. On conversion, the successor LLP will not be allowed to take the credit of MAT (Minimum Alternative Tax) paid by the predecessor company.

Limited Company Vis-A-Vis Llp Vis-À-Vis Partnership Firm - The extent of flexibility vested in LLP can also be accessed through mutual comparison with limited company and partnership with following tables.

Statutory Framework -

Limited Company	LLP	Partnership Firm
Companies Act, 1956	LLP Act, 2008	Partnership Act, 1932

Liability of Members/Partners - (Table See in the last page)

Status - (Table See in the last page)

Capital - (Table See in the last page)

Profit Sharing - (Table See in the last page)

Disclosure Norms - (Table See in the last page)

Incorporation process of llp - The LLP may be incorporated by two or more persons associated to carry on a lawful

business with a view to profit, shall have subscribed their names to an incorporation document. The registering authority will be the Registrar of Companies under the Companies Act. The ROC would register the incorporation document and issue a certificate of incorporation within fourteen days on completion of all formalities specified under the Act. After incorporation, every LLP shall ensure that its name, address of its registered office, registration number and a statement that it is registered with limited liability is mentioned on all its invoices, official correspondence and publications.

Process to start new LLP firm:

Get DPIN (Designated Partner Identification Number)/Digital Signature Certificate.

Check name availability by online search i.e., by accessing **www.llp.gov.in**

Download LLP forms from **www.llp.gov.in**

Fill up the details properly in related forms and afterwards upload it electronically.

For uploading the forms one has to log in on **www.llp.gov.in**

Track the status online i.e., by accessing **www.llp.gov.in**

Once LLP get certificate of incorporation, LLP will be ready to function.

Winding up of llp - Winding up is process, where all the assets of the business are disposed off to meet the liabilities of the same and surplus any, is distributed among the owners. The LLP Act 2008 provides for following two modes for winding up the LLP i.e.:

Voluntary Winding up - Under this, the partners may between themselves decide to stop and wound up the operations of the LLP.

Compulsory winding up - A limited liability partnership may be compulsorily wound up by the Tribunal: If the limited liability partnership decides that limited liability partnership be wound up by the Tribunal: If, for a period of more than six months, the number of partners of the limited liability partnership is reduced below two;If the limited liability partnership is unable to pay its debts; If the limited liability partnership has acted against the interests of the sovereignty and integrity of India, the security of the State or public order; If the limited liability partnership has made a default in filing with the Registrar the Statement of Account and Solvency or annual return for any five consecutive financial years; or If the tribunal is of the opinion that it is just and equitable that the limited liability partnership be wound up.

Conclusion - Enactment of LLP in Indian legislation is being viewed as a path-breaking reform initiative to foster growth of professional services, small and medium size enterprises and enables professionals and entrepreneurs to extend their operations to foreign countries, create a level playing field for both foreign and Indian firms and increasing their global competitiveness.

The passing of the Limited Liability Partnership Act, 2008 in India, is recognition of the changing needs of the businesses in today's times. If it is implemented properly, the introduction of the LLP will provide a helpful new option for professional partnerships which are anxious about their exposure to liability. In view of the growth of Indian Service industry in recent times, LLPs would further contribute to the growth of the service industry and a large number of existing companies, public as well as private, are expected to convert into LLPs with a view to have access to the benefits of the LLP. The Government of India has made an endeavour to create a facilitating environment for entrepreneurs, service providers and professionals to meet the global competition; however it needs to be seen how far the change is useful. Apart from that, it is at the same time necessary to made suitable changes in the provisions of income tax related with the taxations issues, because taxation is one the major motivational factor other than limited liability for the partners of LLPs. Hence, introduction of LLP is a remarkable beginning towards a long journey of legislative reform in corporate law and opening of new avenue of doing business in India.

References :-

1. Ministry of Company Affairs (2005), "Concept Paper on Limited Liability Partnerships", Press Note 5/2005 dated November 2005.
2. Ministry of Company Affairs (2005), Concept Paper on Company Law Reforms Dr. J.J. Irani Committee on Company Law, May.
3. Ministry of Finance and Company Affairs (2003), "Naresh Chandra Committee-Second Report on Regulation of Private Companies and Partnerships", Academic Foundation, Economic India, 2004
4. Institute of Company Secretaries of India (2005), "Seminar on Concept Paper on Limited Liability partnerships Law", PHD Chamber of Commerce, New Delhi, December 17, 2005
5. www.llp.gov.in
6. www.legallyindia.com
7. www.economictimes.indiatimes.com

See Table in next page

Liability of Members/Partners -

Limited to amounts unpaid on shares	Limited to amount of capital agreed to be contributed, according to LLP aagreement.	Liability is unlimited; jointly aswell as severally.

Status -

Has a separate legalpersonality – can own land, can borrow in its name, sue and be sued in its name etc.	Has a separate legal personality – can own land, borrow in its name, sue and be sued in its name etc. And Can do anything which a body corporate can do.	Not a separate legal entity. Can act only through its partners.

Capital -

Company limited by shares must have a minimum authorised and paid up share capital. Share capitalhas to be divided into shares.	No mandatory requirement for capital/ contribution. This would beregulated through agreement among LLP Partners. Capital is not divided into shares.	No mandatory requirement for capital in the Act. Partnership Agreement is the basis for capital contribution/withdrawal etc. Capital is not divided into shares.

Profit Sharing -

May pay salaries and dividends from distributable profits.	LLP Agreement would determine all such issues.	Partnership aagreementdetermines all such issues.

Disclosure Norms -

Annual return and other timely disclosures changes etc. required to be filed with ROC.	Provisions similar to Companies but number/nature of disclosures are les ser/less stringent in case ofLLPs.	No requirement of filing of accounts.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

खाद्यान्न, पर्यावरण और स्वास्थ्य - आर्गेनिक खेती द्वारा संभव

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

शोध सारांश – वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में भारतीय संस्कृति की वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणा भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण के रूप में गुंजायमान है। यह एक क्रांति है जिसमें संपूर्ण विश्व एक ग्लोबल विलेज के रूप में देखने को मिलता है। देश की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है वहीं यह 50 प्रतिशत से ज्यादा आबादी को रोजगार भी उपलब्ध कराता है। इसके अलावा हाल के वर्षों में जिस तरह कृषि क्षेत्र का आधुनिकीकरण हुआ है, इसमें नई तकनीकी का इस्तेमाल बढ़ा है, वहीं पारम्परिक खेती के साथ साथ आर्गेनिक और इनोवेटिव फार्मिंग हो रही है, उसने कृषि के प्रति समाज और खासकर युवाओं का नजरिया काफी हद तक बदला है। यही कारण है कि बीते कुछ समय में आईआईटी और आईआईएम से पास आउट कई युवाओं ने बहुराष्ट्रीय कंपनियों की नौकरी छोड़कर कृषि एवं कृषि व्यापार की ओर रुख किया है। इनके अलावा भी दूसरे क्षेत्रों में काम करने वाले युवा हॉर्टीकल्चर, डेयरी, बागवानी, फलों की खेती, आर्गेनिक और पॉल्ट्री फार्मिंग जैसे पेशे से जुड़ रहे हैं। उन्हें गर्व है कि वे देश और किसानों के लिये कुछ सकारात्मक कर पा रहे हैं।

प्रस्तावना – आज के समय में जो भी कंपनी किसानों के साथ बिजनेस ट्रांजेक्शन कर रहीं है, फिर चाहे वह खाद्यान्न, फल, फूल से जुड़ा है। इसी तरह बीज, कीटनाशक, कृषि यंत्रों की आपूर्ति, कृषि विशेषज्ञ, कृषि उत्पादों का स्टॉक, फसल बीमा कराने या खेती के लिये ऋण देने का काम भी कृषि व्यापार के अंतर्गत आता है। कृषि उत्पाद में विनियोग से लेकर बाजार तक लेकर जाने का काम भी कृषि व्यापार कहलाता है।

भारत का एग्रीकल्चर सेक्टर आज सिर्फ अनाजों के उत्पादन तक सीमित नहीं रह गया है, बल्कि इसमें बिजनेस के अवसर भी काफी बढ़ चुके हैं। फसलों की हार्वेस्टिंग से लेकर प्रोसेसिंग, पैकेजिंग, स्टोरेज और ट्रांसपोर्टेशन में काम करने के कई सारे मौके पैदा हुये हैं। इसके अलावा उन्नत तकनीकी के आने से फूड प्रोसेसिंग इण्डस्ट्री और फूड रिटेल सेक्टर में अनेक प्रकार के रोजगार सृजित हुये है। इसी तरह जो युवा एग्री बिजनेस मैनेजमेंट जैसे कोर्स करते हैं, उन्हें मल्टीनेशन कंपनी में अच्छे वेतन पैकेज पर रखा जा रहा है। इसके अलावा एग्रीकल्चर और उससे जुडे क्षेत्र के क्वालीफाइड यूथ के लिये वेयर हाउस, फर्टिलाइजर, पोस्टेड, सीड़, और रिटेल कंपनी में तमाम तरह के विकल्प सामने आ चुके हैं।

आर्गेनिक खेती आजकल कई शिक्षित युवाओं को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। जमीन से जुडे इस तरह कैरियर में काफी अच्छी कमाई है। साथ ही सरकार इसे प्रोत्साहित करने के लिये आर्गेनिक कृषकों को कई तरह से सहायता उपलब्ध कराती है। सरकार की ओर से नेशनल आर्गेनिक फार्मिंग प्रोजेक्ट भी चलाया जा रहा है। दिल्ली स्थित पूसा इंडस्ट्री से पूरी जानकारी और ट्रेनिंग ले सकते हैं। यह स्वरोजगार का सबसे अच्छा साधन है। इससे अच्छी कमाई की जा सकती है। बहुत से व्यावसायिक किसान वैज्ञानिक कृषि के द्वारा न सिर्फ अच्छा पैसा कमा रहे हैं बल्कि दूसरों को भी अच्छा रोजगार दे पा रहे हैं। यही नहीं निजी और सरकारी दोनों क्षेत्रों में एग्रीकल्चर का स्कोप तेजी से बढ़ रहा है।

कृषि अब पूरी तरह से मानसून पर निर्भर नहीं है। वैज्ञानिक तरीके से अगर खेती की जाये तो फसल तो अच्छी होती है और पानी भी कम लगता है। पहले के जैसे सूखे के हालात अब नहीं पैदा होते। अब बारिश के पानी का स्टोरेज भी बेहतर तरीके से किया जाता है। इससे बारिश के कम होने पर फसलों को पर्याप्त पानी मिल जाता है। अगर आपको आर्गेनिक खेती शुरु करनी है, तो सबसे पहले आपको इसका प्रोजेक्ट या ब्लू प्रिंट बनाना होगा। यह तय करना होगा कि कितनी जमीन पर खेती करेगें। जमीन का लोकेशन क्या है? जमीन किस प्रकार की फसल के लिये अच्छी है? आपका बजट कितना है? यह प्रोजेक्ट किसी भी चार्टड अकाउन्टेन्ट से बनवा सकते हैं। इसके बाद आपको फार्म 1 ए 1, 1 ए 3, 1 जी और फार्म 11 भरकर रजिस्ट्रेशन फीस के साथ साथ अपने राज्य के डिपार्टमेंट ऑफ आर्गेनिक सर्टिफिकेशन में जमा करना होगा।

तालिका क्रमांक – 1 – खाद्यान्न उत्पादन करने हेतु मिट्टी की जाँच

क्र.	मिट्टी की जाँच हेतु तत्व	मिट्टी में उपलब्ध तत्वों की मात्रा
1	पी. एच.	8.00 (क्षारीय)
2	सल्फर	13.4 (पर्याप्त)
3	जिंक	0.57 (कम)
4	नाइट्रोजन	0.30 प्रतिशत (कम)
5	लोहा	2.85 प्रतिशत (पर्याप्त)
6	फॉस्फोरस	5.85 प्रतिशत (कम)
7	पोटाश	51 (कम)
8	मैंगनीज	4.32 (पर्याप्त)

स्त्रोत:- सभी आँकड़े 2011-12 के अनुसार, भारत सरकार

कृषि वैज्ञानिक आपकी जमीन की जाँच करेगें और यह तय करेगें कि इसकी मिट्टी किस तरह की फसल के लिये अच्छी है? इसके बाद आपका प्रोजेक्ट कृषि विभाग के पास होने के लिये भेज दिया जायेगा। आर्गेनिक ,खेती के लिये तकरीबन हर राज्य में सरकार 80 से 90 फीसदी तक सब्सिडी देती है। मतलब यह आपको पूरे प्रोजेक्ट में 10 से 20 प्रतिशत ही निवेश करना होगा। प्रोजेक्ट पास होने के बाद आर्गेनिक फार्मिंग टेक्निक वाली कंपनियाँ सेटअप लगाने के लिये आपसे खुद संपर्क करती हैं। सरकार से मिले पैसों से ये कंपनियाँ आपकी जमीन पर ग्रीन हाउस और आर्गेनिक फार्मिंग के लिये सेटअप लगाती हैं। साथ ही आपको ट्रेनिंग भी देती हैं।

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

आर्गेनिक खेती का जिक्र तो आजकल बहुत हो रहा है लेकिन प्रश्न यह है कि अगर किसी को इसमें कैरियर बनाना है तो वह ऐसी खेती करे जिसमें सिंथेटिक खाद, कीटनाशक आदि जैसी चीजों की बजाय तमाम आर्गेनिक चीजें जैसे- गोबर, वर्मी कंपोस्ट, बायोफर्टिलाइजर्स, क्रापरोटेशन तकनीकी आदि का इस्तेमाल किया जाता है। कम जमीन में कम लागत में इस तरीके से पारंपरिक खेती की तुलना में कहीं ज्यादा उत्पादन होता है। यह तरीका फसलों में जरुरी पोषक तत्वों को संरक्षित रखता है और नुकसानदेह कैमिकल्स से दूर रखता है। साथ ही यह पानी भी बचाता है और जमीन को लंबे समय तक उपजाऊ बनाये रखता है। यह पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में भी मददगार है। जैविक खेती की शुरुआत इंग्लैण्ड निवासी अलबर्ट होवार्ड ने की थी। इंग्लैण्ड में इस प्रकार की कृषि पद्धति में मृदा की उर्वरता बनाये रखने के लिये कंपोस्ट पर अधिक जोर दिया जाता है तथा जैविक किसान उन लोगों को कहा जाता है जो मृदा में जो पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिये फसलों के अवशिष्ट तथा हरी खाद का प्रयोग करते थे।

तालिका क्रमांक - 2 - राज्यवार खाद की खपत

क्र.	राज्य	राज्यवार खाद की खपत(हजार टन)	कीटनाशक की खपत(ग्राम प्रति हेक्टे.)
1	राजस्थान	1355.78	350
2	मध्य प्रदेश	1891.98	478
3	छत्तीसगढ़	595.57	144

स्त्रोत:- सभी आँकड़े 2011-12 के अनुसार, भारत सरकार

तालिका क्रमांक - 3 -भारत में खाद और कीटनाशक की खपत

क्र.	नाम	कुल खपत (टन में)
1	कीटनाशक	50000
2	रासायनिक खाद	27700000
3	जैविक खाद	8110

स्त्रोत:- सभी आँकड़े 2011-12 के अनुसार, भारत सरकार

इस पद्धति में जैविक पदार्थ जैसे गोबर की खाद, स्लरी कम्पोस्ट, भूसा एव फसल अवशेष अन्य फसल उत्पादक, जीवाणु खाद, हरी खाद आदि के माध्यम से भूमि में पोषक तत्वों की पूर्ति की जाती है तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग न के बराबर किया जाता है। जैविक खेती के अन्तर्गत अरासायनिक पद्धति पर आधारित कीट नियंत्रण उपाय अपनाये जाते है। इसके अन्तर्गत वनस्पति कीटनाशक जैसे नाम पर आधारित उत्पादों के प्रयोग पर अधिक बल दिया जाता है। इसके अलावा फसलो के कीडे मकोडो से बचाने के लिए पेड़ों एव जडी बूटियों से तैयार कीटनाशक ही प्रयुक्त होते हैं। सम्प्रति नीम से बने कीट नाशको का प्रयोग काफी प्रभावकारी साबित हुआ है।

विभिन्न संस्थाओं के शोधों में फल सब्जियों आदि में डी. डी. टी. जैसे कीटनाशकों की कुछ मात्रा पायी गयी है। कई अन्य देशों में तो इस रसायन पर पूर्ण प्रतिबन्ध ही लगा दिया गया है। विशेषज्ञों का मानना है कि भोजन के साथ यदि ये रसायन लगातार हमारे शरीर में पँहुचते रहे तो कैंसर जैसे रोग होने की पूरी सम्भावना है। फलस्वरूप बिना रसायनों के प्रयोग से पैदा किये जाने वाले खाद्य पदार्थों की माँग देशभर में लगातार बढ़ती जारी है इसी माँग को देखते हुए देश के कुछ उद्यमी जापान, जर्मनी आदि देशों से जैव कृषि पद्धति की जानकारी प्राप्त कर इस दिशा में आने लगे है कृषि में पहले से ही प्रयुक्त जैव तकनीकी में काटन बोलवार्म तथा कार्म (कार्न बोरर) में कीटों की सुरक्षा एव नये खरपतवार नियंत्रक शामिल हैं। इन तकनीकों के आर्थिक लाभ कृषकों के लिए पहले से ही प्रमाणित हो चुके हैं जैव तकनीकी से अनुवांशिक रूप मे सवंर्धित पौधे 1982 में उगाये गये। पहला फील्ड स्टेट 1986 में आयोजित किया गया। तब से लेकर आज तक लगभग 45 देशों में 25 हजार से अधिक टेस्ट किये जा चुके हैं। इसके अलावा जैव तकनीकी द्धारा कम से कम 32 एन्जाइम उत्पन्न किये गये हैं, जो मान्य हैं। अब तक भारत में प्रयोग के लिए किसी भी कृषि जैव तकनीकी उत्पादों को स्वीकृति नहीं दी गयी है।

भारत में जैव कृषि के संबंध में अभी जागरूकता नहीं आयी है। जैविक कृषि के मार्ग की सबसे अधिक बाधा इसकी अधिक लागत होना है। रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग के बिना उगायी गयी फसल की लागत रासायनों के उपयोग से उपजायी गई फसलों की उपेक्षा 20 से 25 प्रतिशत अधिक होती है साथ ही रसायनों के छिड़काव नहीं होने के कारण ऐसे उत्पाद शीघ्र ही सड़ने लगते हैं। चुंकि बाजार में अभी भी ऐसे उत्पादों की कमी माँग बहुत अधिक नहीं है। अत: वृहद पैमाने पर इसका उत्पादन कर इसकी लागत को कम करना भी संभव नहीं है। अत: यह व्यवसाय तभी बढ़ेगा जबकि इसकी माँग में अपेक्षित वृद्धि हो। आशा की जा रही है कि नयी सदी में इस तरह की कृषि में काफी वृद्धि हो सकेगी। जीन फसलों के लाभ भी देखने को मिलते हैं जैसे उत्पादकता में वृद्धि, उत्पादन की गुणवत्ता में वृद्धि, पौधों का विविध रोगों से संरक्षण, प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि आदि।

मध्य प्रदेश के खरगौन जिले में किसान नैसर्गिक आर्गेनिक खेती कर रहे हैं। इन किसानों को आर्गेनिक खेती करने के लिये देशी बीज की जरुरत है। हम सबके तमाम प्रयासों के बावजूद कपास के देशी बीज खोजना संभव नहीं हो पा रहा है क्योंकि वह बाजार से गायब हैं। अब हर दुकान में तथाकथित उन्नत बीज बिक रहा है और विज्ञापनों के माध्यम से कई बीज कंपनियाँ किसानों को अपनी ओर आकर्षित कर रही हैं। हर दुकान में बडे - बडे पोस्टर लगे हुये हैं और बीज का हर पैकेट रंग बिरंगे कागजों से बना हुआ है। बात इतने से समाप्त नहीं होती, बल्कि हर बीज के साथ विदेशी खाद और रासायनिक पदार्थों का पैकेट किसानों को दिया जा रहा है। अगर भारत की कृषि को जहर मुक्त करना है, तो इन विषमताओं को समझना होगा और इन्हें दूर करने के लिये व्यवस्थित कदम उठाना होगा।

तालिका क्रमांक - 4 - भारत में खाद्यान्न की पैदावार

क्र.	वर्ष	खाद्यान्न की पैदावार (करोड़ टन में)
1	1947	05
2	2014	26.30

स्त्रोत:- सभी आँकड़े 2011-12 के अनुसार, भारत सरकार

तालिका क्रमांक - 5 - खाद एवं रसायनों का इस्तेमाल

क्र.	वर्ष	खाद एवं रसायनों का इस्तेमाल (करोड़ टन में)
1	1947	540
2	2014	90,000 लगभग

स्त्रोत:- सभी आँकड़े 2011-12 के अनुसार, भारत सरकार

अत्याधिक रसायनों के प्रयोग से न केवल हमारी मिट्टी की उर्वरता को कम करती है, बल्कि एक निश्चित समय के बाद इससे फसल की पैदावार में भी कमी आने लगती है। यही नहीं इस तरह की उपज यदि मानव और पशुओं के इस्तेमाल में आती है। तो उनके शरीर को भी हानि पहुँचाती ही है। भारत में रासायनिक खेती को बंद करना बहुत बेमानी सा है। इसका कारण है कि हमारी आवश्यकताओं के मुताबिक खाद्यान्न का पैदा नहीं होना है। भारत की करीब सवा अरब की आबादी के मद्देनजर लक्ष्य तय किया गया था कि 10 करोड़ टन गेहूँ और 10 करोड़ टन चावल की पैदावार करनी होगी। इसके साथ ही हर साल आबादी की बढ़त के अनुसार 3 प्रतिशत खाद्यान्न पैदावार

बढ़ानी होगी। हमने चावल की पैदावार लक्ष्य हासिल करते हुये करीब 10.5 करोड़ टन के स्तर तक पहुंचा दिया है लेकिन गेहूँ के मामले में हम लगभग 9.5 करोड़ टन के स्तर पर ही रह गया है यानि के जिस तेजी के साथ खेती में रसायन का इस्तेमाल बढ़ा है उस अनुपात में भारत की खाद्यान्न पैदावार में बढ़ोत्तरी नहीं हो सकी। यह स्थिति बताती है कि रसायनों के इस्तेमाल के मामले में हम बहुत ही खतरनाक बिन्दु पर पहुँच चुके हैं।

भले ही रसायनिक खाद और कीटनाशक के इस्तेमाल से कोई कुछ समय के लिये बेहतर उपज हासिल कर लें। लेकिन कुछ वर्षो बाद मिट्टी के उपजाऊपन और फसल की पैदावार में कमी दिखाई देने लगती है। वास्तव में रसायनिक खेती से मिट्टी के उपजाऊ बनाये रखने के लिये जिन विषाणुओं की जरुरत होती है वे नष्ट होने लगते हैं। उपजाऊपन सुधारने के लिये किसान फिर और अधिक रसायनों का इस्तेमाल करते हैं। जितना रसायन का इस्तेमाल बढ़ता जाता है, उतनी ही मिट्टी की उर्वरता में कमी आती जाती है। वहीं स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। कैंसर के क्षेत्र में कार्य कर रहे शहर के चिकित्सकों का कहना है कि जल में तथा भारी मात्रा में रसायनों के प्रयोग के कारण कैंसर के रोगियों का आँकड़ा निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ रहा है। रासायनिक खाद की मार्केटिंग से जुड़े एक दुकानदार ने दबी जुबान में कहा है कि हम रिटेल दुकानदार को खेत में 20 ग्राम रासायनिक खाद डालने के लिये कहते हैं। लेकिन ग्रामीणों को दुकानदार लालच में 50 से 70 ग्राम के हिसाब से खेत में खाद डालने के लिये सुझाव हैं और किसान लालच के चक्कर में मजदूर किसान को 100 ग्राम का सुझाव देते हैं और मजदूर कई बार 200 ग्राम तक खेत में डाल देते हैं। ऐसा हर जगह हो रहा है क्योंकि हर कोई इस धरती से तुरंत मुनाफा चाह रहा है।

विकास की दौड़ में हम गुणवत्ता को बहुत पीछे छोड़ चुके हैं। जैविक खेती को लेकर लोगों में संदेह रहता है कि उससे उपज की पैदावार में कमी आ जाती है और गुणवत्ता कमजोर होती है। हकीकत यह है कि जैविक खेती अपनाने से परेशानी केवल शुरुआत में आती है। दो से तीन वर्ष तक रासायनिक खेती छोड़ जैविक खेती अपनाने पर उपज कम होती है। लेकिन छठवें साल में जबर्दस्त सुधार होता है। उदाहरण के लिये यदि एक हेक्टेअर में रासायनिक खेती के दौरान औसतन 40 क्विंटल गेहूँ पैदा होता है तो जैविक खेती में छठे साल तक आते आते यह उपज कम से कम 20 प्रतिशत बेहतर हो जाती है। क्षेत्र के कई किसान इतराकर कहते नजर आएंगे कि घर के लिये खेत में अलग से एक टुकड़ा छोड़ रखा है। शुद्ध खाद से जैविक खेती करते हैं। बाकी खेत पर रासायनिक खाद से बाजार के लिये उपज तैयार करते है। बस एक बीघा जमीन से अपने घर को बचा रखा है।

यदि हमें खाद्यान्न, पर्यावरण और स्वास्थ्य तीनों को बचाना है तो रासायनिक खाद की बजाय गोबर की खाद का इस्तेमाल करना होगा। देसी गोबर बहुत लाभप्रद है। सरकार का गैर रासायनिक खेती पर सब्सिडी दी जानी चाहिये। भारत में सरकार सहकारिता के माध्यम से आर्गेनिक खेती को बढ़ावा दे सकती है। वहीं सस्ता देसी खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा सकता है। किसानों को घरेलू खाद बायो खाद की सहायता दी जा सकती है। देसी बीज सब्सिडी दी जाये। साथ ही सरकार आर्गेनिक खेती से उत्पन्न खाद्यान्न खरीद की नीति भी लाए जाये। जिस दिन किसान को मालूम हो जाये कि कैमिकल फर्टिलाइजर से सब्सिडी हटा दी गई है तो वह खुदब खुद आर्गेनिक खेती की ओर रुख करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची– व्यक्तिगत सर्वे ।

****

जनजातीय क्षेत्रों में आर्थिक समस्या का एक अध्ययन (मध्यप्रदेश के धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. राजू बघेल *

शोध सारांश – मानसून के उच्चावनों के कारण निम्न कृषि आय, रोजगार की अनिश्चितता आदि के फलस्वरूप आय में आयी अचानक कमी, उन्हें दैनिक उपभोग हेतु तथा सामाजिक, धार्मिक समारोह मुख्यत: विवाह, जन्म, मृत्यु आदि में होने वाले सामाजिक भोजन पर अत्यधिक व्यय के साथ ही साथ परिवार के सदस्यों में अचानक बीमारियों के दौर के फलस्वरूप जनजातीय परिवार को अतिरिक्त मुद्रा की आवश्यकता होती है। परिवार मुद्रा की आवश्यकता की पूर्ति स्थानीय साहुकार, व्यापारी, बड़े कृषक परिवार के माध्यम से करता है। स्थानीय साहुकार 'डेढ़ गुना वार्षिक ब्याज की दर' पर मुद्रा या अनाज जरूरतमन्द परिवार को उधार देते हैं। आदिवासियों की आर्थिक समस्या से मुक्त कराने के लिए समय-समय पर अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम लागू किये गये हैं। उसके बावजूद आदिवासी परिवारों मे अनेक समस्या विद्यमान है।

शब्द कुंजी – ऋणग्रस्तता, सूदखोर, बेरोजगार, कुल आय, कुल व्यय।

प्रस्तावना – वर्तमान में सम्पुर्ण जनजातीय भारत के संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। इस संक्रमण के दौरान जनजातियों में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गई है। इन समस्याओं की प्रकृति और कारण जनजातियों में भिन्न-भिन्न है। कुछ जनजातियों में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है। जैसे भील और गोंड़ में तो कुछ अन्य जनजातियों में जैसे टोड़ा एवं कोरवा में जनसंख्या घट रही है। कई जनजातियाँ नगरीय संस्कृति के सम्पर्क में आयी है, जिसके फलस्वरूप उनकी संस्कृति में कई परिवर्तन हुए है। उनमें दिशा हीनता एवं सांस्कृतिक छिन्न भिन्नता पैदा हुई है, और मानसिक असन्तोष बढ़ा है। ब्रिटिश काल में जनजातीय लोगों का सम्पर्क ईसाई-मिशनरियों और अन्य कर्मचारियों के साथ हुआ। परिणामस्वरूप उन्हें कुछ लाभ तो प्राप्त हुए किन्तु इनसे उनके जीवन में विघटन भी प्रारम्भ हो गया। जनजातियों के निवास क्षेत्रों में व्यापारी और ठेकेदार लोग पहुँच गए। उन्होंने जनजातीय लोगों का खुब आर्थिक शोषण किया और कम मजदूरी पर उनसे अधिक श्रम लेने लगे। सूदखोरों ने उन लोगों की जमीनें कम दामों में खरीद ली और अपने घर में ही परायों की तरह कृषि मजदूर के रूप में काम करने लगे।[1]

जनजाति आर्थिक दृष्टि से इतने कमजोर होते हैं, कि रोटी, कपड़े और आवास जैसी न्युनतम आवश्यकताओं की पूर्ति ही नहीं कर पाते। अर्थोपार्जन के साधनों के रूप में समुदाय के पास खेती योग्य भूमि का अभाव होता है। अधिकांश: भील दैनिक मजदूरी पर कार्य करते हैं तथा इन्हें कम मजदूरी, कम भुगतान करके ठेकेदारों द्वारा शोषण किया जाता रहा है और महाजनों और साहुकारों द्वारा उन्हें आवश्यकतानुसार धन देकर उनसे फसल आने पर दुगने-तिगुने आकार में फसल हड़प ली जाती है।[2] आदिवासियों की आर्थिक समस्या से मुक्त कराने के लिए समय-समय पर अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम लागु किये गये हैं। उसके बावजूद आदिवासी परिवारों मे अनेक समस्या विद्यमान है।

शोध समस्या का चयन – जनजातीय समुदाय आज भी अपनी अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्र कृषि में परम्परागत तरीके से संलग्न है। एक ओर देश कम्प्यूटर एवं उच्च तकनीक के दौर से गुजर रहा है, वहीं दूसरी ओर जनजातियों का उनके रीति-रिवाज और प्रकृति के प्रति लगाव बना हुआ है। अत: जनजातीय क्षेत्रों में जनसंख्या का बढ़ता दबाव, जोतों का छोटा आकार, अपेक्षित तकनीकी ज्ञान का अभाव, मानसून की अनियमितता इत्यादि के परिणमस्वरूप गरीबी, ऋणग्रसतता, उत्तम आवास की कमी, शिक्षा एवं स्वास्थ्य का निम्न स्तर जैसी अनेक समस्याएँ विद्यामान है। इसलिए जनजातीय परिवारों की व्यवसायिक-संरचना, आय, व्यय, रोजगार, तथा ऋणग्रस्तता जैसे विभिन्न बिन्दुओं का अध्ययन करने के लिए इस शोध समस्या का चयन किया गया।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. जनजातीय क्षेत्रों में व्यासायिक संरचना से संबंधित समस्याओं का अध्ययन करना।
2. जनजातीय क्षेत्रों में आर्थिक समस्या के समाधान हेतु उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन क्षेत्र – धार जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम भाग में स्थित है। यह 22^0 1''14'' तथा 23^0 9'' 49'' उत्तरी अक्षांश और 74^0 28'' 27'' तथा 750 42'' 43'' पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। इस जिले का क्षेत्रफल 8149 वर्ग कि.मी. है।[3] इसकी कुल जनसंख्या 1740329 है। जिसमें से अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 948434 है। जो कुल जनसंख्या का 54.48 प्रतिशत है।[4]

निदर्शन विधि – धार जिले के बाग व गंधवानी विकासखण्ड के 89 व 144 गाँवों में से (10 प्रतिशत) 9 एवं 14 गाँवो का चयन दैव निदर्शन विधि द्वारा किया गया इस प्रकार से कुल 23 गाँवों का चयन किया गया तथा प्रत्येक गाँव से 05-05 साक्षात्कार अनुसूची भरी गई। इस प्रकार से कुल 65 जनजातीय परिवारों का चयन किया गया है।

समंकों का संकलन – प्राथमिक समंकों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची, समुह चर्चा एवं अवलोकन द्वारा किया गया। द्वितियक समंकों का संकलन जनगणना पुस्तिकाओं, मानक पुस्तक, पत्र-पत्रिकाओं, विभिन्न रिपोर्ट, जिला सांख्यिकी विभाग धार, आदिम जाति संस्थान भोपाल, इन्टरनेट, अखबार आदि से एकत्र कियें गयें।

आकड़ो का विश्लेषण –

जनजातियों की व्यवसायिक -संरचना – व्यवसायिक-संरचना से आशय किसी भी व्यक्ति एवं परिवार द्वारा किए जा रहे आर्थिक कार्य की अवस्था से है। यह आर्थिक स्थिति का सबसे महत्वपूर्ण सूचक माना जाता है। व्यावसायिक-संरचना एवं विभिन्न व्यवसायों से जुड़े लोगों का अनुपात

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) श.च.आ. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

आर्थिक प्रगति का अच्छा सूचक होता है।[5] जनजातियों की व्यवसायिक-संरचना के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका क्रमांक- 1 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक- 1

जनजातियों की व्यवसायिक-संरचना

क्र.	व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	खेती	10	15.4
2.	खेती एवं मजदूरी	47	72.4
3.	मजदूरी	06	9.2
4.	अन्य (नौकरी, दुकान)	02	3.0
	कुल योग	**65**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक- 1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में 15.4 प्रतिशत परिवार खेती करने वाले, 72.4 प्रतिशत परिवार खेती एवं मजदूरी करने वाले, 9.2 प्रतिशत परिवार केवल मजदूरी करने वाले, 3.0 प्रतिशत परिवार अन्य (नौकरी, दुकान) कार्य करने वाले हैं। अत: कहा जा सकता है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में खेती और मजदूरी करने वाले परिवारों की संख्या सबसे अधिक है, जो 72.4 प्रतिशत है। जिसका मुख्य कारण है कि इन क्षेत्रों में सिंचाई के संसाधनों का अभाव होने के कारण वर्षा ऋतु की कृषि करते हैं और ग्रीष्मकाल में मजदूरी के लिए प्रवास कर जाते हैं।

परिवार की कुल वार्षिक आय - किसी भी व्यक्ति या परिवार के जीवन स्तर का सबसे महत्वपूर्ण आधार उसकी आय का स्तर होता है और इसी आधार पर उनके जीवन-स्तर का भी अंदाजा लगाया जा सकता है आदिवासियों के द्वारा विभिन्न प्रकार के आर्थिक कार्य किये जाते हैं।[6] इस विभिन्नता के कारण इनकी आय में भिन्नता होना स्वभाविक है। आय किसी भी व्यक्ति या परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का महत्वपूर्ण पहलु है। परिवार की कुल आय के सम्बन्ध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उन्हें तालिका क्रमांक- 2 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक- 2

परिवार की कुल वार्षिक आय सम्बन्धी विवरण

क्र.	कुल वार्षिक आय (रुपयों में)	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	रू. 15000 से कम	01	1.6
2.	रू. 15000 से य 30000 तक	29	44.6
3.	रू. 30000 से य 45000 तक	21	32.3
4.	रू. 45000 से य 60000 तक	12	18.5
5.	रू. 60000 से अधिक	02	3.0
	कुल योग	**65**	**100.0**

उपरोक्त तालिका क्रमांक- 2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में य 15,000 से कम 1.6 प्रतिशत है, रू. 15,000 से रू. 30,000 तक में 44.6 प्रतिशत है, रू. 30,000 से रू. 45,000 तक में 32.3 प्रतिशत है, रू. 45,000 से रू. 60000 तक में 18.5 प्रतिशत है, रू. 60,000 से अधिक में 3.0 प्रतिशत है। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि 44.6 प्रतिशत परिवार की कुल वार्षिक आय रू. 15,000 से रू. 30,000 के बीच में है जो सबसे अधिक है, इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोग कृषि कार्य करते हैं तथा आधुनिक संसाधनों का उपयोग बहुत कम करते हैं जिससे इनकी आय कम होती है।

कुल वार्षिक आय को व्यय - आदिवासी अपनी कुल आय को अपने परिवार के विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यय करते हैं। **कुरियन (1982)** के अनुसार 90 प्रतिशत से अधिक आदिवासियों की आय जीवन-निर्वाह के वांछित साधनों को पूरा करने में समाप्त हो जाती है। अधिकांश आय भोजन पर व्यय की जाती है।[7] आदिवासियों के व्यय के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उन्हें तालिका क्रमांक- 4 में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक- 4

परिवार की कुल वार्षिक आय को व्यय करने सम्बन्धी विवरण

क्र.	वार्षिक आय को व्यय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	भोजन पर	36	55.4
2.	शिक्षा एवं स्वास्थ्य	12	18.5
3.	सामाजिक कार्यो पर	13	20.0
4.	ऋणों को भुगतान करने	04	6.1
	कुल योग	**65**	**100.0**

उपरोक्त तालिका क्रमांक- 4 को अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में 55.4 प्रतिशत परिवार भोजन पर व्यय करते हैं, 18.5 प्रतिशत परिवार शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर व्यय करते हैं, 20.0 प्रतिशत परिवार सामाजिक कार्यों पर व्यय करते हैं, 6.1 प्रतिशत परिवार ऋणों को भुगतान करने पर व्यय करते हैं। अत: निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि 55.4 प्रतिशत परिवार अपनी कुल आय का अधिकतम भाग भोजन पर व्यय करते हैं जो सबसे अधिक है, इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोगों की आय बहुत कम है।

जनजातियों में बेरोजगारी - जनजातियों को बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ता है। कृषि कार्य में कुछ ही दिनों के लिए रोजगार उपलब्ध होता है। इस प्रकार साल में अधिकांश समय उन्हें बेरोजगारी से निपटने के लिए लोग कृषि कार्य के बाद विभिन्न स्थानों पर मजदूरी की खोज में भटकते हैं। पुरूष रिक्शा, ठेला आदि खींचने के लिए शहर की ओर आते हैं, तो महिलाएँ भवन, सड़क, बाँध अथवा पुल निर्माण कार्य के लिए अपना गाँव-घर छोड़कर बाहर जाती है।[8]

निष्कर्ष -

1. अध्ययन क्षेत्र में प्राप्त समंकों से स्पष्ट है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में खेती और मजदूरी करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या सबसे अधिक है, जो 72.4 प्रतिशत है। जिसका मुख्य कारण है कि इन क्षेत्रों मे सिंचाई के संसाधनों का अभाव होने के कारण वर्षा ऋतु की कृषि करते हैं और ग्रीष्मकाल में मजदूरी के लिए प्रवास कर जाते हैं।
2. अध्ययन क्षेत्र के कुल सर्वेक्षित परिवारों में 44.6 प्रतिशत परिवारों की कुल वार्षिक आय 15,000 से 30,000 के बीच में है जो सबसे अधिक है, इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोग कृषि कार्य करते हैं तथा आधुनिक संसाधनों का उपयोग बहुत कम करते हैं जिससे इनकी आय कम होती है।
3. अध्ययन क्षेत्र में प्राप्त समंकों से स्पष्ट है कि कुल सर्वेक्षित परिवारों में कि 55.4 प्रतिशत परिवार अपनी कुल आय का अधिकतम भाग भोजन पर व्यय करते हैं जो सबसे अधिक है, इसका मुख्य कारण है कि इस क्षेत्र के लोगों की आय बहुत कम है।

समस्याएँ एवं सुझाव -

1. आदिवासियों का आय का स्तर उनके व्यय ये कम होता है। इस कारण से उन्हें साहुकारों एवं महाजनों से ऊँची ब्याज दर पर काफी मात्रा में

ऋण लेना पड़ता है। इस ऋण के कारण साहूकारों एवं महाजनों द्वारा लम्बे समय तक उनका आर्थिक शोषण किया जाता है। आदिवासियों द्वारा लिए गए ऋणों का अंधिकांश भाग सामाजिक कार्यो पर व्यय किया जाता है। इस हेतु सुझाव यह है कि आदिवासियों में यह जागरूकता उत्पन्न की जाए कि उन्हें सामाजिक कार्यो पर फिजूल खर्च न करके केवल आवश्यक एवं महत्वपूर्ण कार्यो पर ही व्यय करना चाहिए।

2. आदिवासी वर्ग के बहुत ही कम कृषक ऐसे हैं, जिनके पास सिंचाई के पर्याप्त साधन है। इन लोगों के पास सिंचाई के साधनों की उपलब्धता के बावजूद भी वे अपनी फसल की सिंचाई नहीं कर पाते हैं। इसकी सबसे बड़ी बाधा है, बिजली की अनियमितता एवं पर्याप्त अनउपलब्धता। अपर्याप्त बिजली के कारण वे अपनी फसलों की समुचित सिंचाई नहीं कर पाते हैं। इस हेतु यह सुझाव है कि सरकार गाँवों में सस्ती एवं निरंतर बिजली प्रदाय करने की कोशिश करे।
3. कृषि क्षेत्र में घटते लाभों के कारण आदिवासी वर्ग अन्य कार्यों की ओर उन्मुख हो रहे हैं। इस हेतु उन्हें अपने गाँव के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी कार्य करने जाना पड़ता है इस वजह से उन्हे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस हेतु महत्वपूर्ण यह सुझाव है। कि इन आदिवासियों को स्वरोजगार हेतु कुशल प्रशिक्षण प्रदान किया जाये ताकि कृषि में लाभ कम होने पर मजदूर बनने और इधर-उधर भटकने के बजाय अपना स्वयं का व्यवसाय प्रारंभ कर सके, इसके लिए उन्हें सस्ती ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराया जाए तो निश्चित रूप से वे अन्यत्र काम करने जाना पसन्द नहीं करेंगे।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वैद्य, नरेश कुमार (2003) 'जनजातीय विकास मिथक एंव यर्थाथ' रावत पब्लिकेशन जयपुर।
2. वर्मा, एम.एल (1992) 'भीलों की सामाजिक व्यवस्था' क्लासिकल पब्लिशिगं कम्पनी, नई दिल्ही।
3. मध्यप्रदेश जिला गजेटियर जिला धार (1994) गजेटियर संचालनालय संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश भोपाल।
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका (2010) जिला योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय, जिला धार।
5. Pande, P.K. (1991) "Tribal Occupation & New Dynamics, Mittal Publications, New Delhi.
6. प्रसाद, गोविन्द, गीतांजली एवं नन्द कुमार सिह (2007), 'जनसंख्या अध्ययन के आयाम डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउऊस 4831/28, अन्सारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली।
7. kuriyan, j. (1982) Tribal Health Programme, Health & Population : Perspective & Issues, Vol. 5 (1).
8. उपाध्याय, विजय शंकर, शर्मा, विजय प्रकाश (2007), 'भारत की जनजातीय संस्कृति' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, बाणगंगा, भोपाल (म.प्र.)।
9. सिंह, रामगोपाल (2001) 'समाजशास्त्र' (समाजशास्त्रीय अवधारणाऐं एवं भारतीय समाज) मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।

****

मध्य प्रदेश में नगरीकरण -समस्यायें एवं समाधान

सुनील शर्मा *

प्रस्तावना – नगरीकरण आर्थिक विकास का पर्याय माना जाता है किन्तु नगरीकरण आर्थिक विकास के लिये एक प्रकार से चुनौती भी है। तेजी से बढ़ती नगरों की जनसंख्या के कारण नगरों पर जनसंख्या का दबाव बढ़ने से नगरों में उपलब्ध मूलभूत सुविधाओं पर दबाव बढ़ता है। फलत: यह बढ़ती हुई नगरीय जनसंख्या नगरों के लिये समस्या मूलक बनती जा रही है। आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, ठोस कचरा प्रबन्धन, जल आपूर्ति, जलभराव, यातायात, मलजल निकास, अपराध बढ़ना इत्यादि समस्यायें स्थानीय नगरीय प्रशासन के लिये बहुत बड़ी चुनौतियां हैं। शोध कार्य में इन्हीं प्रश्नों पर विचार करते हुये नगरीकरण की प्रवृति, नगरीकरण जनित समस्याओं तथा उनके समाधान के उपायों का विश्लेषण किया गया है।

शोधपत्र मध्यप्रदेश राज्य में नगरीकरण के फलस्वरूप नगरों में उत्पन्न होने वाली मूलभूत सुविधाओं सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन पर आधारित है। इसके अन्तर्गत मध्य प्रदेश के ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों का विशेष रूप से अध्ययन करके चयनित नगरीकरण की समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। मध्यप्रदेश के ग्वालियर तथा इन्दौर दो नगरों का शोध कार्य हेतु चयन किया गया है तथा इन चयनित दो नगरों की नगर पालिका सीमा के अन्तर्गत आने वाली जनसंख्या तथा उसकी प्रमुख चार समस्याओं (1) ठोस कचरा प्रबन्धन (2) जल आपूर्ति (3) जलभराव तथा (4) महानगरीय यातायात व्यवस्था का विश्लेषण किया गया है।

शोध कार्य के उद्देश्य – विचाराधीन शोध कार्य का प्रमुख उद्देश्य मध्य प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति ज्ञात करना, उससे उत्पन्न होने वाली समस्याओं का अध्ययन करना तथा उनके समाधान हेतु नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना है। शोध कार्य को परिणाममूलक तथा उपयोगितामूलक बनाने हेतु निम्न विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं –

1. मध्य प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति ज्ञात करना।
2. ग्वालियर नगर की नगरीकरण की प्रवृति ज्ञात करना।
3. इन्दौर नगर की नगरीकरण की प्रवृति ज्ञात करना।
4. ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों की चयनित मूलभूत नागरिक सुविधाओं की उपलब्धता ज्ञात करना।
5. ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों में चयनित मूलभूत नागरिक सुविधाओं की समस्या का अध्ययन करना।
6. ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों की स्थानीय नगरीय सरकारों द्वारा समाधान हेतु किये गये कार्यों की प्रगति का विश्लेषण करना।
7. ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों के अध्ययन और विश्लेषण को प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर चयनित नगरीकरण जनित मूलभूत नागरिक सुविधाओं सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि – शोधपत्र मध्यप्रदेश राज्य की नगरीकरण की प्रवृति से सम्बन्धित है। इसमें नगरीकरण की प्रवृति के रूप में तेजी से बढ़ती नगरीय जनसंख्या का विश्लेषण किया गया है तथा तेजी से बढ़ती नगरीय जनसख्या के कारण नगरों में उत्पन्न होने वाली मूलभूत सुविधाओं का विश्लेषण किया गया है। इन मूलभूत सुविधाओं के रूप में चार समस्याओं का चयन किया गया है – (1) ठोस कचरा प्रबन्धन (2) जल आपूर्ति (3) जलभराव तथा (4) महानगरीय यातायात व्यवस्था। इन चयनित चार समस्याओं के सम्बन्ध में विश्लेषण हेतु राज्य के दो नगरों ग्वालियर तथा इन्दौर का चयन किया गया है। इन चयनित दो नगरों से चयनित समस्याओं का विश्लेषण करने हेतु दोनों नगरों की नगर पालिकाओं द्वारा किये गये कार्यों की प्रगति का विश्लेषण किया गया है। यह विश्लेषण वर्ष 2002-03 से 2011-12 तक दस वर्ष की अवधि से सम्बन्धित है। जिससे नगरीकरण की प्रवृति का विश्लेषण तथा चयनित समस्याओं के समाधान की प्रगति का विश्लेषण द्वितीय समंकों पर आधारित है जबकि चयनित समस्याओं का विश्लेषण प्राथमिक समंकों पर आधारित है।

इस प्रकार शोध कार्य में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों के आधार पर मध्य प्रदेश राज्य में नगरीकरण एवं उससे उत्पन्न होने वाली मूलभूत समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर इन समस्याओं के समाधान हेतु नीतिगत सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन – कुछ प्रमुख पूर्ववर्ती शोध कार्यों का विवरण इस प्रकार है। **चेतन वैध (2009)** ने अपने वार्किंग पेपर क्र. 04/2009 डी.ई.ए. आर्थिक मामले विभाग, भारत सरकार, वित्त मंत्रालय, **'अरबन इश्यू, रिफार्म एण्ड वे फारवर्ड इन इण्डिया'** में भारत में नगरीकरण की समस्या का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। इसके अन्तर्गत उन्होंने नगरों की प्रमुख समस्याओं का विश्लेषण करने के साथ-साथ उनके समाधान के सुझाव भी प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने स्थानीय निकायों में क्षमता निर्माण, कार्य प्रणाली में सुधार समन्वित नगरीय यातायात प्रणाली, नगरीय संस्थाओं का सशक्तीकरण तथा उनकी निश्चित भूमिका निर्धारित करने का सुझाव दिया है। इसके साथ स्थानीय नगरीय संस्थाओं में **द्वितीय पीढ़ी के सुधारों** के अन्तर्गत **संस्थाओं का नियमन, वित्त के नवीन स्रोतों की खोज,** सार्वजनिक एवं निजी भागीदारी एवं पर्यावरण संरक्षण के उपाय सुनिश्चित करने का सुझाव दिया है। संस्थाओं में कुशलता लाने तथा क्षमता निर्माण हेतु आपने स्थानीय राज्य स्तर तथा राष्ट्रीय स्तर पर समन्वय बनाने तथा संवैधानिक एवं प्रशासनिक सुधारों की आवश्यकता पर बल दिया है। शोध से संबंधित साहित्य की दृष्टि से **श्री आर.बी. भगत (2011)** का विश्लेषण **इमरजिंग पैटर्न ऑफ अर्बनाईजेशन इन इण्डिया** इकनामिक एण्ड

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अध्ययनशाला, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

पॉलिटिकल वीकली अगस्त 20,2011, Vol.XLUI 1 to 34, अत्यन्त महत्वपूर्ण है।इस सम्बंध में **ए.एस. कादी बी.आई. हालिंगली तथा पी. 'विशंकर (2012)** इन्टरनेशनल जरनल ऑफ साईन्स एण्ड नेचर, में **'प्रोबलम्स ऑफ अर्वनाईजेशन इनडवलपिंग कन्ट्रीज ए केस स्टडी ऑफ इण्डिया'** में बताया कि 1951 में 17: की दर से नगरीकरण हो रहा था। 2001 में नगरीकरण की दर बढ़कर 28: हो गई है। 2030 में यह बढ़कर 41: होने की संभावना है। जिसके फलस्वरूप **आवास, जल निकास, जल आपूर्ति तथा नगरीय यातायात** की समस्या पैदा हो रही है।

इस संबंध में **विनोद कुमार भापो (2010)** का '**इम्पेक्ट एसेसमेन्ट ऑफ प्रोजेक्ट उत्थान इन भोपाल, एन. राय एवं ए.सिंह (2011)** की पुस्तक **'न्यू डायमेन्सन्स ऑफ अरबन मैनेजमेंट इन इण्डिया, एम.ए. मेगरी (2002) का यप्रोसेज ऑफ अर्वनाईजेशन ए. स्टेटिस्टिकल एनालिसिस , मुकेश कपूर (2002) का विजन 2020 ट्रान्सपोर्ट,** इत्यादि भी उल्लेखनीय है।

मध्य प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति – नगरीकरण विकास का सूचक होने के साथ-साथ विकास के लिये चुनौती भी है। मध्यप्रदेश विशाल और तीव्र गति से बढ़ती नगरीय जनसंख्या वाला प्रदेश है। नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर प्रदेश की कुल 7,25,17,565 जनसंख्या में से 2,00,59,666 जनसंख्या प्रदेश के विभिन्न नगरों में निवास करती है, जो कुल प्रादेशिक जनसंख्या का 27.6 प्रतिशत है। प्रदेश में एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले कुल 33 नगर है। प्रदेश में चार महानगरों की जनसंख्या 10 लाख से अधिक है। इन्दौर नगर की जनसंख्या 21,67,447 भोपाल नगर की जनसंख्या 18,83,381 जबलपुर नगर की जनसंख्या 12,67,564 तथा ग्वालियर नगर की जनसंख्या 11,01,981 है। प्रदेश की यह नगरीकरण की प्रवृति एक ओर आर्थिक विकास की प्रवृति सूचित करती है तो वहीं दूसरी ओर आर्थिक विकास के लिये चुनौतियां उत्पन्न करती है।

विगत वर्षो में प्रदेश में तीव्र नगरीकरण की प्रवृति परिलक्षित हुई है। प्रदेश की नगरीय जनसंख्या में निरन्तर तीव्रगति से वृद्धि हो रही है। नगरों की संख्या और नगरीय जनसंख्या दोनों ही दृष्टियों से प्रदेश में वृद्धि की प्रवृति परिलक्षित हो रही है। ऐतिहासिक दृष्टि से तथा समकालीन दृष्टि से प्रदेश में निरन्तर नगरीकरण की प्रक्रिया जारी है। 1901 में प्रदेश में 97 नगर थे, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् बढ़कर 167 हो गये। 1971 में प्रदेश में नगरों की संख्या 190 थी। इसके पश्चात् निरन्तर वृद्धि की प्रवृति रही। 1981 प्रदेश में नगरों की संख्या 253 हो गई और नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 1901 को 10.49 की तुलना में बढ़कर 22.34 हो गया। 2001 में प्रदेश में नगरों की संख्या बढ़कर 368 हो गई और नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 26.67 हो गया। प्रदेश में वर्तमान में (2011) की जनगणना के अनुसार) 476 नगर है और 27.6 प्रतिशत जनसंख्या प्रदेश के नगरों में निवास करती है। **(तालिका क्र. 1)** **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

शोध में चयनित ग्वालियर एवं इन्दौर नगरों में नगरीकरण की प्रवृति प्रादेशिक नगरीकरण की प्रवृति से बहुत अधिक तीव्र है। दोनों नगरों में नगरीय जनसंख्या का अनुपात भी प्रादेशिक औसत अनुपात से बहुत अधिक है।

ग्वालियर-इन्दौर महानगरों में नगरीकरण की प्रवृति – विचाराधीन शोध के अन्तर्गत मध्यप्रदेश में नगरीकरण की समस्याओं का अध्ययन करने हेतु प्रदेश के दो जिलों – ग्वालियर तथा इन्दौर का अध्ययन किया गया है। ग्वलियर तथा इन्दौर मध्य प्रदेश राज्य को दो अत्यन्त महत्वपूर्ण जिले हैं। ग्वालियर जिला औद्योगिक विकास के साथ-साथ सेवा क्षेत्र (शिक्षा) में अधिक विकसित जिला है जबकि इन्दौर जिला सेवा क्षेत्र (शिक्षा) के साथ-साथ औद्योगिक विकास की दृष्टि से विकसित जिला है। यही कारण है कि ग्वालियर जिले की अपेक्षा इन्दौर जिले में कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का अनुपात अधिक है। ग्वालियर जिले की कुल जनसंख्या 20,32,036 है। इसमें 62.69 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय जनसंख्या है। ग्वालियर महानगर की जनसंख्या 10,90,327 है जो जिले की कुल जनसंख्या का 53.66 प्रतिशत है तथा जिले की कुल नगरीय जनसंख्या का 85.6 प्रतिशत है अर्थात् जिले की कुल जनसंख्या का 53.66 प्रतिशत भाग ग्वालियर नगर निगम की सीमा में निवास करता है और ग्वालियर जिले की कुल नगरीय जनसंख्या का 85.6 प्रतिशत भाग ग्वालियर नगर निगम सीमा में निवास करता है। **(तालिका क्र. 2)** **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

इस प्रकार, जिले की 53.6 प्रतिशत जनसंख्या को मूलभूत नागरिक सुविधायें उपलब्ध कराने का उत्तरदायित्व ग्वालियर नगर निगम पर है और जिले की 85.6 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या को मूलभूत सुविधायें उपलब्ध कराने का दायित्व ग्वालियर नगर निगम का है। जो कि ग्वालियर नगर निगम के लिये बहुत बड़ी चुनौती है। लगभग 11 लाख लोगों को मूलभूत सुविधायें उपलब्ध कराना बहुत कठिन कार्य है।

इसी प्रकार, शोध क्षेत्र के दूसरे जिले इन्दौर की स्थिति है। इन्दौर जिले की कुल जनसंख्या 32,27,697 है जिसमें 74.09 नगरीय जनसंख्या है और इन्दौर नगर की जनसंख्या 19,60,631 है। इन्दौर नगर की जनसंख्या जिले की कुल जनसंख्या का 60.74 प्रतिशत है तथा जिले की कुल नगरीय जनसंख्या का 80.76 प्रतिशत है अर्थात् जिले की कुल जनसंख्या 60.74 प्रतिशत भाग इन्दौर नगर निगम सीमा में निवास करता है और जिले की कुल नगरीय जनसंख्या का 80.76 प्रतिशत भाग इन्दौर नगर निगम सीमा में निवास करता है। (तालिका क्र. 2)

इस प्रकार, जिले की 60.74 प्रतिशत जनसंख्या को मूलभूत नागरिक सुविधायें उपलब्ध कराने का दायित्व इन्दौर नगर निगम पर है और जिले की 80.87 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या को मूलभूत नागरिक सुविधायें उपलब्ध कराने का दायित्व इन्दौर नगर निगम का है। यह इन्दौर नगर निगम के लिये बहुत बड़ी चुनौती है। 19 लाख से अधिक लोगों को मूलभूत नागरिक सुविधायें उपलब्ध कराना बहुत कठिन कार्य हैं।

विचाराधीन शोध क्षेत्र के दूसरे जिले इन्दौर के नगर निगम द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली मूलभूत नागरिक सुविधाओं में से जल आपूर्ति, ठोस कचरा प्रबन्धन, जल निकासी प्रणाली तथा महानगरीय यातायात व्यवस्था सम्बन्धी चार प्रमुख समस्याओं का अध्ययन किया गया है। शोध क्षेत्र के दोनों जिलों में से इन्दौर जिले में नगरीय अद्य:संरचना विकास हेतु केन्द्र सरकार प्रवर्तित जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय नगरीय नवीकरण मिशन लागू है जबकि ग्वालियर जिले में यह लागू नहीं है।

नगरीकरण की प्रमुख समस्यायें– नगरीकरण आर्थिक विकास का सूचक है। औद्योगिक नगरों की स्थापना आर्थिक विकास का कारण एवं परिणाम दोनों हैं। परन्तु तीव्र गति से ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या का आगमन और आकर नगरों में बसना नगरीय क्षेत्रों में मूलभूत नागरिक सुविधाओं की मांग और पूर्ति में असन्तुलन उत्पन्न करता है। अतएव नगरीकरण के फलस्वरूप नगरीय क्षेत्रों में मूलभूत नागरिक सेवाओं की तेजी से मांग बढ़ती है किन्तु मांग के अनुरूप पूर्ति न हो सकने के कारण समस्या उत्पन्न होती है। तीव्र गति से बढ़ती मूलभूत नागरिक सुविधाओं की मांग योजनाकारों तथा स्थानीय नगरीय प्रशासन के लिये अनेक प्रकार की चुनौतियां

उत्पन्न करता है। ठोस कचरा प्रबन्धन नगरीकरण की सबसे गम्भीर समस्या है। ठोस कचरा प्रबन्धन की उचित व्यवस्था न होने से गम्भीर बीमारियां उत्पन्न होती हैं जिसके परिणामस्वरूप निजी व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक बजट असन्तुलित होता है। बीमारी उत्पन्न होने से अस्वस्थ लोगों को एक ओर कार्य से अवकाश लेना होता है तो दूसरी ओर कार्यक्षमता घटती है, जो उत्पादकता को घटाती है। शासन को विकास कार्यो हेतु निर्धारित बजट स्वास्थ्य सुविधाओं पर खर्च करना होता है। इस प्रकार, ठोस कचरा प्रबन्धन की समस्या निजी व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक दोनों स्तरों पर गंभीर समस्या है और इसके विकास पर दूरगामी बहुआयामी नकारात्मक प्रभाव परिलक्षित होते हैं। गंदगी फैलने से एक ओर तो बीमारियां फैलती हैं वहीं दूसरी ओर स्वास्थ्य सेवाओं की मांग बढ़ती है। सफाई की कमी से बीमारियां जन्म लेती हैं और स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता की कमी से लोग बार-बार बीमार होते हैं। इससे लोगों की कार्यक्षमता घटती है और विकास पर प्रतिकूल प्रभाव होता है। साथ ही प्रशासन का विकास व्यय इन समस्याओं का हल करने में व्यय होता है। जिसमें एक प्रमुख आवास की समस्या है। नगर निगम क्षेत्र में बसने वाली सम्पूर्ण जनसंख्या को उपयुक्त आवास उचित कीमत पर उपलब्ध कराना बहुत बड़ी समस्या है। चयनित दोनों नगरों (ग्वालियर एवं इन्दौर) में आवासीय भूमि बहुत कम एवं सीमित है। पुराने आवासों में चौड़ी सड़क, पेयजल, जल निकास एवं सीवेज प्रणाली का अभाव होने के कारण लोग नये आवासीय क्षेत्रों में जाना चाहते हैं, जहाँ उन्हें चौड़ी सड़कें, पेयजल, जल-मल निकास, अच्छे पर्यावरण, खुलेपन तथा अन्य सफाई एवं सुरक्षा जैसी सुविधायें उपलब्ध है। किन्तु भूमि सीमित होने के कारण कृषि भूमि का आवासीय भूमि में रूपान्तरण स्वयं कृषि विकास एवं खाद्य सुरक्षा के लिये बड़ी चुनौती है। साथ ही इन क्षेत्रों में आवासों की निरन्तर कीमतें बढ़ने से सामान्य नागरिक की पहुँच से बाहर होते जा रहे हैं।

नगरीकरण की एक महत्वपूर्ण समस्या पेयजल आपूर्ति की समस्या है। पेयजल आपूर्ति की समस्या के दो पक्ष हैं - एक पेयजल की आवश्यकतानुसार पर्याप्त मात्रा में आपूर्ति हो तथा दूसरा पक्ष - जो पेयजल प्रदाय किया जाय वह - स्वच्छ हो जिससे उसका स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव न हो। अपर्याप्त पेयजल आपूर्ति भी एक समस्या है तो गंदा पेयजल बीमारियों को जन्म देकर नई समस्या उत्पन्न करता है।

नगरीय क्षेत्रों में एक बड़ी समस्या स्थानीय परिवहन सुविधाओं की होती है। स्थानीय नगरीय परिवहन सुविधा एक बहुआयामी विचार है जिसमें नगर के सभी क्षेत्रों में (i) सार्वजनिक परिवहन के साधनों की उपलब्धता (ii) समय पर उपलब्धता (iii) उचित किराये पर उपलब्धता (iv) सुरक्षा-दुर्घटना के सुरक्षा (v) महिलाओं की सुरक्षा (vi) चोरी-लूट से सुरक्षा तथा (vii) आरामदायक परिवहन के साधन। इसके साथ-साथ सड़क पार करने हेतु ओवर ब्रिज तथा अण्डर ब्रिज होना, जिससे आसानी से सड़क पार की जा सके और सड़क पार करने में दुर्घटना न हो।

नगरीकरण की अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं में नगरीय शिक्षा व्यवस्था, नगरों में विद्युत आपूर्ति की समस्या, निचली बस्तियों में जलभराव की समस्या, बरसात के समय जल निकासी की समस्या, सार्वजनिक स्थलों-सड़कों एवं पार्कों में प्रकाश एवं सफाई की समस्या कुछ ऐसी समस्यायें हैं। जिनका नगरों में रहने वाली जनसंख्या को सामना करना होता है। साथ ही स्थानीय नगरीय सरकारों का व्यय का बहुत बड़ा भाग विकास योजनाओं के स्थान पर इन समस्याओं के समाधान पर व्यय होता है। शोध क्षेत्र के चयनित ग्वालियर तथा इन्दौर नगरों की स्थानीय सरकारों को इन्हीं समस्याओं का समाधान करने की बहुत बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष - मध्य प्रदेश राज्य एवं इसके चयनित ग्वालियर एवं इन्दौर दोनों नगरों में तीव्र गति से नगरीकरण होने की प्रवृति परिलक्षित होती है। इसके कारण दोनों नगरों सहित प्रदेश में एक ओर विकास की प्रवृति देखी गई है, वहीं दूसरी ओर आवास, पेयजल, शिक्षा, स्वास्थ्य, गंदगी, जल-मल निकास, जल-भराव, सार्वजनिक सुरक्षित परिवहन, ठोस कचरा प्रबन्धन जैसी मूलभूत नागरिक सुविधाओं की समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं। जो स्थानीय नगरीय शासन के लिये गम्भीर चुनौतियां हैं। ठोस कचरा प्रबन्धन की उपयुक्त एवं पर्याप्त व्यवस्था, स्वच्छ एवं पर्याप्त पेयजल आपूर्ति, जल-मल निकास की उचित व्यवस्था, जलभराव की समस्या के समाधान हेतु उपयुक्त नालियों का प्रबन्ध करके, सर्वसुलभ, आरामदायक, समयबद्ध तथा सुरक्षित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली विकसित करके कुछ सीमा तक नगरीयकरण के उत्पन्न समस्याओं का संकट कम किया जा सकता है। इस कार्य हेतु सार्वजनिक क्षेत्र के कार्यो के साथ-साथ निजी क्षेत्र तथा जनभागीदारी की भी आवश्यकता है। दूसरी ओर नगरीकरण की तीव्रता कम करने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तथा सहायक उद्योगों को विकसित करके ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के स्थायी अवसर बढ़ाये जा सकते हैं जिससे रोजगार की खोज में ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर पलायन कुछ सीमा तक रूकने की संभावना है। इस प्रकार, मध्य प्रदेश राज्य में नगरीकरण से उत्पन्न मूलभूत नागरिक समस्याओं के समाधान हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाकर तथा नगरीय क्षेत्रों में मूलभूत नागरिक सुविधाओं को बढ़ाकर प्रयास किये जा सकते हैं।

समस्याओं के समाधान हेतु नीतिगत सुझाव - ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती जनसंख्या तथा कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसरों की निरन्तर कमी के कारण जनसंख्या का ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों की ओर पलायन नगरीकरण जनित समस्याओं को और गम्भीर बनाता है। नगरीकरण की समस्याओं के समाधान हेतु दो प्रकार से प्रयास किये जा सकते हैं - प्रथम - नगरीकरण की प्रवृति को कम करके तथा द्वितीय - नगरीय क्षेत्रों में मूलभूत नागरिक सुविधाओं का विस्तार करके।

(अ) नगरीकरण की प्रवृति पर नियंत्रण करने हेतु - ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का सृजन बहुत बड़ी आवश्यकता है। कृषि क्षेत्र को समुन्नत किये बिना ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का सृजन कठिन है। जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से कृषि क्षेत्र की रक्षा करने हेतु फसल बीमा योजना लागू करना तथा कृषि विकास हेतु कृषि आदामों जैसे सिंचाई, खाद बीज, कीटनाशक, भण्डारण, परिवहन, विपणन तथा कृषि साख की व्यवस्था करने के साथ-साथ परम्परागत कृषि के साथ-साथ उद्यानिकी फसलों, फूलों तथा जमीन के नीचे वाली कंद फसलों को खेती को अपनाना चाहिये। इससे एक ओर कृषि जोखिमें कम होगी तो इसकी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के स्थायी अवसरों का जन्म होगा। इसके फलस्वरूप ग्रामीण जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी आजीविका के लिये रूकने पर पुनर्विचार करने हेतु बाध्य होगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देकर भी ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाये जा सकते हैं। कृषि उत्पादों के सहायक उद्योग

लगाकर भी रोजगार के अवसर बढ़ाये जा सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक शिक्षा, सफाई, पर्यावरण संरक्षण, जल आपूर्ति, गोबर गैस प्लांट, सौर्य ऊर्जा कार्यक्रम तथा सड़क, भवन, तालाब, कुआ आदि के निर्माण की व्यवसायिक प्रणाली विकसित करके भी ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाये जा सकते हैं। डेयरी तथा कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, मांस उत्पादन इत्यादि द्धारा भी ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर जनित करके जनसंख्या को नगरों में जाने से रोका जा सकता है।

(ब) नगरीय क्षेत्रों में मूलभूत नागरिक सुविधाओं में वृद्धि करके – भी नगरीकरण की समस्याओं का पर्याप्त सीमा तक समाधान के प्रयास किये जा सकते हैं। इस कार्य हेतु बड़ी मात्रा में निवेश की आवश्यकता होगी। सस्ते आवास, स्वच्छ पेयजल, साफ-सफाई, जल-मल निकास की उपयुक्त प्रणाली, पर्याप्त, समयबद्ध, समय पाबंद और सुरक्षित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार कुछ ऐसे प्रमुख कार्य हैं जिन पर स्थानीय सरकारें काम करते हुये आगे बढ़कर नगरीकरण की समस्याओं के समाधान की दिशा में आगे बढ़ सकती है। परन्तु स्थानीय सरकारों के लिये एक-एक कार्य करने में बड़े-बड़े निवेश करने होंगे, योजनायें बनानी होंगी और उन्हें कुशलतापूर्वक क्रियान्वित करना होंगी तभी वांछित परिमाण प्राप्त होंगे।

मध्य प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति

तालिका क्र. 1 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

शोध क्षेत्र एवं प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति

तालिका क्र. 2 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2010-11 जिला सांख्यिकी कार्यालय जिला ग्वालियर।
2. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 2010-11 से 2011-12 तक जिला सांख्यिकीय कार्यालय जिला इन्दौर।
3. जन सम्पर्क कार्यालय, जिला ग्वालियर म0प्र0 शासन, मोतीमहल ग्वालियर।
5. Dutta, Pranati (2006) Urbanisation in India Regional and Sub-Regional Population Dynamic Population Process in Urban Areas European Conference 21-24 June- 2006.
6. Davis Kingsley (1962) : "Urbanization in India – Past and Future", in Turner, R. (ed.) India's Urban Future, University of California Press, Berkley.
7. Kundu, A. (1994) : `Pattern of Urbanisation with Special Reference to small and medium Towns in India': in Chadha, G.K. Sectoral Issues in the Indian Economy, Har-Anand Publications, New Delhi.
8. Mathur, O.P. and Thakur, S.(2004), `Indian Municipal Sector-A Study for Twelth Finance Commission', NIPFP, New Delhi, 2004.
9. Nayak, P.R. (1962) : `The Challenge of Urban Growth to Indian Local Government' in Turner (ed.) India's Urban Future, University of California Press, Berkley.
10. Vaidya, C. (2006), "Successful Municipal Resource Mobilization in Indore" in India Infrastructure Report 2006, 3-I Network, 2006.

REPORTS –

1. प्रशासकीय प्रतिवेदन 2005-06 से 2010-11 तक नगरीय प्रशासन एवं विकास विभाग, म0प्र0 शासन, भोपाल।
2. Faster, Sustainable and More Inclusive Growth, An Approach to Twelth five Year Plan', Government of India, Planning Commission, New Delhi (2011).
3. Inclusive Urban Planning in Madhya Pradesh, Urban Administration and Development Department, Govt. of M.P.
4. Madhya Pradesh, Human Development Report (2007), Infrastructure for Human Development, UNDP New Delhi.
5. Local Governance : Sixth Report (2007) Second Administrative Reforms Commission, Government of India,2007.
6. Report on India's Urban Awakening : Building Inclusive Cities, Sustaining Economic Growth, Muckinsey Global Institute, April 2010,p. 55 ibid.
7. Report on Indian Urban Infrastructure and Services, The High Powered Expert Committee (HPEC) for Estimating the Investment Requirements for Urban Infrastructure Services, Chairperson, Dr. Isher Judge Ahluwalia, Chairperson, Indian Council for Research on International Economic Relations.
8. Urban Reforms in Madhya Pradesh (2012) Urban administration and Development Department Government of Madhya Pradesh.

तालिका क्र. 1व 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

मध्य प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति

तालिका क्र. 1

वर्ष	नगरों की संख्या	कुल संख्या	नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या का %	नगरीय जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर
1901	97	12679214	1329445	10-49	-
1911	98	14249382	1172290	8-23	- 11-82
1921	99	13906774	1277021	9-18	8-93
1931	118	15326879	1565868	10-22	22-62
1941	138	17175722	2058412	11-98	31-46
1951	167	18614981	2768988	14-87	34-52
1961	171	23217910	3864520	16-64	39-57
1971	190	30016625	5576875	18-58	44-31
1981	253	38168507	8528287	22-34	52-92
1991	350	48566242	12274144	25-27	43-92
2001	368	60385118	16102510	26-67	31-19
2011	476	72597565	20059666	27-60	24-6

स्त्रोत – मध्यप्रदेश मानव संसाधन विकास रिपोर्ट 2007 एवं जनगणना 2011

तालिका क्र. 2

शोध क्षेत्र एवं प्रदेश में नगरीकरण की प्रवृति

क्षेत्र/ नगरीकरण	कुल जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या	नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत	ग्रामीण जनसंख्या	ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत	टीप
ग्वालियर	20,32,036	12,73,792	62.69	7,58,244	37.31	उच्च नगरीकरण
इन्दौर	32,27,697	24,27,709	74.09	7,99,988	25.91	अति उच्च नगरीकरण
शोध क्षेत्र	52,59,733	37,01,501	70.37	15,58,232	29.63	बहुत उच्च नगरीकरण
मध्य प्रदेश	7,25,97,565	2,00,59,666	27.63	5,25,37,899	72.37	निम्न नगरीकरण

स्त्रोत – मध्य प्रदेश मानव संसाधन विकास रिपोर्ट 2007,

****

मुरैना जिले के कृषि विकास में कृषि वित्त की भूमिका

डॉ. निशा मिश्रा *

प्रस्तावना – मुरैना मध्यप्रदेश राज्य के 51 जिलों में से एक जिला है। यह प्रदेश के उत्तार-पूर्व में स्थित है। मुरैना जिले का नाम मोर + रैना शब्दों से मिलकर बना है। जिसका आशय है जहाँ मोर बहुतायत में रहते हैं। इस जिले को भारतवर्ष के सबसे अधिक संख्या में राष्ट्रीय पक्षी मोर पाये जाने वाले स्थान के रूप में भी जाना जाता है। जिले के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 50 प्रतिशत भाग खेती योग्य है। जिसका 42.94 क्षेत्र सिंचित है। मुरैना जिले का क्षेत्रफल 4,998.78 वर्ग किलोमीटर है। इसमें सात विकासखण्ड है। 2011 के अनुसार कुल जनसंख्या 2,88,303 है। कृषि हेतु कुल बोया क्षेत्र 26,695 हजार हेक्टेयर व कुल सिंचित क्षेत्र 1,91,061 हेक्टेयर कुल सिंचित क्षेत्र का कुल बोया क्षेत्र से 71.00 प्रतिशत है। कृषि जोतों की संख्या 1,99,057 हजार है। कृषि जोतों का औसत आकार 2,76,030 हेक्टेयर है। विद्युतकृत ग्रामों की संख्या 778 है।

मुरैना कृषि प्रधान जिला है। जिसकी अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। यहाँ के कृषक कृषि की ओर विशेष ध्यान देते हैं और अपनी कृषि को आधुनिक व उन्नत तरीके से करने के लिए सरकारी बैंकों, सहकारी संस्थाओं व अन्य स्त्तरों से कृषि वित्त प्राप्त कर कृषि में लगाते हैं। मुरैना जिले में कृषि विकास हेतु सहकारी बैंक की शाखा 08 है तथा भूमि विकास बैंक 06 की शाखाएं तथा इसके अतिरिक्त वाणिज्य बैंक पृथक जो कृषि विकास हेतु ऋण प्रदान करते हैं। जिले में विभिन्न बैंकों की 82 शाखाएं हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र में मुरैना जिले के कृषि विकास में कृषि वित्त की भूमिका से संबंधित है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज एवं राष्ट्र की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण व उपयोगी है। कृषि पदार्थों का उत्पादन व वितरण दोनों ही परिस्थिति में सरकार व समाज कल्याण के बीच वित्त व्यवस्था हेतु का काम करती है। अध्ययनक्षेत्र मुरैना जिला कृषि की दृष्टि से महतवपूर्ण है क्योंकि यहाँ कोई भी बड़े व मध्यम आकार के उद्योग नहीं हैं। केवल लघु व कुटीर उद्योग ही हैं।

शोध प्रविधि – शोध प्रक्रिया में समंक शोधरूपी भवन की नींव का कार्य करते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक व द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। आवश्यकतानुसार सारणीयन व वर्गीकरण के माध्यम से समंकों को दर्शाया गया है। विभिन्न तथ्यों सूचनाओं व समंकों के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा शोध के परिणाम प्राप्त किये गये है। कृषि वित्त से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का सारणीयन करके तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

कृषि वित्त की आवश्यकता – वर्तमान समय में कृषि एक जोखिम-भरा व्यवसाय हो गया है। किसान दिन-रात मेहनत कर हल जोतने तक सीमित नहीं है वरन आज एक नियोजक, विनियोगकर्त्ता, प्रबन्धक एवं व्यापारी भी हैं। कृषि विपणन हेतु वित्त की आवश्यकता उत्पादन के लिए उचित मूल्य प्रदान करा सकता है। किसानों को बीज, रासायनिक खाद व कीटनाशक दवा, कृषियंत्रीकरण सिंचाई हेतु विद्युत उपयोग व्यय हेतु वित्तीय संसाधन जुटाने पड़ते हैं। इसके लिए वह सहकारी समितियों व बैंकों से ऋण लेता है। कृषि वित्त में अल्पकालीन, मध्यकालीन व दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता पड़ती है।

क्योंकि कृषि व्यवसाय में बचत की राशि इतनी कम होती है कि उससे वे खरीद नहीं सकते उसके लिए ऋण की आवश्यकता होती है। 'कृषि ऋण से आशय निवेश किये जाने वाले धन की उस राशि से है जो कृषि विकास एवं उत्पादकता वृद्धि में सहायक होता है।

कृषक मुख्य रूप से दो उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विभिन्न वित्तीय संस्थाओं से ऋण प्राप्त करते हैं –

1. **कृषि व्यवसाय हेतु ऋण –** कृषकों द्वारा कृषि व्यवसाय को सुचारू रूप से असंचालित करने के लिये भूमि क्रय करने सिंचाई हेतु, आधुनिक कृषि यंत्र, विद्युत व्यवस्था, कीटनाशक, बजी उर्वरक आदि क्रय करने के लिए ऋण से कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है।
2. **घरेलू उपयोग हेतु –** कृषक घरेलू उपयोग जैसे – आवास, पशुओं आदि के रहने हेतु भूमि क्रय, पशु खरीदने, शादी-व्याह, जन्मोत्सव जैसे दायित्वों व परम्पराओं को निभाने में करते हैं।

कृषि व्यवसाय को संचालित करने के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है। कृषि व्यवसाय में स्थायी लागत के लिए पूंजी अत्यधिक मात्रा में निवेश करनी होती है। ग्रामीण क्षेत्रों की 80 प्रतिशत जनसंख्या उपेक्षित सामाजिक जीवन जीते हैं। कृषि ही एकमात्र उनके जीवन का अविलम्ब है। कृषि कार्य हेतु किसान को खाद, बीज, कृषि यंत्र पशु व अन्य साधन कुंए खुदवाने मैड़ बन्दी करने, बाढ़ नियंत्रण व भू-संरक्षण के लिए नालियाँ बनवाने के लिए व अन्य उत्पादक कार्यो व हर फसल पर ऋण की आवश्यकता होती है। कर्ज लेने की प्रथा उतनी पुरानी है। जितनी भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था।

मुरैना जिले में कृषि वित्त की स्थिति – कृषि एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें प्रत्येक स्तर पर वित्त की आवश्यकता पड़ती है। परन्तु कृषि व्यवसाय की प्रकृति उद्योगों से सर्वथा भिन्न प्रकार की होने के कारण कृषि वित्त निश्चित रूप से औद्योगिक वित्त से भिन्नता रखता है। कृषि कोई एक समरूप उद्योग नहीं है। अपितु विभिन्न प्रकार की क्रियाओं से मुक्त एक प्रणाली है। मुरैना जिले में आज भी पुरानी व वैज्ञानिक तरीकों से खेती की जाती है। खेती का आकार अपेक्षाकृत काफी छोटा है तथा कुल भूमि का एक बहुत बड़ा भाग कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों का स्वामित्व है। खेतों का आकार छोटे होने के कारण उन पर आधुनिक तरीकों से वैज्ञानिक खेती नहीं की जा सकती है तथा सीमित आकार वाले खेतों में अधिक विनियोजन करने पर लाभ की आशा नहीं की जा सकती। इसी कारण ऋण प्रदान करने वाली संस्थायें कृषकों को उनके स्वामित्व वाली भूमि के अनुपात में ऋण प्रदान करते हैं। सीमांत व लघु कृषकों में सौदेबाजी की क्षमता कम होती है। इसलिए वे अपने उत्पाद का न तो पर्याप्त मूल्य ही ले पाते हैं और न ही पर्याप्त वित्त ही जुटा पाते हैं।

मुरैना जिले में अधिकांश खेती वर्षा पर निर्भर है। जैसे सूखा पड़ने व आवश्यकता से कम वर्षा होती है। उस समय हजारों हेक्टेयर भूमि बिना बोई रह जाती है। फसल न होने पर कृषक ऋण का भुगतान नहीं कर पाते हैं व ऋण प्रदान करने वाली सरकारी व सहकारी संस्थायें ऐसे कृषकों को पुन: ऋण नहीं देती तब कृषक स्थानीय साहूकारों से ऋण लेने को बाध्य हो जाते हैं।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

कृषि व्यवसाय में उत्पाद से विपणन तक कृषक को अनेकों जोखिमों से गुजरना पड़ता है। कृषि कार्य में बुवाई से लेकर विपणन तक प्रतिवर्ष मौसमी कार्यों हेतु धन की आवश्यकता होती है। आधुनिक कृषि हेतु ट्रैक्टर व अन्य कृषि उपकरणों का प्रयोग करते हैं। जिनका मूल्य अधिक होता है। इन्हें क्रय करने के लिए दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता होती है। कृषि वित्त को तीन वर्गों में विभाजित किया है।

अल्पकालीन वित्त – सामान्य तौर पर अल्पकालीन वित्त की मात्रा कम होती है तथा यह जोत के आकार तथा कृषक की आर्थिक स्थिति के साथ घटती जाती है। जिला मुरैना में सीमान्त व लघु कृषक अल्पकालीन वित्त की मांग अधिक करते हैं। अलपकालीन वित्त की मात्रा कम होने के साथ-साथ इसको खेती के मौसमी कार्यों में ही व्यय किया जाता है। सीमान्त व लघु कृषकों को कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण उन्हें अल्पकालीन वित्त का अत्यधिक महत्व है। जिला मुंरैना में सीमांत कृषकों की संख्या 12,670 है तथा लघु कृषकों की संख्या 47,337 व बड़े कृषकों की संख्या 868 है। ये ही अल्पकालीन वित्त की पूर्ति हेतु ऋण प्राप्त करते हैं।

तालिका – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर) – स्पष्ट है मात्र 3.8 सीमान्त कृषक 14.7 प्रतिशत लघुकृषक ऐसे हैं जो निजी साधनों से अल्पकालीन वित्त की पूर्ति करते हैं। 63.00 प्रतिशत सीमांत कृषक स्थानीय महाजनों से 27.8 प्रतिशत कृषक सहकारी संस्थाओं से 95.1 प्रतिशत कृषक बैंकों से 0.5 प्रतिशत रिश्तेदारों से प्राप्त करते हैं। 84.3 प्रतिशत लघु कृषक अल्पकालीन वित्त की पूर्ति हेतु ऋण लेते हैं। सहकारी समिति से 27.4 व बैंकों से 6.5 प्रतिशत लेते हैं।

मध्यकालीन ऋण – मध्यकालीन कृषि वित्त 5-10 व 15 माह तक की अवधि के लिए होता है। कृषि कार्यों में सुधार तथा उत्पादन तकनीकियों में सुधार लाने के लिए इस प्रकार के वित्त की आवश्यकता पड़ती है। भूमि सुधार, सिंचाई साधनों के विकास पशुओं को क्रय करने कुंओं एवं तालाबों का निर्माण कृषि उपकरण की खरीद आदि के लिए मध्यकालीन वित्त की मांग की जाती है। मध्यकालीन कृषि वित्त की मात्रा कार्य की प्रकृति के अनुसार घटती-बढ़ती है। कृषि वित्त की मात्रा 2,000 से 15,000 रुपये तक होती है।

तालिका – 2 (देखे अगलेपृष्ठ पर) – सारणी से स्पष्ट है। मध्यकालीन कृषि वित्त की मांग सीमान्त किसानों से कम व लघु व वृहत किसानों से अधिक की जाती है। सीमान्त किसानों में से 1.7 प्रतिशत किसान स्वयं के साधनों से मध्यकालीन कृषि वित्त की पूर्ति करते हैं। 18.2 सहकारी समितियों व 4.6 प्रतिशत बैंको से ऋण लेते हैं।

दीर्घकालीन कृषि वित्त – जिला मुंरैना में सीमान्त व लघु कृषकों द्वारा सामान्य तौर पर दीर्घकालीन वित्त की मांग नहीं की जाती है। बड़े कृषक में से कुछ ही दीर्घकालीन ऋण की मांग करते हैं। मात्र 0.1 प्रतिशत बड़े कृषक ही ऐसे हैं जो स्वयं के साधनों से इस प्रकार के वित्त की आपूर्ति कर लेते हैं।

कृषि विपणन में वित्त का योगदान :– विपणन किसी भी व्यावसायिक क्रिया का सर्वाधिक महत्वपूर्ण परन्तु जटिल अंग है। कृषि विपणन में कृषक को धन की आवश्यकता होती है। तब होती है जब फसल तैयार हो जाती है। परन्तु उस समय न तो उसके पास आवश्यकता पूरी करने हेतु धन होता है और न ही कोई आय। किन्तु कृषक ऋण के बोझ से पहले से दबा होता है। ऋण भुगतान हेतु कृष उत्पाद नीचे मूल्य पर बेचने को बाध्य हो जाता है। महाजन भू-स्वामी व अन्य ऋणदाता कृषकों पर ऋण चुकाने का दबाव डातले हैं। ब्याज की दर ऊँची होने के कारण कृषक स्वयं भी शीघ्रतिशीघ्र ऋण का भुगतान करना चाहता है। साथ ही सहकारी समिति के सचिव भी कृषकों पर दबाव डालते हैं। क्योंकि अल्प कालीन ऋण का भुगतान 30 जून तक करने हेतु (समितियों का वित्तीय वर्ष 1 जुलाई से 30 जून तक चलता है) इससे कृषकों को अपने उत्पाद कम मूल्य पर बेचने पड़ते हैं। मुरैना में कृषि वित्त का सबसे कमजोर पहलू है। कृषकों को कृषि पदार्थों का उत्पादन करने के लिये सहकारी समितियाँ व्यवसायिक बैंकों व स्थानीय महाजन द्वारा सभी प्रकार की सहायता दी जाती है।

कृषि उत्पाद व कृषि विपणन के बीच गहरी खाई को सस्ती साख सुविधा प्रदान करके सरलतापूर्वक बांटा जा सकता है। यह कार्य सहकारी समितियों तथा व्यवसायिक बैंकों को करना होगा इसके लिए बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करना होगा।

विभिन्न वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण की आपूर्ति – सहकारी संस्थाएं कृषि साख समितियों की स्थापना कृषकों की साख सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण हेतु की गई थी समितियाँ सदस्यों को अल्पकालीन व मध्यकालीन साख वितरित करती है तथा दीर्घकालीन साख भूमि विकास बैंक की शाखाओं द्वारा प्रदान किया जाता है। विगत वर्षों में इन समितियों द्वारा प्रदान किये गये ऋण का विवरण –

तालिका – 3

मुंरैना जिले में सहकारी संस्थाओं द्वारा प्रदान किया गया कृषि ऋण

वर्ष	लक्ष्य	राशि वितरण	राशि हजारों में (वितरित धनराशि का प्रतिशत)
2006-07	1,30,110	1,23,745	95.10%
2008-09	1,57,360	1,14,998	73.07%
2009-10	1,54,137	1,37,979	89.51%

स्रोत – अग्रणी बैंक मुंरैना

तालिका से स्पष्ट है सहकारी संस्थाओं द्वारा कृषित विकास हेतु वितरित धनराशि में वर्षवार वृद्धि हुई है। यह राशि किसानों को अल्पावधि, मध्यावधि व दीर्घावधि हेतु ऋण के लिए प्रदान की गई।

तालिका – 4

मुंरैना जिले में व्यवसायिक बैंकों द्वारा प्रदाय किया गया ऋण

वर्ष	लक्ष्य	राशि वितरण	राशि हजारों में (वितरित धनराशि का प्रतिशत)
2006-07	1,10,921	1,27,442	114.0%
2008-09	1,25,207	1,48,710	118.0%
2009-10	1,45,607	1,55,149	106.0%
2011-12	1,63,684	1,31,939	80.6%

स्रोत – अग्रणी बैंक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया जिला मुंरैना

तालिका से स्पष्ट है कि 2006-2007 में 1,10,921 धनराशि कृषि विकास हेतु प्रदान की गई जो 2009-10 में 1,45,607 हो गई।

तालिका – 5

मुंरैना जिले में सहकारी संस्थाओं एवं वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदाय किया गया कृषि ऋण

वर्ष	लक्ष्य	राशि वितरण	राशि हजारों में (वितरित धनराशि का प्रतिशत)
2006-07	2,41,031	2,51,187	104.21%
2008-09	2,82,567	2,63,708	93.30%
2009-10	2,99,744	2,93,128	97.70%
2011-12	3,42,084	2,91,644	85.20%

स्रोत – अग्रणी बैंक मुंरैना

तालिका से स्पष्ट है कि मुरैना जिले में वाणिज्यिक बैंक व सहकारी संस्थाओं द्वारा कृषि विकास हेतु ऋण प्रदान किया गया है। इन संस्थाओं में वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक जिला सहकारी बैंक एवं भूमि विकास बैंक सम्मिलित है। जो किसानों को प्रतिवर्ष ऋण प्रदान करती है।

तालिका क्रमांक – 6

मुरैना जिले में सहकारी बैंकों एवं वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदाय कृषि ऋण

वर्ष	सहकारी बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल ऋण	व्यावसायिक बेंकों द्वारा प्रदत्त कुल ऋण	संस्थागत स्त्रोतों से कृषि क्षेत्र को प्रदत्त कुल ऋण राशि
2006-07	1,23,745	1,27,442	2,51,187
2008-09	1,14,998	1,48,710	2,63,708
2009-10	1,37,979	1,55,149	2,93,128
2011-12	1,59,705	1,31,939	2,91,644

स्त्रोत – अग्रणी बैंक मुरैना

तालिका द्वारा स्पष्ट है कि मुरैना जिले में कृषि के विकास के लिये सहकारी बैंक व व्यावसायिक बैंकों द्वारा जो धनराशि प्रदान की गई उसमें कुछ वर्ष को छोड़कर बढ़ोत्तरी अधिक हुई मुरैना जिले में ऋण प्रदान कर किसानों को सहायता हेतु प्रयास किये गये हैं। कृषि विपणन में वित्तीय आवश्यकताओं की वृद्धि से मुरैना जिले में किसानों की स्थिति अत्यधिक दयनीय है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि मुरैना जिले में राष्ट्रीयकृत बैंक कृषि क्षेत्र को ऋण दे रही है। सहकारी साख समितियों हेतु ऋण प्रदान करती है। परन्तु फसलों के मूल्यों में गिरावट आने पर किसानों की सहायता के लिये कोई संस्था आगे नहीं आती है। किसानों को उनकी आवश्यकता के अनुसार आर्थिक सहायता दी जाये जिससे सौदेबाजी करने की शक्ति में भी वृद्धि होगी। जिससे वे बड़े व्यापारी वर्ग से मुकाबला कर सकें। वैसे आज भी किसानों को कृषि उत्पादन व खाद्य फसलों के विपणन व्यवहार में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। किसान शासकीय व सहकारी प्रयासों को न केवल अपर्याप्त कहते हैं बल्कि उनकी प्रक्रिया से भी असंतुष्ट है।

मुरैना जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में क्रय-विक्रय समितियों की स्थापना की जानी चाहिए व प्रत्येक मंडी स्तर पर किसानों की सुविधा के लिये गोदामों की व्यवस्था की जानी चाहिए। उचित मूल्य हेतु क्षेत्रीकरण व प्रमाणीकरण की व्यवस्था की जाये। यातायात व संचार संधनों को अधिक विकसित किया जाये। भंडारण व्यवस्था हेतु गोदाम उपलबध किये जायें। नापतौल की भुगतान व्यवस्था हो जिससे व्यापारी वर्ग मापों में हेरा-फेरी कर उत्पादों के विपणन में किसानों का शोषण न कर सकें। अध्ययन से स्पष्ट है कि विपणन के विकास में कृषि वित्त नीति का निर्धारण अवश्य होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भामौरिया, डॉ.चतुर्भुज एवं जैन एस.सी. भारतीय अर्थव्यवस्था की समस्यायें – साहित्य भवन, आगरा
2. शर्मा हरिश्चन्द्र 'मुद्रा एवं बैंकिंग' शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा
3. मिश्रा एवं पुरी – भारतीय अर्थव्यवस्था
4. सक्सैना डॉ.एम.पी. – मध्यप्रदेश में सहकारिता आभा प्रकाशन शिवाजीनगर, भोपाल
5. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, योजना एवं सांख्यिकीय कार्यालय मुरैना वर्ष 2007, 2008, 2009, 2010, 2011
6. दास-हरसन, कृषि अर्थशास्त्र रामा पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
7. उप संचालक कृषि जिला मुरैना

तालिका – 1

मुरैना जिले में अल्पकालीन कृषि वित्त की मांग आपूर्ति

क्र.	कृषक	ऋण की मात्रा	अल्पकालीन वित्त आपूर्ति ऋण प्राप्त करने (प्रतिशत)					योग	कुलयोग
			निजी संस्थाए	सहकारी समितियां	बैंक	रिश्तेदार	महाजनों		
1.	सीमान्त कृषक	500-1500	3.8	27.6	5.1	0.5	63.0	96.4	100
2.	लघु कृषक	700-2000	14.7	27.4	6.5	2.0	49.6	84.3	100
3.	बड़े कृषक	1000-10000	73.2	19.6	5.3	2.3	1.6	27.8	100

स्त्रोत – सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका – 2

मुरैना जिले में कृषकों के विभिन्न वर्गों द्वारा मध्यकालीन कृषि वित्त की मांग व आपूर्ति

क्र.	वर्ग	निजी साधनों	मध्यकालीन कृषि वित्त की आपूर्ति ऋण लेकर (प्रतिशत)				कुल	ऋण की मांग करने वाले
			सहकारी समिति	बैंक से	रिश्तेदार	महाजनों द्वारा		
1.	सीमान्त कृषक	1.7	7.5	2.5	-	-	10.1	88.3
2.	लघु कृषक	8.3	18.2	4.6	0.2	1.3	24.2	67.6
3.	बड़े कृषक	60.0	31.4	8.6	0.2	0.2	41.2	91.0

स्त्रोत – सर्वेक्षण के आधार पर

****

प्राकृतिक आपदा - भूकंप

डॉ. सुनीता बाथरे *

प्रस्तावना - पृथ्वी तल पर अनेक प्रकार के प्राकृतिक उपद्रव हुआ करते हैं। कभी बिजली चमकती हैं, कभी बादल गरजते हैं, कभी तूफान आता है, कभी नदियों में बाढ़ आ जाती हैं, कभी ज्वालामुखी से भयंकर अग्निवर्षा होती है। अधिकांश अवसरों पर मनुष्य अपनी रक्षा कर लेता है, पर भूकंप अचानक आ जाता व प्रभाव महानाशक होता है। इसे भूकंप या भू-डोल भी कहते हैं संधि विग्रह करे तो यह भू+कंप शब्द से बना जिसका अर्थ पृथ्वी का हिलना। कांपना भी कहते है कभी कभी पृथ्वी झूले की तरह झूलने भी लगती हैं। सैकड़ों मकान गिर पड़ते हैं, अनगिनत व्यक्ति काल के मुंह में चले जाते हैं, पृथ्वी में बड़ी बड़ी दरारें हो जाती हैं, नदियां अपना मार्ग बदल देती है, समुद्र का पानी ऊपर उछलने लगता हैं, नये टापू निकल आते हैं, जल की जगह स्थल और स्थल की जगह जल क्षेत्र की उत्पत्ति हो जाती है। भूकंप क्षण भर में महाप्रलय का दृश्य उपस्थित कर देता।

भूगर्भीय हलचलों के कारण भू-पटल और उसकी शैलों में खिंचाव व तनाव से भूकंप आते हैं। अरस्तु का कहना -'जब पृथ्वी के अंदर की वायु बाहर निकलने का प्रयास करती हैं तो भूकंप आते हैं।' भू-गर्भ शास्त्री राबर्ट मैलेट ने कहा कि- 'भू-गर्भ में जब उठेग के किसी एक अथवा अधिक अधिक केन्द्रों का ऊपर-नीचे, अगल-बगल या किसी ओर को आकुंचक अथवा प्रसारक तरंगें पृथ्वी की परिधि के किसी अंश में उठती है तब यदि वह अंश स्थल हुआ तो उसमें भूकंप आता है और यदि वह जल हुआ तो उसमें भारी लहरें उठती हैं।

भूकंप भूपटल के वे कंपन है जो ज्ञात या अज्ञात, बाह्य अथवा आंतरिक कारणों से पृथ्वी के धरातल में उत्पन्न होते हैं।

धार्मिक व प्रारंभिक कथाओं, में भूकंप को देवता 'लोकी' के संघर्ष के रूप में बताया गया, उनकी हिंसक प्रवृत्ति थी। शरारत और संघर्ष के देवता लौकी का सौंदर्य व प्रकाश के देवता बल्दर से युद्ध हुआ उसमें लौकी ने बल्दर की हत्या कर दी उसे दंडित करने के लिए गुफा में बंद कर दिया व सर के ऊपर जहरीला सांप रख दिया गया जिससे विष टपक रहा था लौकी की पत्नी उनके पास कटोरा लेकर खड़ी हो गयी व जहर एकत्र करने लगी जैसे ही वह विष को धरती पर डालती वह उसके चेहरे पर पड़ता धरती कांपती वा भूकंप की स्थिति, उत्पन्न होती।

प्रारंभ में भूकंप को लोग देवी प्रकोप मानते थे मान्यता थी कि जब पृथ्वी पर पाप बढ़ जाता है तो पापों के भार से पृथ्वी हिल उठती हैं। बाद में यह विश्वास हो गया कि कोई जानवर पृथ्वी को उठाये हुआ है। और उसके हिलने से पृथ्वी में कंपन होता है। भारत में लोगों का यह विश्वास था कि पृथ्वी शेषनाग पर टिकी है जब वह हिलता तो पृथ्वी भी हिलती है। तुर्की, बलगेरिया, बोर्नियो तथा वाली द्वीप में लोग समझते थे कि पृथ्वी एक भैंसे के सींग पर टिकी हुई है। जब भैंसा पृथ्वी को एक सींग से दूसरे सींग पर बदलता तो भूकंप आता। उत्तरी अमेरिका में कछुए, ईरान में केकड़े, तिब्बत में मेढ़क व सिलेवीज द्वीप में सुअर पर पृथ्वी स्थित मानी गयी जिनके हिलने से भूकंप होता है।

अभिलेखों से पता चलता है कि ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहां भूकंप नहीं आया हो। भूकंप का क्षेत्र दो वृत्ताकार कटिबंध में बंटा है एक न्यूजीलैंड के निकट दक्षिण प्रशांत महासागर से उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ता हुआ चीन के पूर्वी भाग में आता है। फिर यह उत्तर-पूर्व की ओर मुड़कर बेरिंग मुहाने को पारकर दक्षिण अमेरिका के दक्षिण पश्चिम से होता हुआ पश्चिमी पर्वत तक पहुंचता है। दूसरा भूकंप प्रदेश पहली की ही शाखा है ईस्ट इंडिज द्वीप समूह से होकर बंगाल की खाड़ी, वर्मा, हिमालय, तिब्बत व आल्स पर्वत से होता हुआ दक्षिण-पश्चिम घूमकर एटलांटिक महासागर पारकर पश्चिमी द्वीप समूह वेस्टइंडीज होकर मैक्सिको में पहले वाले भूकंप प्रदेश में मिल जाता है। पहले भूकंप क्षेत्र को प्रशांत परिधि पेटी कहते हैं इसमें 68 प्रतिशत भूकंप आते व दूसरे को रूप सागरीय पेटी कहते हैं इसमें 21 प्रतिशत भूकंप आते हैं। इसके अलावा चीन, मंचूरिया, मध्य अफ्रीका द्वीप भूकंप के प्रमुख केन्द्र हैं। समुद्र में हिंद महासागर, अटलांटिक महासागर व आर्कटिक महासागर भूकंप के केन्द्र हैं।

16 वीं - 17 वीं शताब्दी में ये मत था कि पृथ्वी के अंदर रासायनिक कारणों से गैसों के विस्फोट से भूकंप आते हैं। 18 वीं शताब्दी में पृथ्वी के अंदर गुफाओं के अचानक गिर पड़ने से भूकंप आते हैं। 1874 में वैज्ञानिक एडवर्ड जुस ने कहा - भूकंप भू परपटी के खंडन या फिसलने से होता है। प्रसिद्ध अमेरिकी भू-गर्भवित्ताा डा. रीड ने भूगर्भ की चट्टानों के अध्ययन के आधार पर मत प्रकट किया कि भूकंप की क्रिया भूमिगत शैलों के लचीलेपन पर निर्भर करती है। ये चट्टाने रबर के समान लचीली होती हैं इसलिए उनमें बढ़ने और घटने का गुण है। जब इनमें तनाव बढ़ता है तो चट्टान टूट जाती है व दो अलग-अलग खंडों में विभाजित हो जाती है तथा दरार पड़कर दोनों विपरीत दिशा में खिसक जाते हैं और संघर्ष करते हुए भूकंप का कारण बनते हैं। इसके अलावा समुद्री तटों पर ऊँची भृगुओं के गिरने तथा पर्वतीय क्षेत्रों में भू-स्खलन एवं हिम अवधाव और भूमि में बम विस्फोट आदि सामान्य कारणों से भूकंप आया करते हैं।

भूकम्प के दो प्रकार हैं - (1) कृत्रिम भूकंप (2) प्राकृतिक भूकंप।

1. कृत्रिम भूकंप - ये मानवीय प्रक्रिया के कारण उत्पन्न होते हैं। जब भारी मोटरगाड़ी गुजरती है तब आसपास के क्षेत्र में मंद कंपन होता है। जब वेग से रेल गुजरती है तो निकटवर्ती क्षेत्र हिल उठता है, कुएं खोदते समय,

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

खानों में चट्टानों को तोड़ने के लिए सुरंग लगाई जाती है वह हल्की धमक उत्पन्न होती है, बम विस्फोट में भी कंपन होता है इसके उदाहरण ये भूकंप हल्के होते हैं तथा इनका मानव पर प्रभाव नहीं होता।

2. प्राकृतिक भूकंप – प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न भूकंप इस श्रेणी में आते हैं –

ज्वालामुखी भूकंप – ये भूकंप ज्वालामुखी उद्गार के पूर्व साथ-साथ और बाद में भी आते रहते, किंतु ज्वालामुखी के शांत हो जाने के बाद भूकंप का आना बंद हो जाता है। जब ज्वालामुखी आता है तब भू-गर्भ में लावा, वाष्प, गैस व अन्य पदार्थ बड़ी तीव्रता से ऊपर उठते इनके उद्वेग से भूमि में कंपन होता व कभी-कभी भयंकर विस्फोट होता है।

विवर्तनिक भूकंप – वे भूकंप हो पृथ्वी की आकस्मिक हलचलों के कारण उत्पन्न होते हैं उन्हें विर्वतनिक भूकंप कहते हैं। ये भूकंप भू-पटल के नीचे 5 से 22 किलोमीटर की गहराई पर उत्पन्न होते हैं। भू-गर्भ में आकस्मिक हलचल होती है जिससे दरारें उत्पन्न होती हैं तथा भूमि के अंदर प्रतिघात व भूकंप पैदा हो जाता है। 15 अगस्त 1950 को असम में जो भूकंप आया वह इसका उदाहरण है। ये भूकंप बड़े शक्तिशाली व विनाश्का होते हैं।

संतुलनमूलक भूकंप – यह भूकंप किसी कारणवश भू-पटल की चट्टानों में संतुलन के बिगड़ जाने के प्रभाव से होता है। 1949 में हिन्दुकोह में आया भूकंप संतुलनमूलक भूकंप था।

पातालीय भूकंप – ये भूकंप प्राय: उत्पन्न नहीं होते इनका उद्गम 250 से 680 किलोमीटर की गहराई पर हाता है इनके पीछे सैद्धांतिक कारण जैसे – रासायनिक विस्फोट, खनिजों में आण्विक परिवर्तन है। गुटनवर्ग व रिचटर ने भूकंप को प्रघात की गहराई के आधार पर विभक्त किया है –

1. **साधारण भूकंप –** जिनका प्रघात 30 मील या उससे कम गहराई पर उत्पन्न होता है, उन्हें साधारण भूकंप कहा जाता है।
2. **मध्यम भूकंप –** जब प्रघात 45 से 160 मील के बीच उत्पन्न होता है उन्हें मध्यम भूकंप कहते हैं।
3. **गहरे भूकंप –** जब प्रघात की गहराई 150 से 450 मील के बीच होती है तो उसे गहरे भूकंप कहा जाता है।

18वीं शताब्दी में ज्वालामुखी को भूकंप का कारण समझा जाता था लेकिन खोज से ज्ञात हुआ, ज्वालामुखी से इन भूकंप का कोई संबंध नहीं है। हिमालय में कोई भी ज्वालामुखी नहीं है। पिछले 100 वर्षो से अनेक भूकंप आए हैं। अति सूक्ष्म अध्ययन से पता चला कि ज्वालामुखी का भूकंप पर प्रभाव अल्प क्षेत्र में होता है। भू-वैज्ञानियों के अनुसार भूकंप वर्तमान में उन्हीं पर्वतीय प्रदेशों में हैं जो पर्वत भौमिकी दृष्टि से नवर्मित हैं। वहां पर भूमि की सतह ढलवा है। जिससे पृथ्वी का स्तर अचानक बैठ जाता है। ऐसा अधिक दबाव के कारण ठोस स्तरों के फटने या एक चट्टान के दूसरी चट्टान के खिसकने से होता है। इस अस्थिरता से भूकंप आते उन्हें विर्वतनिक भूकंप कहते। भारत में आने वाले प्राय: सभी भूकंप का कारण विर्वतनिक भूकंप है। यहीं कारण नेपाल के भूकंप का है जो हिमालय की गोद में वसा है जिस पर यह नियम पूरी तरह से लागू होता है। नेपाल में यह प्लेट 10 फीट खिसकी 3 मी. आगे हो गई, काटमांडू में आने वाले इस भूकंप की गहराई 15 कि. मी. थी अधिकारिक सूत्रों के हिसाब से 8000 लोग मारे गये। 9,009 लोग घायल हुये। इस भूकंप का असर भारत के विभिन्न प्रांतों में भी पायी गई।

भारत के संदर्भ में विश्व – बैंक की रिपोर्ट (2010) ने यह अनुमान लगाया कि भारत में दूसरे स्थान पर जहां सबसे अधिक जनसंख्या है जो निचले स्थान तथा तटीय क्षेत्रों में रहती हैं। इन क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन से जुड़ी समुद्री जल स्तर के ऊपर उठने का खतरा बना रहता है। अनुमान है कि भारत में 70 प्रतिशत जनसंख्या बाढ़ के खतरे वाली जगह पर है जबकि 60 प्रतिशत भूकंप के लिए संवेदनशील इलाके में रहती है जिसकी वजह से भारत को विश्व में अत्याधिक आपदा संभावित क्षेत्र माना जाता है। रुड़की में 7.8 स्तर के भूकंप अवरोधी मकान बनाये जाने कि कार्यवाही कि जा रही व यह देखने का प्रयास किया जा रहा कि वह भूकंप के कितने दाव को सहन कर सकता। भुज में जब भूकंप आया उसके पूर्व एक सेठ बाहर से आकर अंदर अपनी घर कि ओर जाने को हुये इस बीच उनके कुत्तो ने काफी भौंकना शुरू कर दिया विवश होकर वे उसे घुमाने ले गये और इस तरह वे बच गए। भूकंप के पूर्व अल्ट्रासाउंड तरंग प्रोड्यूस होती जिन्हें – कुत्ता, बिल्ली, चमगादड़ सुन लेते मानव के कर्ण इन ध्वनियों को नहीं सुन सकते।

जापान भूकंप की दृष्टि से अति संवेदनशीलता में आता यहीं कारण कि वहां मकान बनाने हेतु नई टेक्नालॉजी पर रिसर्च चल रहा प्रत्येक पिलर के नीचे वाले होती जो प्लेट के ऊपर रखी होती जब भी भूकंप आता वह उसके अनुरूप घूमकर संतुलन करती। भूकंप की भविष्यवाणी के संबंध में रूस के ताजिक विज्ञान एकादमी और भूकंप प्रतिरोधी निर्माण संस्थान के प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकलता कि यदि भूकंप के दोबारा होने का समय अभिलेखित कर लिया जाये व पिछले भूकंपों का काल पता हो तो आगामी अधिक शक्तिशाली भूकंप का वर्ष निश्चित किया जा सकता है। यदि तेज विद्युतीय संगणक उपलब्ध हो सके तो 2-3 दिन के समय में ही शक्तिशाली भूकंप के संबंध में व संबद्ध स्थान के विषय में भविष्यवाणी की जा सकती है व भावी अभिकेंद्र का अनुमान लगाया जा सकता है।

भूकंप के परिणाम – महाविनाशकारी हो जाते हैं।

1. भूमि की ऊपर मिट्टी ढह जाती है तथा दरार पड़ जाती है व गड्ढे बन जाते हैं।
2. नदियों के मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं। अभी हाल ही में नेपाल में आए भूकंप के बाद भू-स्खलन से काली गंडकी नदी का मार्ग बाधित हो जाने से बाढ़ का खतरा उत्पन्न होने से किनारे बसे ग्रामीणों को इलाका छोड़कर सुरक्षित स्थानों पर जाने को कहा गया। नदी का प्रवाह रुकने से नेपाल के साथ भारत में भी बाढ़ का खतरा बढ़ गया।
3. नदियाँ झील में बदल जाती हैं।
4. भूमि के अंदर चट्टानों की उथल-पुथल से नवीन झरने फूट पड़ते हैं। उदाहरण के तौर पर सन् 1950 में असम के भूकंप में ब्रह्मपुत्र की सहा. दीहांग व अन्य नदियों से मार्ग अवरुद्ध व अचानक बांध ढहने से बाढ़ आयी जिससे 770 कि.मी. क्षेत्र जलप्लावित हो गया।
5. भूखंड क्षेत्र ऊपर उठ जाते हैं या कहीं धंस जाते हैं।
6. मानव निर्मित स्थान – भवन, दूरसंचार, विद्युत प्रभावित।
7. जनधन की हानि। गत चार हजार वर्षों में 1 करोड़ 30 लाख व्यक्ति काल कवलित।
8. कभी-कभी भूकंप से पृथ्वी से जहरीली गैसे, वाष्प और आग की लपटें निकलती जो पशुओं और मनुष्यों के लिए घातक सिद्ध होती। 18 अप्रैल 1906 ई. के सेनफ्रान्सिस्को भूकंप के कारण विभिन्न भागों में आग लग गयी व अधिकांश नगर जलकर खाक हो गया। 1923 में जापान की सगापी खाड़ी में एक भूकंप आया उससे टोकियो व याकोहामा नगर के चारों ओर आग फैल गयी, ढाई लाख व्यक्ति अकाल ही मौत के मुंह में चले गये ढाई अरब डालर की संपत्ति नष्ट हो गयी।

9. समुद्री भूकंप आता है तब विकराल लहरें उत्पन्न हो जाती व तटों में विनाशलीला शुरु कर देती 1983 के क्रेकेटोआ ज्वालामुखी विस्फोट से समुद्र में 120 फुट ऊँची लहरें उठीं जिसके कारण जावा व सुमात्रा द्वीप में 36 हजार व्यक्ति मारे गये।

इस तरह भूकंप सबसे अधिक भीषण व विनाशकारी होता है व क्षण भर में यहाँ प्रलय का भीषण दृश्य उपस्थित कर देता है। शायर मजाज ने कहा-

रोए न अभी अहलेनजर हाल पे मेरे,
होना है अभी मुझको खराब और भी ज्यादा।

भूकंप की लहरों की गति नापने के लिए भूकंप लेख ग्राफ (सिसमोग्राफ) का उपयोग किया जाता है, व भूकंप रोधी यंत्र से पृथ्वी के अंदर तेल कहां पर स्थित है, पता लगाया जा सकता है। हमें पता होना चाहिए भूकंप आने पर क्या करना चाहिए। आपदा-प्रबंधन द्वारा जो टिप्स दिए गए-

1. हर वक्त हमें तैयार रहना चाहिए।
2. मजबूत घर भूकंप रोधी बनाये जाए।
3. सामान ऐसा हो कि आसानी से बाहर निकल सके।
4. फर्स्ट एड. घर में रखें।
5. टेबिल के नीचे बैठ जाएं। झटके आने पर एक ही जगह बैठे रहें।
6. बाहर निकलकर खुले मैदान में रहें।
7. घर की बड़ी आलमारी से दूर रहें।
8. ऊँची इमारत हो तो खिड़कियों से दूर रहे।
9. बिस्तर पर हो तो उसे कसकर पकड़ लें तकिया सिर पर रखें।
10. घर के बाहर बिल्डिंग, मकान, पेड़, बिजली के खंभों से दूर रहें।
11. यदि कार में बैठें हो तो उसी में रहें जब तक झटके बंद न हों।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. इंटरनेट
2. जानकीलाल न्याती, सी.एल. खन्ना, भूगोल पृष्ठ 88, 91 एवं 94
3. दैनिक भास्कर, दिनांक 4 जून
5. दैनिक भारती दिनांक 30 मई

****

वृद्धावस्था की समस्याओं के समाधान में - कानून की भूमिका (भारतीय समाज के संदर्भ में)

प्रो. सुजाता नाईक *

शोध सारांश –वर्तमान समय में पारिवारिक समस्याओं के अंतर्गत वृद्धजनों से संबन्धित समस्या एक अहं समस्या है। इसका कारण है कि वृद्धावस्था आयु के आधार पर बनने वाला सबसे महत्वपूर्ण वर्ग है जहां तक भारतीय समाज का प्रश्न है, यहाँ प्राचीन समय से ही वृद्धजनों को परिवार में अत्याधिक सम्मानित स्थान देने तथा वृद्धावस्था को सुरक्षित बनाने के लिये अनेक व्यवस्थाये बनायी गई। इनमें संयुक्त परिवार व्यवस्था सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था थी। आधुनिकता और विकास की इस होड़ में संयुक्त परिवार टूटने लगे है, परिवारों को टुटने से रोकना मुश्किल है और संयुक्त परिवार का पुराना ढाँचा विकसित करना भी कठिन है। परंतु युवा पीढ़ी का विकास की राह में आगे तेज गति से बढ़ना और वृद्धजनों की स्थिरता के मध्य जो एक खाई निर्मित होती जा रहा है उसे कम करने से वृद्धजनों की समस्या का समाधान हो सकता है। इसके लिये परिवार, समाज,, संगठन, सरकार और अंत में कानून में सभी की भूमिका महत्वपूर्ण है। ऐसे वृद्धाश्रमो का निर्माण, किया जना चाहिये जहां निराश्रित वृद्धजनों को आर्थिक, ओर मानसिक सहारा मिल सके। मनोरंजन, चिकित्सा, छोटे मोटे कार्य जा वृद्धो के द्वारा संपन्न किये जा सके। वहां होने चाहिय। यह बात महत्वपूर्ण है कि विश्व के दूसरे समाजों की तुलना में भारतीय परिवार आज भी कहीं अधिक संगठित और व्यवस्थित है। अत: कानून का उपयोग किये बिना ही वृद्धावस्था को एक सम्मान पूर्ण स्थान देकर हम अपने परिवार, समाज और राष्ट्र को और भी अधिक सुखद और सुंदर बना सकते है।

शब्द कुंजी वृद्धजन, जीविकोपार्जन, नगरीकरण, भौतिकवादी, व्यक्तिवादी

प्रस्तावना – वर्तमान समय में पारिवारिक समस्याओं के अंतर्गत वृद्धजनों से संबन्धित समस्या एक अहं समस्या है। इसका कारण है कि वृद्धावस्था आयु के आधार पर बनने वाला सबसे महत्वपूर्ण वर्ग है अपने संचित अनुभवो के कारण वृद्ध पीढ़ी से ही समाज के दूसरे सभी वर्गो को ऐसे दिशा निर्देश मिलते है जो किसी भी समाज के सामाजिक आर्थिक विकास के लिये आवश्यक होते हैं जहां तक भारतीय समाज का प्रश्न है, यहाँ प्राचीन समय से ही वृद्धाजनों को परिवार में अत्याधिक सम्मानित स्थान देने तथा वृद्धवस्था को सुरक्षित बनाने के लिये अनेक व्यवस्थाये बनायी गई। इनमें संयुक्त परिवार व्यवस्था सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था थी जिसमें परिवार के समस्त निर्णयों का अधिकार वृद्धो के पास रहता था। परिवार के सभी सदस्यों द्वारा वृद्धों के निर्णयो का सम्मानपूर्वक पालन किया जाता था। इस व्यवस्था ने वृद्ध पीढ़ी को आर्थिक और मानसिक सुरक्षा देने में भी उपयोगी भूमिका निभायी।

वानप्रस्थ तथा सन्यास आश्रम व्यक्ति के दायित्व इस तरह निर्धारित किये गये जिसमें वृद्धजन मानसिक तनावों से दूर रहकर समाज को अपने उपयोगी अनुभव से लाभान्वित कर सके और स्वयं भी अपना आध्यात्मिक विकास कर सके। ग्रामीण जीवन में भी ग्राम पंचायत प्रणाली विकसित की गई जिसका संचालन गांव के वृद्ध लोगों द्वारा ही किया जाता था। स्पष्ट है भारतीय समाज में प्राचीन समय से ही वृद्धजनों को सम्माननीय स्थान प्रदान करके गौरव पूर्ण संस्कृति का विकास किया है।

संयुक्त परिवारों का विघटन– प्राचीन समय में संयुक्त परिवार में एवं साथ तीन पीढ़ीयाँ एक छत के नीचे हॅसी खुशी जीवन यापन करती थी। समय के साथ-साथ उसमें ऐसे तत्व जुड़ते गये जिससे उसकी उपयोगिता कम होने लगी। व्यापक निरक्षरता और रूढ़िगत व्यवहारों के कारण संयुक्त परिवारों की सरंचना दोषपूर्ण बनने लगी और परिवार के सदस्य इसे अनुपयोगी संस्था के रूप में देखने लगे। बींसवी शताब्दी के आरंभ मे जब औद्योगिकरण और नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्धि होने लगी तो लोगो को संयुक्त परिवार छोड़कर अपना अलग परिवार बसाने के अवसर मिलना प्रारंभ हो गये। यहाँ से संयुक्त परिवारों का विघटन होने लगा। अब ज्यादा से ज्यादा बच्चे अपनी जिन्दगी को बेहतर बनाने के लिये पैतृक घरो को छोड़ रहे है।

यह विकास की एक प्रक्रिया है स्वतंत्र जीवन जीने की लालसा, आधुनिक तौर तरीकों से जीवन जीने की इच्छा, जिंदगी के बेहतर अवसरो को प्राप्त करने की लालसा, नयी जगह, स्थान की कमी के कारण वे माता पिता को साथ नही रख पाते है। यही से एकांकी परिवार का प्रारंभ एवं वृद्धजनों का एकांकी जीवन एक समस्या का रूप लेने लगता है।

वृद्धावस्था मानव विकास की एक स्वाभाविक अवस्था – वृद्धावस्था मानव विकास की एक स्वाभाविक स्थिती है। प्रत्येक बच्चा कुछ समय बाद युवा और फिर प्रौढ़ बनकर अंत में वृद्धावस्था के स्तर पर पहॅुचता है। वृद्धावस्था में एवं और व्यक्ति की शन्ति और उत्साह में बहुत कमी हो जाती है तो दूसरी ओर मानसिक रूप से वृद्ध लोग अपने आपको अकेला ओर दूसरों पर निर्भर समझने लगते है। जीविकोपार्जन में उनका योगदान कम रह जाने के कारण अधिकांश वृद्धजनों को किसी न किसी तरह के आर्थिक अभावो का भी सामना करना पड़ता है। पाश्चात्य देशों में वृद्ध माता पिता न केवल अपने बच्चो द्वारा पूरी तरह परित्यक्त होते है बल्कि बीमारी या असमर्थता की दशा में अपना ही जीवन उनके लिये बोझ बन जाता है। आज जैसे जैसे भौतिकवादी और व्यक्तिवादी मूल्यों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, हमारे समाज में भी अधिकांश लोग वृद्धजनों को परिवार मे फालतू वस्तु के रूप मे देखने लगे है। यही कारण है कि वृद्धावस्था में प्रवेश करते ही व्यक्ति तरह-तरह की चिन्ताओं से घिरने लगता है। बेन्जामिल प्लास का यह कथन सही लगता है-'वृद्धावस्था भी एक बीमारी की तरह है। यह एक ऐसी बीमारी है जो प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य रूप से लगती है तथा बहुत कम व्यक्ति ऐसे है जो इस बिमारी के

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) भारत

दुष्प्रभावों से बचे रहते है'।

वृद्धजनों की समस्याये – भारतीय समाज में सभी वृद्धों की समस्याये एक जैसी नही है। इसका कारण यह है कि विभिन्न आधारों पर वृद्धजनों की पृष्ठभूमि भिन्न भिन्न होती है। उदाहरण के लिये– वृद्ध स्त्रियों ओर वृद्ध पुरूषो की समस्याओं मे भिन्नता होती है। इसी तरह उम्र के अनुसार भी वृद्धों को अनके समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शिक्षा के आधार पर, आर्थिक आधार पर वृद्धों की समस्याये अलग–अलग होती है।

आर्थिक असुरक्षा की भावना वृद्धों में लगातार बढ़ती जाती है अधिकांश वृद्धों के पास आय का स्वतंत्र साधन नही होने से यह परिवार पर बोझ बन जाते है जिससे उनमें आर्थिक असुरक्षा की भावना अधिक होती है।

इसके अलावा स्वास्थ्य की समस्यायें होती है शारीरिक क्षमता के लगातार क्षीण होने से कार्य करने की क्षमता कम होने लगती है। मनोवैज्ञानिक असुरक्षा की भावना भी इनमें ज्यादा बढ़ने लगती है। इसी तरह अकेलेपन, पारिवारिक अपेक्षा का सामना भी इन्हें करना पडता है। कुल मिलाकर वृद्धजन अपने आपको सभी तरह से असुरक्षित महसूस करने लगते है। कई परिवारो में उन्हें प्रताड़ित व अपमानित भी किया जाता है। ये प्रताड़नाएं दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

वृद्धजनों की संख्या मे लगातार वृद्धि – पिछले कुछ वर्षो में वृद्धों की जनसंख्या लगातार बढ़ती जा रही है UNESCO के अनुसार 2005 में 60 से अधिक आयु के लोगों की जनसंख्या 590 मिलियन थी जो कि 2025 में दोगुनी होने का अनुमान है। पूरे विश्व में युवाओ की अपेक्षा वृद्धों की संख्या अधिक हो जायेगी। भारत में भी वृद्धों की जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती जा रही है। 2001 की जनगणना में लगभग 8 करोड़ व्यक्ति ऐसे पाये गये निनकी आयु 60 से 80 वर्ष के बीच थी। अनुमान है कि 2030 में यह संख्या बढ़कर 19.8 करोड़ तक पहुॅच जायेगी। एक और जहां वृद्धों की संख्या में वृद्धि हो रही है वही दूसरी और उनकी समाजिक आर्थिक, मानसिक समस्यायें भी बढ़ती जा रही है।

यही कारण है कि वृद्धों की समस्याओं की ओर समाज एंव सरकार का ध्यान आकर्षित करने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा भी समाज में वर्ष 1999 को वृद्ध लोगों के लिये अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के रूप में घोषित किया गया।

वृद्धावस्था की समस्या उत्पन्न होने के कारण – वर्तमान समय में वृद्धों की बढ़ती हुई समस्याओं के पीछे अनेक कारण है। एक तरफ युवा पीढी के रोजगार की तलाश में बाहर जाने की वजह से उनमें एवं वृद्धों की सोच में, रहन सहन में, खानपान में अंतर उत्पन्न हो जाता है ओर यह अंतर–पीढ़ी संघर्ष मे बदल जाता है। दूसरी तरफ पिछली पीढ़ी जो गांवों से आकर शहर में बस गई वह अपनी संतान को उन सभी तकलीफो से महफूज रखना चाहती है जो उसने अपनी जिंदगी में झेली थी तथा अपने अधूरे ख्वाबो को संतानों में तलाशना चाहती है। इस अंधी दौड़ में वह अपनी संतान को केवल एक उम्दा नस्ल का घोड़ा बना देती है लेकिन संस्कार नही दे सकी। वह घोड़ा जिदंगी की हर रेस जीतता गया और इतनी दूर निकल गया कि अपने माता–पिता की तस्वीर ही उसके मन में धुंधली हो गई।

हम अपने बच्चो को अमेरिकी बनाना चाहते है, अंग्रेजी शिक्षा, कमाऊॅ, नौकरी, ऊॅचा रूतबा आलिशान घर, ऐशो आराम का हर सामान लेकिन इस दौड़ मे उसे संस्कार देना भूल गये और फिर उम्मीद करते है कि वही बच्चे बड़े होकर सुबह उठकर आपको प्रणाम करें, रात मे आपके पैर दबाये, आपकी देखभाल करे। सोचने की बात है कि क्या इन बच्चो के लिये यह संभव है? अंग्रेजी शिक्षा में उन्हे अमरीकी बना दिया लेकिन हम अमरीकी नही बन जाये।

सरकार द्वारा वृद्धजनों की सुविधा के लिये किये जा रहे प्रयास – निसंदेह वृद्धजनों की स्थिती चिन्ताजनक हैं। परंतु समाज एवं सरकार सभी का ध्यान इस समस्या की ओर आकृष्ट हो चुका है। सरकार द्वारा अनेक सुविधायें वृद्धजनों को प्रदान की जा रही है –

- **वृद्धावस्था गृह –** निराश्रित वृद्धजनों के लिये ऐसे गृह बनाये गये है जिसमें वृद्ध कितनी भी अवधि तक रह सकते है।
- **वृद्धजन देख रेख केन्द्र –** ऐसे केन्द्र जिनमें वृद्धजन सुबह से शाम तक अपना समय व्यतीत कर सकते है उन्हे दोनों समय का भोजन भी दिया जाता है।
- **सचल चिकित्सकीय सेवाये –** वृद्धजनों को चिकित्सकीय सुविधाये दी जाती है।
- **गैर संस्थात्मक सेवाये –** इसके अंतर्गत वृद्धो को कानूनी परामर्श, पेंशन प्राप्त करने में सहायता, नेत्र परीक्षण, चश्मो का वितरण, कान मे लगाने के यंत्रो की सुविधा ईत्यादि सेवाये दी जाती है।
- **वृद्धवस्था पेंशन योजना–** लगभग सभी राज्यो में यह योजना आंरभ की गई है।
- **अन्नपूर्णा योजना –** इस योजना में नगरों एवं गांवों में 10 किलो अनाज दिया जाता है।
- **बैकिंग सुविधा –** सभी राष्ट्रीयकृत बैंको द्वारा 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगों को 0.75 प्रतिशत अधिक ब्याज दिया जाता है।
- **आयकर में छूट –** जिनकी आयु 65 वर्ष से अधिक है उन्हें आयकर में विशेष छूट दी जाती है।
- **रेल्वे की सुविधा –** भारतीय रेल्वे द्वारा भी 60 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धो को रेल किराये में 30 प्रतिशत छूट दी जाती है। महिलाओं के लिये यह सुविधा 50 प्रतिशत है।
- देश के डाकघरों में 2004 से वरिष्ठ नागरिक योजना प्रारंभ की गई है। इस योजना में 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगो को जमा राशि पर 9 प्रतिशत ब्याज दिया जाता है। यह अन्य लोगों से एक प्रतिशत अधिक है।

वृद्धों की सहायता हेतु कानून की भूमिका – वृद्धजनों की समस्याओं को देखते हुए सरकार द्वारा वृद्धावस्था में सम्मानजनक एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने के लिए Maintanence and welfare of perents and senior Citizens-act 2007 केन्दीय केबिनेट द्वारा यह कानून पारित किया गया है। इस कानून मे यह है कि वृद्धजनो के सामान्य जीवन व्यतीत करने की कानूनी जिम्मेदारी उनके बच्चो एवं रिश्तेदारो पर है। बच्चो को अपने माता पिता को भत्ता भी देना होगा। जो अपने माता पिता की देख रेख नही करें उन्हे सजा भी हो सकती है। अत: प्रताड़ित वृद्धजन इस कानून का सहारा ले सकते है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – यह स्पष्ट है कि भारत में वृद्धजनों की समस्याओं के समाधान के लिये समाज एंव सरकार द्वारा अनेक प्रयास किय जा रहे है। सरकार द्वारा कानून भी पारित किया गया है। परंतु फिर भी वृद्धों के साथ अभद्र व्यवहार एवं अवमानना के मामले रोज ही सामने आ रहे है। दिल्ली पुलिस के वरीष्ठ नागरिक सेल के केवल सिंह मानते है–कि वृद्ध माता पिता के लिये अपने बच्चों के खिलाफ ही शिकायत करना काफी मुश्किल होता है। जब वे अपने बच्चों के खिलाफ कानून का सहारा लेते है तो परिवार से पूरी तरह से टूट जाते है। इस तरह के मामलो में हमेशा कानून और भावनाओं के बीच द्वन्द चलता रहता है। भारत में कानून बनाने से समस्याएं हल नही होने वाली है इसके लिये समय रहते ही अपने बच्चो को मानवीय व्यवहार की सीख

देना होगी। घर के बड़े बूढ़ो को आदर सम्मान देना होगा, छोटे बड़े सभी के साथ स्नेह का व्यवहार करना होगा अन्यथा पहला मौका लगते ही वे माता पिता से छुटकारा पाना चाहेंगे। अमेरिका या शिक्षा का इसमें दोष नही है। प्यार और सम्मान पर अधारित नये परिवार बनाने होंगे।

आधुनिकता और विकास की इस होड़ में संयुक्त परिवार टूटने लगे है, परिवारों को टुटने से रोकना मुश्किल है और संयुक्त परिवार का पुराना ढाँचा विकसित करना भी कठिन है। परंतु युवा पीढ़ी का विकास की राह मे आगे तेज गति से बढ़ना और वृद्धजनों की स्थिरता के मध्य जो एक खाई निर्मित होती जा रहा है उसे कम करने से वृद्धजनों की समस्या का समाधान हो सकता है। इसके लिये परिवार, समाज, संगठन, सरकार और अंत में कानून सभी की भूमिका महत्वपूर्ण है। वृद्धजनों को आर्थिक सामाजिक और मानसिक संरक्षण देना अत्यंत जरूरी है। हेलपेज इण्डिया के मैथ्थु चैरियन–**'तीस साल पहले जब हेपेज इण्डिया ने वृद्धा आश्रम तैयार किये थे तब लोगो ने कहा, ये तो पश्चिमी तरीका है। लेकिन आज हर कोई मान रहा है ये पश्चिमी तरीका नही, हकीकत है।'**

ऐसे वृद्धाश्रमो का निर्माण, किया जाना चाहिये जहां निराश्रित वृद्धजनों को आर्थिक, ओर मानसिक सहारा मिल सके। मनोरंजन, चिकित्सा, छोटे मोटे कार्य जो वृद्धों के द्वारा संपन्न किये जा सके। वहां होने चाहिय। यह बात महत्वपूर्ण है कि विश्व के दूसरे समाजों की तुलना मे भारतीय परिवार आज भी कहीं अधिक संगठित और व्यवस्थित है। अतः कानून का उपयोग किये बिना ही वृद्धावस्था को एक सम्मान पूर्ण स्थान देकर हम अपने परिवार, समाज और राष्ट्र को और भी अधिक सुखद और सुंदर बना सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मंजुलता भारतीय सामाजिक समस्याये अर्जुन पब्लिशिंग हाउस 2012
2. डॉ.संजव महाजन सामाजिक समस्याय अर्जुन पब्लिशिंग हाउस 2012
3. रामचंद्र तिवारी Current Issues in social Sciences कॉमल वेल्थपब्लिेशेर्स 2008 दिल्ली
4. बसंतीलाल बावेलपारिवारिक विधि दि लायर्स होम इंदौर
5. जी.के.अग्रवाल सामाजिक समस्याएं एस.बी.पी.डी.पब्लिशिंग हाउस 2010
6. भारत के समाजकार्य भारत के समाजकार्य कैलाश पुस्तक सदर
7. नई दुनिया 24 नवम्बर 2014

****

पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास (एक अध्ययन)

डॉ. प्रीति जोशी *

शोध सारांश –भारत एक गॉव प्रधान देश है। अत: ग्रामीण विकास हेतु शासन व्दारा निर्वाचित सदस्यों व्दारा चलाई जाने वाली एक ऐसी त्रिस्तरीय व्यवस्था है जिसे हम पंचायत राज के नाम से जानते है और पंचायती राज का मुख्य उद्धेश्य गॉवो का सर्वागिण विकास करना है। ताकि ग्रामीण जन शहर की मुख्य धारा से जुड सके। ग्राम पंचायत रामराज्य का आदर्श है जिनके ग्रामीण विकास कार्य कठिन है, प्रस्तुत शोध आलेख में पंचायती राज की सफलता और कमियों का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना – पंचायती राज निर्वाचित सदस्यों व्दारा चलाई जाने वाली त्रिस्तरीय व्यवस्था है, जो ग्राम, तालुका एवं जिले में विभक्त है, जिसमें अधिकाधिक जन सहयोग एवं विशेषत: ग्रामीण विकास से संबंद्ध कार्यक्रम की व्यवस्था की जाती है। भारत एक ग्रामीण प्रधान देश है। गॉवों में सत्ता के विकेन्द्रीकरण का व्यावहारिक चित्र ग्राम पंचायतों व्दारा प्राप्त होता है। वैदिक काल से लेकर, बौद्ध युग, मुस्लिम युग में भारत में पंचायतों का महत्व था। उनको उनका कार्य कर वसुली था। लेकिन ब्रिटिश युग में भारतीय पंचायत व्यवस्था को क्षति पहुंची। अत: 1901 में विकेन्द्रीकरण आयोग ने पंचायतों को पुनर्जीवित करने की अनुशंसा की। भारत में पंचायती राज की स्थापना स्वतंत्रता के बाद हुई ग्रामीण शासन एवं आर्थिक विकास में पंचायतों की भूमिका के महत्व को 1950 के दशक से ही स्वीकार किया जाने लगा था। वर्तमान संदर्भ में समाज कल्याण एवं समावेशन कार्यक्रमों पर खर्च में वृद्धि को देखते हुए पंचायतों को सुदृढ़ करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है, क्योंकि इन कार्यक्रमों का लाभ लोगों तक पहुंचाना, स्थानीय संस्थानों के प्रबंधन में सुधार लाने एवं जवाबदेही बढाने में पंचायतों की अहम भूमिका है।

पंचायती राज को सुदृढ़ करने के लिए राजीव गांधी पंचायत सशक्तिकरण अभियान (RGPSA) केन्द्र को 17 मार्च 2013 को स्वीकृत किया गया है। जिसका मुख्य उद्धेश्य है – पंचायती एवं ग्राम सभाओं की क्षमता में वृद्धि, पंचायतों को लोक तांत्रिक निर्णय प्रक्रिया की दृष्टि से सक्षम बनाना और उनमें लोगों की भागीदारी को प्रोत्साहित करना है। जिन क्षेत्रारें में पंचायतें नहीं है, वहॉ लोकतांत्रिक स्थानीय स्वप्रशासन का निर्माण कर सुदृढ़ क़रना।

भारत की 68 प्रतिशत आबादी गॉवों में रही हैं। पंचायती राज की अवधारण धरातल पवर उतरने के बाद ग्रामीण विकास को गति मिली है।

पंचायतों में हर वर्ग की जिम्मेदारी बढ़ी है यहां तक कि महिलाओं को भी पंचायती राज में नेतृत्व करने का मौका मिला है। वे विकास को नया आयाम दे रही है। पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था एल्विन कमिटी व्दारा अनुशंसित है, आत्मनिर्भर ग्रामीण व्यवस्था ब्रिटिश पूर्व ग्रामीण समाज की विशेषता थी।

1. **साहित्य समालोचना –** (Reviewew of Liternature) श्री रजनी कोठारी –राष्ट्रीय नेतृत्व का एक दूरदर्शिता पूर्ण कार्य था, पंचायती राज की स्थापना जवाहर लाल नेहरू – गॉवो में लोगों को अधिकार सौपना चाहिए, उनको काम करने दो, चाहे वे हजारों गलतियॉ करें। इससे घबराने की जरूरत नहीं है। पंचायतों को अधिकार दो।

2. Rajni Singh is his scholarly article “Panchayati Raj : Gross roots of democracy” argue that to Gandhi, Panchayat Symbolise the power of people.

N. Shivaram Krishnan in his paper “Mahatma Gandhi Village Panchayats to come to form a Strong broad based Network of republics spread all over the country, Peacefully Cooperating with one another.

N. Narayan Swami his article “Mahatma Vision of Panchayat Raj system” argue that if Panchayati Raj in given a fair trail it is bound to create new Political ethos the effects functioning of PR/s will given. “Voice to Voiceless.

I.S. Mathur in his article”
Revolution for Decentralisation” Argues that Decentralisation as conceived by Gandhiji has the basic philosophy of given strength to small groups to be able to resist exploitation and unfairness.

Anil Dutta Mishra 2002. Panchayat Raj will give Voice to voiceless Power to Power less, People irrespective of caste creed, sex and religion living in six lakhs villages in India, Pris in India can create an history for the generation to come.

उद्धेश्य –

1. पंचायत राज ग्रामीण विकास में वृद्धि हुई है ?
2. गॉवो में शिक्षा स्वास्थ्य शुद्ध पेयजल शौचालय निर्माण अधोंसंरचना का निर्माण, ग्राम पंचायत की प्राथमिकता में होना चाहिए।
3. शासन व्दारा पंचायतों के कार्यो में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध आलेख व्दितियक स्त्रोतो पर आधारित है।

व्याख्या – भारत गांवो का देश है साथ ही भारत में पंचायतों का इतिहास प्राचीन है। महात्मा गांधी ग्राम पंचायतों की रामराज्य का आदर्श मानते थे। ग्राम पंचायत के बिना ग्रामीण जीवन का पुर्ननिर्माण का कार्य कठिन है। अत: ग्रामीण भारत के विकास के लिये पंचायती राज ही राष्ट्रीय जीवन की रीढ है।

आजादी के बाद एवं 1993 में पूर्व तक प्रत्येक राज्य अपनी इच्छानुसार पंचायतों का गठन एवं निर्वाचन करते थे, किंतु संविधान में 73 वे संशोधन के बाद अब प्रत्येक राज्य अनिवार्य रूप से विधि अनुसार पंचायतों का गठन तथा उसके अनुसार स्थानीय शासन तंत्र की कार्यवाही को सुनिश्चित करने के लिये बाध्य है। क्योंकि लगभग चार दशक पूर्व स्थापित पंचायती राज व्यवस्था जब डगमगाने लगी, तो संपूर्ण देश में पंचायती राज संस्थानों को

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

एकरूपता प्रदान करने तथा उन्हें अधिक शक्तिशाली एवं प्रभावशाली बनाने के उद्धेश्य से केन्द्र सरकार ने एक अधिनियम 1993 (संविधान 73 वे संशोधन) पारित किया। यह अधिनियम पंचायती राज का एक नया प्रतिमान कहा जा सकता है। जिसका मुख्य उद्धेश्य था कि सत्ता की भागीदारी निचले से निचले तबके के लोगों को मिले। इस अधिनियम की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें सभी स्तरीय पंचायतों के नियमित चुनाव, अनु.जाति, जनजाति, और महिलाओं (33 प्रतिशत) में निगम सीटों का आरक्षण एवं स्थानीय निकायों की वित्तीय स्थिति को मजबूत बनाने के उपायों की व्यवस्था की गई है। 11 वीं अनुसूची द्धारा पंचायती राज को कई कार्य सौपें गये है। जिसे राज्य सरकार आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिये उचित मानती है। 11 वीं अनुसूची (अनुच्छेद 243 छ)

कृषि विकास, भूमि सुधार, संरक्षण एवं विकास लघु सिंचाई, जल प्रबंधन पशुपालन, दुग्ध पालन, कुक्कुट पालन, मत्स्य उद्योग, लघुवन उत्पाद खादी ग्राम एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण आवास, ईंधन चारा, संचार साधन, सड़क निर्माण विद्युतीकरण गैर पारस्परिक ऊर्जा स्त्रोत, गरीबी निवारण कार्यक्रम शिक्षा विकास, पुस्तकालय, बाजार मेले, स्वास्थ्य स्वच्छता, महिला एवं बाल विकास दुर्बल वर्ग कल्याण कार्य, सार्वजनिक वितरण प्रणाली इत्यादि है अर्थात् ग्राम पंचायतों का मुख्य उद्धेश्य ग्रामीण जन का सर्वागीण विकास करना है जिससे कि देश के विकास की मुख्य धारा से जुड़ सकें।

पंचायती राज का महत्व – शिक्षा व्यवस्था को दुरूस्त करना, सार्वजनिक, बाजार की व्यवस्था करना, बाजार की व्यवस्था और नियंत्रण को अपने हाथ में लेकर समस्या को दूर करना, मद्यनिषेध करना, समाज सुधार एवं मातृत्व तथा बाल कल्याण में पंचायती राज सफल हुई है। 11 वीं अनुसूची में बिन्दु गए कार्यो को पंचायतों ने अपने अपने स्तर पर करने के प्रयास कर ग्रामीण विकास में सहयोग किया है। यातायात व्यवस्था प्राकृतिक प्रकोपों में बचाव, कृषि सुधार, सिंचाई व्यवस्था, पशुनस्ल सुधार, उत्तम बीज उपलब्धता, सहकारी समितियाँ, ग्रामोद्योग वृक्षारोपण चारागाह भूमिहीन श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराना ग्रामीण नेतृत्व का विकास, शांति व्यवस्था प्रशासनिक शिक्षा, नागरिकता का ज्ञान, आपसी सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करना ये सभी कार्य पंचायतों के माध्यम से लिए जा रहे है। जिसके सकारात्मक परिणाम दिखाई दे रहें है।

राज्य शासन द्धारा ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब बच्चों को प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक पर्याप्त संसाधन जुटाए गए ही जिसका लाभ ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों को मिल रहा है, आवास योजना एक ऐसी सरकारी योजना है, जिसने गरीब बच्चों को पढाई के प्रति रूझान को बढाया है, वे शहरों में रहकर उच्च शिक्षा के साथ-साथ अन्य व्यावसायिक कोर्स भी कर पाने में सक्षम है। जिससे रोजगार की राह खुली है।

लेकिन हर सिक्के के दो पहलू होते है। अत: जहां पंचायती राज से ग्रामीण विकास को बल मिला है, वहीं कुछ ऐसी कमियॉ भी देखने को मिली है, जिससे पंचायती राज की सफलता संदेहास्पद है। निम्न कारणों से पंचायती राज व्यवस्था भी उतनी सफल नहीं हो पाई जो उद्धेश्य सरकार लेकर चली थी।

1. आपसी तनाव व संघर्ष
2. दलबंदी
3. जातिवाद
4. भ्रष्टाचार
5. प्रजातांत्रिक भावना का अभाव
6. राजनैतिक दलदल का अभाव
7. पेशेवर नेता अशिक्षा, निर्धनता कार्य का उचित रूप से वितरण नहीं किया जाना।
8. जिला पंचायती, जनपद पंचायत व ग्राम पंचायत में आपसी तालमेल का आभाव।
9. पर्याप्त वित्त व्यवस्था का अभाव।
10. शासन व जनता के बीच उचित तालमेल का अभाव।
11. साफ सुथरी अवधारणा का अभाव।
12. प्रशासनिक समस्याएॅ –

अंत में पंचायती राज व्यवस्था सरकार द्धारा बनाई गई एक ऐसी व्यवस्था है जिससे ग्रामीण विकास को बल मिला है। यह व्यवस्था समय की मांग है, भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में जहां की 68 प्रतिशत आबादी गॉवो में निवास करती है, अत: न गॉवो के लोगों का प्रतिनिधित्व करने के लिए ग्रामीण स्तर पर ही शासन को होना आवश्यक है, जिससे कि गॉवों की समस्या स्थानीय स्तर पर ही सुलझ सके। पंचायत राज व्यवस्था उसी का एक पहलू है। इसकी कुछ कमियॉ है फिर भी इसके महत्व को हम कमतर रूप से मूल्यांकन नहीं कर सकते है। ग्रामीण विकास पंचायती राज व्यवस्था से ही संभव हुआ है। राज्य शासन द्धारा ग्रामीण स्तर वपर विकास हेतु पूर्ण अधिकार पंचायती राज को सौपे गए है। जिससे वे स्वतंत्र होकर कार्य कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनिल दत्ता मिश्रा पंचायती राज मित्तल पब्लिकेशन नईदिल्ली।
2. बाबेल बसन्तीलाल, पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास योजनाएं, राजस्थान, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 2001।
3. चौधरी सी.एम., ग्रामीण विकास : एक अध्ययन, सब लाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर।
4. भटनागर एस., रूरल लोकल गर्वनमेंट इन इंडिया, लाइफ एण्ड लाईट पब्लिशर्स नईदिल्ली 1978
5. दुबे के.एन. प्लानिंग एण्ड डेवलपमेंट इन इंडिया, आशीष पब्लिशिंग हाउस नईदिल्ली-1990
6. दयाल राजेश्वर, पंचायतीराज इन इंडिया, मेट्रोपोलिटिन बुक कम्पनी प्रायवेट लिमिटेड, नईदिल्ली 1977
7. दुबे, एम.पी. एवं पेडेलिया, मुन्नी, डेमोक्रटिक डिसेन्ट्रलाइजेशन एण्ड पंचायती राज इन इंडिया, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नईदिल्ली – 2002
8. घोष, रत्ना एवं कुमार आलोक, पंचायत सिस्टम इन इंडिया, कनिष्का पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नईदिल्ली 1999.
9. कटारिया, सुरेन्द्र, ग्रामीण विकास व पंचायती राज, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स जयपुर 2003
10. NET. www.PANCHAYATIRAJ.

****

भूमण्डलीयकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

प्रो. एच. डुडवे *

प्रस्तावना – भूमण्डलीयकरण का हमारे जीवन से एक अनमोल संबंध रहा है, इस वैश्वीकरण की स्थापना को करीब 420 अरब वर्ष हो चुके है। जब सृष्टि की रचना की गई तभी से भूमण्डलीयकरण ने हमारी अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया। जब कि जुलाई 1991 को नरसिंहराव सरकार ने सिद्धांत रूप से स्वीकृत प्रदान की इस वैश्वीकरण में हम हमारे जीवन पर प्रभाव डालने वाले आर्थिक अनार्थिक क्रियाओं को शामिल करते है। वैश्वीकरण की बात करें तो इसने सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्रों में अपनी धाक जमा ली है यूँ तो भूमण्डलीकरण में रहन-रहन, पेड़-पौधे, वर्षा जलवायु, यातायात, संचार के साधन, ऊर्जा और बिजली ये सभी हमारी अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डालती है।

इस भूमण्डलीयकरण से भारतीय अर्थव्यवस्थ का विकास बहुत तीव्रता से होता चला आ रहा है। आज के इस वैज्ञानिक युग में सड़क,वायु यातायात के माध्यम से हमारा आर्थिक विकास दिन दूगनी और रात चौगुनी होगा। आज का गाँव कल का शहर। आज का शहर कल का नगर ,आज का नगर कल महानगर बनेगा जो वस्तु जिस स्थान पर उपलब्ध नहीं है वह यातायात के माध्यम से सुलभ हो जायेगी। भूमण्डलीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर कितना सघन प्रभाव पड़ा है।

संचार और दूरभाष के माध्यम से हम कितने पास दिखाई देते है ये भारतीय अर्थव्यवस्था पर भूमण्डलीकरण का घनिष्ट कमाल ।

भूमण्डलीकरण का आर्थिक जीवन पर ऊर्जा और बिजली को और ध्यान करें तो देखने को मिलेगा कि बीते हुए कल में चाँद सूरज और तारों से रोशनी प्राप्त होती थी और आग पत्थरों से उत्पन्न की जाती थी परन्तु आज के इस वैज्ञानिक युग में नये नये तरीको के माध्यम से बिजली और ऊर्जा उत्पन्न की जाती है परन्तु भविष्य में और भी ऐसे आविष्कार होगे जो आज नही हैं वो कल देखने को मिलेगे जिससे हमारी अर्थव्यवस्था रोशनीसे जगमगा उठेगी।

आज हम इस और ध्यान दे रहे है कि भूमण्डलीकरण ने हमारे आर्थिक जीवन में तरह-तरह के जीवन यापन के साधन जुटाने के प्रयास किये किन्तु उनमें से कुछ ऐसे है जो हमारे जीवन में केन्द्र बिन्दु बन चुके है इस तरह के व्यापन के साधन है-कम्प्युटर जो देखने में एक मशीन है जिसका इस तरह उपयोग किया जा रहा है जिससे तरह-तरह के जीवन व्यापन के मापदण्ड हो रहे है हमने तो कम्प्यूटर का उपयोग जीवन व्यापन में इस लिए शामिल किया है इसने हमको अनेक उपलब्धियों से प्रोत्साहित किया जिसके कारण हमने आपने आप को एक महान व्यक्तित्व से होकर न केवल इन्सान बल्कि भगवान से मिलने की कोशिश में लगे है। इसने तो सारा जगत ही बदल दिया है। आज का इन्सान कल महान व्यक्ति होकर हमारे जीवन मे ंअनेक प्रकार की उपलब्धियों को प्रोत्साहित करने के काम में जुटा है जिसने हमको जीवन व्यापन का एक अनोखा मार्गदर्शन प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान से प्रेरणा प्राप्त कर हमार जीवन एक तरह का आश्चर्यचकित कर डाला है इसने तो तरह-तरह के उपाय दिखाये है जो हमने आज अपने जीवन में एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में शामिल कर भविष्य देखने की कोशिश में लगे है जिसमें कर्मो का योगदान हो रहा है। आज हमने अपने ही हाथों दूसरों को प्रोत्साहित कर लिया है कम्प्यूटर ने तो हमारे जीवन को प्रोत्साहित ही नहीं बल्कि दुनिया के हर मानव में ऐसी प्रेरणा भर दी है और उसमें अनेक प्रकार के समन्वय हो गये है।

भूमण्डलीकरण– भूमण्डलीकरण वर्तमान समय की सर्वाधिक चर्चित परन्तु जटिल अवधारणा है। सामान्य तौर पर 'भूमण्डलीकरण' से तात्पर्य तीव्र विश्वव्यापी सूचना क्रांति, ज्ञानोदय, अर्थव्यवस्था, सांस्कृतिक आदान-प्रदान,सीमा विहीन संसार और आधुनिक राष्ट्रराज्य की क्षेत्रीय प्रभुता को कम करने से है । हालांकि भूमण्डलीकरण ने एक तरफ सूचना और संचार की क्रांति द्वारा दुनिया को बहुत नजदीक ला दिया तो दूसरी ओर इन्हीं साधनों को शोषण का औजार भी बना दिया, इसलिए पॉल स्वीजी ने इस 'सत्ता और दासता' की सुसंगता व्यवस्था माना है तथा चतुर्दिक विकास के लिए पूंजी को मानवीय मूल्यों से जोडने की वकालत की है। आज हम ऐसे युग में प्रवेश कर चुके है, जहाँ आर्थिक प्रगति के नाम पर हमारे चारों ओर बहुराष्ट्रीय कंपनियों को जाल फैलाया जा रहा है, लेकिन केवल आर्थिक प्रगति से सामाजिक हित होने वाला नहीं है। विकास को मानवीय चेहरा देने के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य,बिजली,पानी, रोटी, कपड़ा, आवास और सूचना का अधिकार जैसी मूलभूत जरूरतों और मानवाधिकारों का वास्तविक रूप में बहाल करने की जरूरत है।

भारत के प्रधानमंत्री एवं आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ डॉ. मनमोहनसिंह ने 11 अक्टूबर 2006 को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में दिए गए अपने भाषण में कहा है कि 'भूमण्डलीकरण निजी एवं क्षेत्रीय आय की विषमता को नहीं हटा पाया है। कई विकासशील देशों में विकास ग्रामीण क्षेत्रों का नजरअंदाज करके हो रहा हैं।....... अमीर और गरीब के बीच खाई चौड़ी होती जा रही है। इसलिए हमें एक ऐसी नई भूमण्डलीकरण दृष्टि की जरूरत है जो सही अर्थों में ज्यादा साझेदारी के साथ भूमण्डलीकरण का फायदा दे सके यानी शहर और गांव दोनों को ध्यान में रखकर विकास कर सके ।

भूमण्डलीकरण और मध्यप्रदेश की तकनीकी शिक्षा – आज हमारा मध्यप्रदेश उच्च प्रौद्योगिक उद्योग जैसे इलेक्ट्रानिक, दूरसंचार, ऑटोमोबाइल्स जैसे क्षेत्र में तकनीकी रूप से सफलता प्राप्त कर रहा है दूर संचार की आवश्यकताओं के लिए राज्य में आविष्कार फाइबर का उत्पादन हो रहा है।, मध्यप्रदेश में अनेक ऑटोमोबाइल्स की स्थापना हो चुकी है।भूमण्डलीकरण और जनजीवन भूमण्डलीकरण के कारण हुई भारत की अर्थव्यवस्था के परिणाम स्वरूप जनजीवन के स्तर में किस प्रकार सुधार हुआ है।

1. **औद्योगिक विकास में वृद्धि –** पंचवर्षीय योजना में भारी कोष मिलने के बाद भी भारतीय उद्योंगो ने प्रस्थान चरण को पार नहीं किया था किन्तु

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला- झाबुआ (म.प्र.) भारत

भूमण्डलीकरण करण प्रतियोगिता के हावी होने के बाद भारतीय उद्योगो ने विकास की वृद्धि दर्ज की गई जिससे भारतीय जनमानस के जनजीवन के स्तर में सुधार पाया गया।

2. **रोजगार के अवसरों में वृद्धि–** भूमण्डलीकरण तेज गति से हुआ औद्योगिकरण के कारण विकास एक वरदान के रूप में साबित हुआ है। बडे–बडे उद्योगे की स्थापना से रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई। निजी क्षेत्रों की ओर युवाओं का रूझान स्पष्ट हो गया है।

3. **आर्थिक विकास में वृद्धि –** भूमण्डलीकरण की खुली प्रतियोगिता के परिणाम स्वरूप विश्व एवं भारत में आर्थिक विकास की दर ने गति तो पकडी है औद्योगिक क्रांति के रूप में भी साबित हुई है जिससे जनमानस में आर्थिक विकास हुआ है।

4. **सूचना प्रौद्योगिक में विकास –** तीव्र औद्योगिक विकास से सूचना प्रौद्योगिकी में भी तेज गति से विकास हुआ जिसके परिणाम स्वरूप अन्य उद्योगों में भी प्रतिस्पर्धा बढ़ी एवं सूचना प्रौद्योगिकी केवल बल पर तीव्र आर्थिक विकास हुआ और जनजीवन के स्तर में उठाव आया।

5. **अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्ता की प्राप्ति –** भूमण्डलीकरण के कारण भारतीय जनमानस को अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्ता के दर्शन हुए जिनसे एक औद्योगिक प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हुई और जनजीवन के गुणात्मक सुधार औद्योगिक एवं आर्थिक विकास भी हुआ।

6. **कार्य कुशलता में वृद्धि–** कम समय में अधिक कार्य और उत्तम गुणवत्ता प्राप्ति के परिणाम स्वरूप भारतीय उद्योगो में कार्य कुशलता में वृद्धि एक मुख्य कारण बन गया जिसका सीधा परिणाम यह निकला कि भारतीय जनमानस के कार्य कुशलता के परिणाम स्वरूप उत्तम रोजगार की प्राप्ति एवं सामान्य जन जीवन में उच्चता प्राप्त हुई

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कमल नयन कावरा–भूमंडलीकरण–विचार,नीतियाँ और विकल्प
2. रचना अंक 105, नवम्बर–दिसम्बर, 2013।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था– प्रतियोगिता साहित्य।

****

भारत देश में बाल श्रम संशोधित अधिनियम - समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. शक्ति जैन *

प्रस्तावना – बाल श्रम एक सामाजिक बुराई है बाल श्रम का संबंध देश की आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक व्यवस्था में जुड़ा है। बाल श्रम केवल एक देश की समस्या नहीं है बल्कि यह एक विश्वव्यापी समस्या है परंतु यह समस्या विकासशील व पिछड़े देशों में अधिकांशत: व्याप्त है। विश्व में 217 मिलियन बच्चे पूर्णकालिक श्रम के रूप में कार्य कर रहे हैं। विश्व विकास रिपोर्ट के अनुसार बाल श्रम का प्रमुख कारण अधिक गरीबी व स्कूल शिक्षा निम्न होना है।

भारत देश में भी बड़ी संख्या में बाल श्रम पाया जाता है। यूनिसेफ अध्ययन के अनुसार विश्व में भारत में सबसे अधिक बालश्रम है। राष्ट्रीय सर्वे के अनुसार 1998 में भारत में 5 वर्ष से 14 वर्ष के बाल श्रम की संख्या 12.6 मिलियन थी। यह संख्या कम हुई है तथा 2001 में 4.35 मिलियन (5-14 वर्ष) बाल श्रम है तथा नेशनल सर्वे रिर्पोट में 2009-10 में 4.98 मिलियन बाल श्रम है जिनमें 2 प्रतिशत बच्चे 5 से 14 वर्ष की उम्र के हैं तथा भारत में जो पिछड़े राज्य बिहार, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बस्तर, मध्यप्रदेश आदि में बाल श्रम अन्य राज्यों की तुलना में अधिक है।

भारत में भी बाल श्रम की अधिकता का प्रमुख कारण निर्धनता है। यहाँ 21.8 प्रतिशत (एम.आर.पी. प्रणाली के अनुसार) जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है यहाँ की 40 प्रतिशत जनसंख्या को राष्ट्रीय आय का केवल 19.7 प्रतिशत ही मिल पाता है अर्थात आय व धन की असमानता दिखाई देती है। भारत में प्रति व्यक्ति आय भी कम है। विश्व विकास रिपोर्ट 2012 के अनुसार वर्ष 2010 में भारत में प्रति व्यक्ति आय 1340 डालर थी जबकि अमेरिका में यह आय 47140 डालर थी।

बाल श्रम का दूसरा प्रमुख कारण बेरोजगारी है जिसमें निरंतर वृद्धि हो रही है। वर्तमान में लगभग 4 करोड़ व्यक्ति बेरोजगार हैं इस संख्या में प्रतिवर्ष लगभग 60 लाख व्यक्तियों की और वृद्धि होती जाती है।

निर्धनता और बेरोजगारी के अतिरिक्त अशिक्षा भी बाल श्रम का एक कारण है। भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार साक्षरता का प्रतिशत 74.04 प्रतिशत है अर्थात अभी भी 26 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर है।

इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई जनसंख्या, कुटीर उद्योगों का पतन, उद्योगपतियों की लाभ व स्वार्थ भावना आदि भी बाल श्रम के कारण हैं इन सभी कारणों के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण कारण बाल श्रम संबंधी नियमों की शिथिलता एवं उनका पालन कठोरता से न होना है।

बाल श्रम की समस्यायें व दुष्प्रभाव – बाल श्रम होने से कई समस्यायें सामने आती हैं उसके दुष्प्रभावों को अनदेखा नहीं किया जा सकता जैसे –

1. शिक्षा में बाधा आती है।
2. कार्य करने की असंतोषजनक दशाएं बच्चे का पूर्ण विकास नहीं होने देती तथा स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
3. व्यक्तित्व विकास में बाधा आती है बालक में जब व्यक्तित्व व कौशल विकास का समय होता है उस समय वह बालक कार्य करने लगता है शिक्षा एवं खेलकूद के अभाव में उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता है।
4. बाल श्रम के वयस्क होने पर उसकी उत्पादकता निम्न रह जाती है जो देश की उत्पादकता वृद्धि में बाधा है।
5. अन्य बच्चों की सम्पन्नयुक्त अवस्था देखकर कई तरह की कुंठायें एवं अपराध प्रवृत्ति बढ़ती है जैसा कि अभी हाल में हुए बलात्कार, गैंगरेप, चोरी आदि की घटना में इन्हीं अशिक्षित व कुंठित लोगों का हाथ था।
6. सबसे बड़ा दुष्प्रभाव देश के आर्थिक विकास पर पड़ता है क्योंकि एक देश की राष्ट्रीय मानव पूँजी का जो ह्रास होता है उसे किसी राशि के द्वारा नहीं मापा जा सकता।

इस तरह बाल श्रम के कई दुष्प्रभाव दिखाई देते हैं कुछ दुष्प्रभाव ऐसे होते हैं जो देश की अर्थव्यवस्था को परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

भारत में बाल श्रम अधिनियम – भारत में बाल श्रम की समस्या को हल करके और उनका शोषण रोकने तथा उनकी दशा में सुधार के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर कई अधिनियम बनाये गये हैं। वर्ष 1981 तक तो बाल श्रम के लिए कोई कानून नहीं था सिर्फ कारखाना अधिनियम 1948, भारतीय खान अधिनियम 1952 के अंतर्गत बाल श्रम के कुछ प्रावधान थे। 1986 में बाल श्रम (निषेध व नियमन) अधिनियम 1986 बनाया गया तथा 1987 में भारत सरकार की बालश्रम संबंधी राष्ट्रीय नीति बनायी गयी तथा यह समस्या विश्वव्यापी समस्या होने से संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा बच्चों के अधिकारों को लिपिबद्ध करते हुए 54 अनुच्छेदों का एक 'बाल अधिकार कंवेशन' बनाया गया जिसे भारत ने भी 1992 में अनुमोदित करते हुए बच्चों के संरक्षण हेतु हेतु प्रतिबद्धता की।

इसके अतिरिक्त The Juvenile Justice (Care and Protection) of Children Act of 2000 एवं बच्चों को नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा का अधिकार 2009 भी बाल श्रम को रोकने के लिए अधिनियम बनाये गये हैं।

इस तरह बाल श्रम रोकने व उनके सर्वांगीण विकास के लिए उपर्युक्त अधिनियम लागू थे। 14 वर्ष से कम उम्र के बालकों को किसी भी तरह के कार्य में लगाना कानूनन जुर्म था।

बाल श्रम संशोधित अधिनियम 2015 – वर्तमान में सरकार द्वारा मई 2015 में बाल श्रम कानून के संशोधन को स्वीकृति दी गई इसमें 14 साल से कम उम्र के बच्चे स्कूल के समय के बाद या छुट्टियों में पारिवारिक धंधे, मनोरंजन उद्योग और खेलों के आयोजन में हाथ बंटा सकेंगे बशर्ते ऐसा कारोबार या उद्योग शरीर या स्वास्थ्य के लिए नुकसान पहुँचाने वाला न हो तथा वहीं अन्य जगहों पर बाल श्रमिकों को रोजगार में लगाना पूर्ण रूप से प्रतिबंधित होगा। बच्चे निम्न क्षेत्रों में काम कर सकेंगे –

1. अगर बच्चा आडियो-बिजुअल एंटरटेनमेंट इण्डस्ट्री में आर्टिस्ट हो।
2. विज्ञापन फिल्मों, टीवी सीरियल में संक्षिप्त भूमिकायें करता हो।
3. सर्कस को छोड़कर अन्य सभी स्पोर्ट्स गतिविधियों में शामिल हो।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

संशोधित अधिनियम में यह कहा कि इन उपर्युक्त कार्य को करने में माता-पिता को यह ध्यान रखना होगा कि इसमें बच्चे की पढ़ाई प्रतिबंधित न हो उसकी सेहत पर कोई विपरीत असर न पड़े।

दंडात्मक प्रक्रिया के प्रावधान में कुछ परिवर्तन किया गया। पुराने कानून में बाल श्रम कराने पर नियोक्ता और माता-पिता को दो साल की कैद और 20,000 रूपये तक के जुर्मने का प्रावधान है लेकिन प्रस्तावित संशोधन में पहली बार नियम का उल्लंघन होने पर माता-पिता को चेतावनी देकर छोड़ दिया जायेगा लेकिन दूसरी बार उल्लंघन कर दोषी पाये जाने पर 10,000 रूपये का जुर्माना होगा।

प्रस्तावित संशोधन के तहत बाल श्रम के दोषी पाये जाने पर नियोक्ता को तीन साल तक कैद हो सकती है तथा 50,000 रूपये तक जुर्माना देना पड़ सकता है।

मई 2015 को केन्द्रीय मंत्रीमंडल ने बाल श्रम रोकथाम और नियमन संशोधन बिल में जो बदलाव किया गया उस संबंध में श्रम मंत्रालय भी इस संबंध में ये तर्क दे रहा है -

1. देश में सामाजिक ढाँचा ऐसा है कि परिवार के उद्योग धंधों में बच्चे शामिल किये जाते हैं यदि उन्हें कानूनन अनुमति दी जा सकती है तो अच्छा ही है।
2. देश में यह परंपरा है कि पिता के दुकान कारखानों में बच्चे जाते हैं वहीं से सीखते हैं पीढ़ी दर पीढ़ी ऐसे ही व्यवहारिक ज्ञान मिलता है इसलिए कानून में भी इसकी छूट होना चाहिये।
3. एक दो घंटे तो बच्चों की मदद ली जा सकती है और सरकार ने इसके साथ कहा ही है कि पढ़ाई का नुकसान न हो व स्वास्थ्य प्रभावित न हो।

इस तरह के श्रम मंत्रालय द्वारा तर्क देकर संशोधन की पुष्टि की जा सकती है। परंतु इस संशोधन को यदि समाज के हित व बच्चों के हित में देखा जाये तो कई समस्यायें बढ़ सकती हैं जैसे -

1. दुकानदारों को बहाना मिल जायेगा जो अभी अपने बच्चों पर कुछ घंटे दुकान देखने का नैसर्गिक अधिकार जता रहे हैं। वो इस संशोधित अधिनियम के अंतर्गत आराम से बच्चों से अधिक कार्य करवा सकते हैं।
2. बच्चे सीधे स्कूल से दुकान व काम-धंधे में लग जायेंगे तो पढ़ेंगे कब तथा कभी दुकान पर अधिक काम है तो स्कूल नहीं भेजेंगे। सरकार की बीच में पढ़ाई न छोड़ने की नीति का क्या होगा ?
3. बच्चों को तो माता-पिता की मदद करनी चाहिए इस तरह की बात कहकर उन्हें काम में लगाया जायेगा।
4. एक बड़ा खतरा यह भी होगा कि परंपरा के नाम पर फैक्टरी, कंपनी, आफिस जाने वाले बच्चों का बचपन खत्म होगा। इस उम्र में उनके हाथ में पैसा होगा तो पैसा का दुरूपयोग करेंगे, बचपन की उम्र जो खेलने की है वह काम में निकलेगी तथा किशोरावस्था (13 से 18 वर्ष) की उम्र का समय बचपन व युवा के बीच का पड़ाव होना है। इस समय बच्चों की प्रवृत्ति को जिस तरह मोड़ा जायेगा उस तरफ बच्चे झुकेंगे इसलिए इस उम्र के बच्चों को कोई भी काम में लगाना सही नहीं होगा। गरीब बच्चे को काम मिल जायेगा तो वह खुशी-खुशी काम करेगा पर पढ़ाई नहीं कर पायेगा।

बाल श्रम कानून में किये गये संशोधन पर नोबल पुरस्कार में सम्मानित कैलाश सत्यार्थी ने भी इसकी आलोचना की कि केन्द्र सरकार 14 साल तक के बच्चों को फैमिली बिजनेस में काम करने की मंजूरी देने के लिए जिस प्रावधान की बात कर रही है वह पुराना ही है। सरकार केवल इस पर मुहर लगा रही है। सरकार को इस संशोधित कानून में माता-पिता और लीगल गार्जियन को परिभाषित करना चाहिये। फैमिली को परिभाषित न करने से कानून का दुरूपयोग हो सकता है। बाल मजदूरी के खिलाफ लंबे समय से संघर्ष कर रहे कैलाश सत्यार्थी का तो यह कहना है कि 14 साल तक की आयु तक बाल श्रम पूरी तरह प्रतिबंधित होना चाहिये तथा कानून में यह शामिल करना होगा कि 15 से 18 साल तक के बच्चों को खतरनाक श्रेणी के उद्योगों में न लगाया जाये उन्होंने 18 ऐसे उद्योग और 65 कामों की सूची को कानून में शामिल करने को कहा है जो स्वास्थ्य के लिहाज से बेहद खतरनाक हो सकते हैं।

इस तरह यह संशोधित कानून बाल श्रम की समस्या को हल करने बल्कि और भी समस्या बढ़ा सकता है। अत: सरकार को इस पर सोच-विचार कर इस संशोधित अधिनियम को अच्छी तरह से परिभाषित करें एवं एक बार इसकी समीक्षा पर अवश्य ध्यान दें।

भारत में बाल श्रम समस्या केवल कानून बना देने से हल होने वाली नहीं है इसके लिए सरकार को उन कारणों को प्रमुख रूप से देखना होगा जिन कारणों के कारण बाल श्रम करवाया जाता है इसके लिए -

- सर्वप्रथम गरीबी की समस्या हल करनी होगी क्योंकि जिन-जिन देशों की प्रति व्यक्ति आय अधिक है, आय व धन की असमानता कम है उन सभी देशों में बाल श्रम भी कम है।
- जब तक परिवार के लिए आय की वैकल्पिक व्यवस्था नहीं हो पाती तब तक बाल श्रम में भी कमी नहीं लायी जा सकती।
- बेरोजगारी को दूर करना इसके लिए प्रत्येक परिवार में कम से कम एक सदस्य को रोजगार गारंटी प्रदान करना आवश्यक है।
- नियोजकों की लोभी व शोषण की प्रवृत्ति को रोकना आवश्यक है इसके लिए निरीक्षण व्यवस्था कड़ी होना तथा कठोर दंड का प्रावधान आवश्यक है।
- जन आंदोलनों व सामाजिक संस्थायें एन.जी.ओ. आदि समस्या को हल करने में योगदान दे सकती है।
- देश के सभी नागरिकों को यह मालूम होना चाहिये कि बालश्रम अपराध है, पाप है यह पूर्ण रूप से बंद होना चाहिये।
- स्कूल में भी बच्चों को शिक्षा के माध्यम से इस कानून की जानकारी दी जाये।

यदि भारत देश के सर्वांगीण विकास की बात करते हैं तो सरकार को बाल श्रम संशोधित अधिनियम को पुन: परिभाषित करें या उस को वापिस ले। पुराना कानून और इस कानून में कोई और ही मालूम न पड़े बल्कि इस संशोधित कानून की और भी समस्या लेकर आ सकता है।

बालक को उड़ने दें एवं पढ़ने दें उससे श्रम करवाना अपराध है बालक पूर्ण रूप से व्यक्तित्व व कौशल का विकास होगा तो उससे उत्पादकता बढ़ेगी जो वह काम आय में काम करने को तैयार हो जाता है वह एक ऊँची आय पर काम करने को तैयार होगा जो देश के सर्वांगीण विकास में सहायक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था - डॉ. जे.सी. पंत और मिश्रा।
2. भारतीय अर्थशास्त्र - डॉ. चतुर्भुज मामोरिया एवं एस.सी. जैन।
3. औद्योगिक संबंध एवं श्रम कल्याण - डॉ. अग्रवाल एवं वारेलाल।
4. श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा - टी. एन. भगोली लाल।
5. योजना व कुरूक्षेत्र पत्रिका।
6. दैनिक भास्कर समाचार पत्र - 13 मई 2015, 17 मई 2015।
7. इंटरनेट।

****

पर्यावरण एक अनुशीलन

डॉ. टी. एम. खान *

प्रस्तावना – 'जीवधारियों के जीवन एवं विकास को प्रभावित करने वाली सभी अवस्थाएं एवं उनके प्रभाव मिलकर पर्यावरण बनाते हैं।'

हमारे चारो ओर प्रकृति में जो भी जीवित तथा निर्जीव चीजें हैं वे सभी पर्यावरण के अंग या घटक हैं इनमें मिट्टी, पानी, वायु, प्रकाश, पेड़-पौधे तथा जीव-जंतु आते हैं।

पर्यावरण को प्रमुख रूप से 03 भागो में विभाजित किया जा सकता हैं-

1. प्राकृतिक पर्यावरण
2. मानवनिर्मित पर्यावरण
3. सामाजिक पर्यावरण

पर्यावरण संरक्षण किसी एक देश या व्यक्ति की समस्या न होकर विश्व के समस्त देशों एवं संपूर्ण जनमानस की साझा समस्या हैं जिससे निपटने के लिए हमें एकजुट होकर प्रयास करने होंगे तभी हम भावी पीढ़ी को उपहारस्वरूप स्वच्छ वातावरण दे सकेंगे।

मानव की उच्च महत्वकांक्षाओं उसकी निरंतर बढ़ती जनसंख्या, पारिवारिक जरूरते, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनो की आवश्यकता से अधिक दोहन आदि कारणो ने प्रकृति एवं उसके घटको के मध्य स्थापित सामंजस्य में अत्यधिक हस्तक्षेप किया और प्रदूषण को जन्म दिया। जिसके कारण मानव को नई बीमारियों, संक्रामक रोगो, मानसिक तनाव, स्वच्छ जल, वायु एवं स्वच्छ मृदा, भोज्य पदार्थो एवं स्वच्छ वातावरण के लिए संघर्ष करना पड़ा रहा हैं।

रविन्द्रनाथ टेगोर-'प्रकृति वह माँ हैं जिसका मैं ही बालक शोभायमान होता हैं।'

आज संपूर्ण विश्व पर्यावरणीय प्रदूषण की भयावहता, दुष्प्रभावों एवं दूरगामी परिणामों से चिंतित होने के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनो व वातावरण को संरक्षित एवं संवर्द्धित करने के लिए प्रयास कर रहा हैं।

संयुक्त राष्ट्र का मानव पर्यावरण सम्मेलन स्वीडन के स्टाकहोम शहर में आयोजित हुआ था यह सम्मेलन 05 जून 1972 से 16 जून 1972 तक हुआ जिसमें 119 राष्ट्रो ने पहली बार 'एक ही पृथ्वी' का सिद्धांत स्वीकार किया।

स्टाकहोम सम्मेलन में पारित घोषणा पत्र 1972 मैग्नाकार्टा के नाम से जाना जाता हैं। भारत के संविधान में पर्यावरण सुरक्षा एवं संरक्षा के लिए 1976 में संविधान के 42 वें अनुच्छेद में वर्णित- अनुच्छेद-47, अनुच्छेद-48क, अनुच्छेद-48क(छ), अनुच्छेद-51क, अनुच्छेद-51क(घ)

सरकार ने पर्यावरण में बढ़ते हुए प्रदूषण रूपी खतरे को देखते हुए कई नियम व कानूनो का निर्माण किया हैं जिसमें पर्यावरण संरक्षण की दिशा में सफलता प्राप्त हुई हैं।

भारत सरकार द्वारा निर्मित पर्यावरण संरक्षण के लिए नीति अधिनियम जिसमें प्रमुख हैं-

1. वन्य जीवन सुरक्षा अधिनियम- 1972
2. जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम 1974 एवं संशोधित जल प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण अधिनियम 1988
3. वायु प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम 1981 एवं संशोधित वायु प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम 1988
4. वन संरक्षण अधिनियम 1980 एवं राष्ट्रीय वनस्पति अधिनियम 1988
5. पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम 1986 एवं भारतीय वन नीति 1952 एवं भारतीय संशोधित वन नीति 1988
6. राष्ट्रीय पर्यावरण प्राधिकरण अधिनियम 1995

मनुष्य के चारो ओर फैले हुए वायुमण्डल को पर्यावरण की सीमा माना जाता हैं। व्यक्ति को चारो ओर से ढ़कने वाला आवरण ही पर्यावरण कहलाता हैं। पर्यावरण मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समाविष्ट हैं।

विश्व स्तर पर पर्यावरण सम्मेलन-

1. द्वितीय संयुक्त राष्ट्र मानव सम्मेलन (हैबिटेट 11) 1966
2. मानवीय पर्यावरण स्टाकहोम सम्मेलन 1972
3. ओजोन संरक्षण वियना अभिसमय 1985
4. ओजोन परत संरक्षण वियना 1985 द्वितीय
5. संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन (पृथ्वी सम्मेलन)

वर्तमान समय में पूरे विश्व में परमाणु हथियारो का जखीरा इकट्ठा किया जा रहा हैं। पर्यावरण एक गंभीर समस्या है। वनो की तीव्रता से कटाई, जलो का प्रदूषित होना, कूड़ा करकट, मलबा नदियों व झीलो से फेकना, बांधो का बनना, उद्योग धंधो की स्थापना। यह सब विकास के नाम पर पर्यावरण को प्रदूषित करने में सक्रिय भूमिका निभाता हैं।

नदी घाटी परियोजनाओं से जुड़ी एक विकट समस्या बांध क्षेत्रो से आदिवासी लोगो का विस्थापन हैं इसके कारण से लोगो को अपना घर तथा रोजगार भी छोड़ना पड़ता है। बड़ी बांध परियोजनाओं से जुड़े राष्ट्रो में भारत का नाम प्रमुख है। पिछले 50 सालो में करीब 2 करोड़ लोग प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से बांधो द्वारा प्रभावित हुए हैं। 1950 में बनी भाखड़ा बांध परियोजना से प्रभावित लोगो में से लगभग 50 प्रतिशत् लोगो का पुनर्स्थापन सरकार अब भी नहीं कर पायी हैं केवल हीराकुण्ड बांध के निर्माण में लगभग 250 गांवो में से 20 हजार लोग विस्थापित हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण विकास - मासिक पत्रिका 2005
2. पर्यावरण संरक्षण - डॉ.मंजुसिंह पृष्ठ संख्या 90, 91
3. शोध कार्य।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला -धार (म.प्र.) भारत

निर्मल भारत अभियान में पंचायत राज संस्थाओं की भूमिका (मण्डला जिले के नैनपुर विकासखण्ड के संदर्भ में एक समीक्षात्मक अध्ययन)

डॉ. टी.पी. मिश्रा * रामसिंह धुर्वे **

प्रस्तावना – स्वच्छ भारत अभियान भारत सरकार द्वारा स्थापित राष्ट्रीय सफाई अभियान है। इस अभियान में सभी के लिए शौचालय की सुविधा बनाने के अलावा पूरे भारत में स्वच्छता की समस्याओं के साथ-साथ बेहतर कचरा प्रबंधन को हल करने का लक्ष्य रखा गया है। 73 वें संविधान संशोधन 1992 के अनुसार स्वच्छता को 11 वीं अनुसूचित में शामिल किया गया है। अत: निर्मल भारत अभियान के कार्यान्वयन में ग्राम पंचायतों की अहम भूमिका है। कार्यक्रम का संचालन सभी स्तरों पर पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किया जा रहा है। शौचालयों के निर्माण के लिए सामाजिक जागरूकता पैदा करना और अपशिष्टों के सुरक्षित निपटान के माध्यम से पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में पंचायतों का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके लिए पंचायत राज संस्थाएँ पारस्परिक आईईसी तथा प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त गैर-सरकारी संगठनों की मदद ले सकती है। निर्मल भारत अभियान के तहत बनाये गये स्वच्छता परिसरों का रखरखाव पंचायतों, स्वैच्छिक संगठनों, परोपकारी न्यासों द्वारा किया जा सकता है। पंचायतों द्वारा निर्धारित राशि के अतिरिक्त विद्यालय स्वच्छता के लिए अपने संसाधनों से भी अंशदान दे सकती हैं। वे इस अभियान के तहत सामुदायिक परिसरों, पर्यावरण घटकों, निकासी आदि के संरक्षक के रूप में कार्य कर रही है। ग्राम पंचायतें उत्पादन केन्द्र, ग्रामीण स्वच्छता बाजार भी खोल सकती एवं संचालित भी कर सकती है। ग्राम पंचायतें शौचालयों के नियमित इस्तेमाल, उनके रखरखाव तथा उन्नयन और स्वास्थ्य शिक्षा को परस्पर बढ़ावा देने में अहम् भूमिका निभा रही है। पंचायतों की सक्रिय भागीदारी से ही निर्मल भारत अभियान के सभी घटकों अर्थात् जल स्रोत और शौचालय के बीच दूरी निजी पारिवारिक शौचालय के लिए निर्धारित न्यूनतम दूरी का अनुपालन, विद्यालय और आँगनवाड़ी शौचालय तथा स्वच्छता परिसर, प्रदूषण को रोकने के लिए गड्ढ़े की गहराई, गड्ढ़े के संरेखण का नियमन, गड्ढ़े को भरा जाना इत्यादि के संबंध में सुरक्षा मानकों को पूरा किया जाता है। यह बातें साफ-सफाई संबंधी प्रमुख आदतों जैसे- हैण्डपंपों, जल-स्रोतों के चारों ओर पर्यावरण को साफ और मानव तथा पशु मल से मुक्त रखना, पर भी लागू होती है। ग्राम पंचायतों की निर्मल भारत अभियान कार्यक्रम की निगरानी में भी महत्वपूर्ण भूमिका शामिल है।

स्वच्छ भारत अभियान का मतलब केवल साफ-सुथरे परिवेश से ही नहीं बल्कि नागरिकों की सहभागिता से, आधिक से अधिक पेड़ लगाने, कचरा मुक्त वातावरण बनाने, शौचालय की सुविधा उपलब्ध कराकर स्वच्छ भारत का निर्माण करने से है। देश में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए स्वच्छ भारत का निर्माण बहुत आवश्यक है।

अध्ययन क्षेत्र- मध्यप्रदेश का आदिवासी जिला मण्डला में स्थित विकासखण्ड नैनपुर क्षेत्रफल की दृष्टि से पाँचवा बड़ा विकासखण्ड है। यह मण्डला जिले के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। इसका कुल क्षेत्रफल 902 वर्ग किलोमीटर है। सन् 2011 के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 1,57,387 है। इस विकासखण्ड में कुल 74 ग्राम पंचायतें एवं कुल 153 गाँव है।

अध्ययन के उद्देश्य – सन् 1915 में महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे थे। तो उन्होंने आजाद भारत के साथ स्वच्छ भारत का भी सपना देखा था। इस हेतु उन्होंने देश में अनेक यात्राएँ की तो जगह-जगह अस्वच्छता का आलम देख बहुत दुख हुआ था। उनके सपनों को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने देश को फिर से स्वच्छ और साफ-सुथरा करने का बीड़ा उठाया है कि 02 अक्टूबर 2014 से 02 अक्टूबर 2019 तक कुल पाँच सालों में देश की तस्वीर 'स्वच्छ भारत' में बदल देना है। अत: अध्ययन के उद्देश्य निम्नालिखित हैं-

1. पिछले 01 वर्ष में कितने प्रतिशत परिवर्तन हुआ इसका आकलन करना।
2. ग्राम पंचायत स्तर पर इस अभियान को सफल बनाने में ऐसे लोगों का पता लगाना कि जो ईमानदारी से सहयोग कर रहे हैं और जो सिर्फ टालमटोल कर रहे हैं।
3. ऐसी प्रविधि या पद्धति खोजना जिससे गाँवों के लोगों में वैचारिक, सामाजिक, आर्थिक एवं लैंगिक असमानताओं/ मतभेद के बाद भी इस अभियान को यथार्थ में पूर्णरूप से लागू किया जा सके।
4. शौचालय आदि के निर्माण में गुणवत्ता के स्तर का मूल्यांकन करना।

संकल्पनाएँ- ग्राम पंचायत से जिला परिषद स्तर तक ऐसे कौन-कौन से कारण एवं समस्याएँ हैं जो लगातार निगरानी के बाद भी गुणवत्तापूर्ण आधारभूत अवसंरचना मजबूत नहीं हो पा रहा है। जो सामने प्रकट ही नहीं हो पाता है। इसका अध्ययन एवं मूल्यांकन करना है। प्रस्तुत अध्ययन निम्नांकित संकल्पनाओं पर आधारित है-

1. इस अभियान के सफल एवं गुणवत्तापूर्ण संचालन में क्रियान्वयन कर्ताओं की मानसिकता गतिरोध उत्पन्न करती है।
2. भारत को स्वच्छ बनाने में स्वच्छ भारत अभियान के तहत् शौचालय निर्माण कराना ही पर्याप्त नहीं है। उपयोग सबंधी जागरूकता का अभाव है।
3. उन तथ्यों का स्पष्टीकरण जो लक्ष्य प्राप्ति में बाधक है।

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत

शोध प्रविधि –

1. मण्डला जिले के नैनपुर विकासखण्ड के चयनित 06 ग्राम पंचायतों के 10-10 व्यक्तियों से व्यक्तिगत साक्षात्कार द्वारा और प्रश्नावली बनाकर जानकारी एकत्रित कर निष्कर्ष निकाले गये हैं।
2. अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का समावेश किया गया है।
3. प्रत्येक ग्राम पंचायत से 05-05 वार्ड मेम्बरों, शिक्षकों, छात्रों व ग्रामीण लोगों से साक्षात्कार लेकर समस्याओं एवं सुझावों को प्रस्तुत किया गया है।

निर्मल भारत अभियान के उद्देश्य– इस अभियान का उद्देश्य पाँच वर्षों में भारत को खुले में शौच से मुक्त देश बनाना है। अभियान के तहत् देश में लगभग 11 करोड़ 11 लाख शौचालयों के निर्माण के लिए एक लाख चौंतीस हजार करोड़ रूपये खर्च किये जायेंगे। बड़े पैमाने पर प्रौद्योगिकी का उपयोग कर ग्रामीण भारत के कचरे का इस्तेमाल उसे पूँजी का रूप देते हुए जैव उर्वरक और ऊर्जा के विभिन्न रूपों में परिवर्तित किया जायेगा। अभियान को युद्ध स्तर पर प्रारंभ कर ग्रामीण आबादी और स्कूल शिक्षकों और छात्रों के बड़े वर्गो के अलावा प्रत्येक स्तर पर इस प्रयास में देश भर की ग्रामीण पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद को भी इससे जोड़ना है। भारत सरकार द्वारा महात्मा गाँधी की 150 वीं जयंती 2 अक्टूबर 2019 तक 'क्लीन इंडिया' की दृष्टि की इस अभियान को चलाया गया है। इसके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. भारत में खुले में शौच की व्यवस्था के उन्मूलन के लिए।
2. अस्वच्छ शौचालयों को फ्लश शौचालयों में परिवर्तित करना।
3. मैला ढ़ोने की प्रणाली को दूर करना।
4. लोगों के व्यवहार मे बदलाव लाकर स्वस्थ स्वच्छता प्रथाओं के लोगों को जागरूक करना।
5. जनता में जागरूकता उत्पन्न करने एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्यक्रमों में लोगों को जोड़ना।

निर्मल भारत अभियान की विभिन्न योजनाएँ– निर्मल भारत अभियान का शुभारंभ 2 अक्टूबर 2014 को किया गया। इस अभियान के जरिये गाँवों एवं शहरों की गलियों, सड़कों को स्वच्छ कर उसकी मूल संरचना का विकास करना है। अभियान का उद्देश्य 2019 में महात्मा गाँधी की 150 वीं जयंती तक देश को स्वच्छ बनाना है। इस अभियान में सभी मंत्रालयों को शामिल किया गया है।

1. सांसद आदर्श ग्राम योजना– केन्द्र सरकार की इस योजना को 11 अक्टूबर 2014 को शुरूआत की गई। इसके तहत् राज्यसभा एवं लोकसभा दोनों के सदस्य अपने निर्वाचन क्षेत्र के किसी भी गाँव को गोद लेंगे। इस गोद लिये गाँव में सांसद 2016 तक समुचित विकास करायेंगे ताकि वह आदर्श गाँव हो सके।

2. ग्रामीण स्वच्छ भारत मिशन– ग्रामीण क्षेत्रों में सफाई कार्यक्रमों को लागू करने के लिए यह एक मिशन है। इस मिशन में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद की भागीदारी शामिल है।

3. शहरी स्वच्छ भारत मिशन–शहरों में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के साथ उन्हें एक साथ सार्वजनिक शौचालय से युक्त करना इस मिशन का लक्ष्य है। व्यक्तिगत एवं सामुदायिक शौचालयों, नगरों के चारों ओर शहरी क्षेत्रों में बस स्टेशन, पर्यटक स्थलों, रेल्वे स्टेशनों, बाजारों में साफ-सफाई कार्यक्रमों का सुचारू संचालन करना है। इस कार्यक्रमों की लागत ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर 7,344 करोड़ रूपये, जनता में जागरूकता लाने पर 1,828 करोड़ रू., सामुदायिक शौचालय पर 655 करोड़ रू., व्यक्तिगत घरेलू शौचालय पर 4,165 करोड़ रू. की योजना बनाई गई है।

4. स्वच्छ भारत स्वच्छ विद्यालय अभियान– यह अभियान के तहत् विद्यालयों की साफ-सफाई, विद्यालय परिसर एवं परिसर में स्थित प्रतिमाओं की सफाई, जल स्रोतों, क्लास रूम में, पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं, रसोई भंडार, खेल के मैदानों, उद्यान, शौचालय आदि की साफ-सफाई को स्थान दिया गया है। स्वच्छता विषय से संबंधित निबंध लेखन प्रतियोगिता, वाद-विवाद, कला, चित्रकला, फिल्म शो आदि आयोजित करना। सप्ताह में दो दिन शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों और समुदाय के सदस्यों द्वारा सफाई गतिविधियों को शामिल करने की योजना बनाई गई है।

ग्राम पंचायतों के दायित्व–

1. पंचायत द्वारा घर-घर जाकर स्वच्छता सुविधा का अनुश्रवण कर सार्वजनिक स्थान पर उसका प्रदर्शन करना।
2. ग्राम सभा में खुले में शौच करने पर जुर्माना हेतु उपनियम बनाना एवं इस नियम को लागू करने हेतु प्रस्ताव पारित करना।
3. घर-घर जाकर स्वच्छता सुविधा हेतु लोगों को सक्रिय करना।
4. सुनिश्चित करना कि निर्माण सामग्री हितग्राही एवं ग्रामों तक पहुँचे।
5. आरंभ से अंत तक गुणवत्तापूर्ण शौचालय निर्माण सुनिश्चित करना।
6. समुदाय के अनुश्रवण/निगरानी का चार्ट बनाने में सहयोग करना।
7. बच्चों को स्वच्छता के क्षेत्र में सक्रिय करना यदि पूर्व में उन्हें सक्रिय नहीं किया गया हो।
8. शालाओं में बाल मंत्रीमण्डल का गठन करना।
9. बच्चों की रैली, आस-पास के खुले में शौच मुक्त ग्रामों के स्वाभाविक नेताओं द्वारा ग्राम में भ्रमण कर ग्रामीणों के साथ अनुभव बाँटना एवं निर्माण में सहयोग करना।
10. रात्रिकालीन बैठक एवं विश्राम, फिल्म शो, एक्सपोजर विजिट एवं ग्रामीण हाट-बाजार में साप्ताहिक भ्रमण।
11. गाँव की सड़कों एवं नालियों की साफ-सफाई पर ध्यान देना। साथ ही कचरे को कचरा पेटियों में ही डालने के लिए प्रोत्साहित करना।
12. खुले में शौच की आदत को बदलकर घरों में शौचालय बनवाना, जहाँ कम जगह हो वहाँ सामुदायिक शौचालयों का निर्माण करवाना।
13. पंचायतों को स्कूल भवन में शौचालय बनाने के लिए समग्र स्वच्छता अभियान के जरिये 35,000/- की राशि मिलती है। यदि छात्र-छात्राएँ दोनों पढ़ते हैं तो इस स्थिति में अलग-अलग शौचालय निर्माण के लिए 70,000/- रूपये की राशि मिलेगी ताकि छात्र-छात्रओं के लिए अलग-अलग शौचालय का निर्माण किया जा सके।
14. पंचायतों को सरकारी भवन में संचालित आँगनवाड़ी केन्द्रों में शौचालय बनाने के लिए 8000/- की राशि मिलती है अत: आँगनवाड़ी केन्द्रों में शौचालयों के निर्माण की सुनिश्चितता हो।
15. शाला शौचालय की नियमित सफाई के लिए पंचायत की ओर से सफाईकर्मी नियुक्त करना।
16. शाला में आकस्मिक भ्रमण कर शौचालय की सफाई, मध्यान्ह भोजन से पूर्व साबुन से हाथ धोने तथा पीने के पानी तथा स्वच्छता के लिए पानी की व्यवस्था की निगरानी करना। उसमें कमी होने पर ठीक करवाना।
17. गाँव में आँगनवाड़ी भवन और शौचालय की सुरक्षा के लिए गाँव के कोटवार, निगरानी समिति को निर्देशित करना।

18. आँगनवाड़ियों में बच्चों को दी जाने वाली स्वच्छता शिक्षण का अनुश्रवण करना।
19. शाला शौचालय में आवश्यक रिपेयर और मेन्टेन्स के लिए शालेय आकस्मिक निधि से संयोजन कर भुगतान की व्यवस्था करना।
20. पंचायत की पहल पर गाँव का कूड़ा-करकट एकत्र करना, नापेड, सोख्ता गड्ढों का निर्माण किया जाना। ठोस एवं तल अपशिष्ट का निपटान तथा प्रबंधन करना।

नैनपुर विकासखण्ड में प्रथम चरण के चयनित छः ग्राम पंचायतो में शौचालयों की संख्या-2015 (तालिका व ग्राफ देखे अगलेपृष्ठ पर)

विश्लेषण-स्वच्छ भारत अभियान के तहत् अध्ययन क्षेत्र के चयनित उक्त छः ग्राम पंचायतों को शत-प्रतिशत खुले में शौच से मुक्त कराने का लक्ष्य रखा गया है। इस अभियान के प्रथम चरण में चयनित ग्राम पंचायतों में कुल परिवारों की संख्या के आधार पर निर्मित शौचालयों की संख्या बहुत ही कम हैं। ग्राम पंचायत अमझर माल में 178 परिवार पूरी तरह खुले में शौच करते हैं, यहाँ एक भी शौचालय नहीं हैं। ग्राम पंचायत चमरवाही में कुल 03 ग्राम हैं, यहाँ 235 परिवार निवास करते हैं और मात्र 20 शौचालय हैं। ग्राम पंचायत मानेगाँव में 215 परिवार निवास करते हैं और शौचालयों की संख्या 51 हैं। ग्राम पंचायत पाँडीवारा में 362 परिवार निवास करते हैं और वहाँ 48 शौचालय हैं। ग्राम पंचायत अतरिया में कुल 03 ग्राम हैं यहाँ परिवारों की संख्या 631 है और शौचालयों की संख्या 50 है। ग्राम पंचायत सरई बिचुआ में परिवारों की संख्या 571 है और शौचालयों की संख्या 160 है।

उक्त छः ग्राम पंचायतों में शत-प्रतिशत खुले में शौच को मुक्त करने के बाद द्वितीय चरण में पुनः छः ग्राम पंचायतों को लिया जायेगा। ये ग्राम पंचायत हैं- धनपुरी रैयत, बारगी, जहरमऊ, घटेरी, रामदेवरी एवं भड़िया। इन ग्राम पंचायतों में परिवारों की संख्या क्रमशः 455, 260, 641, 357, 452 एवं 397 हैं एवं वर्तमान में शौचालयों की संख्या क्रमशः 0, 0, 67, 0, 28 एवं 149 हैं।

समस्याएँ - जब तक स्वच्छ भारत नहीं होगा तब तक स्वस्थ भारत की कल्पना नहीं की जा सकती है। स्वच्छ समाज में स्वस्थ समाज का वास होगा। आज शहरों में जितनी गंदगी दिन-प्रतिदिन लगाई जा रही है इससे क्या शहरी क्षेत्र के लोग स्वस्थ रह सकेंगे? आज लोगों द्वारा मीडिया के सामने हाथों में झाडू लेकर कुदाल व टोकरी के साथ बने रहने का प्रयास करते हैं। इस दिखावे मात्र से भारत स्वस्थ नहीं होगा बल्कि इसके लिए कर्म की आवश्यकता है।

1. अध्ययन क्षेत्र में शौचालय निर्माण के बाद जल-आपूर्ति की समस्या बनी रहती है।
2. बने शौचालयों का उपयोग लकड़ी एवं अन्य सामग्री रखने में उपयोग करते देखा गया है।
3. शौचालय निर्माण को निर्धारित गुणवत्ता मापदण्डों को ध्यान में नहीं जा रहा है।
4. सड़कों एवं रास्तों के किनारे नालियों का अभाव पाया गया है।
5. गाँव के अधिकतर लोग सुबह घूमने के बहाने बाहर खुले में जाकर शौच करना पसंद करते हैं, वे घरों में बने शौचालय का उपयोग नहीं करते हैं।

सुझाव- गाँवों के सभी परिवारों में शौचालयों का निर्माण होने के साथ-साथ सफाई के प्रति जन-जागृति लाई जाए तो निश्चय ही सभी गाँव खुले में शौच जाने से मुक्त हो जायेंगे, जिसके लिए स्वयं सेवी संस्थाओं के साथ अन्य सामाजिक, धार्मिक अथवा अन्य संस्थाओं को आगे बढ़कर सहयोग करना होगा। यदि घर-घर से अपने आस-पड़ोस की साफ-सफाई के लिए आवाज बुलंद हो तो क्या भारत देश-विदेशों की तरह नहीं चमकेगा? विदेशों में लोगों की मानसिकता स्वस्थ समाज बनाने की होती है न कि राजनीति करने की। ऐसे में स्वस्थ भारत बनाने के लिए सभी बाधाओं को तोड़कर आगे आना होगा।

स्वच्छ भारत का सपना सामाजिक मानसिकता में बदलाव से ही संभव है। स्वच्छता के लिए किसी व्यक्ति का बहुत ज्यादा शिक्षित होना जरूरी नहीं है। यदि किसी चीज की आवश्यकता है तो वह है मात्र जागरूकता। यदि जागरूकता आ जाये तो निश्चित रूप से स्वच्छता की स्थिति स्वयं ठीक हो जायेगी। हमें अपने देश भारत को स्वच्छ और सुन्दर बनाना है तो पहले स्वयं के घर के शौचालयों की सफाई करनी होगी। स्वच्छता का दूसरा पहलू है कि यदि गंदगी करने पर दण्डात्मक व्यवस्था अपनाई जाये तो इससे समाज में रहने वाले और गंदगी करने वाले लोगों की मानसिकता में बदलाव आयेगा। जिससे स्वच्छ भारत की कल्पना मूर्त रूप ले सकेगी।

भारत सरकार का स्वच्छ भारत बनाने का सपना शौचालय निर्माण करा देने मात्र से ही पूरा नहीं होगा बल्कि शौचालय निर्माण के बाद सभी गाँवों में पर्याप्त समुचित नल-जल प्रदाय योजना या अन्य ऐसी कोई योजना को अनिवार्य रूप से लागू कर देना चाहिए जिससे शौचालयों में पानी की आपूर्ति आसानी से हो सके। जल आपूर्ति के बिना शौचालयों की उपयोगिता कुछ भी नहीं है।

निष्कर्ष- आज देश को जरूरत है सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, आतंकवाद व भ्रष्टाचार जैसे कुरीतियों को किनारा करते हुए मिलकर स्वच्छ निर्मल भारत जैसे पवित्र उद्देश्य के लिए संकल्पित होवें। स्वच्छता के मामलों से अभिन्न रूप से जुड़े सामाजिक विकास और स्वास्थ्य सुधार जैसे कार्यक्रम के मापदण्डों के निर्धारण संबंधी महत्वपूर्ण नीतियों और उनके संचालन को लेकर बापू के दर्शन, दृष्टिकोण तथा उनकी विचारधारा से अभिप्रेरित स्वच्छ, स्वस्थ, समृद्ध एवं आधुनिकता से ओत-प्रोत एक हरित भारत की स्थापना हमारे लिए सदैव हितकारी सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश पंचायिका, जून 2014, पृ.क्र. 29।
2. कुरूक्षेत्र, मासिक पत्रिका- जनवरी 2014, जून 2015, जुलाई 2015 एवं अगस्त 2015।
3. मिश्रा, टी.पी.(2002) पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास, प्रकाशकः जिला पंचायत, मण्डला।
4. योजना, मासिक पत्रिका, जनवरी 2015, स्वच्छता विकास और सामाजिक परिवर्तन।
5. दैनिक भास्कर, जबलपुर दिनाँक 01.09.2015।

नैनपुर विकासखण्ड में प्रथम चरण के चयनित छः ग्राम पंचायत में शौचालयों की संख्या–2015

क्र.	ग्राम पंचायतों के नाम	परिवारों की संख्या	निर्मित शौचालयों की संख्या	शौचालय निर्माण का लक्ष्य	ग्राम पंचायत में आने वाले ग्रामों के नाम
1	चमरवाही	235	20	215	चमरवाही, पौड़ी, डुड्डम
2	मानेगाँव	215	51	164	मानेगाँव
3	अमझर माल	178	0	178	अमझर माल, अमझर चक, पीपरदौन
4	पाँडीवारा	362	48	314	पाँडीवारा, तुरूर, पतवाही
5	अतरिया	631	50	581	अतरिया, पायली, धनौरा
6	सर्रई बिचुआ	571	160	411	सर्रई बिचुआ

स्रोतः– कार्यालय, जनपद पंचायत नैनपुर, जिला– मण्डला।

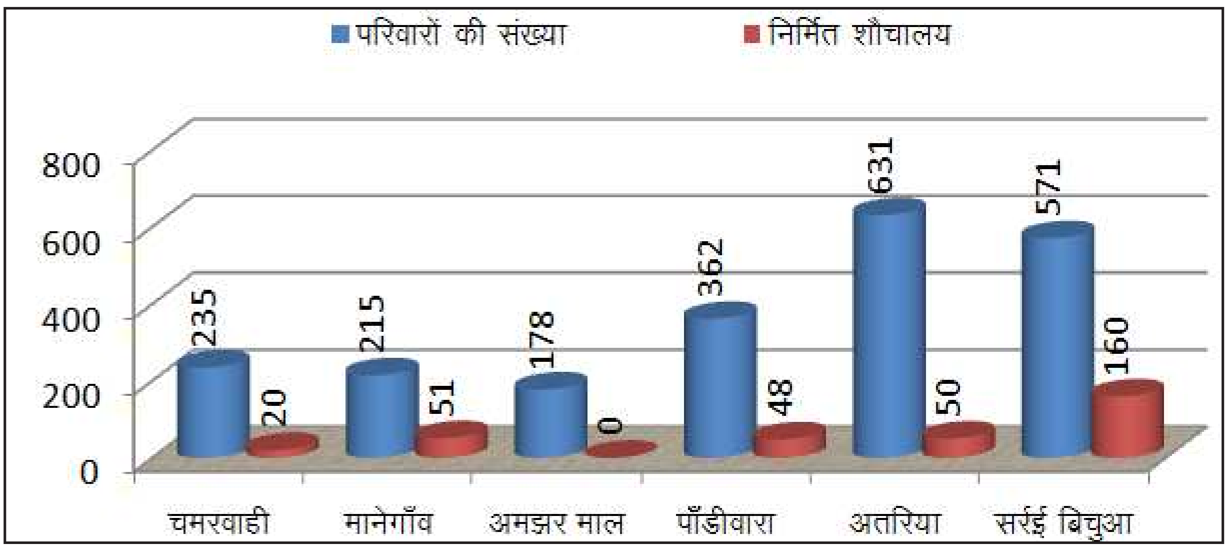

****

बाल श्रम - एक अपराध कारण व निवारण के उपाय

महेश कुमार रचियता * संगीता रचियता **

शोध सारांश - मानव जगत में हर्ष, प्रेम, उमंग एवं स्वप्नो का सर्वोत्कृष्ट जीवित पुंज बालक को समझा जाता हैं। बच्चे किसी भी राष्ट्र की विरासत होते हैं, जिनकी समुचित देखभाल एवं विकास पर ही किसी राष्ट्र की उन्नति निर्भर हैं इन्हीं के कन्धो पर मानवता के उज्जवल भविष्य की आधार-शिला रखी जा सकती है, किन्तु विडम्बना यह है कि इन बच्चों की एक बड़ी संख्या ऐसी है जिनका जीवन संघर्षो एवं असामान्य परिस्थिति में बीतता है। प्रश्न यह है कि जिन बच्चों का बचपन ही समस्याओं से घिरा हो उनका भविष्य होगा।

शब्द कुंजी - रूढ़िवादिता, भाग्यवादिता, बाल श्रमिक, सर्वांगीण विकास, शिक्षा ।

बाल श्रम का अर्थ - आज भी परिवार की आर्थिक विवशताओं के कारण हजारों बच्चे स्कूल की दहलीज तक नहीं पहुँच पाते तो अनेक अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं। फलत: न उनका मानसिक विकास हो पाता है और न ही बौद्धिक विकास।

बचपन इंसान की जिंदगी का सबसे हसीन समय है जब न किसी बात की चिंता और न ही कोई जिम्मेदारी। बस हर पल अपनी मस्ती में खोए रहना, खेलना-कूदना और पढ़ना। लेकिन सभी का बचपन ऐसा हो यह आवश्यक नहीं है। खेलने-कूदने के दिनों में कोई बाल श्रम करने को मजबूर हो जाये जो इससे बड़ी विडम्बना समाज के लिए क्या हो सकती है? बाल श्रम एक ऐसा अभिशाप है जो समाज में सर्वत्र मकड़ी के जाल सा फैला है। वास्तव में बाल श्रम मानवाधिकारों का हनन है। इन अधिकारों के तहत् शारीरिक, मानसिक, सामाजिक विकास का हक प्राप्त करने का अधिकार प्रत्येक मनुष्य को है।

प्राचीनकाल से ही बाल श्रमिक कृषि, उद्योग, घरेलू कार्यों आदि में कार्यरत रहे हैं। उस समय गरीबी, रूढ़िवादिता, भाग्यवादिता आदि के कारण उनकी शिक्षा एवं उनके सर्वांगीण विकास की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता था और उनका बचपन मजदूरी, खेती तथा अन्य कार्यो की बलि चढ़ जाता था। उनके हाथों में कलम और किताब के स्थान पर फावड़ा या हंसिया थमा दिया जाता था। वर्तमान में भी बाल श्रम की समस्या सुरसा की तरह मुँह फैलाए हुए है। कोई भी ऐसा बच्चा जिसकी उम्र 14 वर्ष से कम हो और वह जीविका हेतु कार्य करे, बाल मजदूर कहा जाता है। आज दुनिया भर में 215 मिलियन ऐसे बच्चे हैं जिनकी उम्र 14 वर्ष से कम है और ये बाल मजदूरी में लगे है।

भारत में यह स्थिति अत्यन्त ही भयावह है। दुनिया के सबसे ज्यादा बाल मजदूर भारत में ही है। 1991 की जनगणना के अनुसार बाल मजदूरों का आंकड़ा 11.3 मिलियन था जो 2001 में बढ़कर 12.7 मिलियन हो गया।

इस क्षेत्र में कार्यरत एन.जी.ओ. के अनुसार 50.2 प्रतिशत ऐसे बच्चे है जो सप्ताह के सातों दिन कार्य करते हैं। 53.22 प्रतिशत यौन प्रताड़ना के शिकार हो रहे हैं तथा 50 प्रतिशत ऐसे बच्चे हैं जिनका शारीरिक शोषण होता है। भारत में बाल मजदूरों की इतनी अधिक संख्या होने का मुख्य कारण गरीबी है। यहाँ एक तरफ तो ऐसे बच्चों का समूह है जो बड़े-बड़े महंगें होटलों का आनंद लेते हैं तो दूसरी ओर बच्चे गरीब एवं अनाथ भी है और मजबूरन किसी न किसी तरह का श्रम कर रहे हैं। अमेरिकी सरकार की एक रिपोर्ट के मुताबिक विश्व में 21.5 करोड़ से अधिक बाल मजदूर है। बाल श्रमिकों द्धारा विश्व में सर्वाधिक उत्पाद भारत, बांग्लादेश और फिलिपीन्स में बनाए जाते हैं।

श्रम मंत्रालय ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका के 71 देशों में बाल श्रमिक ईंट और बॉल से लेकर पोर्नोग्राफी तथा दुर्लभ खनिजों के उत्पादन जैसे कार्यो में संलग्न है। श्रम मंत्री हिल्दा सोलिस ने 10वीं वार्षिक रिपोर्ट बालश्रम का निकृष्ट स्वरूप पेश करते हुए कहा कि - 'मेरा मानना है कि ईश्वर ने सभी को शक्ति प्रदान की हैं प्रत्येक बच्चे को अपने सपने को पूरा करने का अधिकार दिया जाना चाहिए।'

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का कहना है कि विश्वभर में करीब 21.5 लाख बाल श्रमिक जोखिम भरे काम कर रहे हैं, जिसमें उनके घायल होने, बीमार पड़ने और मरने तक का खतरा है।

अपनी एक नई रिपोर्ट में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने औद्योगिक और विकासशील देशों के शहरों में हुए अध्ययन का हवाला दिया है। हालांकि इस रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2004 और 2008 के बीच जोखिम भरे कामों में लिप्त 05-17 साल के बाल श्रमिकों की संख्या में गिरावट आई है। इस अवधि में 15-17 साल के बाल श्रमिकों की संख्या में 20 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई जो पाँच करोड़ बीस लाख हो गई है। यूनिसेफ ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में कहा है कि बच्चों की खरीद, शोषण तथा दुकानों, खदानों, ईंट भट्टों और घरेलू कामों में मजदूरी एवं शारीरिक शोषण तथा दुर्व्यवहार की घटना में बढोतरी हुई है।

बाल श्रम भारत की अन्य समस्याओं में एक कठिन समस्या है। कामगार परिवारों की जितने हाथ उतने काम वाली मानसिकता ने इसे और भी बढावा दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में द्धितीयक तथ्यों का प्रयोग किया गया है। इनसें पुस्तकें, पत्रिकाएं, जनरल्स, समाचार पत्र एवं इंटरनेट प्रमुख हैं।

बाल श्रम के कारण -

1. **भूख एवं गरीबी -** मानवता के लिए भूख एवं गरीबी वास्तव में सबसे बड़ा अभिशाप है। गरीबी को सारे पापों व सभी प्रकार की सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक बुराईयों की जड़ माना जाता है। मानव को जब उदरपूर्ति हेतु पर्याप्त अन्न प्राप्त नहीं होता, शरीर ढकने के लिए वस्त्र तथा सिर छुपाने के लिए

* प्राध्यापक (राजनीतिक विज्ञान) डॉ. बी.आर.ए. राज. महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** प्राध्यापक (गृह विज्ञान) चौ.बी.आर.जी. राज. कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

छत नहीं होती तो वह कुछ भी करने के लिए विवश होता है। बच्चों को मजदूरी देने वालों का यह तर्क भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता भूखों मरने व घर से निकाल देने के कारण कम से कम उन्होंने उस बच्चे को काम तो दिया। ऐसे में पहले सवाल पेट का होता है शिक्षा बाद में आती है। इस प्रकार बालश्रम एवं गरीबी के बीच गहरा सम्बन्ध है।

2. जनसंख्या विस्फोट – जनसंख्या नियंत्रण में विफलता बालश्रम के लिए उत्तरदायी है। हमारे देश में जो भी जनसंख्या बढ़ रही है वह अल्पपोषित, गरीब और अनेक नागरिक सुविधाओं से वंचित है। गलियों व सड़कों में भीख मांगते बच्चे, बूढे व औरतें, फुटपाथों पर जीवन गुजारते लोग, सिर पर बोझ ढोती महिलाएँ व बच्चे वास्तव में योजनाहीन अनियन्त्रित जनसंख्या की वृद्धि का ही परिणाम है।

3. अशिक्षा व अज्ञानता – अधिकांश बाल श्रमिकों के माता-पिता अशिक्षा व अज्ञानता के कारण ही बच्चों के तन-मन और जीवन्त भावनाओं की बलि चढ़ा देते हैं। अनिवार्य शिक्षा ही वह एक मात्र नीति नियामक हथियार है जो बालश्रम को रोकने की दिशा में कारगर सिद्ध हो सकती है लेकिन भारत में यह विचार अभी परिपक्वता नहीं ला सका है। अशिक्षा भारत में बालश्रम के भयावह स्वरूप का प्रमुख कारण है।

4. रास्ते श्रम का लालच – बालश्रम रास्ते मजदूर पाने के लिए निहित स्वार्थो द्वारा जानबूझकर उत्पन्न किया जाता है। बीड़ी, माचिस, कालीन तथा पटाखा उद्योगों में बालश्रमिकों को विशेष रूप से रखा जाता है, क्योंकि ये कम मजदूरी में मिल जाते हैं, दूसरे ये लोग हड़ताल आदि भी नहीं करते तथा मालिकों की डांट-डपट भी सरलता से सुनते रहते हैं। कम दाम और मनमाना काम की मनोवृति इन नौनिहालों के शोषण के पीछे स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

5. सामाजिक परिवेश – बालश्रम के लिए अभिवृत्ति तत्व सामाजिक व पारिवारिक परिवेश भी बहुत हद तक उत्तरदायी है। कुछ माता-पिता तो बालश्रम को एक प्रशिक्षण के रूप में लेते हैं तो कुछ अपने निहित स्वार्थो एवं धन के लालच में आकर बच्चों से श्रम कराते हैं। पारिवारिक परिवेश कलहपूर्ण होने के कारण भी बच्चे घर से भाग कर मजदूर बनने को मजबूर हो जाते हैं।

6. कानून एवं ठोस प्रक्रिया का अभाव – सरकार द्वारा बनाये गये बाल मजदूरी रोधक कानून में एक बड़ी खामी यह है कि इसमें ही बाल मजदूरी को बढ़ावा देने वाला प्रावधान भी है। इस कानून में उन बच्चों को काम करने की छूट है, जिसके काम के घंटे तय है। इसी का कुछ लोग फायदा उठा जाते हैं।

7. जागरूकता का अभाव – आज भी करोड़ों लोगों को यह जानकारी नहीं है कि हमारे संविधान में क्या उल्लेख किया गया है, तो वे अपने अधिकारों के बारे में क्या जानेगे। जागरूकता के अभाव के कारण गरीबी के आलम में रहने वाले सिर्फ इसलिए अधिक बच्चे पैदा करते हैं कि होश संभालते ही बच्चे परिवार के लिए कुछ कमा कर लायेंगे।

14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को कारखानों, खानों और खतरनाक कामों में लगाने से रोकने और कुछ अन्य रोजगारों में उनके काम की स्थितियों को विनियमित करने के लिए अधिनियमित किया गया। इसमें धारा 3 के अतिरिक्त प्रावधानों पर एक माह की सजा और एक हजार रूपये जुर्माने का प्रावधान है। यह कानून रोजगार के कुछ क्षेत्रों में बच्चों के काम करने पर प्रतिबंध लगाता है। यह कार्य स्थलों पर उनकी कार्य दशा को नियंत्रित करता है। इस कानून के अंतर्गत कोई प्रतिष्ठान जो किसी बच्चे को नियुक्त करता है, उसे उसके नाम, प्रतिष्ठान की परिस्थिति, कार्य की प्रकृति, वास्तविक प्रबंधन के लिए व्यक्ति उनके नाम इत्यादि की जानकारी लिखित रूप में इंस्पेक्टर को भेजनी पड़ेगी।

भारत के संविधान निर्माताओं ने काम करने वाले बच्चों के अधिकारों के संरक्षण के लिए संविधान में प्रावधान शामिल करना अनिवार्य समझा।

अनुच्छेद 15(3), अनुच्छेद (1) 23, 24, 39ई. 45 में बच्चों की सुरक्षा की बात की गई है।

अनुच्छेद 21 ए – शिक्षा का अधिकार- इसके तहत राज्य 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा।

अनुच्छेद 23 – इससे बेगार को प्रतिबंधित किया गया है।

अनुच्छेद 24 – 14 वर्ष से कम उम्र का कोई भी बच्चा किसी कारखाने या खान में या किसी भी अन्य खतरनाक रोजगार में नियोजित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 39(ई) – राज्य अपनी नीतियाँ इस तरह निर्धारित करेगे कि श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं का स्वास्थ्य तथा उनकी क्षमता सुरक्षित रह सके और बच्चों की कम उम्र का शोषण न हो।

अनुच्छेद 45 – इसके तहत राज्य बच्चों को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा देगा। साथ ही भारत सरकार दूसरे राज्यों के साथ मिलकर बाल मजदूरी को खत्म करने की दिशा में तेजी से प्रयासरत है। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना जैसे महत्वपूर्ण कदम उठाए है।

एन.एस.एस.ओ. (NSSO) सर्वेक्षण 2009-10 के अनुसार काम करने वाले बच्चों की संख्या 49.84 लाख के करीब है जिससे इसमें गिरावट का पता चलता है।

जनगणना 2011 के ताजा ऑकड़े हमें बताते हैं कि 5 से 9 साल की उम्र के 25.53 लाख बच्चे तीन महीने से लेकर 12 महीने तक श्रम करते है। सामाजिक अध्ययन का मानना है कि भारत में 1.53 लाख बच्चे भीख मांगने का काम करते है।

मध्यप्रदेश हीरा और पत्थर खदानों के लिए विख्यात है, किन्तु यहाँ की खदानों से निकला हीरा किसी मजदूर की जिंदगी रोशन नहीं करता है। ये खदानें बच्चों को अपनी तरफ खींच लेती है और थमा देती है उनको हथौड़ा, कुदाल और छेनी। उत्तर प्रदेश (21.76 लाख), बिहार (10.88 लाख), राजस्थान (8.48 लाख), महाराष्ट्र (7.28 लाख) और मध्यप्रदेश (7 लाख) समेत पांच प्रमुख राज्यों में 55.41 लाख बच्चे श्रम में लगे हुए हैं।

भारत की राजधानी सहित देश के सभी क्षेत्रों में बाल श्रम आसानी से दृष्टिगत है। घर से बाहर निकलते ही जो चाय की पहली दुकान होती है वहाँ कोई न कोई छोटू नजर आ जाता है। वह चाय के कप साफ करता है और हमें चाय देता है। हम आराम से देश में बढ़ रहे बाल श्रम पर चर्चा करते हुए उससे चाय ले लेते हैं और पीने लगते है। मगर यह कभी नहीं सोचते कि अभी-अभी हमने भी इसी बाल श्रम को बढ़ावा दिया है।

कैलाश सत्यार्थी – 'बचपन बचाओ आन्दोलन' के संस्थापक तथा नोबल पुरस्कार विजेता श्री कैलाश सत्यार्थी का कहना है कि पूरी दुनिया से बाल-श्रम को खत्म करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बाल श्रम संगठन और 144 देशों ने बच्चों के अधिकारों के लिए एक प्रोटोकॉल बनाया है। जिसका अनुदान करने वाले देश को अपनी सीमा में बच्चों की बिक्री, बाल वेश्यावृत्ति और बच्चों की पॉर्नोग्राफी पर पूर्ण रोक लगानी होती है। इन सभी को अपराध की श्रेणी में शामिल करना होता है। मगर भारत ने अभी तक इसका अनुदान नहीं किया है। हाल ही में पाकिस्तान ने बाल अधिकारों पर सम्मेलन के वैकल्पिक प्रोटोकॉल का अनुदान कर वह दुनिया का 144वाँ देश बन गया है।

सुझाव – अपने देश में बालश्रम एक चुनौती बनती जा रही है। सरकार ने इनसे निपटने के लिए कई कदम उठाए है।

वर्ष 1979 में भारत सरकार ने गुरूपाद स्वामी समिति का गठन किया था। इसी समिति की सिफारिशों के आधार पर मजदूरी (प्रतिबंध एवं विनियमन) अधिनियम को 1986 में लागू किया गया था।

बाल मजदूरी की समस्या के समाधान के क्षेत्र में एम.वी. फाउंडेशन द्वारा एक अलग दृष्टिकोण विकसित किया गया। यह संस्थान स्कूल छोड़े हुए, नामांकन से वंचित तथा अन्य कार्यरत बच्चों के लिए संयोजन पाठ्यक्रम चला रहा है तथा उनकी उम्र के अनुरूप औपचारिक शिक्षा पद्धति के अंतर्गत स्कूल में नामांकन करा रहा है। यह पद्धति काम करने वाले बच्चों को स्कूल की ओर लाने में काफी हद तक सफल रही है और इसे आंध्र प्रदेश सरकार के साथ आशा, लोक जुम्विश जैसी गैर सरकारी संस्थाओं ने भी अपनाया है।
ऐसा माना जाता है कि भारत में कुल श्रम शक्ति का लगभग 3.6 प्रतिशत हिस्सा 14 साल से कम उम्र के बच्चों का है। हमारे देश में हर 10 में से 9 बच्चे काम करते है। ये बच्चे लगभग 85 प्रतिशत पारम्परिक कृषि गतिविधियों में कार्यरत है। जब तक 9 प्रतिशत से कम उत्पादन, सेवा मरम्मती कार्य से जुड़े हैं।

सरकार द्वारा चलाए जा रहे राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना के तहत हजारों बच्चों को सुरक्षित बचाया गया है। साथ ही विशेष स्कूलों में उनका पुनर्वास भी किया गया है। इन विद्यालयों के विशिष्ट पाठ्यक्रमों के कारण बच्चों को मुख्यधारा के विद्यालयों में प्रवेश लेने में किसी तरह की परेशानी नहीं होती। इस परियोजना के तहत बच्चों को नियमित रूप से खानपान एवं चिकित्सीय सुविधा भी मुहैया कराई जाती है। लेकिन इस तरह की परियोजनाओं के सामने अनेक समस्याएं आती है। सबसे पहले तो सही मायने में बाल मजदूरों की पहचान आवश्यक है। इसके बाद यदि कोई बच्चा 14 वर्ष का हो जाता है, ऐसे में सरकार सहयोग देना बंद कर दे तो मुमकिन है कि एक बार फिर वह बाल श्रम के दलदल में फंस जाए। इसलिए इससे निपटने हेतु कोई ठोस समाधान ढूँढना आवश्यक है।

मौजूदा नियमों के अनुसार जब बच्चा मुख्य धारा के स्कूलों में दाखिला ले लेता है तो ऐसा माना जाता है कि मासिक सहायता बंद कर देनी चाहिए, जबकि बच्चे या माता-पिता ऐसा नहीं चाहते। ऐसे में उनका प्रदर्शन नकारात्मक होता है। क्योंकि अतिरिक्त पैसे के लिए ही तो माता-पिता अपने बच्चों से मजदूरी करवाते है। यह तब तक मिलनी चाहिए जब तक बच्चा पूर्ण रूप से मुख्य धारा में शामिल होने के काबिल न हो जाए।

बाल श्रमिकों के पहचान के समय उनकी उम्र का निर्धारण एक मुख्य बाधक तत्व है। यह भी देखा जाता है कि जिन बाल मजदूरों को मुक्त कराया जाता है, उनका पुनर्वास जल्द नहीं हो पाता, परिणामस्वरूप वे इसी दलदल में दुबारा फँस जाते हैं। कई सरकारें बाल श्रमिकों की सही संख्या नहीं बताते जिससे उस राज्य में पुनर्वास या अन्य परियोजनाएँ चलाने में कठिनाई आती है। अत: यह संख्या यथासंभव सटीक बताई जानी चाहिए। कुछ मामलों में बाल श्रमिकों की पहचान की जरूरत तो नहीं है लेकिन इन परियोजनाओं में कुछ बुनियादी संशोधन की आवश्यकता जरूर है। देश से बाल श्रम मिटाने के लिए अधिक समन्वित और सहयोगात्मक रवैया अपनाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष – बाल श्रम मानव अधिकार का खुला उल्लघंन है। यह बच्चों के मानसिक, शारीरिक, आत्मिक, बौद्धिक एवं सामाजिक हितों को प्रभावित करता है। पिछले कुछ वर्षों से भारत सरकार एवं राज्य सरकारों की पहल इस दशा में सराहनीय है। उनके द्वारा बच्चों के उत्थान के लिए अनेक योजनाओं का प्रारम्भ किया गया है। जिससे उनके जीवन व शिक्षा पर सकारात्मक प्रभाव दिखे। शिक्षा का अधिकार इस दिशा में सराहनीय कदम है। इसमें कोई शक नहीं कि बाल श्रम की समस्या किसी देश एवं समाज के लिए अत्यंत घातक एवं विनाशकारी है। इस पर पूर्ण रूप से रोक लगनी चाहिए तथा इसे जड़ से समाप्त किया जाना चाहिए। इस समस्या को केवल विधि (कानून) के विधान से विराम नहीं दिया जा सकता। इसके लिए सामाजिक चेतना जगाना जरूरी है। ऐसा वातावरण बनाना होगा, जहां बच्चों से काम करवाने की प्रवृति में स्वत: ही कमी आये। यह कार्य कठिन है। लेकिन असंभव नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खासखबर.कॉम
2. इंडियन लेबर इयर बुक 2009 एवं 10
3. बाल श्रम का निकृष्ट स्वरूप : 10वीं वार्षिक रिपोर्ट – हिल्दा सोलिस (श्रम मंत्री, संयुक्त राष्ट्र)
4. मजदूरी के दलदल में फंसा बचपन-स्वप्ना कुमार
5. हिन्दी : वेव दुनिया, कॉम
6. रिपोर्ट – जोखिम भरे कामों में बच्चे हम क्या जानते हैं, हमें क्या करने की जरूरत है 'अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन'
7. रिपोर्ट-युनिसेफ
8. भारत का संविधान
9. प्रॉब्लेम्स ऑफ चाइल्ड लेबर इन इंडिया – (राजकुमार सेन एवं आशीष दास गुप्ता 2003)
10. श्रम कानून (रेफरेंस बुक – बेयर एक्ट)
11. समाचार पत्र (संयुक्त राष्ट्र) 11 जून, 2011
12. समाचार पत्र (वॉशिंगटन) 4 अक्टूबर, 2011
13. देश इसे केवल ढॉकता है – सचिन कुमार जैन।
14. वीलीवनेक्स्ट ब्लॉग स्पॉट इन
15. वार्षिक रिपोर्ट-2012-13 पृ. -91 – श्रम एवं नियोजन मंत्रालय।
16. चौथी दुनिया, कॉम
17. लेबर.निक.इन

****

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की अवधारणा

डॉ. श्रीकांत दुबे *

शोध सारांश – जैसे जैसे प्रशासनिक कार्यों का दायरा बढ़ा वैसे वैसे सेवी वर्गीय प्रशासन की भूमिका भी बढ़ी। लोक सेवी वर्ग नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका शासन को प्रदान करने का कार्य करते हैं। विकसित राष्ट्र हो या विकासशील सभी राष्ट्रों में सेवी वर्गीय प्रशासन एक महत्वपूर्ण आधारतंत्र है। इस वर्ग के बिना प्रशासनिक कार्यों की कल्पना वर्तमान संदर्भों में नहीं की जा सकती। यह एक शाश्वत अवधारणा है कि जिस देश में लोक सेवी वर्गीय प्रशासन जितना दक्ष, कुशल एवं ईमानदार होगा वहीं देश प्रगति पथ पर अग्रसर हो सकेगा। समूचे प्रशासन तंत्र में यह वर्ग सबसे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। लोक सेवी वर्गीय प्रशासन लोक सेवकों का वह संगठन माना गया है जो राष्ट्र की प्रशासकीय सेवा का अनिवार्य हिस्सा है। यह पेशेवर निकाय प्रशासनिक कार्यों में वृद्धि के साथ–साथ दक्ष एवं कुशल होता चला गया। इस वर्ग को एक निश्चित दायरे में बांध कर नहीं रखा जा सकता। यह सेवा के उद्देश्यों के साथ अपनी गतिविधियों को अंजाम देते हुए राष्ट्रों की प्रगति का साक्षी रहा है।

प्रस्तावना – राज्य की स्थापना के बाद से आज तक राजनीतिक व्यवस्था ने काफी विकास किया है। जैसे जैसे राज्य परिपक्व होते गए वैसे वैसे राज्य की संस्था एक नया रूप लेती गई। यह विकास की अवधारणा संगठनात्मक प्रयासों एवं संसाधनों पर ही निर्भर रही। राज्यों के इस विकास की अवधारणा में लोक सेवी वर्गीय प्रशासन ने प्रत्येक चरण पर महत्वपूर्ण प्रदर्शन किया है। विश्व के प्रशासनिक परिदृश्य में परिवर्तन का श्रेय इस वर्ग को भी दिया जाता है। यह वर्ग मानव संसाधन विकास की प्रकृति पर केन्द्रीत रहा। इसलिए कार्मिक प्रशासन की इकाईयों को मानव संसाधन विकास के नाम से भी जाना जाता है। वास्तव में यह वर्ग प्रशासन का प्रमुख तत्व है। इस वर्ग के बिना वर्तमान राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्था की कल्पना नहीं की जा सकती भले ही यह पेशेवर हो, नियमों से आबद्ध हो, एक निश्चित लीक पर चलने की प्रवृति रखता हों तथा एक वर्ग विशेष के रूप में जाना जाता हो तब भी यह प्रशासनिक संरचना की रीढ़ के रूप में जाना जाता है।

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन का विकास – लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था के संवाहक के रूप में जाने जाने वाले अमेरिका को लोक सेवी वर्गीय प्रशासनिक संस्था का सबसे बड़ा राष्ट्र माना जाता है। 1789 से प्रारंभ हुई लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की अवधारणा में योग्य, नैतिक एवं प्रतिभावान व्यक्तियों को सम्मिलित किया गया। कालांतर में इस वर्ग को प्रशासन पर हावी होते भी देखा गया लेकिन 1889 के पश्चात इस व्यवस्था में परिवर्तन आया एवं इसमें विभिन्न सुधार हुए। 19वीं सदी में यह वर्ग कुशलता एवं दक्षता से युक्त होता चला गया। इस अवधि को वैज्ञानिक प्रबंध के दौर के रूप में जाना जाता है। इस काल में यह वर्ग कुशलता के साथ साथ तटस्थता की ओर भी अग्रसर हुआ। 1937 के पश्चात् प्रशासनिक प्रबंध काल की शुरूआत हुई जिसमें इस वर्ग को प्रबंधन की ओर आकृष्ट करने का कार्य किया। इस काल में विभिन्न परिवर्तन इस वर्ग में आये जिससे लोक प्रशासन को प्रबंध की ओर अग्रसर हुआ। 1955 के पश्चात् लोक सेवी वर्गीय शासन में सेवाएँ पेशेवर होने के साथ साथ विशेषज्ञता से ओतप्रोत होती चली गई। 1970 के पश्चात् लोक सेवी वर्गीय प्रशासन का राजनीतिक कार्यपालिका से तालमेल बढ़ा एवं यह व्यवस्था एक दक्ष एवं कुशल पेशेवर के रूप में आज विश्व के समक्ष दिखाई दे रही है।

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन के उद्देश्य – लोक सेवी वर्गीय प्रशासन के उद्देश्य एवं क्षेत्र का निर्धारण निम्नांकित अनुसार किया जा सकता है –

1. **सेवी वर्ग की भर्ती –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन कार्मिकों की भर्ती, प्रशिक्षण, पदोन्नती का कार्य करने के साथ साथ आवश्यक सेवा शर्तो का समय समय पर नियमन भी करता है।
2. **प्रशासनिक संगठन –** प्रशासनिक संगठन का निर्धारण इसका महतवपूर्ण क्षेत्र है। इस हेतु पदसोपान का निर्धारण, अनुशासन की स्थापना, आदेश की एकता, नियंत्रण का क्षेत्र निर्धारित करने के साथ ही नीति निरुपण एवं नियोजन का कार्य करता है।
3. **कार्यकुशलता एवं अनुशासन की स्थापना –** सेवी वर्गीय संगठन में अनुशासन कायम करने के उपाय करना एवं संगठन की कार्यकुशलता बढ़ाने हेतु नित नवीन परिवर्तन इसका महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इस हेतु तकनीकि एवं नियम निर्मित व विकसित किए जाते हैं।
4. **प्रतिष्ठा की स्थापना –** लोक सेवा में प्रतिष्ठा कायम करने हेतु इनके कार्यो का विश्लेषण किया जाता है। इनके द्वारा यह निर्धारित किया जाता है कि लोक सेवकों को कौन से कार्य करने है एवं किस रूप में करने है जिससे लोक सेवी वर्ग की प्रतिष्ठा बनी रहे।
5. **लोक कल्याण का उद्देश्य –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन लोक कल्याण के लिए ऐसे मार्गो का निर्धारण करता है तथा साधनों का उपयोग करता है जो इस उद्देश्य की पूर्णता करे। ऐसा प्रयास किया जाता है जिससे असंतोष की भावना न पनपने पाए।
6. **प्रोत्साहन एवं दण्ड –** सेवी वर्गीय प्रशासन का उद्देश्य अच्छे कार्य करने वाले लोक सेवकों को उत्साहित करने हेतु प्रोत्साहन देना एवं अपने उद्देश्यों से भटकने वाले लोक सेवकों को दंडित करने का भी प्रावधान है।
7. **उत्तरदायित्व की अवधारणा –** सेवी वर्गीय प्रशासन उत्तरदायित्व से बच नहीं सकता उत्तरदायित्व का निर्धारण सुनिश्चित होता है एवं प्रत्येक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

स्तर पर जवाबदेही निर्धारित किए जाने का प्रावधान है। उत्तरदायित्व की स्थिति में दण्डात्मक कार्यवाही प्रस्तावित होती है।

8. **गतिशीलता एवं परिवर्तनशीलता –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन बदली हुई परिस्थिति के अनुरूप अपने दायित्वों का निर्धारण करते हुए गतिशील प्रशासन तंत्र की स्थापना करता है।

9. **अनुसंधान एवं नवाचार को प्रोत्साहन –** प्रशासनिक नीतियाँ एवं योजनाएँ क्रियान्वित करने हेतु सतत् अनुसंधान नये प्रयोग एवं नवाचार की व्यवस्था में सेवी वर्गीय प्रशासन संलग्न रहता है।

10. **मनोबल में वृद्धि –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन ऐसे प्रयत्न करता है जिससे लोक सेवकों का मनोबल बना रहे एवं वे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील रहे।

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की विशेषताएँ – लोक सेवी वर्गीय प्रशासन एक विशेष प्रकार की दक्षता एवं कुशलता से युक्त होता जा रहा है जिसे क्रमानुसार विश्लेषित किया जा सकता है –

1. **बदलती प्रवृत्तियाँ –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन में लोक सेवकों की मनोवृत्ति एवं कार्यशैली में सतत् परिवर्तन होता रहता है। लोकतंत्र की आकांक्षाओं को पूर्ण करने के उद्देश्य से लोक सेवक अपने आपको परिवर्तित कर लेते है।

2. **समान व्यवहार –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन में पक्षपात एवं असमान आचरण का कोई स्थान नहीं है पदधारी किसी भी स्तर पर हो वह लोक सेवक की श्रेणी में माना जाता है।

3. **सकारात्मक मनोवृत्ति –** लोक सेवी वग्रीय प्रशासन में लोक सेवकों को सकारात्मक वातावरण में कार्य हेतु प्रेरित किया जाता है इस हेतु पुरस्कार, प्रशंसा, सहयोग आदि प्रवृत्तियों को बढ़ावा दिया जाता है।

4. **सामूहिकता –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन परंपरागत अवधारणा के स्थान पर सामूहिक विचारधारा के आधार पर कार्य कर रहा है। आम सहमति पर विशेष जोर दिया जाता है।

5. **विशेषज्ञता –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन विशेषीकरण पर आधारित है, सामान्य से विशेष की ओर अग्रसर होना इसका प्रमुख ध्येय है। प्रशासनिक संरचना एवं उसके कार्य विशेषीकरण से युक्त हो रहे हैं।

6. **अभिलेखीकरण –** लोक सेवी वर्गीय प्रशासन लोक सेवकों के अभिलेखों का संधारण करता है, इसके आधार पर लोक सेवकों के अवकाश, वेतन, पदोन्नति, सेवा निवृत्ति आदि के लिए आंकड़े उपलब्ध होते हैं।

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की समस्याएँ – सेवी वर्गीय प्रशासन लोक प्रशासन की सफलता का पर्याय है। सेवी वर्गीय प्रशासन लोक प्रशासन का अभिन्न है। विश्व की प्रत्येक राजनीतिक कार्यपालिका लोक प्रशासन पर निर्भर है। इस वर्ग की भूमिका अति महत्वपूर्ण है लेकिन सेवी वर्गीय प्रशासन की विभिन्न समस्याएँ भी हैं –

1. **राजनीतिक कार्यपालिका से समन्वय का अभाव –** विशेषकर विकासशील देशों में लोकसेवी वर्गीय प्रशासन इस समस्या से ग्रस्त है। सेवी वर्गीय प्रशासन एवं राजनीतिक कार्यपालिका में समन्वय के अभाव के कारण बड़ी संख्या में न्यायालयों में विवाद पहुंचते हैं। सभी लोकतंत्रात्मक राष्ट्रों में लोक सेवकों एवं राजनीतिक कार्यपालिका के मध्य टकराव की स्थिति बनती है। लोक सेवक अपनी बातें मनवाने के लिए विभिन्न प्रकार के धरना प्रदर्शन आदि का सहारा लेते हैं।

2. **राजनीतिक कार्यपालिका एवं लोक सेवी वर्गीय प्रशासन में टकराव –** यह प्राय: देखा जाता है कि लोक सेवकों एवं राजनीतिक कार्यपालिका के मध्य विभिन्न मुद्दों पर विवाद की स्थिति बनती है प्राय: राजनीतिक कार्यपालिका के सदस्यों एवं उनके विभाग के लोकसेवकों के मध्य टकराव की स्थिति बनती है प्राय: राजनीतिक हस्तक्षेप उसका कारण बनता है यह स्थिति दोनों ओर से निर्मित होती है।

3. **नीति निर्धारण में एकाधिकार की समस्या –** प्राय: यह समस्या उत्पन्न होती है कि नीति निर्धारित करने वाले पदों पर लोक सेवकों का एकाधिकार रहता है। प्राय: यह प्रश्न सामने आता है कि आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में सरकार की असफलता का यह मूल कारण है। प्राय: यह शिकायत रहती है कि विभिन्न विशेषज्ञ विभागों में नीति निर्धारण का कार्य भी लोक सेवक ही करते है इस प्रवृत्ति का समस्त राष्ट्रों में विरोध होता है।

4. **कानूनी कार्यवाही की समस्या–** लोक सेवी वर्ग को प्राय: इस बात का भय रहता है कि यदि वे नियमानुसार कार्य करते हुए यदि भूलवश कोई त्रुटि कर दे तो उन पर कार्यवाही कर दी जाती है कई बार यह कार्यवाही राजनीतिक दबाव में अंजाम दी जाती है। विगत वर्षों में ऐसे कई मामले देखने को मिले हैं। भारत जैसे राष्ट्रों में यह एक बड़ी समस्या है।

5. **प्रतिबद्धता की समस्या –** प्राय: लोक सेवी वर्गीय प्रशासन पर आरोप लगता है कि वे शासकीय नीतियों के निर्माण में रुचि नहीं लेते हैं क्योंकि वे राजनीतिक कार्यपालिका से तटस्थ माने जाते है। उनसे ऐसी अपेक्षा की जाती है। प्राय: लोक सेवक राजनीतिक कार्यपालिका से अपेक्षित तालमेल नहीं बैठा पाते है।

6. **तटस्थता के सिद्धांत का उल्लंघन –** भारत जैसे लोक तंत्रात्मक राष्ट्रों में लोक सेवकों को राजनीतिक कार्यपालिका से तटस्थ माना जाता है लेकिन यह व्यवस्था वहाँ धारा प्रभावी होती है वहाँ एक दलीय या द्विदलीय व्यवस्था हो बहुदलीय शासन व्ययस्था में यह मॉडल अधिक उपयोगी नहीं है क्योंकि राजनीतिक सत्ता में बहुत से दलों की भूमिका रहती है।

लोक सेवी वर्गीय प्रशासन की समस्या हल करने के सुझाव – उपर्युक्त समस्याएँ यदि दूर हो जाये तो लोक सेवी वर्गीय व्यवस्था को ओर अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है –

1. **लोक सेवकों में विश्वास के बातावरण का निर्माण –** भारत एवं अन्य राष्ट्रों में लोकसेवक एवं राजनीतिक कार्यपालिका के मध्य उत्पन्न होने वाली टकराव की स्थिति को लोक सेवकों में विश्वास की भावना का निर्माण कर दूर किया जा सकता है। ऐसा करने पर लोक सेवकों एवं सरकार के मध्य उत्पन्न होने वाले टकराव को टाला जा सकता है।

2. **लोक सेवकों में प्रतिबद्धता का निर्माण –** लोक सेवी वर्गीय व्यवस्था तटस्थता से आबद्ध होती है किन्तु उन्हें राजनीतिक कार्यपालिका की नीतियों एवं योजनाओं को लागू करने हेतु प्रतिबद्ध होना होगा। लोक सेवकों को इस बात से कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए कि राजनीतिक दलों के सिद्धांत एवं विचार क्या है ?

3. **समन्वय की स्थापना –** प्राय: लोक सेवकों पर आरोप लगता है कि वे समस्त योजनाओं एवं नीतियों के निर्धारण में एकाधिकार के साथ प्रभावी भूमिका निभाते हैं इस हेतु विभिन्न विभागीय विशेषज्ञों एवं लोक सेवकों के मध्य समन्वय स्थापित करना चाहिए।

4. **लोक सेवकों के संरक्षण का प्रावधान –** राजनीतिक कार्यपालिका को यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रतिबद्ध लोक सेवकों से कार्य के दौरान भूलवश कोई त्रुटि हो जाए तो इसका निराकरण किया जाकर उनके संरक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए। इससे विश्वास की भावना उत्पन्न की जा सकेगी।

निष्कर्ष – लोकतंत्रात्मक शासन व्ययस्था वाले विभिन्न विकसित एवं

विकासशील राष्ट्रों में लोक सेवी वर्गीय प्रशासन का निरंतर विकास हो रहा है। विशेषकर द्वितीय युद्ध के पश्चात् एशियाई, अफ्रिकी तथा लेटिन अमेरिकी राष्ट्रों का विश्व राजनीति में पदार्पण हुआ। ये राष्ट्र विकासशील राष्ट्रों की श्रेणी में रखे गये। इन देशों में विकास की अवधारणा स्थापित करने हेतु लोक सेवी वर्गीय प्रशासन ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है एवं कर रहा है। यह संगठन विकसित राष्ट्रों की भांति यहाँ भी विकसित हो रहा है एवं कुशलता एवं दक्षता की ओर बढ़ रहा है। यद्यपि सेवी वर्गीय प्रशासन को विभिन्न चुनौतियों एवं समस्याओं का सामना करना पड़ा या पड़ रहा है। फिर भी इन देशों के विकास में इस वर्ग का ही विशेष योगदान है राजनीतिक कार्यपालिका की प्रतिबद्धता को साकार करना इस वर्ग की विशेषता है। यह संगठन लोकोपयोगी तंत्र विकसित करने एवं जवाबदेह वर्ग के रूप में अपनी प्रतिबद्धता सिद्ध करने हेतु अग्रसर है। कुछ समस्याएं दूर कर दी जाए तो इस संगठन को ओर अधिक प्रभावी एवं कारगर बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जैन, सी,एम.लोक सेवी वर्गीय प्रशासन, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
2. चतुर्वेदी, टी.एन., काम्पटेटिव पब्लिक एडमिनीस्ट्रेशन, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
3. शर्मा, हरिशचन्द्र, राज्य प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो जयपुर।
4. वीर गौतम, भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. पाण्डेय, आशुतोष, कार्मिक प्रशासन, विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
6. एडवांस इन डेवलपिंग ह्यूमन रिसोर्सेस, वोल्यूम -6 अगस्त 2004 एंड वोल्यूम 8 2006
7. मिनिस्टर ऑफ होम अफेयर्स, आर्गेनाइजेशन ऑफ सेन्ट्रल मिनिस्टर्स एंड डिपार्टमेंट्स।
8. सिंघई, नरेन्द्र के, रोशन बेकग्राउण्ड ऑफ ब्यूरोकेट्स पॉलिटिक्स साइंस रिव्यू, जयपुर अप्रेल-जून 1972
9. वार्षिक रिपोर्ट, भारत सरकार कार्मिक लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय 2006-07

****

संसद का मानसून सत्र और विपक्ष का हंगामा

डॉ. संदीप सिंह *

प्रस्तावना – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 79 के अनुसार 'संघ की एक संसद होगी जो राष्ट्रपति और दो सदनों से मिलकर बनेगी, जिनके नाम राज्यसभा और लोकसभा होगें।'

भारतीय संसद द्विसदनीय है जिसका अनिवार्य अंग राष्ट्रपति है। राष्ट्रपति किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है तथापि वह संसद का महत्वपूर्ण अंग है क्योंकि किसी भी विधेयक को कानून बनाने के लिए राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के रुप में उसकी स्वीकृति आवश्यक है। यह व्यवस्था ब्रिटिश पद्धति के अनुसार अपनाई गई है।

संसद के उच्च सदन को राज्यसभा और निम्न सदन को लोकसभा कहा जाता है। राज्यसभा राज्य इकाईयों का प्रतिनिधित्व करती है और लोकसभा सम्पूर्ण देश की जनता का प्रतिनिधि सदन है। राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रुप से राज्य इकाईयों द्धारा किया जाता है जबकि लोकसभा के सदस्यों का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष रुप से जनता द्धारा किया जाता है।

ससंद के अधिवेशन – संसद के वर्ष में कम से कम दो अधिवेशन बुलाना आवश्यक है। प्रथम अधिवेशन की अंतिम तिथि तथा दूसरे अधिवेशन की प्रथम तिथि के बीच छ: महीने से अधिक का अन्तर नहीं होना चाहिए। किसी भी सत्र को आहूत व सत्रावसान करने का अधिकार राष्ट्रपति को है। सामान्यत: प्रतिवर्ष संसद के तीन अधिवेशन (सत्र) बुलाये जाते है –

- बजट अधिवेशन – फरवरी से मई के मध्य
- मानसून अधिवेशन – जुलाई से सितम्बर के मध्य
- शीतकालीन अधिवेशन – नवम्बर से दिसम्बर के मध्य

मानसून अधिवेशन – नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद मानसून सत्र मिलाकर यह चौथा सत्र था। इससे पहले मोदी सरकार का संसद में कामकाज का अच्छा रिकार्ड था। पिछले सत्र में 122 प्रतिशत तक काम हुआ।

संसद का मानसून सत्र मंगलवार 21 जुलाई 2015 को भारी हंगामें के बीच शुरू हुआ। सोमवार को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आशा जताई थी कि विपक्ष सदन चलाने में पूरा सहयोग करेगा। लेकिन मंगलवार को ऐसा नहीं हुआ। पहले दिन सदन की कार्यवाही शुरू होते ही कांग्रेस ने ललित मोदी प्रकरण में घिरी सुषमा स्वराज, वसुन्धरा राजे और व्यापमं घोटाले में घिरे षिवराज सिंह चौहान के इस्तीफे की मांग की। लोकसभा में कार्यवाही शुरू होते ही हंगामा हुआ। कार्यवाही दिनभर के लिए स्थगित करनी पड़ी।

राज्यसभा में एकजूट विपक्ष ने कार्यवाही चार बार स्थगित करवाई। राज्यसभा में वित मंत्री अरूण जेटली ने ललित मोदी प्रकरण पर चर्चा की बात कही। इस पर विपक्ष ने कहा कि पहले सुषमा, वसुन्धरा राजे और शिवराज से इस्तीफे लिए जाऐं, तभी बात होगी। सरकार ने भी स्पष्ट किया कि किसी भी मंत्री का इस्तीफा नहीं लिया जायेगा। कांग्रेस को यदि चर्चा करनी है तो हम तैयार है।

कांग्रेस ने तय किया कि वह सदन की कार्यवाही नहीं चलने देगी। बुधवार को संसद के बाहर कांग्रेसी सांसद सरकार के खिलाफ काला फीता बांधकर प्रदर्शन करेगें। प्रदर्शन का नेतृत्व सोनिया गांधी व राहुल गांधी करेगें।

मानसून सत्र के दूसरे दिन बुधवार को भी संसद में काम नहीं हो सका। विपक्ष ललित मोदी प्रकरण व व्यापमं घोटाले में भाजपाई मंत्रियों के इस्तीफे की मांग पर अड़ा रहा। इससे भाजपा ने भी मोर्चा खोल दिया। संसद में चेताया यदि कांग्रेस नहीं मानी तो कांग्रेसी राज्यो की करतुते सामने लायेंगें। इस कड़ी में भाजपा ने उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री हरीश रावत के सचिव का स्टिंग वीडियो जारी किया। विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने ट्वीट कर कांग्रेस को परेशान किया। सुषमा के ट्वीट से कांग्रेस ने संसद के आगे प्रदर्शन रद्द कर दिया। काली पट्टी बांधकर आये सांसद चुपचाप सदनों में चले गये।

मानसून सत्र के दूसरे दिन सदन दो बार स्थगित हुआ। लोकसभा की कार्यवाही फिर शुरू हुई तो उपाध्यक्ष ने सांसदो से नियम 377 के तहत विशेष उल्लेख पटल पर रखने को कहा पर विपक्ष नहीं माना। कांग्रेस, वामदल, राजद, टीआएस सांसद आसन के सामने आकर नारे लगाने लगे। इस पर कार्यवाही स्थगित कर दी गई।

लोकसभा अध्यक्ष श्रीमती सुमित्रा महाजन ने कांग्रेस सांसदों को अनुशासनहीनता की कार्यवाही की चेतावनी दी तो सांसद और भड़क गए। मामला शान्त नहीं हुआ तो कार्यवाही स्थगित कर दी गई।

राज्यसभा में भी ऐसा ही हुआ, वित मंत्री अरूण जेटली सुषमा स्वराज के पक्ष में बोलने के लिए खड़े हुए तो विपक्ष उन पर हावी हो गया और कार्यवाही स्थगित करनी पड़ी।

तीसरे दिन संसद की कार्यवाही शुरू होते ही विपक्ष सरकार विरोधी नारे लिखी तख्तियां लेकर हगांमा करने लगा। कांग्रेस सांसद काली पट्टी बांधकर आए थे। उन्होंने आसन के निकट हंगामा किया। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी देखते रहे पर कुछ भी नहीं बोले। बार–बार व्यवधान के चलते दोनो सदन फिर स्थगित कर दिए गये।

गतिरोध के खिलाफ भाजपा सांसदो और उसके सहयोगी दलो ने कांग्रेस पर संसद नहीं चलने देने का आरोप लगाते हुए ससंद भवन परिसर में धरना दिया। धरनारत सांसद मांग कर रहे थे कि विपक्ष संसद की कार्यवाही सुचारू रुप से चलने दे ताकि जनहित के विभिन्न मुद्दों पर चर्चा हो सके।

आधा मानसून सत्र हंगामें की भेंट चढ़ जाने पर बाकी के सत्र में कार्यवाही को सुचारू रुप से चलाने के लिए सरकार ने सोमवार 3 अगस्त को सर्वदलीय बैठक बुलाई। इससे पहले भी दो बार सर्वदलीय बैठक बुलाई जा चुकी है, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकल सका। इस बार भी सर्वदलीय बैठक नाकाम रही। विपक्ष ने साफ किया कि दागियों के इस्तीफे देने पर ही वे सदन की कार्यवाही को चलने देगें।

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) राजस्थान स्नातकोतर महाविद्यालय, चिड़ावा, जिला – झुन्झुनू (राज.) भारत

संसद में बढ़ते गतिरोध को देखते हुए लोकसभा अध्यक्ष सुमित्रा महाजन ने सख्ती दिखाते हुए हंगामा करने वाले 25 सांसदो को नियम 374 ए के तहत पांच दिन के लिए निलम्बित कर दिया। ये सभी सदस्य कांग्रेस के हैं। लोकसभा में कांग्रेस के 44 सांसद हैं।

कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी ने इसे लोकतंत्र के लिए काला दिन बताया और कहा कि कांग्रेस मंगलवार से लोकसभा का पांच दिन के लिए बायकाट करेगी। राकांपा, आप, तृणमूल कांग्रेस, जेडीयू, राजद, सपा और वामदलों समेत 9 दलों ने कांग्रेस का साथ देने का फैसला किया। राज्यसभा व लोकसभा में विपक्ष ने जोरदार हंगामा किया। राज्यसभा की कार्यवाही को दो बार स्थगित करना पड़ा। फिर दिन भर के लिए स्थगित कर दी गई।

सोनिया गांधी के नेतृत्व में मंगलवार 4 अगस्त को कांग्रेस के 25 सांसदो के निलम्बन के खिलाफ प्रदर्शन किया गया। संसद परिसर में पार्टी सांसदो का नेतृत्व कर रही सोनिया गांधी ने सरकार के खिलाफ जमकर नारेबाजी की। सभी कांग्रेस सदस्य काली पट्टी बांधे हुए थे। सोनिया ने सांसदो के निलम्बन को लोकतंत्र की हत्या बताया और कहा, संसद नहीं चलने देगें। निलम्बन के विरोध में 9 दलों ने वाक आउट किया। सपा-राजद ने धरने में भाग लिया। हंगामे के बाद राज्यसभा में कार्यवाही स्थगित करनी पड़ी।

संसद के मानसून सत्र में हंगामा तो हर दिन हो रहा था पर मंगलवार 11 अगस्त को यह हंगामा हद पार कर गया। पक्ष-विपक्ष में हाथापाई की नौबत आ गई। विपक्ष और सत्ता पक्ष इस पर उलझे कि ललित मोदी प्रकरण और व्यापमं मुद्दे पर बहस किस नियम के तहत हो।

हंगामा बढ़ा तो लोकसभा अध्यक्ष श्रीमती सुमित्रा महाजन ने कहा कि मैं लोकसभा टीवी से अनुरोध करती हूँ कि वह देश को दिखाऐं कि हमारे कुछ सांसद किस तरह व्यवहार कर रहे हैं। स्पीकर ने कहा कि मैं बहुत दुखी हूँ, कागज फेकना सही नहीं है। 40-50 सांसद हैं जो सदन को चलने नहीं दे रहे हैं। इनकी तस्वीरे टीवी पर दिखाई जानी चाहिए ताकि देश के लोगों को पता चले कि ये 40-50 सांसद 440 सांसदो को काम नहीं करने दे रहे हैं।

राज्यसभा भी हंगामें के कारण बार-बार स्थगित की गई। दोपहर में कार्यवाही शुरू हुई तो उप सभापति पी जे कुरियन ने वित मंत्री अरूण जेटली से जीएसटी बिल से सम्बन्धित संविधान में 122वां संशोधन का प्रस्ताव रखने को कहा। जैसे ही वित मंत्री ने प्रस्ताव रखा, कांग्रेसी सांसद हंगामा करते उनके सामने आ खड़े हुए, नारे लगाने लगे। प्रस्ताव पर चर्चा नहीं हो सकी और सदन स्थगित कर दिया गया।

मानसून सत्र का आखिरी दिन (13 अगस्त) भी हंगामें की भेंट चढ़ गया। गुरूवार को 17 वें दिन हंगामें के बाद सदन को अनिश्चितकाल के लिए स्थगित कर दिया गया। संसद के मानसून सत्र में जीएसटी (वस्तु एवं सेवा कर) बिल के राज्यसभा में पास नहीं होने से केन्द्र सरकार को चिन्ता में डाल दिया है।

केन्द्र सरकार और कांग्रेस के बीच छिड़ी अहम की लड़ाई अब संसद से सड़क पर आ गई। गुरूवार को संसद सत्र समाप्त होते ही प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में एनडीए के दलों की बैठक हुई। प्रधानमंत्री ने दलो को आदेश दिया कि वे 543 संसदीय सीटों पर कांग्रेस की कारगुजारियों पर से परदा हटाएं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने हर सीट पर एक मंत्री और 4 सांसदों को जिम्मेदारी सौंपी और यह कहा कि हर सीट पर कांग्रेस विरोधी 50 रैलिया जरूर करें।

निष्कर्ष - संसद का मानसून सत्र गुरूवार 13 अगस्त को खत्म हो गया। केन्द्र की पूर्ण बहुमत की सरकार होने के बावजूद यह सत्र सही ढंग से नहीं चल सका और मात्र 44 सांसदो वाली कांग्रेस पार्टी ने संसद की कार्यवाही को बाधित रखा।

लोकसभा और राज्य को मिलाकर कुल 119 घण्टे बर्बाद हुए। लोकसभा-राज्सभा में 16 दिन में 176 घण्टे काम होना था लेकिन सिर्फ 57 घण्टे ही काम हुआ। 119 घण्टे का समय संसद में हंगामें के कारण बर्बाद हो गया।

संसद के इस सत्र में कांग्रेस के बायकाट या वॉकआउट के बाद 8 बार ही प्रश्नकाल हुआ। 16वें दिन ललित मोदी प्रकरण में सुषमा स्वराज को अपना पक्ष रखने के लिए और बहस के लिए कांग्रेस सहमत हुई लेकिन उसमें भी शोर शराबा और वॉक आउट हुआ।

व्यवधान के बीच लोकसभा में 10 में से 6 बिल पास हो गये। राज्यसभा में उत्पादकता सिर्फ 9 प्रतिशत ही रही। राज्यसभा में दो विधेयक ही पास हो पाए। तीन विधेयक वापस लिए गए। कामकाज के हिसाब से लोकसभा की उत्पादकता सिर्फ 48 प्रतिशत रही।

राजनीतिक दलों और सरकार को मिल-बैठकर अपनी कमियों पर विचार करना चाहिए। राजनीति करें लेकिन जनता के हितों की कीमत पर नहीं।

सदन की बैठक हर हाल में चलनी चाहिए और जो इसमें बाधक बने उसकी सदस्यता रद्द कर देनी चाहिए, तभी देश और लोकतंत्र चलेगा। संसद सदस्यों की बैठकों में उपस्थिति उनका दायित्व होना चाहिए। इस सम्बन्ध में अनुशासनात्मक कार्यवाही की व्यवस्था आवश्यक है। सर्वोपरि जरूरत संसद सदस्यों के लिए आचरण संहिता के निर्माण की है। वे देश को विधि निर्माण के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान करते हैं, उनका व्यवहार जनसामान्य के लिए उदाहरण व प्रेरणा का स्त्रोत बने।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, डॉ गीता चतुर्वेदी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2015
2. भारत का संविधान, डॉ बी.एल. फडिया, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2012
3. राजस्थान पत्रिका, 21 जुलाई से 14 अगस्त 2015
4. भारतीय राज व्यवस्था, एन.एम.शर्मा, दीपक अवस्थी, सिखवाल पब्लिकेशन, टोंक, 2015

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Social Emotional Learning : A Key for Personality Development

Prof. Akshata Amit kumar Gawade *

Introduction - Today in this world of globalizations Life skills become very important factor for the overall development of the human being. These life skills are inculcated in the process of socialization which means molding the character of the individual.This process starts from family. Schools and Colleges also plays very important role in developing the life skill and helps the students to achieve their goals in a proper way.

Life skills are "problem solving behaviors used appropriately and responsibly in the management of personal affairs. They are a set of human skills acquired via teaching or direct experience that are used to handle problems and questions commonly encountered in daily human life. The subject varies depending on societal norms and community development".

Social Emotional learning - It is a process for learning life skills, including how to deal with oneself, others and relationships and work in an effective manner. SEL helps in recognizing our emotions and learning how to manage those feelings.In dealing with others, SEL helps with developing sympathy and empathy for others, and maintaining positive relationships.SEL also focuses on dealing with variety of situations in a constructive and ethical manner.

Historical Influence - The term social emotional learning emerged from the research in social competence programs which could be applied to emotional intelligence. The contribution of **Daniel Goleman** is very important in the context of Social emotional learning. He had written a book called **Working with emotional intelligence** in which he mentioned the Emotional competencies which are very important in framing the social emotional learning programs which are implemented in western countries and also this trend is appeared in Indian context in educational system.

Objectives -

1. To study the concept of social-emotional learning.
2. To make aware the importance of social-emotional learning in personality development.

Research Methodology - This paper is prepared on the secondary sources by using various books, journals etc.

The Emotional competence important to Social emotional learning:

- **Personal Competence -** The personal competencies how we can control our tendencies:
- **Self-Awareness -** Knowing ones internal states, preferencies, resources and institutions.

In this regard the work of "Ervin Goffman" called' Presentation of self in everyday's life' plays very important role.

Emotional Awareness - One should able to recoignize his emotions and their positive and negative effects.

Accurate self-Assessment - It is very important thing in everyday's life to Know their strengths which will helpful to them to achieve best in their life and also about their limitations which in turn help them to where to stop.

Self-confidence - Self confidence plays very important role to face the challenges of the world. One can achieve his aims only when he has self-confidence. We aware of many great personalities of the world who are poor in born but by their self confidence they have changed their social class

- **Self-Regulation -**

Self-Control - Now a day the matter of self control become crucial thing in the students life which can drive their life and sudden change can possible through this. In students life many circumstances arises where they have to control themselves if they are not able to control then many negative things will arise in which their life will collapse.

- **Trustworthy -**

Conscienceness - Taking responsibility for personal performance. The students should not wholly depend on the teachers they should take the lead for their own development.

Adaptabitily - The life is ongoing changes. The student should able to develop the ability to face the changing world.

Innovation: In this world of technology there is innovation of many ideas and information the student should able to innovate new things.

- **Motivation -** Emotional tendencies that guide or facilitate reaching goals.

Achieved drives - Striving to improve or meet a standard of excellence. Motivation is very much require for the human being in any level of life to meet their goal. Here all section of the people like teachers, councilors role become very needful thing.

Commitment - Aligning with goals of the group or organization. These things very important to the students in time of doing projects and group discussions.

Optimism - Persistence in pursuing goals despite obstacles and setbacks: Many People in this world are facing many problems when they aim for achieving some aims and objectives in their life. In this situation motivation plays the role particularly for the students when they face many competitive exams and other things which is very much necessary in this world of globalization.

- **Social Competence -** These competencies very important

* Deptt. Of Sociology, Night College of Arts and Commerce, Kolhapur (Maharasthra) INDIA

to determine how we handle relationships. Social relationships arise in students life in each and every moments of their life. It may with concerning to the teachers, office staffs, peer-groups, and other persons in their way of student life so it is very important for the students to develop the tendency to develop good social relationships.

- **Empathy -** Awareness of others feelings, needs and concerns:**Understanding others** - It is very important for the students and the teachers to understand the problems of the students they may be normal or disabled, girls or boys. The students also understand their peer groups. This problem we face in our night college where the students work at day time. So adjustment is very much necessary in this regard.

Developing others - Sensing others needs and bolstering their abilities.Every student have their own ability to face the challenges of the world but some students not able to express their abilities so here the role of teachers very important to find out the capability and encourage them to develop their qualities.

Service orientation - Anticipating, recognizing and meeting students needs.It is the duty of every teacher to make available to the students all the things required for their development.

Leveraging diversity - Cultivating Opportunities through different kinds of people: The college should make available to the students various carrier oriented functions and the counseling centers and about the guidance of competitive programs and the various activities where the students can show their talents and brighten their future.

Political awareness - Every student also aware about the need of political system & leadership qualities also shoud be developed among them so that they can participate in the political life democratically & contribute to the country for creating just social system and to abolish the corrupt system.

Social Skills - Adeptness at including desirable responses in others: **Influence -** Wielding effective process for persuasion. The power of infusing others and influenced by others is very important factor among the students where they can acquire good qualities and avoid the negative tactics.

Communication - Listening Openly and sending convincing messages: It is very important among the students and teachers that their communication should be very effective and that should be in a convincing manner that their work can be done easily.

Conflict Management - Negotiating and resolving disagreement.Many a times it happens that conflict arises among the students and the teachers and also among the students themselves in many issues at that time it is very important for the students and the teachers to control their conflictive tendencies and to create the healthy atmosphere.

Leadership - This quality becomes very important among the students without whicy they cannot explore their ideas and avoid the injustice.

Change catalyst - Initiating and managing change.Change is taking place at a rapid rate in the society and teachers should help the students not only to face the change in the syllabus and changing pattern of examination but also about the changing social sphere.

Building bonds - Nurturing instrumental relationship.

Cooperation - It is very important in this complex world without which our work will not be done in time and satisfactory.

Team capabilities - This is very important to the students while doing the project and also the other things where they work in team.

Skills involved in SEL -

1. Recognizing emotions in self and others.
2. Regulating and Managing strong emotions.
3. Recognizing strength and areas of need
4. Listening and communicating accurately and clearly
5. Taking others perspective and sensing their emotions.
6. Respecting others and self and appreciating differences.
7. Identifying problems correctly
8. Setting positive and realistic goals
9. Problem solving, decision making and planning.
10. Approaching others and building positive relationships
11. Resisting negative peer pressures.
12. Co-operating and negotiating managing conflict and nonviolently
13. Working effectively in groups
14. Help-seeking and help giving
15. Showing ethical and social responsibility.

Benefits -

1. Improves positive behavior
2. Reduce negative behavior
3. Improve nonverbal skills: facial expressions, gestures and postures.
4. Social meaning and social reasoning important in problem solving.
5. Social meaning is ability to interpret others emotions and language and to be respond appropriately
6. Social learning is that ability to identify the problem, set goals and evaluate the possible solutions available.

Suggestions -

1. Implementing prevention programs in schools can help to increase competence and learning in students.
2. Student engagement in positive activities and involving parents, students and the community in planning, evaluating and implementing the program into the class room.
3. Social and emotional learning curriculum to be established.
4. Counselors also plays important role.
5. The Social responsibility attitude should be developed among the teachers and the students.

Conclusion - To conclude with I can say that students are the back bone of the society. The above mentioned qualities required to the students to face the challenges of the globalized world.They should handle in proper way and precaution should be taken by the teachers that their good qualities have to sharpened and negative things to be washed by the skill of the teacher then and then only they can become responsible citizen of the country.

References :-

1. Promoting Social and Emotional learning: Guidelines for educators by Maurice
2. Social and emotional learning in the classroom: Promoting mental health and academic success.- By Kenneth W. Merrel and Barbara A. Gueldner.
3. Working with Emotional Intelligence: Daniel Goleman.

बसोर समाज की महिलाओं का आर्थिक - सामाजिक सर्वेक्षण (रतलाम नगर के सन्दर्भ में)

डॉ. राज श्री शाह *

प्रस्तावना – म.प्र. की अनेक अनुसूचित जातियों में से एक अनुसूचित जाति है बसोर। इन्हें गाचियें के नाम से भी संबोधित किया जाता हैं। बसोर शब्द बाँस फोड़ने वालो का अपभ्रंश है। इस जाति के लोग 'बाँस' की वस्तुओं का बनाने के अलावा अन्य मजदूरी का भी कार्य करते हैं। शहरी सुविधाओं से दूर मेहनती गरीब बसोर समाज की महिलाओं को एक आशियाना की नसीब नहीं हैं। यदि नसीब है तो बांस डिंगला और छुरी। महिला उत्तरदाता का कहना है कि तीन पीढ़ियों से मैं इन्हीं को देख रही हूँ अब चाहती हूँ कि यह सब मेरे नसीब में नहीं हो, मेरे परिवार में सभी को अच्छी नौकरी प्राप्त हो ताकि महिलाओं को समाज में उच्च स्थान प्राप्त हो सके।

बांस की वस्तुओं को बनाने के अलावा ग्रामीण क्षेत्र में बैंड बाजा और शहरों में रंगाई-पुताई, आंगनबाड़ी, चपरासी, अध्यापक का भी कार्य किया जाता हैं। कुछ महिलाएँ बर्तन, झाड़ू-पौछे का कार्य भी समाज में मालूम न हो चुपचाप करती हैं। समाज का पिछड़ापन महिलाओं की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करता है। जीवन स्तर के निम्न साधन सुविधाओं का अभाव, स्वास्थ्य संबंधी समस्या, सामाजिक आर्थिक समस्याएँ अपने अधिकारों से वंचित, बसोर महिलाएँ समाज में उच्च स्थान प्राप्त करना चाहती हैं।

1. **शोध का उद्देश्य –** किसी भी शोध का मुख्य उद्देश्य ज्ञान की वृद्धि नये तथ्यों की खोज व पुराने तथ्यों की पुनपरीक्षा हैं। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए बसोर समाज की महिलाओं का समाज में सामाजिक स्थिति को जानने के लिए अध्ययन विषय का चुनाव किया गया हैं। रतलाम शहर के त्रिपोलिया गेट एंव आबकारी चौराहे के आस-पास रहने वाली बसोर जाति की महिलाओं के अध्ययन पर आधारित हैं। शहर में इनके लगभग 200 परिवार हैं।

2. **अध्ययन का क्षेत्र –**रतलाम नगर की महिला उत्तरदाताओं का उद्देश्य पूर्ण निर्दशन विधि से किया गया हैं।

3. **अध्ययन विधि –**प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची एवं द्वैतीयक स्त्रोतों के अध्ययन के लिए पुस्तकों पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन किया गया हैं।

4. **उपकल्पना –** बसोर समाज में महिलाओं की स्थिति निम्न हैं।
   1. बसोर जाति की महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति में सुधार आया हैं।
   2. सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार आया हैं।
   3. महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

यह अध्ययन आबकारी चौराहे और त्रिपोलिया गेट के आसपास रहने वाले परिवारों की ही नहीं बल्कि महिलाओं की हैं जिनकी देह पर फटी, मलीन साड़ियों से लिप्त छुरों से बांस को काटते-छिलते हुए उत्तरदाता कहते है कि मंत्रियो द्वारा सामाजिक समस्याओं को हल करने का आश्वासन दिया जाता हैं किन्तु वह वायदे पूरे नहीं होते। इस संदर्भ में उत्तरदाता की स्थिति को जानने का प्रयास किया हैं।

उत्तरदाता की स्थिति निम्न तालिका से स्पष्ट होती हैं।

तालिका क्रंमाक – 1

उत्तरदाता की सामाजिक स्थिति

क्रंमाक	स्थिति	संख्या	प्रति
1	अच्छी	3	15
2	खराब	10	50
3	सामान्य	7	35
	कुल	**20**	**100**

उत्तरदाताओं से अध्ययन करने से विदित होता है कि समाज में इनकी स्थिति बहुत अच्छी नहीं हैं। 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि समाज में इनका स्थान निम्न होने के कारण इन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं इन्हें आज भी उच्च समाज के लोग हेय दृष्टि से देखते हैं।समाज में इनको उच्च सम्मान प्राप्त नहीं होता। इनके साथ भेदभाव किया जाता हैं। 35 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा की समाज में उनकी स्थिति अच्छी हैं।

जीवन व्यापन के निम्न स्तर, सीमित साधन, विभिन्न सुविधाओं का अभाव, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं से पीड़ित महिलाओं ने कभी भी कॉपी, किताबें, कलम की बाते सुनी, बच्चों के हाथों में देखी किन्तु कुछ उत्तरदाताओं ने कभी पुस्तकों को हाथ नहीं लगाया।

साक्षात्कार में उत्तरदाता ने कहा कि बांस और छुर्रा ही हमारा जीवन हैं। मेरे पूर्वज भी यही कार्य करते आ रहें हैं और हम भी यही कार्य कर रहें है। मेरे बच्चे भी इन्हीं कार्यो को करते हे। क्या करे उच्च शिक्षा तो बच्चे प्राप्त कर नहीं सकते हैं अत: वह भी पति, बेटो के साथ सुबह से शाम तक टोकरी, छपडे, सूपडे, बीजना, पालना बनाते हैं।

निष्कर्ष – अध्ययन से विदित हुआ हैं कि समाज में बसोर जाति को महिलाओं की सामाजिक स्थिति निम्न ही हैं शिक्षा का प्रतिशत कम होने से यह आज भी परम्परागत रूप से ही जीवनयापन करती हैं अपने अधिकारों की मांग पुरूषों से नहीं करती। बुर्जुग महिला भी नहीं चाहती है कि उनकी बहु बेटिया आधुनिक तरीके से रहे, अधिकारों की मांग करें।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

तालिका क्रंमाक – 2

उत्तरदाता पर्दा प्रथा के पक्ष में

पर्दा प्रथा के पक्ष में	संख्या	प्रतिशत
हाँ	13	65
नहीं	07	35
कुल	**20**	**100**

औद्योगिकरण एवं नगरीकरण के कारण आज पर्दाप्रथा का धीरे–धीरे अन्त हो रहा हैं एक समय था जब परिवार की छोटी से छोटी बुर्जुग महिला तक पर्दा प्रथा करती थी। शिक्षा, टी.वी. शहरीकरण का प्रभाव महिलाओं में दिखाई देता है। इसी संबंध में महिला उत्तरदात्ताा से पर्दा प्रथा के बारे में जानकारी चाही तो 65 प्रतिशत उत्तरदाता चाहते है कि महिलाओं को पर्दा करना चाहिये पर्दा रखने से बुर्जुगो एव बड़ो के प्रति सम्मान मिलता हैं। पर्दे से पूरा चेहरा ढ़का होना चाहिये या थोडा–थोडा खुला तो उन्होनें साक्षात्कार में कहा कि सिर पर साड़ी और पूछने पर थोड़ा–थोड़ा चेहरा तो ढ़का होना चाहिये। मात्र 35 प्रतिशत उत्तरदाता चाहते हैं कि सिर ढ़का हो किन्तु आज जब अन्य समाजों में महिलाएँ सिर पर पर्दा नहीं रखती हैं तो उनके लिए भी पर्दा रखना बंद कर देना चाहिये।

तालिका क्रंमाक – 3

उत्तरदाता की शैक्षणिक स्थिति

क्रंमाक	शैक्षणिक स्थिति	संख्या	प्रति
1	प्राइमरी	5	25
2	मिडिल	4	20
3	हाई स्कूल	1	5
4	अशिक्षित	10	50
	कुल	**20**	**100**

उपर्युक्त बसोर जाति की महिला उत्तरदाताओं में शिक्षा के प्रति सम्मान कम हैं। आज भी इन उत्तरदाताओं में साक्षरता का अभाव है 50 प्रतिशत महिलाएँ अशिक्षित हैं। इनमें से 5 महिलाओं को अपना नाम लिखना आता हैं और 5 महिलाओं को अपना नाम भी लिखना नहीं आता। 25 प्रतिशत महिलाऐं प्राइमरी, 20 प्रतिशत महिलाऐं मिडिल और 5 प्रतिशत महिलाऐं हाईस्कूल की शिक्षा प्राप्त की हैं।

विभिन्न प्रकार की सरकारी सुविधाएँ, निशुल्क शिक्षा करवाने के बावजूद भी शिक्षा के प्रति उनका रूझान कम हैं। लेकिन उत्तरदाता अपने बच्चों को पढ़ाने के प्रति रूझान रखते हैं। वो नहीं चाहते हैं कि उनके बच्चे अनपढ़ रहें गली–गली घूमते रहें, बास और छुर्रा उनके हाथों में हों।

तालिका क्रंमाक – 4

बच्चों को शिक्षित करने के पक्ष में

शिक्षित के पक्ष में	संख्या	प्रतिशत
हाँ	20	100
नहीं	00	–
कुल	**20**	**100**

शत प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि हमने तो अध्ययन किया हैं पर हमारे बच्चे निरक्षर नहीं रहे। वह उनको अच्छा शिक्षा देकर अच्छे पद पर काम करता देखना चाहती हैं वो नहीं चाहतीं उनके बच्चें परम्परागत व्यवसाय को अपनाएँ।

तालिका क्रंमाक – 5

स्वास्थ्य संबधी जागरूकता

क्रंमाक	जागरूकता का स्तर	संख्या	प्रति
1	हाँ	10	50
2	नहीं	6	30
3	उदासीन	4	20
	कुल	**20**	**100**

एक स्वास्थ्य हजार नियामत यदि महिला स्वंय स्वास्थ्य के प्रति जागरूक है तो वह पूरे परिवार को स्वास्थ रख सकती हैं स्वस्थ शरीर स्वस्थ मानसिकता को जन्म देता हैं स्वस्थ मानसिकता व्यक्तित्व विकास एवं राष्ट्र विकास में सहायक हैं। उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि 50 प्रतिशत महिलाऐं स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हैं, 30 प्रतिशत उत्तरदाता स्वास्थ्य के प्रति जागरूक नहीं हैं और 20 प्रतिशत ने तो स्वास्थ्य के प्रति कोई जवाब नहीं दिया वे स्वास्थ्य के प्रति उदासीन ही हैं।

निष्कर्ष –शहर में औषधालय ओर चिकित्सालय हैं किन्तु बीमार रहने पर डॉ. को दिखाने के प्रति महिलाओं को उदासीन नहीं होना चाहियें। स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहने के लिए उनकी बस्तियों में शिविर लगाना चाहियें। घर में साफ–सफाई एंव स्वच्छ रहने का प्रशिक्षण देकर स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहें। उत्तरदाताओं से मिलने पर विदित हुआ है कि उनके घरों में साफ–सफाई का अभाव है। घर कच्चे, टुटे फुटे हैं अत: उनको प्रशिक्षण देकर स्वस्थ रहने की आवश्यकता हैं। अनेक घरों में शौचालय भी नहीं हैं। छोटे–छोटे बच्चे तो आज भी सड़क पर बाहर शोच करते हैं जो स्वस्थ पर्यावरण में बाधक हैं।

तालिका क्रंमाक – 6

राजनीति में भाग लेने हेतु

क्रंमाक	भाग लेने हेतु	संख्या	प्रति
1	हाँ	02	10
2	नहीं	18	90
	कुल	**20**	**100**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 90 प्रतिशत उत्तरदाता राजनीति में भाग लेना नहीं चाहती हैं वह किसी भी तरह से चुनाव लड़ने के पक्ष में नहीं हैं। लेकिन अच्छी सरकार का चयन हो इसलिए वोट देने के पक्ष में तो हैं।

धार्मिक एवं सामाजिक समस्याऐ शत–प्रतिशत बसोर जाति भी स्वंय चाहती है कि जब संविधान में ही छुआ–छुत की भावना नहीं है तो सामाजिक तौर पर भी छुआ–छुत की भावना नहीं होना चाहियें। अधिकांश उत्तरदाता स्वीकार करते हैं कि नगर में तो अब उनके साथ जातिगत भेदभाव नहीं होता हैं।

तालिका क्रंमाक – 7

व्यवसाय संबंधी जानकारी

क्रंमाक	व्यवसाय	संख्या	प्रति
1	बांस में वस्तुओं का निर्माण	15	75
2	मजदूरी करना	3	15
3	नौकरी करना	1	05
4	अन्य कार्य करना	1	05
	कुल	**20**	**100**

उत्तरदाता से साक्षात्कार करने पर विदित हुआ हैं कि 75 प्रतिशत महिलाऐं तो बांस से टोपले सूपडे, पंखा आदि बनाते हैं यह पुश्तेनी व्यवसाय

ही करते हैं शेष 15 प्रतिशत महिलाऐं अन्य कार्य व मजदूरी करती हैं। महिलाओं दुसरो के घरों में चोरी चुपके बर्तन एवं झाडू पोछे कपड़े साफ करने का कार्य करती हैं। चुप चुप करने के पीछे उनका उद्देश्य समाज को नहीं बताना है क्यों कि उनके समाज में यह कार्य अच्छा नहीं माना जाता हैं।

इस प्रकार अध्ययन से यह स्पष्ट है कि बसोर समाज में महिलाओं की स्थिति निम्न हैं ।

1. बसोर समाज में महिलाओं की स्थिति पुरूषों से निम्नतर हैं।
2. आर्थिक दृष्टिकोण से समाज कमजोर हैं।
3. शैक्षणिक दृष्टिकोण से समाज में साक्षरता का प्रतिशत कम हैं।
4. महिलाएॅं आज भी परम्परागत कार्य करती हैं।
5. परिवार में समस्त निर्णय पुरूषों द्वारा ही लिये जाते है ।

सुझाव– इस प्रकार प्राप्त समाज में महिलाओं और समाज को उच्च स्थान प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण कदम शिक्षा प्राप्त करना हैं। उच्च शिक्षाा के माध्यम से महिलाएँ समाज के उच्च पद को प्राप्त कर सकती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पत्रिका 20.12.2013
2. सर्वेक्षण पर आधारित
3. राम अहुजा – भारतीय सामाजिक व्यवस्था 1995

****

ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों क सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धियो का अध्ययन

डॉ. दीपिका गुप्ता *

प्रस्तावना – वर्तमान में हम बेरोजगारी एवं अनुपयुक्त रोजगार जैसी बड़ी समस्या से गुजर रहे हैं। देश की उन्नति वहां की शिक्षा व स्वस्थ्य की समुचित व्यवस्था पर निर्भर करती हैं। शिक्षा को उद्देश्यपरक और उपयोगी बनाने के लिए उसमें समयानुसार परिवर्तन अपेक्षित होता है, जिससे बालक एवं बालिकाएं राष्ट्रोत्थान में अपनी सकुशल भूमिका निभा सके। आधुनिक शिक्षा व्यक्ति की योग्यता पर निर्भर करती है। शिक्षा समाज के सदस्यों में सुधार लाने का साधन है। यह सुधार शिक्षक द्धारा लाया जाता है। शिक्षक उचित वातावरण के द्धारा लाया जाता है। शिक्षक उचित वातावरण के द्धारा व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा के प्रक्रिया की व्यवस्था करने के लिए जिम्मेदार होता है।

आज हमने नामांकन में लगभग 100 प्रतिशत सफलता प्राप्त कर ली है, पर आज भी अपव्यय व अवरोधन की समस्या यथावत बनी हुई हैं जिससे वह परीलक्षित होता है कि कहीं ना कहीं हमने समय की जरूरत व रूचि को पाठ्यक्रम के निर्माण में ध्यान नहीं दिया है।

आज भी स्कूलों से विद्यार्थियों का अपव्यय अवरोधन निरंतर जारी हैं। जिसमें कहीं ना कहीं पाठ्यक्रम का अरूचिपूर्ण होना भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अत: हमें छात्रों की रूचि का विशेष ध्यान हर विषय में देना चाहिए। माध्यमिक स्तर की बात करें तो विषय का दायरा और बढ़ जाता है, अब उनके सामने हिंदी, गणित, विज्ञान के अलावा अंग्रेजी, संस्कृत व सामाजिक अध्ययन सामने आते हैं। अब विद्यार्थियों की रूचि किसी एक या दो विषयों में उभरकर सामने आने लगती है।

सामाजिक अध्ययन विषय में प्रारंभिक स्तर पर भूगोल, इतिहास व नागरिक शास्त्र का समावेश किया जाता है। जिससे विद्यार्थियों में विषय के तथ्य सिद्धांत, ऐतिहासिक व वर्षा रेखाचित्रों में भ्रम उत्पन्न होता है। अत: विद्यार्थियों की उपब्धि न्यूनतम रह जाती है।

आज भी हमारे सरकारी ग्रामीण विद्यालयों में वह सुविधाऐं नही मिल पाती जो कि सरकारी शहरी विद्यालयों में उपलब्ध हो जाती है जिसका सीधा असर विद्यार्थीयों के अध्ययन में रूचि तथा शैक्षणिक उपलब्धि पर पड़ता है। अध्ययनकर्ता ने महसूस किया कि इस संबंध में अध्ययन कर, कारणों को और अधिक रूचिकर बनाया जा सके।

उद्देश्य–

1. ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की समाजिक विज्ञान में उपलब्धि के माध्य अंकों का तुल्नात्मक अध्ययन करना।
2. ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की रूचि का तुल्नात्मक अध्ययन करना।
3. सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि के आपसी संबंधों का अध्ययन करना।

उपकल्पना–

1. सामाजिक विज्ञान में ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. सामाजिक विज्ञान में ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की रूचि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में रूचि व विद्यार्थियों की उपलब्धि में कोई सार्थक संबंध नहीं है।

सीमाएं–

1. यह अध्ययन भोपाल जिसे से प्राप्त न्यादर्श पर आधारित है।
2. यह अध्ययन सिर्फ कक्षा 8वीं के 200 विद्यार्थियों के अध्ययन पर आधारित है।
3. अध्ययन के लिए केवल राज्य शासित शासकीय विद्यालयों को चुना गया है।
4. यह अध्ययन केवल भोपाल जिले के संदर्भ में होगा।

अध्ययन की पद्धति – प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रदत्यों का संकलन मध्यप्रदेश के भोपाल जिले में किया गया है। यहां कि विकास खंड़ों के ग्रामीण और शहरी विद्यालयों से कक्षा आठवीं के बालक–बालिकाओं का चयन किया गया, जो राज्य शासित शासकीय विद्यालयों में पढ़ते हैं। प्रदत्तों को यदृच्छिक न्यादर्श के आधार पर चुना गया। क्योंकि इससे पक्षपात से मुक्ति मिलती है। व्यक्तिगत पक्षपात के लिए इस विधि में कोई स्थान नहीं रह जाता। यह समष्टि का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करता हैं, समय व धन के दृष्टिकोण से यह विधि कम खर्चीली है। यह विधि वैज्ञानिक तथा सरल है, लेकिन प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श का चयन सुविधानुसार सोद्देश्य व साद्दच्छिक विधि से किया गया हैं।

प्रस्तुत अध्ययन हेतु विद्यालयों के कक्षा आठवीं को चुना जिसमें से 50 प्रतिशत विद्यालय शहरी व 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के थे। शोध हेतु संपूर्ण कक्षा से 25–25 विद्यार्थियों को चुना। अत: याद्दच्छिक न्यादर्श का प्रयोग किया गया। चयन की गई शालाओं में समान सामाजिक, आर्थिक स्तर के बालक–बालिकाएं अध्ययनरत है। अत: इन शालाओं का चयन किया गया है। इस प्रकार 200 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या–

परिकल्पना क्रंमाक–1 सामाजिक विज्ञान में ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

* अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रस्तुत परिकल्पना की जांच के लिए 'टी' का मान निकाला गया।

तालिका क्रंमाक 1.0 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रंमाक 1.0 से ज्ञात होता है कि ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का मध्यमान प्राप्तांक क्रमाश: 100.52 एवं 101.95 है इसमें अधिक अंतर नहीं पाया गया। प्राप्त 'टी' परीक्षण का मान 0.05 के मान से कम है अत: यह सार्थक मूल्य नही है।

अत: यह परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: यह बताया जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में शैक्षणिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना क्रंमाक - 2 - ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

प्रस्तुत परिकल्पना की जांच के लिए 'टी' का मान निकाला गया।

तालिका क्रंमाक 2.0 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 2.0 से ज्ञात होता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि का मध्यमान प्राप्तांक क्रमश : 90.00 व 89.22 है।इसमें समानता पायी गई। प्राप्त 'टी' परीक्षण का मान 0.37 है, जो कि विश्वास स्तर 0.05 के मान से कम हैं। अत: यह सार्थक नही है।

अत: यह परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत यह बताया जा सकता है कि ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन की रूचि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना क्रंमाक-3 - ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में रूचि व विद्यार्थियों की उपलब्धि में कोई सार्थक संबंध नहीं है।

तालिका क्रमांक 3.0

सामाजिक अध्ययन में उपलिब्ध व रूचि का संबंध दर्शाने का विवरण

चर	सहसंबंध गुणांक
सामाजिक अध्ययन में रूचि	0.06
सामाजिक अध्ययन में उपलब्धि	

सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व उपलब्धि में के आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि विद्यार्थियों कि सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में सहसंबंध गुणांक 0.06 है। अत: यह स्पष्ट है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं सामाजिक अध्ययन में रूचि के बीच नगण्यात्मक सहसंबंध है। अर्थात् शैक्षिक उपलब्धि में सामाजिक अध्ययन में रूचि बढ़ने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता हैं या उनमें कोई विशेष संबंध नहीं है। अभिभावकों व शिक्षकों का दबाव, उच्च अंक प्राप्त करने की अभिलाषा भी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करती है।

निष्कर्ष - इस शोध के निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए-

1. ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों में सामाजिक अध्ययन के शैक्षणिक उपलब्धि मध्यमान क्रमश 101.95 व 100.52 पाया गया। अत: इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि इनमें सार्थक अंतर नही है।
   ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की उपलब्धि में समानता इस बात का परिचायक है कि आज समाज शिक्षा के महत्व से इंकार नही कर सकता। उसने इसे स्वीकार किया है फिर चाहे वह ग्रामीण क्षेत्र हो या शहरी, जागरूकता समान है।
2. ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि का मध्यमान क्रमश: 90.00 व 89. 22 है, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनो में कोई सार्थक अंतर नही है।
   ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की रूचि में समानता की वजह यह हो सकती है कि आज ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में कोई विशेष अंतर नही रह गया है। शासकीय विद्यालयों मे सभी को समान सुविधाऐं उपलब्ध है जो उन्हें रूचि व उपलब्धि स्तर को समान बनाए रखने हेतु जिम्मेदार है।
3. सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि व सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि में सहसंबंध 0.06 है जो नगण्यात्मक है इस बात का प्रमाण है कि सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में कोई विशेष संबंध नहीं है।

सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में विशेष संबंध के अभाव से स्पष्ट है कि उपलब्धि को केवल रूचि ही प्रभावित नहीं करती बल्कि अन्य कारक तथा शिक्षक का अभिभावक का या परीक्षा में उच्च प्राप्तांक प्राप्त करने का दबाव भी प्रभावित करता है। आज के प्रतियोगिता के युग में विद्यार्थी को हर विषय पढ़ना ही पढ़ता है। वह उच्च अंक प्राप्त करने के लिए अध्ययन करता है। आज बालक उच्च अंक प्राप्त किये बिना आगे के अध्ययन हेतु वांछित विषय प्राप्त नहीं कर सकते। अत: वे उच्च अंक प्राप्ति हेतु कठोर परिश्रम करते हैं। किसी एक या दो विषय की वजह से विद्यार्थी, अपनी संपूर्ण प्राप्तांक को प्रभावित नहीं करना चाहते। अत: उनमें रूचि हो न हो वो उच्च अंक प्राप्त करना चाहते हैं।

निष्कर्ष के आधार पर विश्लेषण-

1. विद्यार्थियों के समाजिक अध्ययन की शैक्षणिक उपलब्धि तथा रूचि पर ग्रामीण व शहरी परिवेश का कोई विशेष असर नही पड़ता है।
2. विद्यार्थियों की रूचि उनकी उपलब्धि को अधिक प्रभावित नहीं करती है। अत: विद्यार्थियों की रूचि कम हो तो भी परेशान नहीं होना चाहिए।
3. शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले कारकों को पता लगाकर कम करने वाले को घटना व शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने वाले कारकों को बढाने का प्रयास करना चाहिए।
4. कुछ बातें जो विद्यार्थियों को पसंद नहीं हैं, जैसे किताब का मोटा होना आदि को कम करने का प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जे.सी. (1994), सामाजिक अध्ययन शिक्षण, नई दिल्लह : विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0।
2. भोंडे, नीलम (2003), पढ़ाने का तरीका स्कूल टुडे, अक्टूबर 2003, एम. पी. नगर भोपाल।
3. बोंद किरण, समूजा (2004), शिक्षा एक विवेचन, नई दिल्ली : रवि बुक्स यमुना बिहार।
4. गैरेट, ई. एच. (1667), शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी, लुधियाना:कल्याण प्रकाशन।
5. खरे, अंजलि (1993-94), सामाजिक अध्ययन विषय में पर्याचरण के प्रभाव से शैक्षिक उपलब्धि में पड़ने वाले अंतर का अध्ययन, अप्रकाशित शोध, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय।
6. कौल, लोकश (1998), शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली , नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0।
7. Marlo, Edigeer (2007), 'Developing appereciation for the social studies' Edutracks Vol. 7 No. 1 Neek Janak Publication Pvt. Hyderabad A.P. India.

8. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005-2006), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद-2006 प्रकाशन विभाग के कार्यालय नई दिल्ली।
9. पाठक पी.डी. (1995), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा - विनोद पुस्तक मंदिर।
10. राजौरिया, एम. (1998), कक्षा पांच में अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरण संबंधी कठिन अवधारणाओं का अध्ययन, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय एम. एड. अप्रकाशित शोध प्रबंध।
11. राय पी. (1989), अनुसंधान परिचय, आगरा : विनोद प्रकाशन।
12. शर्मा आर. ए. (1986), शिक्षा अनुसंधान, मेरठ, लायल बुक डिपो।
13. तोमर गीता (2002), ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में कक्षा आठवीं के सामाजिक अध्ययन की भूगोल विषयांश कठिन शिक्षण बिन्दुओं का तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित शोध, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय।
14. त्यागी, गुरशरण दास (2007), सामाजिक अध्ययन शिक्षण, आगरा विनोद पुस्तक मंदिर।
15. वर्मा, प्रीति व श्रीवास्तव डी. एन. (1989) मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, आगरा विनोद पुस्तक भंडार।

तालिका क्रंमाक 1.0

ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन की उपलब्धि संबंधी तालिका

चर	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वंतत्रता अंश	टी का
शैक्षणिक उपलब्धि	ग्रामीण	100	101.95	24.09	1.98	0.547
	शहरी	100	100.52	26.70		

सार्थकता स्तर 0.05 स्तर पर = 1.97 df = .198

तालिका क्रंमाक 2.0

ग्रामीण विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि संबंधी तालिका

चर	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वंतत्रता अंश	टी का
रूचि	ग्रामीण	100	90.00	5.61	1.98	0.37
	शहरी	100	89.22	7.68		

सार्थकता स्तर 0.05 स्तर पर = 1.97 df = .198

****

घरेलू हिंसा समस्या एवं समाधान

ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना – नेशनल फेमेली हेल्थ सर्वे 2006 में भारत सरकार द्वारा कराये गये रिसर्च के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत महिलाएँ अपने ही घर में मारपीट की शिकार होती है। प्लानिंग कमीशन की आर्थिक सहायता से युगान्तर एज्यूकेशन सोसायटी द्वारा किये गये पाँच राज्यों के सर्वे बताते है कि भारत में 84 प्रतिशत महिलाओं के साथ जीवन में कभी न कभी घरेलू हिंसा होती है। वाशिंगटन पोस्ट के अनुसार विश्व की प्रत्येक चार में से एक महिला अपने जीवनकाल में घरेलू हिंसा सहती है। कुल घरेलू हिंसा के मामलों में 85 प्रतिशत महिलाएँ पीड़ित होती है। अधिकांश महिलाएँ अपने निकट संबंधियों द्वारा की गई हिंसा का शिकार होती है। 20 से 24 वर्ष की उम्र की लड़कियों के साथ घरेलू हिंसा होने का जोखिम सबसे अधिक होता है। जो बच्चे घर में घरेलू हिंसा होती देखते है उन परिवारों में घरेलू हिंसा उसके अगली पीढ़ी में उतरती दिखाई देती है। ऐसे लड़के जो घरेलू हिंसा को देखते है वे बड़े होने पर अपने जीवन साथी तथा बच्चों पर घरेलू हिंसा करते पाये गये है। इसके अलावा अनगिनत संख्या में महिलाओं द्वारा की गई आत्महत्याओं तथा महिलाओं की हत्याओं में एक तथ्य उभरकर आता है कि घरेलू हिंसा सहन करने के कारण महिलाओं पर घरेलू हिंसा ओर बढ़ती जाती है। अधिकांश मामलों में यह देखा गया है कि महिला यदि घरेलू हिंसा के प्रारंभिक दौर में विरोध नहीं करती है तो घरेलू हिंसा की मात्रा एवं भयानकता बढ़ती जाती है। अतंत: या तो महिला तलाक लेकर परिवार से अलग हो जाती है या आत्महत्या कर लेती है या उसकी हत्या हो जाती है।

घरेलू हिंसा को रोकने के लिए सुझाव – विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की जून 2013 की ताजा रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के लगभग सभी देशों में महिलाएँ अपने जीवन साथी के द्वारा की जाने वाली घरेलू हिंसा का शिकार हो रही हैं। इसलिए इस विश्व व्यापी समस्या को रोकने के लिए कुछ ठोस उपाय करने आवश्यक हैं। घरेलू हिंसा पर नियंत्रण व्यक्तिगत, समाज एवं सरकार तीनों स्तर पर प्रयास के द्वारा ही हो सकता है। इन तीनों स्तर पर घरेलू हिंसा रोकने के कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्न प्रकार हो सकते है।

समाज के स्तर पर –

- घरेलू हिंसा रोकने के लिए सर्वप्रथम व्यक्तियों एवं समुदाय को घरेलू हिंसा के संभावित लक्षण तथा घरेलू हिंसा के प्रकारों से परिचित करना आवश्यक हैं। घरेलू हिंसा केवल शारीरिक मारपीट के रूप में नहीं होती वरन् मौखिक, भावनात्मक, आर्थिक, यौनिक प्रकार से भी होती हैं। सामाजिक स्तर पर घरेलू हिंसा के सभी प्रकार से लोगों को अवगत कराना आवश्यक हैं।
- घरेलू हिंसा की समस्या से निपटने के लिए समाज को शिक्षित करना आवश्यक है। इसके लिए स्थानीय स्तर पर वार्ता, सेमिनार, व्याख्यान आदि के द्वारा समाज को घरेलू हिंसा के कारण, प्रभाव दुष्परिणाम एवं समस्या से निपटने के लिए किए जाने वाले उपायों को समझाना चाहिए। इसके लिए स्कूल कॉलेज, सामाजिक एवं धार्मिक संगठनों की मदद ली जा सकती हैं। इन वार्ताओं, सेमिनार एवं व्याख्यानों में घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के अनुभवो को बताकर भी घरेलू हिंसा के प्रभावों को समझाया जा सकता है।
- घरेलू हिंसा को रोकने के लिए प्रत्येक समाज को इसके विरूद्ध संगठित हो जाना आवश्यक है। यदि प्रत्येक समाज घरेलू हिंसा करने वाले अपने समाज के सदस्यों की सार्वजनिक रूप से भर्त्सना करें या उनका सामाजिक बहिष्कार करें तो घरेलू हिंसा को रोकने में मदद मिल सकती हैं। समाज के स्तर पर यह संदेश जाना चाहिए कि महिलाओं पर घरेलू हिंसा किसी भी दशा में सहन नहीं की जाएगी।
- समुदाय शिक्षित एवं संगठित करने के साथ–साथ घरेलू हिंसा से निपटने के लिए समाज को नवीन तकनीक से जोड़ना भी आवश्यक है। समाज की प्रत्येक महिला के पास स्मार्ट फोन होना चाहिए तथा उसमें सुरक्षा एप डाउनलोड किया जाना चाहिए जो इस प्रकार डिजाइन किया जाना चाहिए कि महिला के साथ घरेलू हिंसा होने पर आसानी से सपोर्ट नेटवर्क को सूचना मिल जाए और पीड़िता की मदद की जा सके। वर्तमान में इस तरीके के एप नि:शुल्क उपलब्ध है।
- घरेलू हिंसा को रोकना व्यवसायिक दृष्टिकोण से रोकना भी अत्यंत आवश्यक हैं। घरेलू हिंसा के कारण अर्थव्यवस्था एवं कंपनियों का व्यर्थ कार्यहीन समय के कारण करोड़ों रूपये का नुकसान होता है। इसलिये प्रत्येक व्यवसाय या कंपनी के मालिक एवं उच्च अधिकारियों का यह कर्तव्य है कि वे अपनी संस्था में कार्य करने वाली महिला कर्मचारियों की घरेलू हिंसा की समस्या एवं उसे रोकने के उपायों के बारे में अवगत कराएं तथा घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं की सहायता करें। आस्ट्रेलिया की नेशनल बैंक अपनी महिला कर्मचारियों को घरेलू हिंसा के कारण होने वाले अवकाश के लिए उन्हें वेतन देती है जो उसे इस प्रकार की हिंसा घटनाओं से निपटने में मदद करती है।

व्यक्तिगत स्तर पर – प्रत्येक व्यक्ति को घरेलू हिंसा से निपटने के लिये व्यक्तिगत स्तर पर निम्न प्रयास करना चाहिए –

- यदि आप घरेलू हिंसा का सामना कर रही महिला के पड़ोसी हो तथा यदि आपको हिंसा की स्थिति की आवाज सुनाई दे तो चाय या शक्कर माँगने के बहाने उनके घर की घण्टी बजाना चाहिये। ऐसा करने से तात्कालिक रूप से ही सही घरेलू हिंसा रोकने में आप सफल होंगी। यदि आपको गंभीर परिस्थिति दिखें तो आप किसी अन्य व्यक्ति को मदद के लिये बुला सकती है जिससे घटना का एक चश्मदीद गवाह भी बढ़ जाएगा।
- घरेलू हिंसा की स्थिति के मध्य अवरोध पैदा करना उस समय खतरनाक हो सकता है जब उत्पीड़क के पास कोई खतरनाक हथियार हो या वह

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ (म.प्र.) भारत

नशे में हो। ऐसी दशा में पुलिस की सहायता लेना चाहिए तथा पुलिस की सहायता उपलब्ध न हो पाने की स्थिति में दूसरे पड़ोसी या घर के अन्य सदस्य की सहायता लेना चाहिए।

- प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह घरेलू हिंसा को रोकने के लिए हमेशा तैयार रहे यदि आपका पड़ोसी, मित्र, सहकर्मी, सहपाठी, माता, बहन, बेटी, बहू, भतीजी आदि यदि घरेलू हिंसा का सामना कर रही हो तो आप उन्हें बताए कि आप स्वेच्छा से चश्मदीद गवाह बनना चाहते है तथा आप उसकी ओर से मामले में हस्तक्षेप करने के लिये तैयार हैं। इसके अलावा यदि उसे आवश्यकता हो तो अपने घर में शरण देने की भी पेशकश की जाना चाहिए।
- यदि घरेलू हिंसा का मामला सामान्य हस्तक्षेप से सुलझता न दिखता हो तो ऐसी दशा में स्थानीय आपातकालीन नंबर पर पुलिस को सूचना देना चाहिए। पुलिस को घटना के स्थान, नाम सम्पर्क नंबर आदि की जानकारी तुरन्त प्रदान करना चाहिए।
- घरेलू हिंसा की शिकार महिलाएँ कई बार भावनात्मक रूप से बहुत कमजोर होती है तथा अपने आपको पूरी तरह से अलग महसूस करती है। इस दशा में आप उसे यह विश्वास दिलाने की कोशिश करें कि आप उस पर पूर्ण विश्वास करती हैं तथा इसे प्यार से समझाकर घरेलू हिंसा से निपटने में मित्रवत मदद करने का विश्वास दिलाये।
- यदि आपका कोई मित्र, सहकर्मी, सहपाठी या पारिवारिक सदस्य घरेलू हिंसा से पीड़ित रहता हो तो समय-समय पर उसे फोन लगाकर उसकी सुरक्षा निश्चित करती रहे।
- घरेलू हिंसा की पीड़ित महिला को कानूनी सहायता, स्थानीय घरेलू हिंसा से बचाव करने वाली एजेन्सी और सुरक्षित शेल्टर की जानकारी प्राप्त करने में मदद करनी चाहिए यदि महिला घर को छोड़ना चाहे तो ऐसा करने के बाद आगे की योजना बनाने में उसकी मदद करनी चाहिए।
- घरेलू हिंसा होने की तिथि, समय, चोट आदि सभी का रिकार्ड रखना चाहिए। घरेलू हिंसा क सबूतों का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए क्योंकि इन सबूतों के द्वारा ही कानूनी लड़ाई लड़ी जा सकती है।

सरकार के स्तर पर -

- विद्यालय एवं महाविद्यालयीन शिक्षा में महिलाओं से संबंधित अपराधों के कानूनों की पूरी जानकारी दी जानी चाहिए इससे दो फायदे होंगे। लड़कियों को अपनी सुरक्षा के संबंध में कानून की पूर्ण जानकारी होने पर वे अपने पर होने वाले किसी भी अत्याचार एवं अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने में सक्षम होगी तथा लड़के इन अपराधों की सजा का उनके जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को जानने के कारण ऐसे अपराधों से दूर रहने का प्रयास करेंगे।
- घरेलू हिंसा एवं महिलाओं से संबंधित अन्य कानूनों का सख्ती से पालन कराया जाना चाहिए। न्याय व्यवस्था इतनी पुख्ता होनी चाहिए जिससे इस प्रकार के अपराध करने वालों में सजा का भय जाग्रत हो।
- पीड़ित महिलाओं के प्रति पुलिस का व्यवहार मित्रतापूर्ण एवं सहयोगात्मक होना चाहिए इसके लिए पुलिस ट्रेनिंग के दौरान महिला मानवाधिकार का विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- महिलाओं के विरूद्ध अपराध करने वालों को सरकारी नौकरी से वंचित किया जाना चाहिए।
- महिलाओं के विरूद्ध अपराध करने वालों को सरकारी एवं अर्द्धसरकारी संस्थाओं द्वारा किसी भी प्रकार का ऋण नहीं दिया जाना चाहिए।
- अपने पति के वेतन का कुछ हिस्सा पत्नी के बैंक खाते में जमा करने से संबंधित कानून बनाया जाना चाहिए।
- पर्याप्त मात्रा में महिला पुलिस की व्यवस्था की जाना चाहिए एवं महिलाओं से संबंधित गंभीर अपराधों की छानबीन का कार्य महिला पुलिस से कराया जाना चाहिए।
- न्यायालय में महिलाओं से संबंधित गंभीर अपराधों के लिए फास्ट ट्रेक न्यायालय की व्यवस्था को बढ़ाया जाना चाहिए।
- महिला आयोग को अधिक अधिकार देकर एवं कर्तव्य निश्चित करके अधिक सक्रिय बनाया जाए।
- महिलाओं द्वारा कानून का गलत उपयोग करने पर उन्हें दंडित किया जाए ताकि दूसरी महिला ऐसा करने का साहस न करें।
- सस्ती एवं सुलभ कानूनी व्यवस्था दी जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिलाओं के विरूद्ध हिंसा - राम आहूजा, रावत पब्लिकेशन, जयपुर 1996
2. महिला सशक्तिकरण की अवधारणा - श्रीमती ममता एवं चन्द्रशेखर रायकवार, यशी-यथार्थ प्रकाशन इंदौर 2002
3. महिला सशक्तिकरण - कमलेश कुमार गुप्ता, बुक एनक्लेव, जयपुर 2007
4. महिला उत्पीड़न समस्या एवं समाधान - रायजादा अजीत, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल ।

****

'भगवान' श्रीकृष्ण और गीता की वर्तमान में प्रासंगिकता

डॉ. राजेन्द्र कुमार यादव *

प्रस्तावना – भगवान श्रीकृष्ण एक सागर है जिसका कोई थाह नहीं है। इस सागर के कई घाट है,जिसको जहाँ उतरना है, उतर जाता है। मीरा का श्रीकृष्ण एक दम अलग है, श्रीकृष्ण को वह जिस रूप में चाहती थी वह एकदम अलग है। चेतन्य के श्रीकृष्ण एकदम भिन्न है। सूरदास का श्रीकृष्ण इस सबसे अलग है। मीरा ने श्रीकृष्ण को पति रूप में चाहा, महाप्रभू चैतन्य ने श्रीकृष्ण के बाल स्वरूप को चाहा। जिसने श्रीकृष्ण को जैसा चाहा, वैसा पाया। इसलिये कहते हैं, श्रीकृष्ण पूर्णावतार थे, वे भगवान होते हुए भी सामान्य व्यक्तियों की तरह जीवन जिया। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति श्रीकृष्ण को अपने पास महसूस करता है। विश्व में सभी अवतारों में श्रीकृष्ण सबसे अधिक चर्चित रहे। उनका सामान्य व्यक्तियों की तरह जीना ही उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी। उन्होंने कभी भी मर्यादा की बात नहीं की और न ही कभी वे मर्यादित रहे। सीमाओं में बांधना श्रीकृष्ण को कतई मंजूर नहीं था। जीवन के हर क्षेत्र में श्रीकृष्ण बिल्कुल सामान्य व्यक्तियों की तरह जीते हुए संदेश देते रहे। श्रीकृष्ण का अमर्यादित रहना ही परमात्मा की छवि प्रदान करता है। परमात्मा सभी नियमों के ऊपर होता है। उसके लिए समाज में बनाए नियम, कानून कैसे लागू हो सकते है और शायद यही कारण था कि श्रीकृष्ण ने समाज की उन सभी मर्यादाओं को तोड़ा जिसे उस समय का समाज मानता था। श्रीकृष्ण ने गोवर्धन की पूजा, गोपियों के साथ से भाग जाना, अस्त्र-शस्त्र न उठाना, माखन चोरी, मटकी फोड़ना, सखाओं के साथ गायें चराना, बाँसुरी बजाना, वस्त्र हरण करना, माँ को भयभीत करना आदि सभी कार्य अपने आप में विशिष्ट होते हुए भी बिल्कुल ही अप्रत्याशित थे और उसी से श्रीकृष्ण सामान्य से अलग पहचाने जाने लगे। श्रीकृष्ण बहुआयामी हैं।

श्रीकृष्ण के अलग-अलग आयामों को लेकर कुछ लोग पूरा जीवन अर्पित कर देते हैं। जिसको जो स्वरूप रूचिकर लगा, श्रीकृष्ण का वही स्वरूप लेकर निकल पड़ा, इसलिए तो कहा गया है-श्रीकृष्ण एक सागर है, जिसके कई 'घाट' है। हम जिस घाट में चाहें उतर जाये, जिस स्वरूप को भी मानना चाहे वह श्रीकृष्ण का ही स्वरूप है। श्रीकृष्ण एक पूर्ण शिखर है उनके बहुत से स्वरूप है और हर स्वरूप अपने आप में विशिष्ट और पूर्ण है। बंगाल में श्रीकृष्ण पंथियों का एक सम्प्रदाय है- बाउल और इसका अर्थ है बाबले। इस सम्प्रदाय के सदस्यों के पास श्रीकृष्ण को पूजने का कोई तरीका नहीं हैं, कोई विधि नहीं है, कोई पद्धति नहीं हैं। वे केवल नाचते और गाते है। वे कोई माला, फूल श्रीकृष्ण पर नहीं चढ़ाते हैं वे चढ़ाते है स्वयं को । यही श्रीकृष्ण भक्ति हैं। वे श्रीकृष्ण की कोई मूर्ति नहीं रखते है। उनका कहना है-क्या मूर्ति रखना ? जहाँ नाचते है, गाते हैं, श्रीकृष्ण वहीं साकार हो जाते हैं। उनकी पूजा-पाठ का कोई विधान या नियम नहीं हैं। कहते है कि जिस व्यक्ति के जीवन में कोई विधि विधान नहीं था उसकी पूजा में क्या विधि-विधान। जब उठती है मौज, आता है आनंद, तो पूजा हो जाती हैं।

देश ही नहीं, विदेशों में भी श्रीकृष्ण को मानने वालों की कमी नहीं है। जीवन के सभी प्रश्न कृष्ण से आते है और उनके उत्तर भी श्रीकृष्ण हैं। श्रीकृष्ण का यह कथन-मैं ही सब कुछ हूँ, सारा संसार मैं ही हूँ , विराटता के दर्शन कराता है। श्रीकृष्ण का विराट लघुरूप या अंश मात्र के भी जिसने दर्शन किये, वह भी धन्य हो गया। अन्तत: श्रीकृष्ण अपने आप में पूर्ण ईश्वर थे चाहे अनेकों बालस्वरूप, युवा अवस्था या वृद्धावस्था हो सभी पूर्ण थे। हर अवस्था में हर क्षण, उनके जीवन के हर पल में युगों-युगों तक चलने वाले संदेश छुपे थे। श्रीकृष्ण कोई व्यक्ति नहीं है वह चेतना पुंज है और निरंतर और प्रतिक्षण अपरिवर्तित होने वाली परम घटना है। श्रीकृष्ण कहते है-जब-जब पृथ्वी पर अत्याचार बढेगे़ तब-तब मैं हर युग में वापस आउँगा, एक नये श्रीकृष्ण के रूप में और जब भी बोलूंगा वह भागवत गीता ही होगी और यही कारण है कि जब-जब भी धर्म की हानि होती है, जब-जब अत्याचार बढ़ता है कर्मयोग का महत्व बढ़ जाता है। श्रीकृष्ण के संदेश विश्व में प्रासंगिक हो जाते है। श्रीकृष्ण याद आते है आज यही स्थिति उत्पन्न हो रही है। आज श्रीकृष्ण की आवश्यकता महसूस हो रही है, उनके संदेशों का आज ज्यादा महत्व बढ़ गया है इसलिए भागवत गीता की ओर लोगों की नजरें फिर टिक गई है।

वर्तमान समय में जीवन की जटिलताओं के साथ-साथ समस्याओं का भी दायरा विस्तृत होता जा रहा है। मनुष्य जैसे-जैसे शांति की खोज में धर्मो की ओर अपना रूख कर रहा है वह दिग्भ्रर्मित होता जा रहा है। जीवन की इस आपाधापी में मची समस्याओं का संतोषजनक हल उसे कही भी नहीं हो पा रहा है ऐसी स्थिति में एक मात्र आशा के रूप में प्राचीन काल से स्थापित भगवद् गीता ही आधार बन सकती है। वर्तमान समय में भी भगवद् गीता जीवन की समस्याओं के हल मेंउतनी ही उपयोगी है जितनी उस समय में थी। मनुष्य के अनेक प्रश्नों का हल आज भी छुपा हुआ है आज तक जितने भी विकासवादी या सामाजिक चिंतक रहें है उन्होनें गीता में वर्णित मूल तत्वों के आधार पर ही विकास तथा सामाजिक सिध्दांतों का निर्माण किया है चाहें, कॉम्ट हो, स्पेन्सर, जार्जमील, रेडक्लीप ब्राउन, दुर्खीम, मार्स, कोई भी हो इनके सभी सिद्धान्त गीता पर ही आधारित रहें है। जिसका उल्लेख बाल गंगाधर तिलक ने अपनी पुस्तक गीता रहस्य में किया है। ऐसी स्थिति में गीता आज भी प्रासंगिक ग्रंथ है।

सन्तों की अच्छीष्ठता उक्ति है, मेरी बानी,
जानूँ उसका भेद भला क्या मैं अज्ञानी।

'तिलक'

गीता में ब्रहम ज्ञान से या भक्ति से मोक्ष प्राप्ति की विधि का-निरे मोक्ष मार्ग का विवेचन क्यों किया गया है ? मूल गीता निवृत्ति प्रधान नहीं है, वह तो कर्म-प्रधान है, गीता में अकेला 'योग' शब्द ही कर्मयोग के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

'तिलक'

गीता में क्षर-अक्षर सृष्टि का और क्षेत्र-क्षेत्रज- ज्ञान का विचार करने वाले सांख्य,न्याय, मीमांसा उपनिषद और वेदान्त जो कि प्रचलित वैदिक धर्म का जो मूल है। वह गीता में भी प्रतिपादित है। गीता में कर्म जिज्ञासा, कर्मयोग शास्त्र, अधिभौतिक सुखवाद, सुख-दुख विवेक अधिदैवत्वपक्ष और क्षेत्र क्षेत्रज- विचार, कपिल, सांख्य शास्त्र अथवा क्षराक्षर विचार विकासवाद, विश्व की रचना और संहार, अधात्म, कर्म विपाक और आत्मस्वातंज्य, सन्यास और कर्मयोग, सिद्धावस्था और व्यवहार, भक्तिमार्ग आदि का विस्तृत उल्लेख है। अध्यात्मिक ग्रंथों में गीता की सर्वोत्कृष्ठता एवं

* समाजशास्त्र विभाग, शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

लोकप्रियता का पता इसमें चलता है कि संसार की प्राय: सभी भाषाओं में इसके असंख्य संस्करण अनुवाद के रूप में प्रकाशित हो चुके है और हो रहें है। अनेक लोगों ने इस पर भाष्य, टीकाऐं तथा निबंध लिखे है। इसमें शंकर भाष्य, रामान्द्रभाष्य, मधूसुदन सरस्वती का टीका (गीतागुढ़ार्थदीपिका) ज्ञानेश्वरी, लोकमान्य तिलक का श्रीमद भागवद् गीता रहस्य तथा श्री अरविन्द का ' एसेज ऑन दी गीता ' उल्लेखनीय है।

3. **गीता में क्या है** ? - भागवद् गीता में ब्रहमविद्या है। इसमें वह विधि निर्दिष्ठ है, जिसके द्धारा ब्रहम ज्ञान की उपलब्धि होती है। जीव ब्रहम बन जाता है, जीवात्मा और उसके जीवत्व को छोड़कर (विशुद्ध) आत्मा के ही रूप में शेष रह जाता है। नर, नारायण पद को प्राप्त हो जाता है। प्राणी जीवन मरण से रहित होकर मोक्ष ग्रहण कर लेता है।

निष्कामकर्म– मोक्ष के डगर के द्धार को खोलने वाली कुंजी इस शब्द में छुपी है। पुराने धर्मशास्त्रों, के द्धारा बताया गया कि पूजानुष्ठानादि कर्म केवल स्वर्ग के सुख प्रदान कर सकते थे किन्तु मोक्ष नही। गीता ने ही प्रथम बार समुध घोषित किया कि, निष्काम कर्म, अनिवार्यरूप से मोक्ष देने वाले है। कोई भी कर्म फल की इच्छा बिना किया जाता है तो कोई फल, अथवा वासना उत्पन्न नहीं कर सकता (क्योंकि जैसा कारण वैसा कार्य)। जब वासनाऐं ही पैदा होनी बन्द हो जाए तो, उन्हें तृप्त करने के लिए नए जन्म लेने का प्रश्न भी नहीं उठता और नए जन्म न लेने का अर्थ मोक्ष की प्राप्ति। अत: निष्काम कर्म के अमोध अस्त्र की गीता द्धारा मनुष्य को एक अनुपम व अपूर्व देन है।

पूर्णयोग – वैदिक साहित्य की भांति, गीता भी मोक्ष के लिए तीन मार्गो, कर्म,भक्ति और ज्ञान का अनुमोदन करती है। पूर्व ग्रंथों में इनको पृथक–पृथक कार्य माना किन्तु गीता में इसे एक ही महामार्ग का अंग माना। किसी एक की उपेक्षा साधक को निर्धारित लक्ष्य से भटका सकती है। गीता की यह धारणा जीवन तथ्य पर आधारित हैं। मनुष्य की कर्म लीला के तीन तत्व है – इन्द्रिय (कर्मजनक) मन (भक्ति जनक) और बुद्धि (ज्ञान जनक) इन तीनों के समुचित और सामुहिक विकास से ही सर्वांगीण उत्कर्ष संभव है। अर्थात इन तीनों तत्वों का समुचित समिश्रण होने के कारण कर्ममार्ग, भक्तिमार्ग तथा ज्ञान मार्ग इन तीनों का पूर्णयोग ही उसे गन्तव्य तक ले जा सकता है। इसी कारण गीता में पहले 6 अध्याय कर्ममार्ग का वर्णन करता हुआ 'तुम' (जीव) का विवेचन करता है। दूसरे 6 अध्याय भक्तिमार्ग का विवेचन कर 'वह' (ब्रहम) की व्याख्या करता है। तीसरे 6 अध्याय ज्ञान मार्ग की विवेचना कर 'हो '(एक ही है, अर्थात जीव ब्रहम ही है) का विशुद्ध निरूपण करता है।

गृहस्थ सन्यास – अनेक महामतान्तर सन्यास के लिए घर छोड़कर वन पर्वत आदि के निर्जन स्थान में चले जाना अनिवार्य समझते है। वही गीता में पहली बार इसे नितान्त अनावश्यक माना था। साधक को इन्द्रियों को वश में कर, मन को बुद्धि के अंकुश तले लाना और फिर स्थिर जनक अपनी समूची शक्तियों को ब्रहम प्राप्ति के लिए केन्द्रित कर देना ही सन्यास है। अर्थात अपने कर्म करते हुए भी गृहस्थ भी सन्यासी बनने का अधिकारी है।

गीता का मुख्य विषय वेदान्त है जिसमें अन्य दर्शनों के भी दर्शन होते है। और साथ में तत्कालीन धार्मिक परम्पराओं, साम्प्रदायिक विचारधारको तथा सामाजिक रीति 7 रिवाजों के भी दर्शन होते है।

गीता एक घाट – भागवत गीता श्रीकृष्ण का एक 'घाट' है जिसमें जो उतरना चाहें उतर जायें। भागवद् गीता श्रीकृष्ण का दर्शनशास्त्र है। जिसके द्धारा श्रीकृष्ण को समझा जा सकता है। भागवद् गीता को सर्वमान्य ग्रन्थ यूं ही नहीं कहा जाता है, भागवद् गीता वह ग्रन्थ है जिसमें मनुष्य का भूत, वर्तमान और भविष्य छुपा हुआ है। विश्व के अनेक ग्रंथों में भागवद् गीता सर्वोच्च ग्रंथ है, परम शिखर पर विराजमान ही इसकी वास्तविक पहचान है। सभी ग्रंथ, उपनिषद, मौन में शांत एकांत में पैदा हुए हैं सभी मिथकों पर आधारित है, किन्तु भागवद् गीता में मिथकों का कोई स्थान नहीं। भागवद् गीता के उपदेश जीवन से संबंधित और वास्तविकता पर आधारित है। भागवद् गीता का जन्म युध्द के मैदान पर हुआहै। बड़ी ही विकट और विपरीत परिस्थितियों में भागवद् गीता पैदा हुई इसलिए भागवद् गीता एक शाष्वत सच है। निरन्तर घटित होने वाली परम घटना है एक प्रवाह है, युगों–युगों तक बहने वाला प्रवाह। भागवत गीता कभी भी समाप्त नहीं होगी इसकी कभी मृत्यु नहीं हो सकती, भागवद गीता अमर है।

भागवत गीता बड़ी अनूठी है। यही ग्रंथ ऐसा है जिसमें सन्यस्थ होने के लिए हिमालय पर जाने की आवश्यकता नहीं है, न ही जंगलों में जाने की। श्रीकृष्ण जिस सन्यास की बात करते हैं, उसमें सन्यासी को कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। श्रीकृष्ण उसे उसी जीवन में पैर जमाकर खडे होने की बात करते है। विपरीत परिस्थितियों का उपयोग करके भी वह सन्यासी हो सकता है। उसे युद्ध के मैदान में भी ध्यान उपलब्ध हो सकता है। श्रीकृष्ण का सन्यास संसार के विरोध में नहीं है, श्रीकृष्ण का सन्यास संसार के मध्य में है। वैसे भी सन्यास ऐसा वृक्ष होना चाहिए जिसकी जडे संसार में हो और शाखाऐं आकाश में, जो पृथ्वी और स्वर्ग को जोड़ती हो। यही श्रीकृष्ण और उनकी भागवत गीता का सार है। कर्मयोगी बनने का संदेश भागवद् गीता देती है जो किसी भी परिस्थितियों में संभव है। भागवद् गीता का मुख्य ज्ञान यहीं है कि कर्म किये जा, बिना फल की इच्छा के, तुम्हें बुद्धत्व प्राप्त होगा।गीता पर हजारों टीकाएं लिखी गई, हर टीका में श्रीकृष्ण एक तरंग की भांति मौजूद है। गीता तो श्रीकृष्ण का एक दृष्य मात्र है, वह सम्पूर्ण श्रीकृष्ण नहीं है। गीता के हर टीका में नये कालेवरों के साथ संदेशों को व्यक्त किया गया है। यही कारण रहा है कि भागवद् गीता जो कि पाँच हजार वर्ष पुराना ग्रंथ है आज भी तरोताजा व नूतन है। आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितनी उस समय थी। भागवत् गीता को जितनी बार पढ़ो उतनी ही बार यह नये प्रदान करती है। हर परिस्थितियों के संदर्भ में इसमें ज्ञान का भंडार छुपा है, इसीलिए भागवद् गीता एक ग्रंथ न होकर श्रीकृष्ण का एक 'घाट' है जो स्वयं अपने आप में विशाल और व्यापक रूप लिए है। इसमें कितने ही यात्री आज तक उतरे और कितने ही उतरते चले जायेंगे। इस 'घाट' पर जो भी रूकेगा, विश्राम करेगा, वह श्रीकृष्णमय अवश्य हो जायेगा। भागवद् गीता एक 'महाकाव्य', महाश्लोक, है। जैसे अमृतमय, अवाख्येय,अनूठे अनमोल बोल श्रीकृष्ण ने भागवद् गीता में बोले है, वैसे आज तक अन्य किसी ग्रंथ में न ही देश मे बोले गये और न ही सुने गये है। इसमें कविता है, संगीत है, सगंध है, न जाने किस–किस प्रकार के रस इसमें समये है। इसमें रोगी के लिए जगह है तो वैरागी के लिए भी स्थान है, सन्यासी भी इसमें रस ले सकता है तो गृहस्थ भी डूब सकता है। यह किसी जाति, सम्प्रदाय का ग्रंथ नहीं है यह सार्वभौमिक और शाश्वत वाणी है। वेद रहें न रहें उपनिषद रहें न रहें, सभी ग्रंथ रहें न रहें कोई बात नहीं भागवत् गीता का होना आवश्यक है। भागवत गीता है तो सारे ग्रंथ मौजूद है। चिंतन के, दर्शन के जितने भी आयाम हैं वे सभी इस एक ग्रंथ में समाहित है। यह ग्रंथों का ग्रंथ है। श्रीकृष्ण सागर और भागवत गीता घाट है। श्रीकृष्ण का का एक दृश्य, एक गीता, जो मानव के विकास का,मोक्ष का ज्ञान का, भक्ति का और प्रेम का आधार है। युगों–युगों तक अनुतरित प्रश्नों का आधार है जो या तो प्रगट है या प्रगट न होने वाले है। भविष्य में ऐसे ही प्रश्नों का आधार होगी यह भागवद् गीता, गीता सार्वभौमिक सार्वकालिक और दुर्लभ ग्रंथ है, और हमेशा रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओशो–गीता–ज्ञान– 1990 पुस्तक महल दिल्ली।
2. ब्रहमदत्त वास्तायन गीता ज्ञान पुस्तक महल मई 1999
3. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक श्रीमद भागवद गीता रहस्य साधना पॉकेट बुक्स नई दिल्ली संस्करण 2006
4. श्री स्वामी किशोरदास, कृष्णदास श्री दुर्गा पुस्तक भण्डार–इलाहबाद – 2005

बच्चों के प्रति बढ़ते अपराध- एक सामाजिक चिंतन (म.प्र. के विशेष संदर्भ में)

डॉ. उषा सिंह * एच.पी. सिंह **

प्रस्तावना – यूँ तो राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बच्चों के प्रति बढ़ते अपराधों ने समाज को चिन्तित किया है पर म.प्र. में ऐसे अपराधों की संख्या लगातार बढ़ रही है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड व्यूरों की रिपोर्ट से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि ऐसे अपराध म.प्र. में गत वर्षो में बहुत बढ़े हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि देश के अन्य राज्य इन अपराधों से अछूते हैं बच्चों के प्रति बढ़ते अपराधों से प्रदेश के मुखिया का चिन्तित होना लाजमी है तभी उन्होंने राज्य की राजधानी में अपनी चिंता जाहिर करते हुये पुलिस के आला अफसरों की मीटिंग बुलाई और सख्त लहजे में इनकी पड़ताल करने व बरामदगी तक फाइल क्लोज्ड न करने की हिदायत भी दे डाली बच्चों की गुमशुदगी और ट्रेफिकिंग पर दो साल पहले एक अध्ययन करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता प्रशांत दुबे कहते हैं कि म.प्र.इस तरह के अपराध में जुटे संगठित गिरोहों का सुरक्षित गढ़ बन गया है वे हर जगह सक्रिय है जो बच्चों को गोवा और दिल्ली व अन्य जगह ले जाते हैं पहले आदिवासी इलाकों में बच्चों के गायब होने की घटनायें ज्यादा होती थी लेकिन अब बड़े शहर इंदौर, भोपाल, जबलपुर और ग्वालियर में यह समस्याएं बढ़ गई है यह ताकतवर नेटवर्क पुलिस पर भारी साबित हुआ है।

अपराधों की स्थिति – गत वर्ष 2014 में विधानसभा में गृहमंत्री ने विधानसभा में विधायकों के प्रश्नों का उत्तार देते हुये माना कि म.प्र. में अपराध के 2.29 फीसदी मामले बढ़े हैं उन्होंने यह भी माना कि महिला अपराधों में भी स्थिति ठीक नहीं है।

प्रदेश में सबसे विकसित माने जाने वाले इंदौर की लाड़लियां सबसे ज्यादा असुरक्षित है बीते दो साल में यहाँ बलात्कार, चेन स्नेचिंग व छेड़खानी के ज्यादा मामले दर्ज हुये है वहीं पिछड़ा माने जाने वाले आदिवासी बहुल अलीराजपुर में महिला अपराध सबसे कम है। प्रदेश में जहाँ महिलाओं के गले से चैन स्नेचिंग के 1258, छेड़छाड़ के 19,212 बलात्कारों के 9084 सामूहिक बलात्कार के 825 एवं आकड़ों के आधार पर देखें तो बलात्कार के सबसे ज्यादा 462 मामले इंदौर में, भोपाल में 400 और सबसे कम 40 मामले अलीराजपुर में दर्ज हुये सामूहिक बलात्कार के सबसे ज्यादा 49 केस ग्वालियर में दर्ज हुये वहीं शिवपुरी में 39 मामले दर्ज हुये चार बड़े शहरों में अपराधों का आंकड़ा देखें तो छेड़खानी में इंदौर ने 1000 का आंकड़ा पार कर लिया है वहीं 899 अत्याचार के मामले दर्ज है इसके बाद जबलपुर और ग्वालियर का नाम है तुलनात्मक रुप से भोपाल में छेड़खानी के 400 मामले दर्ज है अलीराजपुर में सबसे कम 43 मामले दर्ज है।

मानव तस्करी में 2011 से 2014 के बीच मानव तस्करी के 88 मामले दर्ज है इंदौर संभाग में 2011 से 2014 तक 11057 बालिकायें और महिलायें गुमशुदा है इसमें से 2734 अभी तक नहीं मिली है। यह आँकड़े म.प्र. विधानसभा के पटल पर रखे जा चुके हैं।

क्या कहती है राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड व्यूरों की रिपोर्ट – राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के 2014 को जारी आकड़े म.प्र. की कुछ और ही तस्वीर उजागर करती है महिला अत्याचार के कुल 11440 मामले दर्ज किये गये यह रिपोर्ट म.प्र. गृहमंत्रालय की रिपोर्ट से बिल्कुल अलग है।

प्रदेश में 26 बच्चे पूरे प्रदेश से रोजाना गायब हो रहे है इनमें से 16 लड़कियां है भोपाल से पिछले सात साल में 5032 बच्चे गायब हो चुके है यानी रोजाना 2 बच्चे, इंदौर से 5, जबलपुर से 3 और ग्वालियर 1 बच्चा रोजाना गुम हो रहा है। जो बच्चे वापस नहीं आते सात साल बाद पुलिस भी इन केसों में खात्मा लगा देती है। इंदौर से इन सात सालों में 5669 बच्चे, जबलपुर में 4242 बच्चे और ग्वालियर में 2585 बच्चे गुम हुये।

पूरे प्रदेश की स्थिति पर नजर डालें तो वर्ष 2003 से वर्ष 2011 तक 75521 बच्चे गुम हुये जिनमें से 12636 का कोई अता पता नहीं चला।

सुप्रीम कोर्ट में चला मामला – देश भर में बच्चो की गुमशुदी पर सर्वोच्च न्यायालय में चले मामले में सभी राज्य सरकारों से इस मामले में फैक्ट फाइल प्रदर्शित करने हेतु हलफनामा प्रस्तुत करने को कहा गया अन्य राज्यों के साथ-साथ म.प्र. ने भी हलफनामा प्रस्तुत करते हुये यह स्वीकार किया कि म.प्र. में बच्चों के गुमने की 10577 प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई जिनमें से 4506 बच्चे कहाँ गये पता नहीं लगा इनमें से 3370 लड़कियाँ थी।

गैर सरकारी सूत्रों का अनुमान है कि पिछले सात साल में प्रदेश से 66 हजार 566 बच्चे गायब हुये इनमें से 27237 बालक और 39326 बालिकायें गायब हुये।

बच्चों का गुमशुदी/अपहरण के बाद का हाल – आमतौर पर बच्चों के अपहरण के बाद क्रूर अपहरणकर्ता अपनी मन:स्थिति के अनुसार काम करता है प्रथम उसका मकसद फिरौती मांग कर बच्चे के परिजनों से एक निर्धारित रकम की मांग करता है बहुत से मामले परिजनों द्धारा रकम देकर सुलझा भी लिये जाते है कभी कभी जब परिजन फिरौती नहीं देते और पुलिस का शिंकजा कसने लगता है तो उनकी हत्या तक कर देते है दूसरी ओर यदि बच्चा लड़की है यदि अपहरणकर्ता विकृत मानसिकता के वश अपहरण किया है तो उसके साथ बलात्कार करता है – और यदि पैसा कमाना है तो लड़कियों को चकला घरों, यौन व्यापार के केन्द्रों में बेच दिया जाता है लडकियाँ ही क्यों इन केन्द्रों पर छोटे-2 लड़कोंको भी बेचा जा रहा है लड़कियों की तरह अब लड़कों का इस्तेमाल भी घिनौने यौन व्यापार में हो रहा है। पर्यटन केन्द्र बाल यौन शोषण के भारत में सबसे बड़े केन्द्र बनते जा रहे है

* प्राध्यापक, शासकीय कन्या महाविद्यालय, टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत
** महासचिव, म.प्र.राष्ट्रभाषा प्रचार समिति टीकमगढ़ (म.प्र.) भारत

खासकर विदेशी चाइल्ड पोर्न के इतने शौकीन है कि इसकी कोई भी कीमत चुकाने को तैयार हो जाते है गोवा में इस प्रकार के अनैतिक धन्धों पर कई बार पुलिस का छापा पड़ चुका है पर ये कुछ ही उदाहरण है इन गिरोहों का नेटवर्क इतना अधिक सुद्दढ़ है कि पुलिस भटक भी नहीं पाती है संयुक्त राष्ट्र के बालकल्याण कोष की रिर्पोट्स भी इसकी ओर इशारा करती है छोटे-2 बच्चे और बच्चियाँ यौन पिपासु लोगों की हवस का शिकार बना दिये जाते हैं।

दूसरा बड़ा कारण बच्चों का अपहरण कर उनके परिजनो से फिरौती के रुप में एक बहुत बड़ी रकम प्राप्त करने के लिए दबाव बनाते है अनेकों बार जब पुलिस असफल रहती है तो परिजन किसी प्रकार रकम इकट्ठा कर किसी प्रकार अपने बच्चों को सुरक्षित बचा लेते हैं। पर अधिकांश मामलों में बच्चे नहीं मिल पाते और पुलिस केस में खारिजा लगा देती है पर सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद केस बंद करना अब सरल नहीं रह गया है अभी हाल में ही सर्वोच्च न्यायालय ने फिरोती के लिए अपहरण करने के मामले स्पष्ट कहा है कि यदि निचली अदालतें अपहरणकर्ता को फाँसी की भी सजा देती है तो वो सही है और कानून भी सही है।

तीसरा बड़ा कारण यह है कि गिरोह बच्चों का अपहरण कर उन्हें अंग-भंग कर देते हैं और उनसे या तो भीख मंगवाते हैं या नशीले पदार्थो की तस्करी में शामिल कर देते है उन्हें धीरे-2 नशीला पदार्थ खिला-खिलाकर उन्हें नशेड़ी बना देते हैं ये बच्चे भीख मांगने, नशे की पुड़िया बेचने अश्लील सीडी -साहित्य बेचने के धंधों में लगा दिया जाता है।

गिरोहों का एक बहुत बड़ा नेटवर्क इसके कार्य में लगा हुआ है पुलिस का नेटवर्क कभी-2 ही सफल हो पाता है कहने का आशय यह है कि बच्चों के विरुद्ध अपराध लगातार बढ़ते ही जा रहे है म.प्र. बच्चों के अपहरण का मुख्य केन्द्र बनता जा रहा है ये चिन्ता की बात है।

शासन हुआ सक्रिय - राजधानी सहित आसपास के जिलों से बच्चों के बढ़ते अपहरण के मामलों में म.प्र.सरकार ने चिन्तित होकर एक मीटिंग बुलायी पुलिस अधिकारियों को सख्त हिदायत दी कि अपहरण के मामलों को सक्रियता से हल करें और साइवर नेटवर्क का अधिक से अधिक इस्तेमाल कर बच्चों को सुरक्षित छुड़ाने की योजना पर कार्य करें और अपहरणकर्ताओं को हर हाल में सजा दिलवायें सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद सरकार के बाद प्रशासनिक मशीनरी भी चुस्त हुई है।

बच्चों के विरुद्ध हो रहे अपराधों से बचने के उपाय -

- बच्चों को कभी अकेला न छोड़े।
- स्कूल आने जाने के लिए स्वयं या विश्वसनीय व्यवस्था बनायें टैक्सी चालक व वेन चालकके कर्मचारियों का फोटो खीचें तथा उनका पता नोट करें हो सके तो उनका पुलिस से वेरीफिकेशन करायें।
- बीच-बीच में जाकर स्कूल में संपर्क करें।
- बच्चों को बातों-बातों में ऐसे टिप्स दें कि वो किसी अनजान लोगों से न खाने की कोई चीज लें और न ही उनके साथ जाय।
- किसी अनजान व्यक्ति द्वारा ऐसा करने पर जोर-जोर से चिल्लायें शोर - मचाये - रोये।
- खुद का पता, मम्मी - पापा का मोबाइल नम्बर याद करायें।
- बच्चों से प्यार से प्रतिदिन की घटना प्रतिक्रिया आदि की बातें करें क्यों कि अपहरण करने वाले लोग पहले रैकी करते है बार-2 बच्चे से घूरने वालों के बारे में पूछें।
- घर में भी अकेला न छोड़ें यदि पति-पत्नी दोनों सेवा करने वाले है तो विश्वसनीय रिश्तेदार का इंतजाम करें यदि हैसियत अच्छी है तो सी.सी.टी.बी कैमरे घर के दरवाजे पर लगवायें।
- गन्दी हरकतें करने वालों के बारे में बच्चों से पूछते रहे।

इस प्रकार हम देखते है कि कानून व्यवस्था के प्रति सर्तक होने के बावजूद भी बच्चों के प्रति अपराध अपहरण, यौन शोषण इत्यादि रुकने का नाम नहीं ले रहा हमें पुलिस प्रशासन के साथ-2 ये समाज की भी जिम्मेदारी है कि यदि हमें राह चलते ऐसी स्थिति मिलती है तो बच्चों का सहयोग करें राह चलते लोगों को अपने साथ ले जोर - जोर से चिल्लाये पुलिस को 100 नम्बर पर फोन करे - अपराधी भयग्रस्त होते है उनके विरुद्ध ये प्रयास करने पर कभी कभी पकड़े जाने के डर से बच्चों को छोड़ जाते हैं बच्चों को निकटतम पुलिस स्टेशन तक पहुँचाये सम्भव हो तो माता पिता को सूचित करें समाज को जागरुक हुये बिना केवल कानून व्यवस्था के आधार पर बच्चों के विरुद्ध हो रहे अपराधों में हम कमी नहीं ला सकते।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेशनल क्राइम रिकार्ड व्यूरों की रिपोर्ट 2014
2. म.प्र.शासन द्वारा मान. सर्वोच्च न्यायालय में प्रस्तुत हलफनामा वर्ष 2014
3. मान. सर्वोच्च न्यायालय में दायर अपील याचिका में मान. न्यायालय का फिरोती के लिए बच्चे के अपहरण में आई पी सीकी धारा 364(ए) के तहत अपहरणकर्ता को मृत्युदण्ड की सजा सही ठहरायी। सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय 2015
4. म.प्र. विधानसभा में म.प्र. के गृहमंत्री द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तार सदन में जो दिये गये उनके द्वारा प्रस्तुत आँकड़े वर्ष 2014.
5. सामाजिक कार्यकर्ता प्रशांत दुबे का निजी अध्ययन रिपोर्ट 2013-14
6. दैनिक भास्कर सागर दि. 21.08.15 की रिपोर्ट पृष्ठ 1 व 5.

****

वर्तमान में मानवाधिकारों की व्यवहारिकता एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. रश्मि दुबे *

प्रस्तावना – संयुक्त राष्ट्र संघ, यह विश्व की सबसे बड़ी संस्था है, उस संस्था ने 10 दिसम्बर 1948 को वैश्विक मानव अधिकार की घोषणा की है। यह घोषणा पत्र को भारत 50 राष्ट्र ने अपनाया है। मानव को सामाजिक प्राणी होने के कारण उसे जन्म से ही कुछ मूलभूत एवं प्राथमिक अधिकार प्राप्त है। इसे ही मानव अधिकार कहते है।

भारत में जिस तरह प्राचीनकाल में मानवाधिकार का हनन् होता था, उसी तरह विश्व में भी होता था। भारत की वर्णव्यवस्था तथा जातीय व्यवस्था ने ही मानव अधिकार की अवहेलना की है। उसे मनुवादी विचारों ने बंदिस्त किया है, परन्तु बुद्ध काल में गौतम बुद्ध के विचारों में यह झलक दिखाई देती है। गौतम बुद्ध ने अपने धर्म का प्रसार करते समय स्त्री–पुरूष, गरीब–श्रीमंत, ऊँच–नीच, यह भेदभाव नहीं किया।

बुद्ध के बाद 1215 के मेग्ना में मानव अधिकारों की मांग की है। 1640 में बियस कॉर्पस एक्ट, 1776 में अमेरिकन डिक्लेरेशन ऑफ इंडिपेंडस, 1789 की फ्रांस राज्यक्रांती,1815 की व्हिएन्ना परिषद, महात्मा फुले की ग्रंथ सम्पदा इत्यादि में मानवधिकार का विचार प्रगट रूप में दिखाई देता है। डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर ने भी मानवाधिकारों का जोरदार समर्थन किया था।

भारत का मानवाधिकार से जो वंचित समूह था उसे अधिकार देने हेतु डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ने अनेक सामाजिक आंदोलन किये है। 1920 में उन्होनें मुकनायक नामक समाचार पत्र का प्रकाशन किया। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान के रचनाकार डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ने भारतीय विषमत: नष्ट करने का प्रयास, संविधान के माध्यम से किया। भारत के सभी नागरिकों को समान हक, प्रौढ़ मताधिकार, संविधान के अनुच्छेद 325 व 326 ने दिया है। अनुच्छेद 14 के अनुसार सभी व्यक्ति समान है। अनुच्छेद 15(2) के अनुसार सार्वजनिक जगह पर जात, धर्म, पंथ, वंश, लिंग इत्यादि आधार पर भेदभाव को निषेध माना है। अनुच्छेद के अनुसार प्रशासन में भेदभाव करना अपराध ठहराया है। अनुच्छेद 17 के तहत् अपस्पृश्यता का अंत किया है। शिक्षा का अधिकार दिया है। इस मानव अधिकार का भरपूर समर्थन करने के कारण भारत में सामाजिक समता दिखाई देती है।

डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के सामाजिक न्यायवली आंदोलन, महात्मा फुले के विचार, भारतीय संविधान द्वारा मानव अधिकारों का किया हुआ मजबूतीकरण इत्यादि में भारत में मानव अधिकार के विचारों का वातावरण तैयार किया। जिसके फलस्वरूप यह रहा कि 1 मार्च, 1994 को राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन किया गया। महाराष्ट्र में अगस्त 2000 को राज्य मानव अधिकार आयोग का गठन किया गया।

मानव अधिकार और महिला – महिलाओं की स्थिति एवं मानवाधिकार की वास्तविकता का अध्ययन करने के पश्चात् हमें महिलाओं की स्थिति आज भी चिन्तनीय नजर आती है। वास्तविक रूप में महिला जगत की जननी है। वह विश्व का पालन–पोषण करती है। भारतीय संविधान ने इन महिलाओं को अधिकार देकर मजबूत किया है। भारतीय कानून के तहत् सभी एक समान है। लिंग, जाति, धर्म तथा वंश के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता। परन्तु महिलाओं के हित और अधिकार आज भी सुरक्षित नहीं है। भारत में प्राचीनकाल से बेटी से ज्यादा बेटे को महत्व दिया गया है। बेटी को पराया धन मानकर तथा बेटियों की स्थिति देखकर निर्दय माता–पिता बेटी को जन्म लेने से पहले ही उसे मारने लगे है। गर्भ में ही लिंग परीक्षण और उसकी हत्या का आंकड़ा लगातार बढ़ रहा है। महाराष्ट्र राज्य के तहत परभणी जिले में मुंडे नामक डॉक्टर ने हजारों महिलाओं की (बेटियों) हत्या गर्भ में ही की है। क्या यही मानव अधिकार की वास्तविकता है।

मानवाधिकार और बाल श्रमिक – वास्तव में बालक 'राष्ट्र की अमूल्य धरोहर' है। आज का बालक कल का भावी नागरिक है। उसके भावी जीवन की सफलता नि:सदेह उनके वर्तमान जीवन की गुणवत्ता के स्तर पर निर्भर करती है। बच्चों को भी अन्य मनुष्यों की तरह समान सुविधायें व अधिकार प्राप्त होने चाहिये किन्तु बिडम्बना यह है कि भारत सहित विश्व के कई देशों में इन्हे मूलभूत मानवाधिकारों से वंचित रहना पड़ रहा है। आज भारत में 10 करोड़ बच्चे उनके उम्र के लिहाज से काम का बोझ तले बाल श्रमिक है और अनेकों संकटों से घिरे है। होटल, खेती, आदि कार्य संलग्न है। इस समस्या का विशाल रूप अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, भारत, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, पाकिस्तान व अफ्रीका में है। लेकिन ज्यादा लोकसंख्या वाले देशों में यह समस्या अधिकतम है। **यूनिसेफ की एक रिपोर्ट के अनुसार** 'बाल श्रमिक हर किस्म का काम करते' है। मलेशिया में बच्चे कीड़े–मकोड़ो व सांपों के बीच रबर के बागानों में परिश्रम करते है। तंजानिया में काफी चुनने का कार्य करते है। ब्राजील में गन्ना काटने का काम करते है। फिलीपाईन्स में मछलियाँ पकड़ने का काम करते है। पुर्तगाल में भवन निर्माण, मोरक्को में कालीनों का निर्माण, इंडोनेशिया में तम्बाखू के बगीचों में, थाईलैण्ड में गन्ने व रबर के बगीचों में, दक्षिण अफ्रीका में हीरे व सोने की खानों में, कोलम्बिया में साने की खानों व ईट के भट्टो में, बांग्लादेश में ईट बनाने के लिए, पत्थर तोड़ने के लिए, साइकिल की मरम्मत करने के लिये कूड़ा–कचरा बटोरने के लिये बालश्रमिकों का उपयोग किया गया है। भारत के हर क्षेत्र में बालश्रमिकों का उपयोग किया जाता है।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोतर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

विश्व में सर्वप्रथम औद्योगिक क्रांति ब्रिटेन में हुई। उद्योग बढ़ने के कारण कारखाना मालिकों को मजदूरों की जरूरत पड़ी। ज्यादा मुनाफा कमाने हेतु उन्हें बालश्रमिक लाभदायक दिखाई दिये। बाल श्रमिको का इन्हीं श्रमों में शोषण होने लगा। विचारशील मानवों ने इस पर आवाज उठायी, पश्चात् इंग्लैण्ड ने 1802 तथा 1890 में बाल श्रमिकों के हित में अधिनियम बनाये। सन् 1919 में अंतर्राष्ट्रीय बाल संगठन द्वारा बाल श्रमिकों की अधिकतम उम्र 14 वर्ष निर्धारित की गई। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1959 में एक घोषणा पत्र जारी किया। उस घोषणा पत्र में 'बाल श्रमिकों के प्रति स्नेह, प्रेम व सद्भावना का व्यवहार करने, उनके उचित पोषण, डॉक्टरी देखभाल, नि:शुल्क शिक्षा, खेल व मनोरंजन इत्यादि अधिकारों पर बल दिया।

सन् 1970 के जनगणना के अनुसार भारत में 14 वर्ष से कम उम्र के बाल श्रमिकों की संख्या 10.75 मिलियन, 1981 अनुसार, 13.64 मिलियन, 1991 की जनगणना अनुसार 11.28 मिलियन तथा 2001 में जनगणना अनुसार 12.6 मिलियन है। 2011 के जनगणना अनुसार 16.4 मिलियन बाल श्रमिक भारत में काम करते है। भारत में सबसे ज्यादा बाल श्रमिक वाला राज्य आंध्रप्रदेश है। जिस आंध्रप्रदेश में 14.03 प्रतिशत बालक श्रमिक है तथा सबसे कम बाल श्रमिक राज्य पश्चिम बंगाल है। इस पश्चिम बंगाल में 4.4 प्रतिशत बालक बालश्रमिक है।

दलित और मानवाधिकार – भारतीय संविधान के अनुसार मानवभेद अपराध की श्रेणी में आता है। मानव–मानव में भेद करना बड़ा अपराध है। जाति–पाती के नाम भेदभाव पाबंद है। यही सभी होने के बावजूद भी भारत में दलितों पर अन्याय होते हुये दिखाई देते है। महाराष्ट्र के तहत् भंडारा जिले में खैरलांजी नामक गांव में दलित कुटुम्ब पर हुआ अत्याचार सम्पूर्ण विश्व में चर्चित रहा। सुरेखा भोतमांगे तथा प्रियंका भोतमांगे इन्हें दलित माँ–बेटी पर हुआ सामूहिक बलात्कार तथा उनकी निर्दलीय हत्या, मानवी जाति के लिये कलंकित है। यह घटना के 8 साल पश्चात भी उन हत्यारे तथा अत्याचारियों को शिक्षा नहीं हुई। वास्तविक रूप में भारतीय संविधान अनुच्छेद 14 से 39 के अनुसार समाज का समग्र विकास हेतु संवैधानिक अधिकार प्रदान किया है, परन्तु विषमतावादी व्यवस्था ने तथा मनुवादी विचारों ने इन्हें दलित समाज को आज भी दबाकर रखा है। आजादी के 67 साल बाद भी इस देश के दलितों को राजनैनिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। उनके संवैधानिक मानवाधिकार पैरों तले रोंदे जा रहे है।

हमें समाज के व्यक्यिों को उनके मानव होने के अधिकारों के प्रति जागरूकता व सजगता लाना होगा तथा उन्हें उनके अधिकारों से परिचित कराना होगा मानव की अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता ही मानव को मानव अधिकार दिला सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दुबे, अभय कुमार – आधुनिकता के आइने में दलित, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
2. अडगोकर, मंगेश – Human Rights concepts and Issues, Shivneri Publishers Gadge Nagar Amravati 2012
3. मेघवाल, कुसुम – भारतीय नारी के उद्धारक डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्यक प्रकाशन दिल्ली –63
4. Bhagwat S.B. - (Edi) Theories of Inentity in Human Rights and Dr. B.R. Ambedkar's Thoughts, Adhar Publication, Amravati, 2013
5. शर्मा, रमा – महिला सशक्तीकरण, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2010
6. माथुर, डॉ. कृष्णा – स्वातंत्रयोत्तर भारत में मानवधिकार ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2000

****

आदिवासी स्त्रियों का सौंदर्यालंकार : गोदना : एक विष्लेषण

प्रो. विजया वधवा *

शोध सारांश – ''आदिम युग से नारी शृँगार प्रिय रही है। शृँगार का प्रथम उपादान है – प्रकृति। प्रकृति से प्राप्त संसाधनों का प्रयोग शृँगार के लिए करना आदिम काल से ही चला आ रहा है। आदिवासियों को शृँगार की पर्याप्त जानकारी थी। उनमें सुन्दर दिखने की इच्छा विद्यमान है, इसीलिए वे अपने चेहरे एवं बदन के अन्य भागो को सजाते-संवारतें हैं।''

प्रस्तावना – आदिवासी महिलाओं के शृँगार में प्रमुख है गोदना, जो जीवन भर का स्थाई शृँगार है। गोदना सौंदर्य-वृद्धि का तो एक विशिष्ट साधन माना ही गया है, लेकिन इसके साथ कई पुरातन मान्यताएँ, लोक विश्वास, कुलदेवी – देवता प्रतीक आदि भी इससे सम्बद्ध है। प्राचीन संस्कृति के विद्धानों की मान्यता है कि गोदने की प्रथा अत्यन्त प्राचीन है। वास्तव में गोदना वह अभिव्यक्ति है जो जातीय चिन्हों के रूप में संपृक्त होकर व्यक्ति को सुरक्षा देती है। हर व्यक्ति अपने समुदाय से जुड़ा रहना चाहता है। गोदना उसे विश्ववास से बाँधता है। यह प्रथा इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है कि कुछ चिन्ह तो बिना किसी परिवर्तन के अपने आरम्भिक रूप में ही चले आ रहे हैं। उदा, नयना और बिच्छू नामक गोदना चिन्ह केवल भीलों में ही मिलते हैं। भील बोली में गोदना को **गुदावर्णो** कहते हैं। साधारणतया शादी के बाद गोदना गुदवाना उचित नहीं माना जाता है।

स्त्रियो के अंगो पर गोदने अधिक अंकित किये जाते है। पुरूषों के अंगो पर शौकिया कोई चिन्ह या उनके नाम या कभी-कभार धार्मिक चिन्ह। भील, कोरकू, गौड़, बैगा, टेवार बिंझवार, अगरिया, कंवर, कमार, भतरा, भाडिया, मुरिया स्त्रियाँ अपने अंगो पर बहुत अधिक गोदने गोदवाती हैं। अधिकांश आदिवासियों में पृथक-पृथक अभिप्रायों को गुदवाने का प्रचलन है। चेहरे पर बॉह पर, वक्षस्थल पर, हाथों पर, जंघा पर, पिंडलियों और पीठ पर तथा पैर के पंजो और टखनों पर गोदने गुदवाये जाते है। दंडामी, माडिया, अबूझमाड़िया और बैगा स्त्रियां मस्तक पर भी गोदना गुदवाती हैं तथा भील स्त्रियां मस्तक पर सूर्य, चंद्रमा तथा आंखों की कोर और कनपट्टी के बीच में चिरल्या अभिप्राय गुदवाती हैं। प्रत्येक जनजाति के गोदने के अपने अभिप्राय हैं और वे अभिप्राय विषेष अंगो पर ही अंकित किये जाते हैं।

गोदना आकृतियाँ बिन्दूओं, वक्र रेखाओं, वृत्तों और सीधी रेखाओं के मेल से बनायी जाती है। गौंड स्त्रियाँ तारे, परस्पर काटती हुयी सीधी रेखायें (घन चिन्ह) मानव और पशु-पक्षियों की प्रतीक आकृतियाँ पसन्द करती हैं। भूमियां जाति की स्त्रियां सीधी और वक्र रेखाओं की शौकिन होती हैं। चौक (चौकोर आसक), पेड़, मोर (विवाह संस्कार में आने वाले मुकुट), मयूर, गाय, बिच्छू, धडौची या परेंडी (पानी के बरतन रखने का स्थान), नदी, अग्नि, चन्द्र, सूर्य, तारे आदि के रेखांकन गोदना आकृतियों में प्राय: उपलब्ध होते हैं। गोदन चिन्हों से यह पता चल जाता है कि प्रतीक रूप में अंकित चिन्ह किस आदिवासी जाति या कबीले के है। गोदना के संबंध में यह मान्यता भी प्रचलित है कि इससे शरीर का परिश्रम करने तथा मौसम के उतार-चढ़ाव को सहन करने की शक्ति बढ़ती है, क्योंकि आदिवासियों को कठिन परिश्रम कर जीवन यापन करना होता या वन्य जीवन निर्वाह करना पड़ता था, इसलिए गोदना उसके लिए शृँगार का साधन होने के साथ-साथ स्वास्थ्यवर्द्धक भी था। लोक मान्यता यह भी है कि यही एक आभूषण है जो मनुष्य की मृत्यु के बाद भी उसके साथ परलोक जाता है, जिससे शरीर में गोदना है वह वैतरिणी पर करते समय मृतक की रक्षा करता है। इसलिये गोदना शरीर का शृँगार होने के साथ-साथ आत्मा का अलंकरण भी है। गोदना में प्रचलित देवी-देवताओं का चित्रांकन उनकी धार्मिक भावनाओं का प्रदर्शन करती है जो उनकी रक्षा करेंगे। वन्य पशु के अंकन से संबंधित मान्यता है कि इससे उनमें पशु का बल आ जाएगा और वे किसी भी पशु का सामना कर सकते है।

आदिवासी समुदाय में गोदना सौभाग्य सूचक माना जाता है। स्त्रियों में अंकित मछली का चित्र नारी की प्रजनन शक्ति का अभिप्राय है। इसी कारण छतीसगढ़ प्रांत में जब कन्या एक वर्ष की होती है तो गोदना का अंकन प्रारम्भ हो जाता है। अधिक गोदना गुदवाना स्त्री के सुसराल में अधिक सम्मान प्राप्ति की आवधारणा पर आधारित है। आदिम समाज में भी मान्यता प्रचलित है कि जो स्त्रियॉ अपने कलाई, हाथ में पति का, भाई-बहन या सखी का नाम गोदवाती हैं, मृत्यु पश्चात उनसे उनकी भेंट होना निश्चित होता है। घुटने में गोदना गुदवाने से वह स्त्री फुर्तीली होती है, जबकि पैर के तलवों में गोदना गुदवाने से पैरों की पीड़ा दूर हो जाती है।

गोदनों की सत्ता युगों से रही है, असहनीय कष्ट होते हुए भी महिलाएँ निरन्तर पीढ़ी दर पीढ़ी गोदने धारण करती आई हैं।

वर्तमान समय में शहरी सभ्यता और सांस्कृतिक सम्पर्क के परिणामस्वरूप जनजातियों में हीनता की भावना उत्पन्न हुई है तथा इन्होंने अपनी आदिम जीवन शैली में निहित गोदना का प्रभाव कुछ कम कर दिया हैं। कुछ लोग औपचारिकता वश गोदना गुदवा लेते हैं तथा कभी सामाजिक दबाव वश। सांस्कृतिक सम्पर्क ने सुन्दरता के मापदण्ड बदल दिये है।

'वैरियर एल्विन' ने अपनी पुस्तक ट्राइबल और मिडिल इण्डिया 1951 में लगभग 6 दशक पूर्व इस बात की ओर संकेत किया था कि बाहरी सम्पर्क जनजातीय कला के पतन का कारण बनेगा। गोदना के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसके पीछे निश्चित रूप से मनुष्य की कोई न कोई इच्छा रही है, जिसकी तलाश मनुष्य को शुरू से है। गोदने कामेच्छा की पूर्ति करने वाले, सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले, जादुई प्रभुत्व रखने वाले, आत्मिक सुख प्रदान करने वाले, परा शक्तियों को सुरक्षा के लिये रिझाने

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

वालें, काया को निरोग रखने वाले, सौंदर्य की वृद्धि करने वाले, गहनों के अभाव में आभूषणों की मानसिक पूर्ति करने वाले, पृथ्वी से लगातार स्वर्ग तक चुम्बकीय आकर्षण रखने वाले, शारीरिक सज्जा के अमिट आदिम चिन्ह हैं।

यद्यपि गोदना का स्वरूप आधुनिक काल में पूरी तरह लुप्त नहीं हुआ है परन्तु उसकी अभिव्यक्ति में भिन्नता आ गई है, वर्तमान में गोदना को ही अंग्रेजी में टैटू कहते है।

आज गोदना का अस्थायी स्वरूप आधुनिक युग की पहचान बन चुका है। आधुनिक शहरी बालाएँ शरीर पर टैटू बनवाती हैं जो कि उनके आधुनिक सौंदर्य बोध का प्रदर्शन है। अंतर मात्र इतना है कि आदिम स्त्रियाँ असहनीय पीड़ा (त्वचा में सुइयों की सहायता से चित्र बनाए जाते है) सहकर गोदना गोदना गुदवाती थी, और आधुनिक बालाएँ बाजार से पसन्द का चिन्ह खरीदकर शरीर पर चिपका लेती है। यद्यपि इस अस्थायी शृंगार की मानसिकता भी वही है जो पहले थी। शरीर की सुन्दरता, आकर्षण का पर्याय, दूसरो पर प्रभाविता और खुद की अलग पहचान बनाने की लालसा। इस अस्थायी शृंगार की अवधारणा गोदना पर आधारित है जिसे समय समाज और परिस्थितियों ने परिवर्तित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. म.प्र.की जनजातीय संस्कृति – डॉ. शिवकुमार तिवारी
2. म.प्र. की जनजातीयाँ – डॉ.श्री कमल शर्मा, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
3. भील जनजीवन और संस्कृति – डॉ.अशोक डी.पारिक
4. समाजशास्त्र – डॉ.ए.पी.श्रीवास्तव
5. भारतीय जनजातीयाँ संरचना एवं विकास – डॉ. हरिचन्द्र उप्रेसी
6. रचना – मार्च–अप्रेल 2013
7. जनजातीय समाजशास्त्र – डॉ.श्रीनाथ शर्मो

गुदना

****

युवाओं में असंतोष (तनाव)

प्रिशिला अन्देरस्स *

प्रस्तावना – आज के युवा की तस्वीर एक तरह का कोलाज है, जिसमें श्वेत-श्याम तस्वीरों के बीच कुछ रंगीन तस्वीर भी है। इनमें देश-विदेश, छोटे शहरों और कस्बों का युवा भी है, जो आसमान छूते सपनों और कमतर होते मौके के बीच पैर टिकाने की जद्दोजहद में जुटा है, खेती किसानी से बाहर हर छोटे-बड़े मौके के लिए हाथ पैर मारता युवा भी है। सभी सपनों और उम्मीदों से भरपूर हैं, महत्वाकांक्षी हैं, कुछ नया और अलग करना चाहते हैं, इसमें कोई दो राय नहीं है कि भारतीय युवा में धैर्य, आत्मविश्वास और विपरीत परिस्थितियों में खड़े रहने का हौसला है। वहीं यह भी सच है कि वे बहुत बेचैन हैं, इंतजार करने के लिए तैयार नहीं है और एक बेहतर कल की माँग कर रहे है।

युवा असंतोष की प्रकृति व क्षेत्र – प्राचीनकाल में युवा वर्ग आँख मूँदकर अपने बड़े-बुजुर्गों का अनुसरण या अनुकरण मात्र ही करता था। आज का युवा वर्ग विकसित परिस्थितियों से सचेत होता जा रहा है। स्वभावत: ही उसे अपने लिए वर्तमान परिस्थितियों में कुछ प्राप्त करने के लिए क्रियात्मक कदम उठाने या आन्दोलन करना पड़ता है, चाहे वह क्रियात्मक कदम, जुलूस, हड़ताल, नारेबाजी आदि हो, यही युवा क्रियावाद है। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामाजिक जीवन में विभिन्न क्षेत्रों में जैसे आर्थिक क्षेत्र, राजनैतिक क्षेत्र, एवं सार्वजनिक क्षेत्र आदि में अहिंसात्मक एवं हिंसात्मक दोनों ही तरीकों को अपनाते हैं।

युवा असंतोष के कारण – देश का भविष्य युवा पीढ़ी के हाथों में होने की बात तो हर कोई करता है, राजनीति से फिल्मों तक, हर क्षेत्र में औसत युवा शीर्ष से दूर और अपने भविष्य को लेकर अनाश्वस्त बने हुए हैं। राजनीति हो या अर्थजगत हर क्षेत्र में शीर्ष पद की असली लड़ाई बूढ़ों और उनसे अधिक बूढ़ों के बीच लड़ी जा रही है। दूसरी ओर युवाओं के विषय का चयन, कोचिंग और नौकरी से लेकर शादी-ब्याह तक तमाम फैसले अकसर उनकी इच्छा से नहीं बल्कि सामाजिक, आर्थिक दबावों तले लिए जा रहे हैं। जाति वर्ग, आय वर्ग, लैगिंक भेदभाव से जुड़ी आदिम पारिवारिक परम्पराऐं ही युवाओं के जीवन मूल्यों की कसौटी बनाने लगे तो ज्ञानार्जन में जोखिम भरे शोध बोध की दीवानगी युवाओं में कैसे व्यापेगी ?

समाज व्यवस्था में युवा वर्ग की भूमिका भी अहम होती है। युवा तनाव भी उसी समाज की वर्तमान परिस्थितियों का परिणाम है। कुछ वर्तमान सामाजिक परिस्थितियां युवा तनाव के कारण है –

- **आर्थिक असमानता एवं प्रतिस्पर्धा –** वर्तमान समय में आर्थिक असमानताऐं बहुत अधिक हैं। आज का युवा वर्ग इस असमानता का स्वयं शिकार है। दूसरी ओर प्रतिस्पर्धा में जिसमें अधिकांश युवक प्रतिस्पर्धाओं से जूझ नहीं पाते हैं, फलत: तनाव से त्रस्त रहते हैं।
- **बेरोजगारी और महंगाई –** उच्च शिक्षा प्राप्त शिक्षित बेरोजगारों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। असंख्य युवकों को काम करने का अवसर नहीं मिलता, तो तनाव के कारण आंदोलनात्मक कदम उठाने के अलावा उनके पास कोई दूसरा विकल्प नहीं होता।
- **असुरक्षा की भावना –** मनोवैज्ञानिक तौर पर आज का युवा किसी पर भरोसा नहीं कर सकता है। न दोस्तों पर, न शिक्षक पर और न परिवार या समाज पर। वह अपने जीवन की दिशा व लक्ष्यों को सुनिश्चित नहीं कर पाता है। अत: वह एक मानसिक तनाव की स्थिति में होता है जो कि उसे उग्र और विघटनकारी कार्यों की ओर खींच ले जाती है।
- **पारिवारिक नियंत्रण का ह्रास –** वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बढ़ती महंगाई, व्यक्तिवादी मानसिकता, सामाजिक एवं आर्थिक जीवनशैली को व्यवस्थित करने हेतु माता-पिता नौकरी करते हैं। माता-पिता अपने कार्यक्षेत्र में व्यस्त होने के कारण बच्चों की सही तरीके से देखभाल या मार्गदर्शन नहीं दे पाते हैं और इसी वजह से युवा अपने मार्ग से भटक जाते हैं। उनका उग्र बहाव में जाना स्वाभाविक है। दूसरी ओर पढ़े-लिखे युवक-युवतियां संयुक्त परिवार में बन्धनों तथा कर्ता की निरंकुश सत्ता के अधीन नहीं रहना चाहते हैं।

सुझाव – युवाओं को सही नेतृत्व प्रदान किया जाए। उन्हें निश्चित दिशा दी जाए। युवाओं को भविष्य की अनिश्चितता के भय से मुक्ति दिलाई जाए। सामाजिक क्रियाकलापों में युवाओं को उचित प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों में कॅरियर एवं स्वरोजगार सम्बन्धी काउंसलिंग के माध्यम से युवाओं को अपने कॅरियर के प्रति दिशा प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

निष्कर्ष – युवा तनाव आज की ज्वलंत समस्याओं में से एक है। समाज में सदा से पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के बीच एक अचेतन संघर्ष चलता रहता है। विभिन्न पीढ़ियों में होने वाला यह संघर्ष आज युवाओं में अतिसक्रियता और असंतोष का प्रमुख कारण माना जाता है। युवा सोच को सही दिशा न मिलने पर भी उसमें असंतोष का होना स्वाभाविक है। असंतोष से घिरे युवा को उबारने के लिए उससे जुडे लोगों का कर्तव्य है कि वे उसे उस परिस्थिति से बाहर निकालने में मदद करें। हर संभव ऐसे प्रयास होने चाहिए जिससे तनावग्रस्त युवा को एक नई रोशनी मिले, असफलताओं से लड़ने का सामर्थ्य मिले।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सामाजिक व्याधि की सामाजिक समस्याऐं – डॉ. मुकर्जी एवं डॉ. दुबे।
2. भारत में सामाजिक समस्याऐं – डॉ. एम.एम. लवानिया।
3. भारतीय समाज मुद्दे एवं समस्याऐं – डॉ. धर्मवीर एवं कमलेश महाजन।
4. समाजशास्त्रीय निबन्ध – डॉ. किरण बघेल।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

Religious Tourism In Madhya Pradesh

Dr. Madhumita Bhattacharya*

Introduction - Madhya Pradesh , as its name implies , lies in the heart of India , Madhya Pradesh consists largely of a plateau streaked with the hill ranges of the Vindhyas and the Satpuras, and the Chhattisgarh plains to the cast, The hills give rise to the main river systems of the Narmada and the Tapti running from east to west, and the Chambal, Sone , Betwa, Mahanadi and the Indravti west to east, beautified by these meandering rivers and dotted with hills and lakes , the state has a varied natural setting of great beauty.

Although the modern state of Madhya Pradesh came into being only in 1956, its cultural heritage is ancient. Innumerable monument, exquisitely carved temples , stupas, forts, palaces and hill tops, rise in the visitor's mind visions of empires and kingdom , of great warriors and builders, of poets and musician , of sints and philosophers , of Hinduism,, Buddhism, Jainism & islam . india's immortal poet-dramatist kalidas and the great musician of the mughal court , Tansen, hailed from these parts . Madhya Pradesh is home of cultural heritage of Hinduism, Islam, Buddhism, and Jainism. Innumerable monuments , exquisitely carved temples, stupas , forts and palaces are dotted all over the state. The geographical location and its easy accessibility make Madhya Pradesh a very good place for pilgrimage tourism. These religious places are imbued with the spirit of Indian heritage and have a soothing and calming effect on the pilgrim

Research has shown that the visitor population in the state ranges widely from very religious orthodox polgims, through "traditional" pilgrim- tourists to secular tourists. The features of present-day pilgrims can be represented on a scale that may be described as secular versus spiritual , and tourism versus pilgrimage. This typology also offers a model for the development of the polgrimage sites .The convergence of tourists to places of religious interest highlights the need to develop these centers into tourist hubs to bridge between old fashioned pilgrimage and current tourism . it should also be understood by policy makers and the local population that the economic impacts of religious tourism should not be neglected or underestimated, although religious institution have traditionally attempted to downplay this aspect in the past. Inevitably, tourism seeks to amalgamate the resident culture with the visiting culture into a strain that is acceptable to both. In the modern world it is hard to ignore the impression that in most places of pilgrimage the profane impact of tourism are just as important if not more so than the religious.

The Tourism department of Madhya Pradesh calls the state a sanctuary of a hundred gods. Madhya Pradesh has alarge number of religious centers , which draw the devout of all faiths. Places such as Chitrakoot , Amarkantak , Ujjain , Maheshwrm Omkareshwarm Bhojpurm Orchha m Sonagiri m Bawangaja and Muktagiri , are well known pilgrim centres , Ujain is one of the holiest of Indian cities, and the 'simhastha (mumbh mela) held at Ujjain every years draws millions of pilgrims from all over the country. The Mahakal temple at Ujjain and the shri Omkar Mandhata Temple at Omkareeshwar house two of the twelve 'Jyotirlingas.' Chitrakoot, where Ram and Sita spent eleven of their fourteen years of exile, and where the principal trinity of the hindu pantheon, Bramha ,Vishnu & Mahesh, were incarnated , is another holy centre.Orchha is also well known for its Ramaraj Temple, where gord ram is worshiped as a king . The state's capital city Bhopal boasts of the Taj-ul-Masjid, one of the largest mosques in Asia, which draws mammoth crowds. Jain pilgrim centers spread all over the state are also venerated by the followes of the faith.

The unique Khajuraho Temples are fomous all over the world for their unique expression of human passion and love. The temples of Orchha,Archaeological treasures are preserved in the museums at satna District, Sanchi, Vidisa, Gwalior, Indore , Mandsaur district, Ujjain , Rajgarh district , Bhopal, Jabalpur, Rewa district and many other palces . These magnificent temples and mosques were built in different periods under the rule of different emperors. The old worldly charm and magnificence gets manifested through these holy places in Madhya Pradesh. The architecture of the temples and mosques is simply beyond cmparison in itsant.tese historical monuments housing quaint religious practice and indigenous culture are now much-revered pilgrimage centers for tourists seeking a brush with spiritual enlightenment "The jama masjid at mandu has such ideal acoustics that a murmur from the pulpit is heard clearly in the farthest corner of the enormous space Sanchi in Madhya pradesh is an important centre for Buddhist pilgrims.(Indian Zone) The Buddhist vihara is of great religious significance to the Buddhist tourist . the Buddhist Temples in Sanchi were built to commeorate the teachings of the lord Buddha.

* Professor (History) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

While catering to tourists it should be ensured that the infux of tourists to religious places do not in any way spoil or endanger the cultural ethos and local traditions or pose a threat to the social fabric of the area. Religious tourism is also expected to generate substantial local employment opportunities "revenue earned by the Government through taxes and license fees should be fully utilized in developmental activities. The government of Madhya Pradesh feels that special ateention should be paid to promoting tourism in the state and increasing the number of national and international tourists . It plans to encourage foreingn tourists to visit m.p. who are willing to pay in foreign exchange. The tourism potential of Madhya Pradesh should be tapped in a planned manner and efforts should be made to project the state on the tourism map of world .

Infrastructure must be put up in place to facilitate the influx of tourists. Budget hotels, cottages, and accessibility have to be improved upon. The tourism department is already in process of purchasing buses by taking loans from HUDCO and other financial institutions. The 13th Finance commission has sanctioned an assistance of Rs. 180 crore for development of various tourism destinations in Madhya Pradesh. The funds are to be used for infrastructure development at religious tourism places, development of rural and heritage tourism, promotion of wildlige and eco-tourism activities and development of water resevirs . The funds are also to be used for building adventure sports destination, development of jain and buddhist corridors in the state and development of new tourist destinations, Fairs and air service, As per the break-up given, about Rs.5 crore will be spent on development of Buddhist corridor in western Madhya Pradesh, Rs. 10 crore on jain corridor, Rs. crore on heritage hotel and Rs. 50 crore for eco and adventure tourism facilities to tourists among others.

Religious tourism in M.P. has given the tourism industry greater respect among the business community , public officials , and the public in general. This often translates into decisions or public policies that are favourable to tourism . community supports important for tourism , as it is an activity that affects the entire community. Tourism businesses depend extensively on each other as well as on other businesses, government and residents of the local community . Economic benefits and costs of tourism reach virtually everyone in the region in one way of or another. Enonomic impact analyses provide tangible estimates of these economic interdependecises and a better under standing of the role and importance of tourism in a region's economy.

Pilgrimage tourism reveals many perspectives in culture and economy by exploring and development religious land marks and facilities lead to the rise of pilgrimage tourism. Pilgrimage tourism is being recognized as a prime industry in ,most parts of the world for earning foreign exchange . pilgrimages are not only a destination for our religious faith but they also strengthen our national unity and promote brotherhood . Tourism and pilgrim Tourism has a tremendous scope in the betterment of not only the local population but also the state as well. It affords job opportunities in different sectors of tourism industry to men as well as women it opens up new possbilities for ventures and attracts new investments . it is a good source of revenue for collective betterment of the state.

References :–

1. Religious tourism in asia and the pacific- rifai taleb.
2. Socio – economic impacts in pilgrimage tourism vo2 vijayanand's.
3. Madhya Pradesh tourism .gov.in/tourismpolicy .
4. Ulndershanding tourism at heritage religious sites vol 5 sarkocher.
5. www. Indianholiday. Com /tourist attrecton /madhya pradesh /holy place.

****

ग्वालियर -चम्बल संभाग के धार्मिक पर्यटन स्थल

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – अतीत का अध्ययन ही इतिहास कहलाता है। इतिहास स्वयं को ऐतिहासिक स्मारकों, साहित्य एवं परम्पराओं एवं धार्मिक स्थलों में अभिव्यक्त करता है। इनके रूप में यह अभिव्यक्ति मनुष्य को उसकी जड़ों से जोड़ते हुये उसे काल्पनिक अभिव्यक्ति के माध्यम से उस युग में पहुंचा देती है, जिस युग का वह स्मारक है। वर्तमान समय में बढ़ा हुआ धार्मिक पर्यटन इन धार्मिक स्थलों का महत्व और भी अधिक बढ़ा रहा है। ग्वालियर-चम्बल संभाग की यह असीमित अद्‌भुत धार्मिक विरासत इन संभागों को पर्यटन के क्षितिज पर आकर्षण केन्द्र के रूप में स्थापित करती है। ग्वालियर-चम्बल संभाग के सभी जिले इस दृष्टिकोण से समृद्ध हैं। इस विरासत को संजोकर रखना आज प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है।

पर्यटन स्थलों के विकास में धर्म का विशेष योगदान होता है। भारतीय परम्परा धर्म प्रधान रही है। प्राचीन काल से ही प्रत्येक व्यवस्था को धर्म के आवरण में प्रस्तुत करने की परम्परा रही है। प्रत्येक भारतीय के हृदय में धर्म किसी न किसी भावना में विद्यमान रहता है। यही कारण है कि यहां अधिकांश यात्राएं धार्मिक भावना से परिपूर्ण होती हैं, जिसमें धार्मिक पर्यटन स्थलों का विशेष योगदान रहता है। ग्वालियर-चम्बल संभाग में अनेक ऐसे धार्मिक पर्यटन स्थल हैं जहां प्रतिवर्ष अपरिमित संख्या में पर्यटक सच्ची श्रृद्धा पहुंचते हैं जिनमें से शनीचरा, पीताम्बरा पीठ, सोनागिरि, दाताबंदी छोड़ गुरूद्वारा इत्यादि विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

प्रमुख धार्मिक पर्यटन स्थल

- हिन्दू धर्म के पर्यटन स्थल
  - पीताम्बरा पीठ
  - शनीचरा
  - सूर्य मंदिर
  - उन्नाव बालाजी
  - रतनगढ़ माता मंदिर
- अन्य धर्मों के पर्यटन स्थल
  - सोनागिरि व अन्य जैन अतिशय क्षेत्र
  - दाताबंदी छोड़ गुरूद्वारा
  - चर्च या गिरिजाघर
  - मुस्लिम संतो के स्मारक

1. ग्वालियर-चम्बल संभाग के हिन्दू धर्म के पर्यटन स्थल – ग्वालियर चम्बल संभाग धार्मिक दृष्टिकोण से हिन्दू धर्म प्रधान क्षेत्र है। यहां के बहुसंख्यक निवासी हिन्दू धर्म के अनुयायी होने के कारण यहां हिन्दू धर्म के मंदिर प्रचुर मात्रा में मिलते हैं तथा साथ ही साथ उनमें से विशेष रूप से प्रसिद्ध मंदिर इन जिलों में धार्मिक पर्यटन का आधार हैं। अनेक श्रृद्धालु पर्यटक के रूप में इन स्थलों पर पहुँचते हैं। इनमें से प्रमुख स्थल हैं –

(i) पीताम्बरा पीठ, दतिया – ग्वालियर-चम्बल संभाग का धार्मिक पर्यटन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थल ग्वालियर से लगभग 69 किलोमीटर की दूरी पर स्थित दतिया नगर में अवस्थित पीताम्बरा पीठ है जो सिद्ध शक्ति पीठ है तथा यहां धूमावती माता एवं बगुलामुखी माता के स्वरूप का दर्शन करने सभी वर्गों के श्रृद्धालु पहुंचते हैं। यह अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त स्थल है। पीताम्बरा पीठ में ही महाभारत युगीन भगवान शिव का प्राचीन वन खण्डेष्वर मंदिर भी महत्वपूर्ण है।

(ii) शनीचरा का शनि मंदिर – ग्वालियर से लगभग 7 किलोमीटर की दूरी पर पारौली नामक ग्राम से तीन किलोमीटर की दूर शनिदेव का प्राचीन मंदिर है जो शनीचरा के नाम से प्रसिद्ध है। यह प्रसिद्ध मंदिर मुरैना जिले में आता है तथा यह उत्तर भारत का एकमात्र एवं देश के गिने-चुने शनि मंदिरों में से एक है। प्रत्येक शनीचरी अमावस्या तथा शनि जयंती पर लाखों की संख्या में श्रृद्धालु यहां देश के विभिन्न भागों से पहुंचते है। यह इस क्षेत्र का धार्मिक पर्यटन का महत्वपूर्ण केन्द्र है। यहां स्थित जलकुण्ड में श्रृद्धालु पुराने वस्त्र एवं जूते त्यागते हैं। यहां से कुछ दूरी पर कपिल ऋषि का आश्रम है जहां कई जलधाराएं मनोरम दृश्य प्रस्तुत करती हैं। यहां शनिदेव की प्रतिमा अत्यन्त प्राचीन है।

(iii) ग्वालियर का विवस्वान (सूर्य) मंदिर – ग्वालियर की स्थापत्य कला की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यहां इस कला के विकास की निरन्तरता बनी हुयी है। ग्वालियर वासी मात्र अतीत के वैभव गान तक ही सीमित नहीं हैं वरन् वे उससे प्रेरणा पाकर नवीन निर्माण के लिये भी प्रेरित हैं। उन्होंने अतीत के कला वैभव को आदरांजलि देते हुये सूर्य मंदिर जैसी श्रेष्ठ कृति का निर्माण किया है। सन् 1988 में बने इस भव्य मंदिर का निर्माण विख्यात उद्योगपति घनश्याम दास बिड़ला ने प्रारंभ करवाया तथा

* प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

उनके पुत्र बसंत कुमार बिड़ला ने इसे पूर्ण करवाया। इस मंदिर की रूपरेखा कोणार्क के सूर्य मंदिर के समान रखी गयी है। इसके मध्य में भगवान विवस्वान की भव्य प्रतिमा, उसमें सूर्य की किरणों के प्रवेश की उत्तम व्यवस्था, रथ एवं घोडे, भित्तियों का सुन्दर अलंकरण, बाह्य दीवारों पर मूर्तियों का निर्माण अद्‌भुत छटा लिये हुये है।

(iv) उन्नाव बालाजी का सूर्य मंदिर – दतिया से 17 किलोमीटर की दूरी पर उन्नाव में बालाजी का अति प्राचीन मंदिर स्थित है। किंवदन्तियों के अनुसार इस मंदिर में प्रागैतिहासिक कालीन प्राचीन प्रतिमा है। उन्नाव बालाजी का प्रसिद्ध सूर्य मंदिर धार्मिक पर्यटन का प्रमुख केन्द्र है। जन अनुश्रुतियों के अनुसार यहां स्थित सरोवर में स्नान करने से कोढ़ इत्यादि व्याधियों से मुक्ति मिलती है। इस मंदिर का निर्माण सन् 1844 ई0 में दतिया के शासक विजय बहादुर ने तथा इसका विस्तार मामा साहिब जाधव ने करवाया था। यह पहूज मंदिर के तट पर बना है तथा इसके चारों ओर सुरक्षा प्राचीर बनी हुयी है। इस मंदिर की बुन्देला शैली, छत एवं द्वार दर्शनीय हैं। यहां की प्राचीन प्रतिमा, सूर्य चक्र, नवग्रह स्थापना ने इसे अपार श्रृद्धा एवं जिले का धार्मिक पर्यटन का केन्द्र बना दिया है।

(v) रतनगढ़ माता मंदिर :–दतिया जिले के सेंवढ़ा से लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर सघन वन में रतनगढ़ माता का प्राचीन सिद्ध मंदिर है। इसकी प्रतिमा अति प्राचीन है। यहां प्रतिवर्ष लगने वाले मेले में लाखों श्रृद्धालु पहुंचते हैं। यह भी धार्मिक पर्यटन का महत्वपूर्ण केन्द्र है।

2. अन्य धर्मों के पर्यटन स्थल – ग्वालियर-चम्बल संभाग हिन्दू बहुल क्षेत्र होने के बाद भी यहां बड़ी संख्या में अन्य धर्मावलम्बी भी प्राचीन समय से ही निवास करते रहे हैं। जैन धर्म का तो यह सिद्ध क्षेत्र रहा है। इसके साथ ही यहां अन्य धर्मों यथा इस्लाम, ईसाई तथा सिक्ख धर्म के भी अनेक उपासना स्थल हैं जो यहां धार्मिक पर्यटन का आधार हैं।

(i) सोनागिरि तथा अन्य जैन अतिशय क्षेत्र –दतिया से लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर सोनागिरि स्थित है जो जैन धर्म का प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। यहां लगभग 118 जैन मंदिर हैं जो विभिन्न कालों की स्थापत्य तथा मूर्तिकला का प्रतिनिधित्व करते हैं। सफेद रंग के मंदिरों की कतारों के कारण इस क्षेत्र को सोनागिरि अर्थात् सुनहरा पर्वत के नाम से जाना जाता है। प्राचीन समय में इसके स्वर्णगिरि एवं श्रृवणगिरि नाम भी प्रचलित थे। आज यह दिगम्बर जैन धर्मावलम्बियों की आस्था का प्रमुख केन्द्र है। इन मंदिरों में से 74 मंदिर पहाड़ी पर तथा 26 मंदिर नीचे बस्ती में स्थित हैं। इनमें सर्वाधिक आकर्षक मंदिर आठवें तीर्थंकर चन्द्रनाथ जी का मंदिर है। यहां प्रतिवर्ष चैत्र माह (मार्च-अप्रैल) में एक विशाल मेले का आयोजन भी किया जाता है।

सोनागिरि के अतिरिक्त ग्वालियर-चम्बल संभाग में जैन अतिशय क्षेत्र के रूप में अनेक स्थल प्रसिद्ध हैं जिसमें ग्वालियर दुर्ग का जैन मूर्ति समूह अद्वितीय है। इनमें जैन तीर्थकरों आदिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ की विशाल प्रतिमाएं विशेष रूप से दर्शनीय हैं। इस क्षेत्र में आठवीं शताब्दी में जैन धर्म का प्रभाव स्थापित हो गया था तथा तोमर शासकों के समय में यहां जैन धर्म को संरक्षण मिलने से यह जैन कला का केन्द्र बन गया। ग्वालियर के अतिरिक्त भिण्ड जिले का बरासों का जैन अतिशय क्षेत्र और इसकी विशाल प्रतिमाएं भी जैन आस्था का केन्द्र हैं। ऐसी मान्यता है कि स्वयं महावीर स्वामी ने इस क्षेत्र की यात्रा की थी। इसी प्रकार अशोकनगर जिले में स्थित थूवोंनजी अतिषय क्षेत्र भी इसकी भगवान आदिनाथ की 28 फीट ऊंची खड्‌गासन की प्रतिमा, भगवान शान्तिनाथ की 18 फीट ऊंची तथा भगवान पार्श्वनाथ की 15 फीट ऊंची प्रतिमा के लिये विख्यात है। इस प्रकार ग्वालियर-चम्बल संभाग में जैन धार्मिक पर्यटन की अपार संभावनाएं है।

(ii) दाता बन्दी छोड़ गुरूद्वारा, ग्वालियर – सिख धर्म के प्रमुख तीर्थस्थलों में से एक प्रमुख तीर्थ ग्वालियर में स्थित दाता बन्दी छोड़ गुरूद्वारा है जिसकी स्थापना सिखों के छठवें गुरू हरगोविन्द सिंह जी की बावन राजाओं के साथ जहांगीर की कैद से रिहाई की स्मृति में ग्वालियर दुर्ग पर की गयी थी। गुरूद्वारा शैली में बने इस सुन्दर संगमरमर से निर्मित गुरूद्वारे को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने में बाबा उत्तम सिंह, बाबा अमरसिंह का विशेष योगदान रहा है। आज भी यहां कीर्तन एवं लंगर की परम्परा जारी है। इसकी एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यहां डॉ. रघुवीर सिंह बैस, पद्मश्री बाबा सेवासिंह तथा बाबा लक्खासिंह के सम्मिलित प्रयासों से स्थापित मल्टीमीडिया सिख म्यूजियम की स्थापना है जहां टच स्क्रीन पर श्री गुरूग्रंथ साहिब, सिख धर्म एवं दर्शन, सिख परम्पराएं एवं इतिहास, नषा इत्यादि सामाजिक बुराईयों विषयक जानकारियां निःशुल्क उपलब्ध हैं। यह विश्व का ऐसा चौथा म्यूजियम होगा इससे पूर्व खण्डूर साहिब, जालंधर एवं कनाडा में ये सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं। यह भी यहां धार्मिक पर्यटन के बढ़ाने में सहायक है।

(iii) प्रमुख चर्च या गिरिजाघर – ग्वालियर चम्बल संभाग में ईसाई धर्म के अनुयायी भी बड़ी संख्या में रहते हैं जिनमें कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट दोनों

ही वर्गों के अनुयायी सम्मिलित हैं। यही कारण है कि यहां अनेक चर्च व गिरिजाघर स्थित हैं जो ईसाई पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बनते हैं।

(अ) एनिलिकल क्राइस्ट चर्च, ग्वालियर (1775) – इस चर्च का निर्माण ग्वालियर आर्मी के अंग्रेजी मूल के लोगों द्वारा करवाया गया था। ब्रिटिश आर्मी ने इस चर्च का नाम सेंट पीटर्स रखा। यह प्रोटेस्टेन्ट चर्च ब्रिटिश शैली की वास्तुकला का सुन्दर उदाहरण है। वर्तमान में यह सीपी कॉलोनी मुरार में स्थित है। सन् 1915 ई. में ग्वालियर शासक माधवराव सिंधिया ने अपने मित्र जनरल एलमेर क्रॉफ्ट्स की स्मृति में अष्ठ धातु का घण्टा उपहार में दिया था जो चर्च की तीसरी मंजिल पर लगा हुआ है। एल्मेर सन् 1886 से 1905 ई. तक इण्डियन मेडिकल सर्विसेस में थे।

(ब) औरलेण्डी ऑफ माउंड कार्मल चर्च, ग्वालियर – (1803) सिकन्दर कम्पू स्थित सेन्ट टेरेसा स्कूल परिसर में बने इस कैथोलिक चर्च का निर्माण ईसाई समुदाय के सहयोग से किया गया था। इस चर्च में ब्रिटिश स्थापत्य कला की बारीकियां दर्शनीय हैं। वर्तमान में यह झांसी कैथोलिक धर्म प्रांत से सम्बद्ध है।

(स) यू.एन.सी.आई. चर्च, मुरार, ग्वालियर (1902) – ग्वालियर में मुरार सब्जी मण्डी स्थित यूनाइटिड चर्च और नॉर्दन इण्डिया का निर्माण कनाडा से आये डॉ. जॉन विल्की ने करवाया था। यह ग्वालियर का एक मात्र चर्च है जो बिना किसी अनुदान के संचालित है। यह चर्च कैनेडियन वास्तुकला का बेमिसाल नमूना है।

(द) सेन्टपॉल चर्च, ग्वालियर (1972) – इस कैथोलिक चर्च का निर्माण ईसाई समुदाय के सहयोग से करवाया गया था । इसी परिसर में वर्तमान में शहर का प्रसिद्ध सेन्टपॉल्स स्कूल भी संचालित है। इस चर्च की विशेषता टबरनाइटल हॉल है। जहां जनसमुदाय की भलाई के लिए 24 घण्टे अनवरत प्रार्थना चलती रहती है।

(इ) सेन्टपॉल्स इवेन्जलिकल ल्यूथर्न चर्च, पड़ाव, ग्वालियर (1978) –यह प्रोटेस्टेन्ट समुदाय का चर्च है। इसी कारण यहां क्रॉस की पूजा की जाती है। इससे जुड़ी हुई चमत्कारों की कथाऐं भी जनमानस में प्रचलित हैं।

(फ) मारमोथा चर्च, ग्वालियर (1987) – सिटी सेन्टर के सरस्वती नगर में स्थित इस चर्च की भीतरी बनावट पुरानी वास्तुशैली की है तथा बाहर से यह मकान के समान प्रतीत होती है। इस चर्च में प्रार्थना मलयालम भाषा में होती है।

उपरोक्त सभी चर्च विशेषकर ईसाई धर्मावलम्बी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र हैं। जिनमें कैथोलिक व प्रोटेस्टेन्ट वर्ग के पर्यटक विशेषरूप से जाते हैं। इनमें आयोजित क्रिसमस कार्यक्रम भी पर्यटकों को आमंत्रित करते है।

(iv) इस्लामी आस्था के केन्द्र – ग्वालियर-चम्बल संभाग में बड़ी संख्या में इस्लाम धर्म के अनुयायी एवं उपासना व आस्था के केन्द्र हैं जिनमें ऐतिहासिक मस्जिद जामा मस्जिद है जिसे शुक्रवारी मस्जिद के नाम से भी जाना जाता है। यह मुगलकालीन स्थापत्य का सुन्दर नमूना है तथा ग्वालियर में किलागेट के पास स्थित है। इसके अतिरिक्त ग्वालियर में इस्लामी आस्था के केन्द्र में वे अनेक मजारें, दरगाहें एवं उन पर आयोजित उर्स व जलसे हैं जो इस क्षेत्र में सांप्रदायिक सद्‌भाव का सुन्दर उदाहरण हैं। उदाहरणार्थ – बाबा कपूरजी, हजरतजी की दरगाहें एवं हजरत मीर बादषाहजी का स्थान इत्यादि। ये सभी इस क्षेत्र में धार्मिक पर्यटन का आधार हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महेश्वरी, हरिवल्लभ-ग्वालियर, इतिहास, संस्कृति एवं पर्यटन – पृष्ठ क्रमांक-16
2. चतुर्वेदी, श्री नारायण – सूर्योपासना और ग्वालियर का विवस्वान मंदिर – पृष्ठ क्रमांक-85
3. मध्यप्रदेश टूरिज्म- ग्वालियर -अ गुड अर्थ गाइड- पृष्ठ क्रमांक-61
4. मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम-मध्यप्रदेश- ए टू जेड -टूरिस्ट गाइड- पृष्ठ क्रमांक- 132
5. कुरेशी नईम -ग्वालियर के आसपास – पृष्ठ क्रमांक-51
6. मध्यप्रदेश ईको टूरिज्म डवलपमेन्ट बोर्ड, से प्राप्त जानकारी।

****

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडर का भारत के पुनर्निमाण में योगदान

डॉ. प्रकाश चन्द्र अलंसे *

शोध सारांश – डॉ. अम्बेडकर ने आधुनिक भारत के पुनर्निर्माण में अमुल्य योगदान दिया है। उनके योगदान को कभी भी अविस्मरित नहीं किया जा सकता पूरा भारत देश उनके कार्यो का ऋणी रहेगा। उन्होंने सामाजिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र, राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करके स्वतंत्र भारत का पुनर्निर्माण किया है। अगर सामाजिक क्षेत्र की बात की जाय तो उन्होने प्रचलित सामाजिक विचार धारा से अलग हटकर उनमे सुधार करने का प्रयास किया क्योंकि स्वयं ने उसका अनुभव किया था भारत में सैकड़ों लोग शताब्दियों से असमानता, दासता, शूद्रता, उपेक्षित, जीवन जीने को मजबूर थे बाबा साहेब ने इसका मूल कारण वर्ण व्यवस्था को माना वर्ण व्यवस्था में शूद्र समाज की स्थिति निरन्तर दयनीय होती जा रही थी।

प्रस्तावना – क्बाबा साहेब के पहले भी अनेको संतों ने हिन्दू धर्म मे व्याप्त बुराईयों के खिलाफ आवाज उठायी जिनमें रामानुज, चक्रधर, रामानंद, कबीरदास, चैतन्य, एकनाथ, तुकाराम, रविदास आदि थे इनका कहना था कि 'सबसे उपर मनुष्य ही एकमात्र सच है।' लेकिन इन संतो का समाज पर विशेष फर्क नहीं पड़ा सदियों से व्यवस्था वैसे ही चलती रही। बाबा साहेब का व्यक्तित्व बहु आयामी था उनमें समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री, विधिज्ञ, राज्यशास्त्री, संविधानज्ञ, पत्रकार, श्रमिक नेता, क्रांतिकारी, कुशलसंगठक, राजनीतिक नेता, लेखक आदि के विविध रंग उनके व्यक्तित्व में दिखाई देते है। **आर्थिक क्षेत्र में** भी बाबा साहब ने कृषि को प्राथमिक उद्योग माना है। उनका मत था कि भारत कृषि प्रधान देश होते हुये भी कृषि उत्पादकता सबसे कम है। कृषि जोतों के घटते आकार को हानिकारक माना उन्होने बताया कि जोतों की चक बंदी की जाय, आकार में वृद्धि की जाय तो अपने आप कृषि उत्पादकता बढ़ जायेगी।बाबा साहब नें **राजनैतिक क्षेत्र में** स्वयं भाग लेकर साफ सुथरी राजनीति करने का आदर्श प्रस्तुत किया।

जीवन परिचय – बाबा साहेब का जन्म 14 अप्रैल 1891 को महू (म.प्र.) में रामजी शकपाल सूबेदार के यहाँ हुआ था। माता का नाम भीमाबाई था। इनके पिता नार्मल स्कूल से प्रशिक्षण प्राप्त टीचर थे उनकी स्मरण शक्ति बेहद प्रखर थी, जब अम्बेडकर की उम्र 2 वर्ष की थी तब पिता रिटायर हो गये तब पूरा परिवार सतारा आ गया, यही पर उनकी शिक्षा प्रारंभ हुई।

1. बचपन मे ही कोमल मस्तिष्क पर छुआछूत भेदभाव का प्रभाव पड़ना – सतारा स्कूल मे पहली बार समाज के अमानवीय, निष्ठुर, हिंसा, पाशविक रूप का साक्षात्कार किया। स्कूल में उन्हें प्रवेश तो मिल गया लेकिन अन्य छात्रों के साथ एक ही बैंच पर बैठने की अनुमति नही थी अपने घर से लायी हुई चटाई पर अन्य छात्रों से दूर बैठते थे तथा कक्षा में बातचीत करने का कोई हक नही था। उनके टीचर भी कॉपी को हाथ नहीं लगाते थे कंवल दूर से ही जॉच देते थे इस बालक को संस्कृत पढ़ने की अनुमति नहीं थी उसकी प्यास बुझाने का कोई साधन नहीं था अगर किसी व्यक्ति या छात्र का दिल पसीज गया तो ऊपर से पानी डाल देते तब बालक की प्यास बुझती थी। भीम का स्कूल जीवन भेदभाव पूर्ण था उसका दिल लहू लुहान होता रहा इस बालक में भारत का नागरिक और एक उपेक्षित भारतीय आत्मा जाग उठी जो अपनी प्रतिज्ञा दृढ़, साधना में अटल, अपनी विजय के प्रति आस्थावान था। बाबा साहेब ने प्राइमेरी शिक्षा सतारा मे पूरी कर हाइस्कूल की शिक्षा प्रारंभ कर दी पिता बम्बई आ गये ओर गोरेगॉव मे खचॉजी की नौकरी कर ली।

2. बम्बई के एलफिंस्टन कॉलेज मे प्रवेश एवं वैवाहिक बंधन में बधना – एलफिंस्टन कॉलेज में एडमिशन हो गया। यहाँ पर भी उन्हें अछूत होने की वजह से अपमान और दूतकार सहना पड़ा क्योंकि वे मजदूर इलाके में निवास करते थे 1907 मे उन्होंने एलफिंस्टन कॉलेज से मैट्रिक पास कर ली और बड़ोदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ ने इनकी प्रखर बुद्धि और ज्ञान की प्यास को देखते हुये उन्हे 25 रूपये महिने की छात्रवृति दे दी गयी तब पुन: आगे की पढ़ाई इसी कॉलेज मे प्रारंभ कर दी। बाबा साहेब की 16 वर्ष की आयु में 9 वर्ष की रामी बाई से विवाह कर दिया गया।

3. उच्च शिक्षा के लिये अमेरिका जाना –बड़ौदा के महाराजा ने मेधावी छात्रों को छात्रवृति देकर विदेश अध्ययन पर भेजने की घोषणा कर रखी थी पर शर्त यह थी कि राजा की स्टेट में 10 वर्ष नौकरी करनी होगी। बाबा साहेब ने 4 जून 1913 को शर्तनामे पर हस्ताक्षर कर दिये और जुलाई में अमेरिका के कोलम्बिया वि.वि. में प्रवेश ले लिया यहाँ पर 'भारतीय जाति विभाजन' पर अपना रिसर्च पेपर पढ़ा उच्च शिक्षा के दौरान उन्होंने एक पल को भी नष्ट नहीं किया क्योंकी उनकी अस्पृश्य लांछित जिन्दगी के निर्मम थपेड़ो और अभिशापित दरिद्रता के जीवन के कड़वे अनुभव ने उनमें दृढ़ संकल्प ओर गहरी एकाग्रता भर दी थी। उन्होंने भारत में प्रचलित जात पांत की विषमता को जड़ से मिटाने की राजनैतिक शिक्षा भी प्राप्त करी उन्होंने लिंकन, वाशिंगटन, जेफरसन, की जीवनी का अध्ययन ही नहीं किया बल्कि उनको आत्मसात भी किया। 1915 में 'अर्थनीति' में एम.एस.सी. की डिग्री प्राप्त की ओर 1916 मे 'भारतीय जातीय लांभाश' विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त कर ली। वहाँ से वे लंदन चले गये वहाँ पर 'लंदन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड पोलिटिकल साइंस मे प्रवेश ले लिया बैरिस्टरी की पढ़ाई के लिये। 'ग्रेज इन' मे प्रवेश ले लिया लेकिन बड़ौदा के महाराजा ने आगे की पढ़ाई की अनुमति नही दी तब उन्हें स्वदेश लोटना पड़ा।

1. सामाजिक क्षेत्र में भारत का पुनर्निमाण करना –बाबा साहेब ने जब बड़ौदा रियासत में नौकरी प्रारंभ की तब भी उन्हें अपमान के घूट पीना

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय कन्या महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

पड़े तब बाबा साहेब ने निश्चय किया कि भारत के दलित समाज का उद्धार तब ही होगा जब जन आन्दोलन होगा इसी दिशा में पहला कदम गायकवाड़ की सहायता से 31 जनवरी 1920 मराठी पाक्षिक पत्रिका 'मूक नायक' प्रकाशित की जिसमें हिन्दु धर्म के खोखलेपन को बताया मार्च 1920 में मानगॉव ओर नागपुर में दलित शोषित वर्ग का सम्मेलन आयोजित किया गया इससे दलित वर्ग में एकता स्थापित होने लगी। 1924 में 'बहिष्कृत हितकरणी सभा' की स्थापना की गयी जुलाई में सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें इसमे विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों की घोषण की गयी। जैसे स्कूल खोलना, वाचनालय खोलना विचार गोष्ठियॉ आयोजित करना, जीविका साधन जैसे उद्योग, कृषि आदि के सम्बध में आर्थिक सहायता करना एवं दलितों पर किये जाने वाले अत्याचारों का विरोध करना ओर प्रचार करने के कार्यक्रम बनाये गये उनका दलित समाज को संदेश था –शिक्षित बनो–आन्दोलन करो–और संगठन का निर्माण करो। दिनों दिन संगठन मजबुत होता गया प्रचार की गति को बढ़ाने के लिये 'बहिष्कृत भारत' नामक मराठी पत्रिका प्रारंभ की इस पत्रिका में वर्ण व्यवस्था के खिलाफ जंग छेड़ दी एक नई पत्रिका 'समता' का प्रकाशन किया गया

अस्पृश्यता के लिये संघर्ष करना –बाबा साहेब स्वयं महार समाज से आते थे हिन्दू लोग इन्हें अस्पृश्य मानते थे इन लोगों का गॉव के बाहर निवास होता था यह वर्ग उच्च वर्ग के सामने कुर्सी पर नहीं बैठ सकता विवाह के समय दुल्हा घोड़ी पर नहीं चढ़ सकता , चारपाई पर नही बैठ सकता, अभिवादन नहीं करना अपराध माना जाता है स्वर्ण जाति के कुओं, जलाशयों पर पानी भरना या जाना, दलित महिलाओं को आभूषण धारण करने, की आज्ञा नहीं थी अच्छे वस्त्र नही पहन सकते अस्पृश्यता गुलामी से भी बदतर थी। मनुवादी दृष्टिकोण ने दलितों का जीवन नरक बना दिया विदेशों में भी गुलामों से इतना अमानवीय व्यवहार नहीं किया जाता था बाबा साहेब ने निम्न कदम उठाये।

1. **चौदा पोखर अभियान** – दलित वर्गो को जनसधारण वर्गो के लिये निर्मित जलाशय, कुऐ बावड़िया,प्याउ, धर्मशाला कोर्ट ,कचहरी, अस्पताल होटल, आदि में प्रवेश की इजाजत नहीं थी लेकिन बम्बाई कानून परिषद ने यह निर्णय लिया था कि दलित वर्ग भी इन स्थानों पर प्रवेश कर सकते है इतना कह देने से मनु ताकतें मानने वाली नहीं थी बाबा साहेब ने यह कार्य अपने हाथ में ले लिया ओर 20 मार्च 1927 को अपना आन्दोलन कोलाबा जिले के महाद पौर सभा के तालाब 'चौदा पोखर' का चुनाव किया इस सम्मेलन में 10,000 अछूत समाज के लोग जमा हुये इस जलशय का जल लोंगो ने आचमन किया मस्तक पर लगाया यह कार्यक्रम शांति पूर्ण सम्पन हो गया दोपहर तक लोग जाने लग गये थे कुछ लोग ही बचे थे कि मनुवादियों ने अचानक हमला बोल दिया चौदा पोखर का पानी खून से लाल हो गया बाबा साहेब ने इस हमले का जवाब कानून दिया ओर उनकी जीत हुई। अगले दिन स्वर्णो ने तालाब को गोमूत्र, दूध, दही से पवित्र किया 25 दिसम्बर 1927 को बाबा साहेब ने अपने भाषण में कहा कि 'इस देश की धरती पर सामाजिक न्याय ओर समता का जो नया युग आने वाला है आज यहॉ उसकी शुभ घोषणा हुयी'।

2. **मंदिर प्रवेश अभियान** – 21.08.1927 को अमरावती के अम्बा मंदिर में अछूतों को मंदिर में प्रवेश कराने के प्रयास विफल होने के बाद 1929 मे पुना के पार्वती मंदिर में प्रवेश पाने के लिये सत्याग्रह किया। 1930 में बी.के. गायकवाड़ के नेतृत्व में नासिक के कलाराम मंदिर में प्रवेश के लिये सत्याग्रह किया अम्बेडकर जी का यह कार्यक्रम अधिक सफल नहीं रहा क्योंकि जिन नेताओं ने नेतृत्व किया था उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया तब अम्बेडकर जी ने यह संदेश दिया 'मंदिर में प्रवेश पाने के लिये आन्दोलन छेड़ना अच्छी बात है, लेकिन जहॉ के लोगों को खाने के लिये भोजन, पहनने के लिये कपड़े तक नसीब नही ,जहॉ लोग शिक्षा, चिकित्सा से वंचित है उनके लिये मंदिर में प्रवेश करने से कोई लाभ नहीं है ऐसे लोगों को अपने कर्तव्य पर अडिग रहना चाहिये ओर कठिन मेहनत से अध्यव्यवसाय से शिक्षा लाभ करना चाहिये दलित समाज युगों युगों से भगवान का भजन कीर्तन कर रहा है लेकिन उसे जमींदारों महाजनो से मुक्ति नहीं मिली गरीब इंसानों के लिये राम चंद्र जी के बजाय रोटी चंद्र की अहमियत ज्यादा है।

3. **खोटी प्रथा को समाप्त करने हेतु बिल लाना** – खोटी प्रथा में गरीब श्रमिकों को गुलाम बनाकर रखा जाता था यह घृणित प्रथा कोंकण क्षेत्र में प्रचलित थी। बाबा साहेब ने बिल पेश किया लेकिन कांग्रेस ने साथ नहीं दिया बाद में यह प्रथा बाबा साहेब के निधन के बाद 1959 मे समाप्त की गयी।

4. **भारत के संविधान में समाज के उपेक्षित वर्गो का उद्धार करना**–अधिकांश लोग यह मानते है कि संविधान के जनक बाबा साहेब है। संसद में बहस के दौरान के. काटजू ने कहा था कि संविधान तो आपने तैयार किया है तब बाबा साहेब ने जवाब दिया था 'संविधान तैयार करने में, मैं, महज पेशेवर किराये का लेखक मात्र था मुझसे जो करने को कहा गया मैने अपनी इच्छा के विरूद्ध वही किया ......में ही वह पहला व्यक्ति हूॅ जो इस संविधान को जलाकर खाक कर देना चाहता हूॅ।' इस से यह अभास होता है कि बाबा साहेब संविधान में जो लिखना चाहते थे वह नहीं लिख पाये। उसके बावजूद दलितों के मसीहा ने उनके लिये सम्मान का जीवन, सर उठाकर चलने का साहस, भेदभाव रहित जीवन जीने की स्वतंत्रता अत्याचार होने पर कानून का संरक्षण, अस्पृश्यता से आजादी आदि क्षेत्रों में स्वतंत्रता प्रदान की है। बाबा साहेब ने समाज के कमजोर वर्गो के लिये ही नहीं बल्कि भारतीय मानव समाज की संविधान द्वारा रक्षा कर पुनर्निमाण किया है।

2. आर्थिक क्षेत्र में भारत का पुर्ननिर्माण करना – बाबा साहेब की आर्थिक अवधारणा की मुख्य विशेषता यह थी कि उन्होंने व्यक्तिवादी विचार तथा वैज्ञानिक समाजवाद दोनों की पराकाष्ठा की आलोचना करते हुये संयुक्त अर्थव्यवस्था का समर्थन किया जो आर्थिक दर्शन का मूलतत्व है। बाबा साहेब स्वयं औद्योगीकरण के पक्ष में थे वे भारत की कृषिगत समस्याओं का ठोस हल चाहतें थे उनका कहना था आधी बुद्धि से सोचे गये ओर आधे मन से लागू किये गये भुमि सुधार केवल भूस्वामियों को लाभ पहुॅचाते है।वे किसानों श्रमिकों के बीच होने वाले झगड़ो को पंचायत के माध्यम से निपटाना चाहते थे उनका विचार था कि देश का आर्थिक विकास तब ही होगा जब सभी लोगों को अपना वंशानुगत व्यवसाय करने की बाध्यता समाप्त होगी व्यक्ति अपनी सामर्थ्य व इच्छा से समान रूप से कार्य करने में स्वतंत्र हो और यही कार्य उन्होंने संविधान को लिखकर पूर्ण किया।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर साहब ने कहा था कि किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के विकास के लिये उद्योगीकरण आवश्यक है। छोटे हो या बढे हो दोनों प्रकार के उद्योगों की स्थापना तथा प्रबंध के माध्यम से परिर्वतन करके नर्मित वस्तुओं का निर्यात करगे अधिक मात्रा में आय अर्जन कि जा सकती है। कृषि उत्पादन से प्राप्त कच्चे माल को उद्योगीकरण के द्वारा वस्तुओं का निर्माण कर बाहरी देशों को निर्यात कर लाभ कमाया जा सकता है। बाबा साहेब ने उद्योगों को समूह के रूप में विकसित करने पर बल दिया उनके लिये बिजली पानी सड़क रेल यातायात की सुविधा दूरसंचार शिक्षा स्वास्थ्य साथ

ही बैंकिंग सुविधा कच्चे माल की भण्डारण की सुविधा आदि देने पर बल दिया गया।

बाबा साहब ने उद्योगों के लिये कुछ कमियों को भी रेखांकित किया था जैसे कच्चे माल की समस्या, धन की कमी, मूलभूत सुविधाओं का अभाव, आधुनिक तकनीकि का अभाव, और इन कमियों को दूर करने के प्रावधान रखे गये।बाबा साहब ने प्रत्येक व्यक्ति को अपना परम्परागत व्यवसाय करने पर बल नहीं दिया बल्कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुरूप कार्य करने स्वतंत्रता हो इस पर बल दिया है।

3. बाबा साहब की राजनैतिक दूरदर्शिता का परिचय गोलमेज बैठक में देना –12 जनवरी 1931 जार्ज पंचम ने गोलमेज सम्मेलन का उद्धघाटन किया। बाबा साहेब ने अपनी प्रबल पंडित विद्धता से राष्ट्रीय नेता के तौर पर उच्च स्थान प्राप्त किया उन्होंने अग्रेंजो के मुँह पर उनकी कठोर आलोचना करके स्वायत्त शासन की मांग की इस स्वायत्त शासन में दलितों की भी भागीदारी होगी। बाबा साहेब ने भारत के दबे कुचलें पीड़ितों दलितों की सच्ची तस्वीर पश्चिम के अखबारों के माध्यम से विश्व में पहुॅचायी और लिखा कि निरापराध लोगों को न तो फोज में लिया जाता ओर न ही सरकारी नौकरी में लिया जाता है। सुख सुविधाओं के सारे दरवाजे इनके लिये बंध कर दिये गये 1932 में गोल मेज कान्फ्रेंस में बाबा साहेब की स्वतंत्र निर्वाचक मंडली की मांग स्वीकृत हो गयी। इसके खिलाफ गांधीजी ने आमरण अनषन प्रारंभ कर दिया तब राष्ट्र के दबाव में बाबा साहेब असहाय हो गये ओर पूना पेक्ट पर हस्ताक्षर करना पड़ा। बाबा साहेब ओर गांधीजी के बीच खाई बढ़ गयी थी। बाबा साहेब का 6 दिसम्बर 1956 को महानिर्वाण हो गया।

उपसंहार – बाबा साहेब अपने समकालीन जगत में और भारत के इतिहास मे श्रेष्ठ पुरूष थे इस मनीषी ने अनेकों लेख पुस्तकें लिखि बाबा साहेब ने **सामाजिक क्षेत्र में आर्थिक क्षेत्र में राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करके स्वतंत्र भारत का पुर्ननिर्माण किया है।** बाबा साहेब ने तीन बातों पर बल दिया स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व ओर इसे वास्तविक धरातल पर संविधान के माध्यम से उतार कर सम्पूर्ण मानव समाज में आशा की किरण जगा दी जो युगो युगो तक जगमगाती रहेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. डॉ. डी .आर .जाटव –डॉ. भीमराव अम्बेडकर के आर्थिक विचार समता साहित्य सदन जयपुर ,1996
2. डॉ. प्रदीप आगलावे – महान् समाज शास्त्रीय बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली।
3. डॉ. बी. आर. जाटव – डॉ. अम्बेडकर का समाजदर्शन।
4. नीतीश विश्वास – राष्ट्रनेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर।
5. डॉ. डी .आर .जाटव –भारतीय समाज एवं संविधान समता साहित्य सदन जयपुर ,1991
6. डॉ. सत्यनारायण दूबे –भारत का इतिहास शिवलाल अग्रवाल इंदौर।
7. डॉ. एस.एल. वरे – भारत में राज्य कैलाश पुस्तक सदन भोपाल।
8. संस्कृति के चार अध्याय – रामधारी सिंह दिनकर लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
9. डॉ. बी. आर. अम्बेडकर – अनटचेबल ऑफ द चिल्रन ऑफ इण्डिया गेहतो अम्बेडकरस रायटिंग एण्ड स्पीच वाल्यूम 1 पार्ट 1 एजुकेशन डिर्पाटमेंट गर्वर्मेन्ट ऑफ महाराष्ट्र1989

****

दारा शिकोह का आध्यात्मिक जीवन और साहित्य साधना - एक अध्ययन

डॉ. पूर्णिमा शर्मा *

शोध सारांश – सम्राट शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र और उसके युवराज राजकुमार दाराशिकोह का मुगल राजवंश में अद्भुत व्यक्तित्व है। अकबर के बाद होने वाले मुगल राजकुमार भोग–विलास, वैभव और सत्ता में व्यस्त रहते थे। उनको ज्ञान की चिंता बहुत कम थी तथा वे किसी भी उच्च आध्यात्मिक जीवन के लिए चिंता नहीं करते थे। ऐसे जगत् में एक गुढ़ द्दष्टा दार्शनिक का जन्म हुआ जो ज्ञान का उपासक तथा आध्यात्मिक तत्वों का अन्वेशक था। यदि दारा शिकोह का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ होता तो वह ईश्वर भक्त सन्त का जीवन व्यतीत करता और उसी अवस्था में मृत्यु को प्राप्त होता। एक नवीन दृष्टि उच्च आदर्शवाद तथा ज्ञान की अतृप्त पिपासा, इन असाधारण गुणों द्धारा प्रकृति ने उसको परिष्कृत किया था ने उसको उच्चता की किसी सीमा तक पहुँचा सकते थे। परंतु उसको अपना जीवन मुगल राजमहल की निन्ध भौतिकता में व्यतित करना पडा। दारा के जीवन का सर्वोपरी दुख यही है। अपने भाई औरंगजेब द्धारा उत्तराधिकार युद्ध में पराजित दारा की अत्यंत बर्बर तरीके से हत्या कर दी गयी।

प्रस्तावना – कुछ ही ऐतिहासिक व्यक्तियों की कथा ऐसी घोर दुखान्त है। दार्शनिक तथा इतिहासकार दोनों के द्धारा ऐसे मनुष्य का जीवन अध्ययन का अत्यंत उपयुक्त विषय है।

मुमताज महल ने अपनी तृतीय संतान तथा प्रथम पुत्र को अजमेर में सोमवार की रात्रि में 20 मार्च 1615 को जन्म दिया। सम्राट जहांगीर ने अपने इस प्रिय पुत्र के उत्तराधिकारी का नाम दारा शिकोह रखा।

दारा की प्रारंभिक शिक्षा अच्छे तरीके से हुई थी। दारा मेधावी शिष्य था। उसके अध्ययन के विषय, कुरान, फारसी काव्य के प्रामाणिक ग्रंथ और तैमुर का इतिहास होते थे। सुलेख और सुंदर पत्र लेखन शैली की ओर बहुत ध्यान दिया जाता था। जिसके लिये अबुल फजल को निर्दिष्ट किया गया था। दाराशिकोह आजीवन विद्यार्थी रहा। इस्लाम की दीक्षा के मार्ग को उसने ग्रहण किया और अपने पर्याप्त अवकाश को उसने धर्म के तुलनात्मक अध्ययन के निमित्त अर्पित कर दिया। अपने अन्वेषण मार्ग में उसने यहुदियों, ईसाइयों और ब्राम्हणों के धर्म ग्रंथों के अनुवादों का अध्ययन किया। संस्कृत के विद्धानों को उसने आश्रय दिया और उनकी सहायता से उसने भगवद्गीताऔर 50 उपनिषदों का अनुवाद किया, उसने हिन्दी पर अधिकार कर लिया और उसमें भक्ति गीत लिखे।

दारा शिकोह की पदोन्नति शीघ्रता से उच्चता की ओर हुई। शाहजहाँ की नीति और प्रेम ने दारा को प्रतिस्पर्धा के क्षेत्र में ऊपर उठा दिया। सैनिक और प्रशासक के रूप में दारा का चरित्र घटना शून्य है।

दारा शिकोह का आध्यात्मिक जीवन – 1635 के हेमंत ऋतु में दारा को मियाँ मीर2 से अपने आध्यात्मिक जीवन के प्रति स्वस्थ प्रेरणा प्राप्त हुई और इससे अधिक महत्व की घटना यह हुई कि उसका परिचय उसके भविष्य के पीर (आध्यामिक गुरू) मुल्ला शाह बदखशी से हो गया जो शेख का शिष्य था। उस दिन से राजकुमार द्धारा संतों की कुटिया में प्राय: जाने लगा।

दारा द्धारा लिखित पुस्तकें उसके धार्मिक दृष्टिकोण, उसके आध्यात्मिक ध्यान की विधि तथा उसके फल और ईश्वर और विश्व के प्रति उसकी धारणा को दर्शाती है। विश्वदेववाद और केवल के अवतरण (अवतार) का सिद्धांत जो तत्कालीन कट्टर मजहबी को अमान्य थे, परंतु उनको जिस रूप में उपस्थित किया गया वह बिल्कुल इस्लाम के अनुसार था। वह यह दावा नहीं करता कि उसके सिद्धांत मौलिक है। वह कहता है कि सूफी संप्रदाय के प्रमाण ग्रंथों का वह केवल सारांश दे रहा है। यद्यपि राजकुमार अपने को कादिरिया कहता है, वह आत्मसंयम तथा शारीरिक त्याग की आरंभिक मंजिल की उपेक्षा करता है जिनको नव दीक्षित के लिए शेख अब्दुल कादिर आवश्यक मानता है। ध्यान भंग से सावधान रहने के लिए दारा का मत यह है कि बहुत ही मन्द गति से में नहीं मन 'अल्ला' नाम का जप किया जाय, जिव्हा की कोई गति न हो। हिन्दुओं के प्राणायाम में और इसमें काफी साम्यता दिखाई देती है।

तौहीद (एकत्व प्राप्ति) का सिद्धांत दारा के आजीवन अध्ययन का विषय बना रहा। दारा ने ईश्वरीय दया मार्ग का अनुसरण किया। इसके कारण आध्यात्मिक प्रकाश की खोज में उसको अनेक संतों की शरण में जाना पड़ा। मौलाना शाह के आध्यात्मिक पथ प्रदर्शन की सहायता से ध्यान द्धारा उसने 'एकत्व' का अनुभव किया। इस अनुभव और उसके गुढ़वाद का एक मनोरंजक रूप उन पत्रों से प्रकट होता है जो दारा शिकोह के प्रसिद्ध समकालीन सन्त शाह दिलरूबा को लिखे थे।

दिलरूबा को दारा के पत्र नं. 3 में साधारण काव्यामय उद्गार में वह कहता है 'प्यारे प्रभु मैं नहीं हूँ, नहीं हूँ। तू ही प्रेमी, प्रेम और तू ही प्रिय है।'

इसी पत्र व्यवहार की एक कडी में दारा लिखता है –'यदि अविश्वास (काफिर) को बाह्य इस्लाम से अलग कर दिया गया है तो सच्चा अवश्वास (कुफ्र) किसको प्रकट हुआ है अर्थात् उसके वास्तविक रहस्य को कौन जानता है। 'प्रत्येक मूर्ति में जीवन छिपा हुआ है और अविश्वास (कुफ्र) के नीचे विश्वास (ईमान) छिपा हुआ है।'

'अनेकत्व में एकत्व' के नियमानुसार कुरान का निश्चल एकेश्वरवाद दारा के ईश्वरवाद की कुंजी है। मुसलमान के हृदय में एक से अधिक के लिए कोई स्थान नहीं है। दार्शनिक राजकुमार ने अब से तीन सौ वर्ष पहले भारत की नव शुभवार्ता का उद्धोष किया और इस्लाम और हिंदू धर्म रूपी दो महासागरों को एक करने के अपने दैवी ध्येय के प्रति ईश्वर के आशीर्वाद का आव्हान किया। उसने कहा –'उसके नाम में जो अनाम है; परंतु जो किसी अभीष्ट नाम से अपने को प्रकट करता है; उस प्रियतम की असीम स्तुति की जाये, जो अनुपम सुंदर मुख पर हिंदू धर्म और इस्लाम को धारण किये हुए हैं। हिंदू धर्म और इस्लाम दोनों उसकी खोज में हैं। दोनों यह घोषित करते हैं – वह

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, कन्नौद (म.प्र.) भारत

एक अद्वितीय है, वह सर्वत्र विराजमान है वह आदि है, वह अंत है और उसके अतिरिक्त और किसी का अस्तित्व नहीं है। वह पड़ोसी है, मित्र है, सहयात्री है। वह फकीर के फटे पुराने चिथड़ों में है और वह राजा के रेशमी वस्त्रों में है। सभ्य जनों की सभा में संसार के उपेक्षित कोणों में ऐसे लोग हैं जो उसको पहचानते हैं।

दारा शिकोह की साहित्य साधना – इसमें संदेह नहीं कि दारा शिकोह अपने देश और काल का महत्तम विद्वान था और तैमुर के वंश का सर्वोपरी विद्वान राजकुमार था। उसकी आध्यात्मिकता के विकास का भी इतिहास है। ईश्वर-मनुष्यता में साकार दैवत्व के प्रति उसकी उसके ग्रंथ उसकी सर्वोत्तम प्रार्थनाएं थी। अद्वैतवाद के महान सिद्धांत से धार्मिक कलह का घाव जो मनुष्य जाति के मर्मस्थलों का नाश कर रहा था, भर जाएगा।

1647 से 1657 तक दारा यहूदी, ईसाई एवं हिंदू धर्म ग्रंथों का अध्ययन करने में व्यस्त रहा। उसने हिंदुओं के प्रमाणिक दार्शनिक ग्रंथों का फारसी में अनुवाद कर उसने हिंदू धर्म के उच्चतम और महत्तम सिद्धांतों को आकर्षक रूप देकर उनको मुसलमानों के सम्मुख उपस्थित कर दिया। 'अर्जुन और दुर्योधन के बीच युद्ध' यह भ्रामक नाम देकर उसने 'भगवद्गीता' का अनुवाद किया। इस ग्रंथ की हस्तलिखित प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी में उपलब्ध है। दारा के उपयोग के लिए उसके मुन्शी बनवारीदास ने प्रसिद्ध दार्शनिक नाटक 'प्रबोध चंद्रोदय' का 'गुल्जारेहाल' नाम से फारसी में अनुवाद किया गया।

स्वयं दारा फारसी में निम्नलिखित पुस्तकों का लेखक था –

1. **सूफी नतुल औलिया –** मुसलमान संतों की जीवनियों को दारा ने लिखा। यह समस्त ग्रंथ उत्तम भावनाओं से भरपूर है, जो उसके विस्तृत अध्ययन की – विशेषकर सूफी साहित्य की साक्षी है।

2. उसकी द्वितीय पुस्तक सकीनतुल औलिया उसके धार्मिक जीवन की अधिक परिपक्व अवस्था को सूचित करती है। इसमें मुख्यतया लाहौर के प्रसिद्ध सन्त मिया मीर के जीवन का वर्णन है।

3. **उसकी तृतीय साहित्यिक कृति रिसालै –** हकनुमा अर्थात् सत्यार्थ दर्शन है जिसका निर्माण सूफीवाद के निर्माण सूफीवाद के मार्ग में नवदीक्षितों के शिक्षण के लिए किया गया था। इस ग्रंथ में छः अध्याय है। दारा लिखता है कि वह केवल उन बातों का उल्लेख करेगा जिनका उसने अपने आध्यात्मिक गुरूओं से सुना था या जिनको उसने सूफीवाद के प्रामाणिक ग्रंथों में पढ़ा था। यह ग्रंथ दारा के व्यक्तित्व और चरित्र का सच्चा दर्पण है।

4. **मज्मुअ-उल-बहरैन –** (दो सागरों का सम्मिलन) –दारा शिकोह द्वारा हिंदू धर्म और इस्लाम के तुलनात्मक अध्ययन का प्रथम फल यह पुस्तिका है संभवतः यह पुस्तिका 1650-1656 के बीच लिखी गई थी। राजकुमार कहता है कि हिंदूओं की निरंतर संगति से और उनके साथ नित्य प्रति वार्तालाप से उसको पता लगा कि ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करने के संबंध में उपायों और साधनों के विषय में हिंदुओं और मुसलमानों में केवल शब्द मात्र का भेद है। वह कहता है कि दोनों धर्मो के ज्योतिहीन मुर्खों जनसाधारण के प्रति घृणा के अतिरिक्त और कोई भावना उसके पास नहीं है। भारत की दोनों स्पष्टतया विरोधी संस्कृतियों के विवेचनात्मक अध्ययन के निमित्त दारा शिकोह का यह ग्रंथ प्रथम गंभीर और विद्धतापूर्ण प्रयास है।

5. **सिर्रे अकबर या सिरूल अकबर – (गुह्यदगुह्यतुम) –** हिंदुओं के 52 उपनिषदों का उनकी मूल संस्कृत से सुंदर सर्वांग पूर्ण फारसी गद्य में अनुवाद दारा की अंतिम तथा महत्तम साहित्यिक निष्पत्ति है। उसके अनुसार कुरान की गुप्त पुस्तक उपनिषद के अतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं हो सकती है क्योंकि निरूक्तानुसार उपनिषद का अर्थ होता है – वह वस्तु जिसका उपदेश गुप्त अवस्था में हो किंतु दारा की इस धारणा से कोई सहमत नहीं होगा कि रसूल को जिनके द्वारा कुरान प्रकट हुआ, उपनिषदों के अस्तित्व का पता था। कुछ भी हो, शांति और सामंजस्य के महान प्रचारक इस राजकुमार के साहित्यिक, आध्यात्मिक प्रयासों का अंतिम उद्देश्य दो विपरित संस्कृतियों के बीच स्नेह भाव की स्थापना था। यह अनुवाद विशेषकर मुसलमानों के लिए किया था। अतः बोधगम्यता की दृष्टि से सरल अनुवाद दिया गया है। इस ग्रंथ में अच्छे अनुवाद के साथ मूल ग्रंथ की मनोरमता भी है। दारा सर्वप्रथम गंभीर विद्धान था जिसके हिंदू विचारों, हिंदू देवताओं और हिंदु पुराणों में आये हुए प्राणियों की चकरा देने वाली अनेकरूपता को मुस्लिम वस्त्रों में सजा कर उपस्थित करने के लिए उनका इस्लामी नामकरण उसके ग्रंथ की सबसे बड़ी विशेषता है।

6. **दारा शिकोह के छोटे ग्रंथ –** दारा शिकोह की छोटी पुस्तकों में हसनतुल आरिफीन दारा के धार्मिक विचारों को प्रदर्शित करती है। अपने सर्वेश्वरवादी विचारों की सार्वजनिक आलोचना के उत्तर में दारा ने हसनतुलआरिफीन को लिखा था। ये विचार मुस्लिम शास्त्रीय संप्रदाय के अनुसार सर्वथा अन इस्लामी थे। इस पुस्तक के परिचय में दारा कहता है – कुछ नीचे तथा दुष्ट व्यक्ति तथा निस्सार भक्तजन, अपनी संकीर्णता के कारण मेरी निंदा करते हैं और मुझ पर अधर्म और नास्तिकता का दोष आरोपित करते हैं। यह इस कारण कि मुझे विचार हुआ कि एकत्व में परम विश्वासियों के जिन्होंने तत्व का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, शब्दों में समन्वय स्थापित कर दूं............।

दारा के सर्वेश्वरवाद की अधिक वाक्यच पटुता से व्यंजना उसकी पुस्तक तरीक तुल हकीकत में हुई है। इसमें दारा लिखता है –

'तू काबा में है और तू सोमनाथ के मंदिर में है।'
'तू चैत्यालय में है और तू सराय में है।
तू ही एक ही समय पर प्रकाश भी है और पतिंगा भी है
तू ही हाला और प्याला, तू ही ऋषि और मूर्ख,
मित्र और अपरिचित व्यक्ति भी है।'

दारा ने योग वशिष्ठ रामायण के एक संक्षिप्त संस्करण के फारसी अनुवाद की एक रोचक भूमिका भी लिखी।

राजकुमार दारा को इतिहास में प्रायः असफल ही कहा जाता है। दारा शिकोह आजीवन विद्यार्थी रहा। अध्ययन और कल्पना के प्रति उसका अंसतुलित अनुराग था। उस समय की उदारवादी प्रवृत्तियों का वह केंद्र था। हिंदू जाति उसे अकबर की आत्मा का अवतार मानती थी। डॉ. कानूनगों ने लिखा है 'यह कहना अतिश्योक्ति नहीं है कि भारत में जो कोई भी धार्मिक शांति की समस्या का हल करना चाहता है उसको यह कार्य वहा से प्रारंभ करना होगा जहां पर दारा शिकोह ने उस कार्य को छोडा था तथा उसको उस मार्ग का अनुसरण करना होगा जिसको उस राजकुमार ने निर्धारित किया था।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कानूनगो के आर – दारा शिकोह, कलकत्ता 1935
2. सरकार जे एन – औरंगजेब का इतिहास खंड-3 बॉम्बे 1974
3. श्रीवास्तव ए.एल. – द मुगल एम्पायर (1526-1803) आगरा 1977
4. मोहम्मद अथर अली – मुगल नोबीलिटी अंडर औरंगजेब बॉम्बे 1968
5. मजूमदार आर.सी. – द मुगल एम्पायर बॉम्बे 1974
6. त्रिपाठी आर.पी. –राइस एंड फॉल ऑफ द मुगल एम्पायर इलाहाबाद 1985
7. रिजवी एस.ए.ए. – ए हिस्ट्री ऑफ सूफिज्म इन इंडिया, नई दिल्ली 1975

****

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में श्रमिक वर्ग की सहभागिता

डॉ. पद्मा सक्सेना *

प्रस्तावना – औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप श्रमिक वर्ग का उदय हुआ है। प्रारंभ में श्रमिक वर्ग केवल अपनी आर्थिक समस्याओं से ही जुडा रहा और इन आर्थिक समस्याओं को लेकर ही उसने समय समय पर अपना असंतोष प्रगट किया। श्रमिक वर्ग में किसी तरह की राजनैतिक चेतना हमें देखने को नहीं मिलती। उसी प्रकार तत्कालीन राष्ट्रवादियों ने भी श्रमिकों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। 1891 में असम में चाय बागानों में कार्य करने वाले श्रमिकों ने अपने विदेशी मालिकों के शोषण के विरूद्ध आंदोलन चलाया तब कांग्रेस और कुछ प्रमुख राष्ट्रवादी अखबारों ने इन श्रमिकों के समर्थन में आवाज उठाने के लिये अपील जारी की लेकिन इसका कोई विशेष राजनैतिक असर नहीं पड़ा।

बॉम्बे क्रानिकल में छपे एक समाचार के अनुसार सन् 1899 में बम्बई के रेल्वे में पहली बार संगठित हड़ताल ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध की गई। यद्यपि यह हड़ताल मजदूरी, काम के घण्टे, तथा अन्य सेवा शर्तो से संबधित थी लेकिन सभी राष्ट्रवादी समाचार पत्रों ने खुलकर इस हड़ताल को समर्थन दिया। तिलक ने केसरी तथा मराठा समाचार पत्रों के द्वारा इसके समर्थन में महीनों अभियान चलाये बम्बई तथा बंगाल में फिरोजाशाह मेहता, तथा सुरेन्द्र नाथ टैगोर ने हड़ताल के समर्थन में जन सभायें आयोजित की और कोष एकत्रित किया। उसी प्रकार 1903 में जबकि स्वदेशी आंदोलन के दौरान बम्बई, बंगाल, मद्रास, अहमदाबाद इत्यादि स्थानों के (विभिन्न फैक्ट्रियों) के श्रमिकों ने हड़ताल की तब इन मजदूरों के समर्थन में आयोजित सभाओं को विपिन चन्द्रपाल, चितरंजनदास, लियाकत हुसैन, जैसे नेताओं ने सम्बोधित किया। 1905 में जबकि बंगाल का विभाजन किया गया तब बंगाल के श्रमिक वर्ग ने इसके विरोध में हड़ताल की। ट्रिब्यून में छपे एक समाचार पत्र के अनुसार हावड़ा के बर्न कंपनी के शिपयार्ड में मजदूरों ने काम पर जाने से इंकार कर दिया और जब श्रमिकों के वंदेमातरम् गाने पर कम्पनी के प्रबंधकों ने आपत्ति की तो मजदूरों ने हड़ताल कर दी। लेकिन इसके बाद भी श्रमिक राष्ट्रीय आंदोलन की प्रमुख धारा से नहीं जुडा। नेशनल हैरॉल्ड और स्टेटमैन समाचार पत्रों के अनुसार (1908) तिलक को जब 6 वर्ष की सजा दी गयी तो उसके विरोध में बम्बई के मजदूरों ने 6 दिन की राजनैतिक आम हड़ताल की थी, जो कि अब तक सबसे बड़ी राजनैतिक हड़ताल थी। नि:संदेह श्रमिकों में राजनैतिक चेतना तो जागृत हो रही थी लेकिन इसकी गति अत्यंत धीमी थी।

सन् 1917 की रूस की क्रांति एवं प्रथम विश्व युद्ध ने मजदूरों में एक नई जागृति उत्पन्न की इसी समय चंपारन व खेड़ा में किसानों का पक्ष लेकर तत्पश्चात अहमदाबाद में श्रमिकों का पक्ष लेकर गांधी जी का भारतीय राजनीति में आगमन हुआ। इन आंदोलनों के द्वारा गांधी जी ने श्रमिकों व किसानों को राष्ट्रीय आंदोलन की प्रमुख धारा से जोड़ने का प्रयास किया।

सन् 1919 में रौलेट एक्ट तत्पश्चात जलियॉवाला बाग घटना ने श्रमिकों को राष्ट्रीय आंदोलन की प्रमुख धारा से जोड़ दिया। अब श्रमिक वर्ग ने भी अपना निजी अखिल भारतीय स्तर का संगठन खड़ा किया। परिणाम स्वरूप सन् 1920 में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस अथवा (एटक) की स्थापना हुयी। इसके प्रथम अध्यक्ष गर्म दल के प्रसिद्ध नेता लाला लाजपतराय थे, और दीवान चमनलाल महामंत्री थे। केसरी में छपे एक समाचार के अनुसार अपने प्रथम अध्यक्षीय भाषण में लाला लाजपतराय ने कहा था कि, भारतीय श्रमिकों को राष्ट्रीय स्तर पर संगठित होने में एक क्षण का समय नही खोना चाहिये। एटक के अन्य सम्मेलनों को क्रमश: चितरंजनदास, सुभाष चन्द्र बोस, और जवाहरलाल नेहरू ने भी सम्बोधित किया। इन बदली हुई परिस्थितियों ने श्रमिक वर्ग को अत्यंत उत्साहित किया। अत: देश की प्रमुख राजनीतिक घटनाओं में श्रमिकों ने खुलकर भाग लिया। पंजाब में दमन और गॉधी जी की गिरफ्तारी के उपरांत अहमदाबाद और गुजरात के श्रमिक वर्ग ने हड़ताल की। नेशलन हैरॉल्ड और बॉम्बें क्रॉनिकल में छपे समाचार के अनुसार मजदूरों के आंदोलन के कारण कलकत्ता और बम्बई भी हिल गये।

सन् 1921 में प्रिंस ऑफ वेल्स के भारत आगमन के समय कांग्रेस ने सारे देश में बहिष्कार का आह्वान किया और सम्पूर्ण देश में हड़ताल करके मजदूरों ने इसका उत्तर दिया। ट्रिब्यून समाचार पत्र के अनुसार बम्बई में लगभग 1,40,000मजदूरों ने उन पारसियों और ब्रिटिश लोगों पर आक्रमण किया जो कि प्रिंस के स्वागत के लिये आये थे। भारत की तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों में क्रांतिकारी आतंकवाद का उदय हुआ तब इन क्रांतिकारियों ने भी श्रमिकों को उत्साहित किया। जेल की काल कोठरी से रामप्रसाद बिस्मिल ने अपने एक संदेश में कहा था कि प्रकृति की सम्पदा पर हर इंसान का बराबर हक है। द फिलॉसफी आफॅ दी बाम्बे नामक शीर्षक से जारी किये गये बयान में भगत सिंह ने कहा था कि किसानों और मजदूरों को संगठित करना अब मुख्य कार्य होना चाहिये।

फांसी पर चढ़ने से पूर्व भगत सिंह ने अपने अंतिम संदेश में घोषणा की थी जिसे कि तत्कालीन सभी समाचार पत्रों ने प्रकाशित किया था कि भारत में संघर्ष तब तक चलता रहेगा तब तक मुट्ठी भर शोषक अपने लाभ के लिये आम जनता के श्रम का शोषण करते रहेंगे। वामपंथी विचार धारा ने श्रमिकों को गंभीर रूप से प्रभावित किया। कम्युनिस्ट पार्टी ने श्रमिक संघों की उपयोगिता पर बल दिया। परिणामस्वरूप वर्कस एक्ट एवं पीजेन्ट्स पार्टी प्रकाश में आयी । इन कम्युनिस्टों और क्रांतिकारी राष्ट्रवादियों के प्रभाव में

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कला एवं वाणिज्य उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

काम करने वाले श्रमिकों ने साइमन बहिष्कार प्रदर्शन में हिस्सा लिया। आगे चलकर इन्हीं वामपंथियों को लेकर सुभाष चन्द्र बोस ने फारवर्ड ब्लॉक की स्थापना की। पंडित नेहरू ओर सुभाषचन्द्र बोस ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को वामपक्ष में झुकाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। श्रमिक वर्ग में बढ़ती उग्रता और राजनीति में उनकी सक्रियता से भयभीत होकर ब्रिटिश सरकार ने श्रमिक नेताओं को गिरफ्तार कर उनके विरूद्ध मुकदमा चलाया।

मेरठ षड़यंत्र केस के इन गिरफ्तार नेताओं की पैरवी स्वयं पंडित जवाहरलाल नेहरू ने की थी। सविनय अवज्ञा आंदोलन में भी मजदूरों की सक्रिय भागीदारी रही। शोलापुर,मद्रास कलकत्ता में श्रमिकों के हिंसक आंदोलन हुये। बॉम्बे क्रानिकल में छपे एक समाचार के अनुसार 6 अप्रैल को जब गांधी जी ने नमक कानून तोडा तब उत्तर के रेल्वे कर्मचारियों ने रेल्वे लाईन पर लेटकर एक नये आन्दोलन (सत्याग्रह) को प्रांरभ किया। रेल्वे लाईन को साफ करने के लिये पुलिस द्धारा की गई हिंसक कार्यवाही के विरोध में कांग्रेस कार्यकारिणी ने 6 जुलाई को गांधी दिवस घोषित किया। नेषनल होरॉल्ड और ट्रिब्यून समाचार पत्रों के अनुसार उस दिन हड़ताल में लगभग 50,000 श्रमिकों ने भाग लिया। सन 1937 में जबकि चुनाव प्रक्रिया प्रारंभ हुई तो एटक ने कांग्रेस के प्रत्याशियों का समर्थन किया। कांग्रेस के चुनावी घोषणा पत्र में यह घोषणा की गई थी कि कांग्रेस श्रमिकों के झगड़ों को निपटाने के लिये कदम उठायेगी तथा उनके यूनियन बनाने तथा हड़ताल करने के अधिकार की सुरक्षा के लिये उपाय करेगीं।

सन् 1939 में जबकि द्धितीय विश्व युद्ध प्रारंभ हुआ तो, विश्व युद्ध के विरोध के बम्बई में श्रमिकों ने हड़ताल का आयोजन किया। बॉम्बे क्रानिकल में छपे समाचार के अनुसार इस हड़ताल में लगभग 90,000 मजदूरों ने हिस्सा लिया। 9 अगस्त सन 1942 को गांधी जी तथा दूसरे नेताओं की गिरफ्तारी के तत्काल बाद भारत छोडो प्रस्ताव के समर्थन में मजदूरों ने देश भर में हड़तालें की। दिल्ली, लखनऊ बम्बई, नागपुर अहमदाबाद, जमशेदपुर, मद्रास, बंगलौर इत्यादि स्थानों पर हडतालें एक सप्ताह तक चलती रही। हड़तालियों के इस नारे के साथ टाटा स्टील प्लांट 13 दिन तक बंद रहा कि वे तब तक दोबारा काम नही करेंगे जब तक देश में राष्ट्रीय सरकार नहीं बन जाती।सन् 1945 में आई एन.एफ. मुकदमें के मुद्दों को लेकर भी कलकत्ता में श्रमिकों ने प्रदर्शन किये। नि:संदेह स्वतंत्रता प्राप्ति तक यह श्रमिक वर्ग राष्ट्रीय आंदोलन की इन प्रमुख गतिविधियों से गंभीर रूप से जुडा रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Chandra Bipan - Modern India (1971)
2. Chandra Bipan - Nationalism and colonialism in Modern India (1979)
3. Chandra Bipan and other - India struggle for Independince (1988)
4. D.R. Godgil - The industrial Revolution of India in recent times (1944)
5. Majumdra R.C. - Struggle for freedom (1969)
6. Mukherjee R.K. - The rise and fall of the east India company (1955)
7. Pani kkar. K.N. - National and Left Movement in India 1990
8. Tara chand - History of the freedom Movement in India (4.vol.) 1972)

****

1893 का वर्ष एक परिवर्तन बिंदु

प्रो. बी. एल. डावर *

प्रस्तावना – 1893 के वर्ष को भारत के सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक और राजनैतिक अभ्युदय की दृष्टि से एक परिवर्तन का बिंदु कहा जा सकता है। इस वर्ष भारत की कुछ विशिष्ट प्रतिभाओं ने अपने अदम्य साहस के बल पर अविसमर्णीय कार्य किया। जिस प्रकार 1857 ई. का वर्ष महान क्रांति के लिये, 1847 ई. आजादी की बेला के लिये उसी तरह 1893 ई. समग्र रूप से भारतीय इतिहास में अपनी अलग पहचान बनाये हुए है। यह संवत जिसने भारत की ही नहीं, वरन विश्व की तस्वीर बदल दी है। जैसे स्वामी विवेकानंद भारत के साथ विश्व के पथप्रदर्शक और युगद्रष्टा थे। स्वामीजी ने भारत की वैदिककालीन पंरपरा को विश्वपटल पर रखा और देश की संस्कृति को सभी से अवगत कराया। उनके द्वारा बताये पद्चिन्हों को आज हम अपनाये है। हमारी सास्ंकृतिक अस्तित्व कों लेकर भारतीयो की चिंता स्वाभाविक ही थी– भाषा , धर्म, कला , दर्शन सब औपनिवेशिक हमले के निशाने पर थे।

सितंबर 1893 में अमेरिका शहर में हो रहे सर्वधर्म सम्मेलन में पहले ही दो मिनिट के भाषण में कहा 'अमेरिका के भागिनी और भ्राता इस कारण उन्हें वहां तूफानी हिन्दु कहा।' उन्होंने भारतीयता के वसुधैव कुटुम्कम् की भावना को परिलक्षित किया। भाषण में भारत के पराधीन होने की एक अमिट छाप छोडी।
उन्होंने हिन्दु धर्म को सभी धर्मो का जनक बताया, क्योंकि इसी ने संसार को सहिष्णुता और सार्वभौमिकता का पाठ पढाया है। अपने मत की पुष्टि के लिये उन्होंने गीता के पदों के उदारहणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि धर्म में साम्प्रदायिकता संकीर्णता धर्मान्धता आदि के लिए कोई स्थान नहीं है। स्वामीजी ने मानव की अपरिमित ष्षक्ति से उससे अवगत इन बातों से कराया तुम सर्वशक्तिमान आत्मा हो शुद्ध मुक्त महान। उठो जागो अपने स्वयं को प्रकट करने के लिए चेष्टा करो।'

1893 का वर्ष भारतीयों को आध्यात्मिक रूपान्तरण आत्मचिन्तन करने के लिये प्ररित करता है । व्यक्ति का दार्शनिक नैतिक मनोवैज्ञानिक सामाजिक राजनैतिक एंव शैक्षिक चिन्तन उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होता है। हमें इन महान , आध्यात्मिक व्यक्तियों से सबक लेने की आवश्यकता है क्योंकि इसी से इतिहास आगे बढ़ता है । चिन्तकों प्राय : कई श्रेणियों में बांटा गया है । 1. आध्यात्मवादी 2. भौतिकवादी

विवेकानंद की शिक्षा के आधार स्त्रोत निम्नांकित थे। मुख्यत: किसी भी व्यक्ति के विचारों की पृष्ठभूमि कोष दार्शनिक नैतिक मनोवैज्ञानिक सामाजिक राजनैतिक द्दष्टि से परखा जाता है। स्वामी विवेकानंद के विचारों पर इन पांचों तत्वों का विशेष प्रभाव परिलक्षित होता है। स्वामी विवेकानंद प्रखर राष्ट्रवादी थे। फिर भी उनका दर्शन अन्तर्राष्ट्रीयता से ओतप्रोत प्रतीत होता है । उनका राष्ट्रवाद संकीर्ण नही था, बल्कि उनका राष्ट्रवाद ऐसा राष्ट्रवाद था जो दुसरों के लिए भी प्रेरणा प्रदान करे।

1893 में मोहनदास करमचंद गांधाजी ने अब्दुल्ला सेठ नामक एक व्यापारी के मुकदमे में दक्षिण अफ्रीका गये और उन्होंने गोरों की भारतीयों व अफ्रीकियों के प्रति रंगभेद नीति की कटु अनुभव हुआ।
'गांधीजी के आध्यात्म का ज्ञान हमें प्रिटोरिया में 1893 के वर्ष में गांधीजी व मि. बेकरने की मुलाकात से पता चलता है। मैं जन्म से हिन्दु हुँ। इस धर्म का भी मुझे अधिक ज्ञान नहीं है। दुसरे धर्म का भी कम ही है। मैं कहाँ हूँ ,क्या मानता हूँ ,मुझे क्या मानना चाहिये ,यह सब मैं नही जानता। अपने धर्म का अध्ययन मे गम्भीरता से करना चाहता हुँ। दुसरे धर्मो का अध्ययन भी यथाशक्ति करने का मेरा इरादा है।'

मैं 1893 में गांधीजी ने अनेक पुस्तकें पढी जो नीतिवर्धक नास्तिक को आस्तिक एंव ईश्वर के अस्तित्व के बारे में जानकारी देती है। कुछ पुस्तकें तो मनुष्य तथा ईश्वर के बीच संधि करने वाली दलीले दी गई है।

1893 में गांधीजी ने सत्याग्रह के विषय में कहा कि 'मेरे जीवन में आग्रह और अनाग्रह हमेशा साथ साथ चलते रहे हैं। सत्याग्रह में यह अनिवार्य है, इसका अनुभव मैने कई बार किया है। इस समझौता वृति के कारण मुझे कितनी ही बार अपने प्राणों को संकट में डालना पड़ा है, और मित्रों का असंतोष सहना पड़ा है । पर सत्य वज्र के समान कठिन है और कमल के समान कोमल है।'

डॉ. ऐनी बेसेंट का भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान है। ऐनी बेसेंट जब 1893 में भारत आयी तो उन्होंने एक और , धर्म तथा समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया, तो दूसरी ओर भारत में राष्ट्रीयता की भाव भूमि तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। जब हम सारी शक्ति और भावना को बटोरकर स्वराज मागेंगे तो अवश्य प्राप्त होगा। तब क्रांति की राह आसान हो जायगी। यदि अंग्रेजों का आचरण और व्यवहार अच्छा होता तो फिर न महान क्रांति यज्ञ आरंभ होता और न अंग्रेजों की उसमें आहुति दी जात। अर्थात अंग्रेजों कर्म ही इस महान क्रांति के कारण बनें।

निष्कर्ष – कुल मिलाकर हम इस नतीजे पर देखें तो 1983 का वर्ष बहुआयामी तथा सभी अवस्थाओं से परिपूर्ण था। इसी वर्ष भारत ने अपने आपसी वैमनश्य, दुख दर्द , साम्प्रदायिकता ,सामाजिक दुरावस्था को समाप्त कर लिया था। यह वर्ष प्राचीन गौरव तथा अतीत को प्रकट करके न केवल भारत में राष्ट्रवाद को आगे बढ़ाया वरन् विश्व में भारत को आध्यात्मिक राष्ट्र के रूप में पहचान दिलवायी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जैन एंव लाल डॉ., महान व्यक्तित्व, उपकार प्रकाशन, आगरा-2,पृ. 139
2. गांधी मो.क, सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद,1957, पृ. 109 -139
3. पाण्डेय डॉ. रामशकल, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा-2, 2015, पृ. 255
4. अग्रवाल डॉ. शिखा, स्वामी विवेकानंद और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2007, पृ. 10-210
5. विवके रामलाल, महात्मा गांधी जीवन और दर्शन, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004, पृ. 105-108
6. नागोरी एस.एल., एनी बेसेंट एंव भारत का राष्ट्रीय आंदोलन, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 1995, पृ. 1-10
7. गांधी मो.क., देसाई महादेव,विनोबा के विचार, भाग 1-3,सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 348
8. चन्द्र विपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 2006, पृ. 53
9. गर्ग दामोदर लाल, भारत में ब्रिटिश साम्राज्य, ग्रंथ विकास सी -37 राजा पार्क, जयपुर, 2008, पृ.232

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.) भारत

Geomorphology And Lineament Fabric Of Barwah Area, Madhya Pradesh, India - Application Of Remotely Sensed Data

Rajendra Singh Raghuwanshi *

Abstract - The study area around Barwah is a part of Narmada Valley in Western Madhya Pradesh, India. The area is represented by a variety of geological formations. The Geomorphology and Lineament fabric of the area have been studied using Landsat 5 TM FCC imagery. A number of landforms have been identified and mapped on 1 : 50,000 scale. Prominent ones among them include – escarpments, dissected structural plateaus, linear ridges, buttes, pediments, pediplains, valley - fills, alluvium, etc. The lineament fabric of the area shows NW-SE and ENE-WSW lineament sets beside few other directions. The study of landforms and lineament fabric suggests that these lineament trends were present right from the development of cratonic protocontinents at the time of formation of the Indian peninsular crust.
Keywords - Geology, Narmada valley, Landforms, Lineament fabric, Remote sensing.

Introduction - The area of present study covers about 160 Square Kilometer area in Khargone district of Madhya Pradesh (77°00' to 77°07' E and 22°13' to 22°20'N) and falls in the Survey of India toposheet Nos 55 B/3 and 55 B/4.

The advances in the satellite remote sensing techniques have truly revolutionized the geomorphological study of the earth's surface. Significantly, the area of present study forms a part of Narmada valley, which is regarded as a rift valley or a primary structural lineament by Krishnan (1953), it is a geologically important and tectonically significant part of the Deccan Trap region. The field observations indicate the presence of various geological formations associated with different structural features and landforms, which may be useful to trace the history of evolution and the geotectonic setting of the region. Some of the ideas expressed by earlier workers regarding the Narmada Valley support "A Tectonic Rift" reactivated during Precambrian time (Choubey, 1971, 1972), a zone of persistent weakness (Auden, 1949), a swell (Ahmed, 1964), a failed arm (Powar, 1988). The studies carried out by Kaila *et al.* (1981) and Kaila (1986) by using DSS profiles have highlighted that the Narmada - Son lineament is essentially a feature related to block tectonics.

Geology - The area around Barwah has been considered as a museum of geology within Narmada rift zone of the Indian subcontinent. The geological formations ranging in age from Archaean to Recent, are exposed in this region. Geology of different formations has been studied by workers like Roychoudhary and Sastri 1958), Raghuwanshi (2006, 2007), Kale et al. (1990) from various parts of the area. Notable formations are basement granite & meta-sediments of Archaean age, dolomite and chert-breccia of Bijawars, sandstones & shales of Vindhyans, conglomerates and sandstones of Lametas & basaltic lava flows of Deccan trap igneous activity alongwith intrusives of acidic & basic nature.

Satellite Data Used - In the present study, the Landstat-5 TM (Thematic mapper) imagery in false colour composite (FCC) format has been utilized to generate the geomorphological and lineament map on 1 : 50,000 scale (Fig.1 and Fig. 2). The false colour composite image comprises of bands 2, 3 & 4 which are sensitive to the visible and near infra-red part of the electromagnetic radiation that gives maximum information about the geomorphological and structural features.

Geomorphology - The advances in the Satellite Remote sensing techniques have truly revolutionized the geomorpholo gical study of the earth surface. The resource evaluation of the earth through the technique of remote sensing is primarily based on the quantitative and qualitative analysis of these landforms.

The geomorphic evolution of an area depends upon the factors like lithology, climate, hydrological, topographical and climatological characters of the area.

A variety of landforms have been identified by making use of various image interpretation elements like tone, texture, pattern, shape, size, shadow, association, land use, etc., alongwith the other spectral, spatial and temporal signatures and are given in Table 1.

The landforms of the area can be broadly divided as structural (escarpments and dissected structural plateaus); Denudational (linear ridges, buttes, denudational hill complex, pediments and pediplains) and depositional (valley fills, older alluvium and recent alluvium).

Lineament Fabric - In order to decipher the lineament fabric of the area a lineament map was prepared by visual interpretation of landsat – 5 TM imagery on scale 1 : 50,000 (Fig. 2). The direction, frequency and extent of each lineament occurring in the area of study, was measured and plotted on rose diagrams as shown in Fig. 3 and Fig. 4. The class interval and number of lineaments falling in each class are given in Table 2. The detailed study of the lineament fabric of

* Department of Geology, Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

the area as revealed by rose diagrams, indicates that the frequency of lineaments in the area of study is maximum in NW-SE direction and is followed by ENE-WSW direction. The roset of data as shown in Fig. 4, indicates that the NW-SE lineaments show greater extension than other directions. In addition to the above, two other less prominent trends WSW-ESE and ESE-WSW have also been observed.

The frequency and length of the lineaments is maximum in NW-SE direction which is mainly due to the presence of a major fault passing through Bhadlipur – Koteshwar in NW-SE direction followed by WNW-ESE and ENE-WSW trends. The ENE-WSW trending lineaments correspond to the Satpura group of lineament fabric, while NW-SE trending lineaments very commonly occur in the Malwa plateau (Rajurkar *et al*., 1990). It appears that ENE-WSW and NW-SE trends in the region and in the area of study reflect that these lineament trends were in existence since late Archaean or Early.

Table 1 (See in next page)

Proterozoic times and were reactivated during different periods in the geological history right up to the present day. This fact is also further supported by the version of Choubey (1971, 1972) that origin of Narmada rift valley is related to the ancient fracture of Precambrian time. The existence of WNW-ESE trend is most probably related to the origin of Narmada-Son geofracture during comparatively later period.

Other significant lineaments in Central India are the NE-SW and NW-SE trending ones which occur predominantly in the Proterozoic folded belts of Madhya Pradesh. Thus, during that time sequence of different ages, the area of the Narmada – extensional basin experienced compressional stresses resulting in their deformation into sublatitudinal structural trends.

The orientation of fractures and dykes in the Deccan trap show resemblence with that of Pre-Cambrian structural trend and thereby indicate rejuvenation of the ancient tensional directions and magmatic emplacement along them.

Table 2 : Statistical parameters of the lineament sets in the area around Barwah

Trends	No. of Lineaments	% age	Lengths of Lineame-nts (cms)	%age
NS-N10°E	3	3.8	2.4	1.3
N20°E	4	5.1	4.1	2.3
N30°E	1	1.3	1.1	0.6
N40°E	2	2.6	2.4	1.3
N50°E	3	3.8	2.9	1.6
N60°E	6	7.7	13.2	7.4
N70°E	8	10.3	12.7	7.1
N80°E	6	7.7	11.9	6.7
N90°E	4	5.1	7.5	4.2
EW-N10°W	3	3.8	4.6	2.6
N20°W	7	9.0	14.6	8.2
N30°W	6	7.7	32.5	18.2
N40°W	6	7.7	8.8	4.9
N50°W	3	3.8	4.6	2.6
N60°W	1	1.3	3.3	1.8
N70°W	3	3.8	13.3	7.4
N80°W	8	10.3	21.2	11.9
N90°W	4	5.1	17.7	9.9
Total	78	100	178.8	100

Conclusion - The remote sensing studies conducted with ground truth verification effectively delineate various landforms and lineaments in the study area. The landforms observed in the area can be divided into : structural, denudational and depositional landforms while two significant sets of lineaments : NW-SE and ENE-WSW beside few others have been recorded. The study further reveals that the area is in the vicinity of Narmada – Son geofracture, an active region responsible for various tectonic episodes in the Indian Sub-Continent. The presence of seismic activity along the Narmada – Son Lineament confirms that this region is still unstable and in the process of evolution.

References :-

1. Ahmad, F. The line of Narmada Son Valley Curr. Sci. Vol. 33, 1964, pp. 362-363.
2. Auden, J.B. Geological discussion of the Satpura hypothesis. Proc. Nat. Inst. Sci. Ind., Vol. 15, 1949, pp. 315-340
3. Choubey, V.D. Narmada – Son Lineament, India. Nature (Physical sciences), Vol. 232, 1971, pp. 38-40.
4. Choubey, V.D. Pre-Deccan Trap topography in Central India & Crustal warping in relation to Narmada rift structure & volcanic activity. Proceedings of the international symposium an Deccan Traps & other flood eruptions. Bull. Volcanologiqe, Vol. 35, 1972, pp. 660-685.
5. Kaila, K.L. Tectonic framework of Narmada Son Lineament-A continental rift system in Central India from Deep seismic soundings. In reflection seismology – A global perspective. Geody. Ser., Vol. 13, 1986, pp. 133-150.
6. Kaila, K.L., Krishnan, V.G. and Mall, D.M. Crustal structure along Mehmedabad – Billimora profile in Cambay basin, India from deep seismic sounding. Tectonophysics, Vol. 76, 1981, pp. 99-130.
7. Kale, V.S., Peshwa, V.V. and Phansalkar, V.G. Stratigraphy of the Katkut formation, Central Narmada Valley, M.P. Contrib. Sem. Cum workshop, I.G.C.P. 216 and 245 Chandigarh, 1990, pp. 82-83.
8. Krishnan, M.S. The Structural and Tectonic history of India. Mem. Geol. Surv. India, Vol. 81, 1953, pp. 1-37
9. Powar, K.B. Evolution of Deccan volcanic provinces. Presidential address, proc. 74th Ind. Sci. Cong., Part II, 1988, pp. 1-30.
10. Raghuwanshi, R.S. Petrography and Petrochemistry of the basaltic lava flows and associated dykes near Barwah, District – Khargone, Madhya Pradesh, India. Bulletin of the Indian Geologists Association, Vol. 39, No. 1-2, 2006, pp. 19-28.
11. Raghuwanshi, R.S. Petrographic and Geochemical characteristics of the Kanar Sandstone formation NE of Barwah, District Khargone, M.P. India. Jour. Geol. Soc. Ind. Vol. 69, No. 6, 2007, pp. 1298-1304.
12. Rajurkar, S.T., Bhate, V.D. and Sharma, S.B. Lineament fabric of Madhya Pradesh and Maharashtra and its Tectonic significance. GSI Spl. Pub. No. 28, 1990, pp. 241-259.

13. Roychowdhary, M.K. and Sastri, V.V. On the geology of the Barwah – Katkut area of Narmada valley, Nirmar District, Madhya Bharat. Rec. Geol. Surv. Ind., Vol. 85 Part 4, 1958, pp. 523-556.

Table 1 : Image interpretation characters of various geomorphic units of the area

	Geomorphic units	Tone	Texture	Pattern	Drainage	Landuse / cover	Association	Relief
1	Escarpment	Dark, Reddish brown	Coarse to moderate	Straight or curvilinear with steep slopes	Absent		Dissected plateau and Butte	High
2	Dissected structural plateau	Yellowish brown	Moderate to fine	Irregular	Structurally controlled sub-dendritic	Sparse deciduous forest at the top	Steep scarp in all sides and plateau top	High
3	Linear ridges	Light brown	Smooth	Liner, rectilinear or curvilinear	Not developed coarse parallel	Barren but sparse bushes at places	Pediplains and pediments	High
4	Butte	Light yellowish brown	Smooth	Nearly circular but sometimes elliptical smaller extent	Not developed coarse parallel	Sparse bushes		Moderrate to high
5	Denudational hill complex	Light brown	Coarse to rough	Short rectilinear hills with oval crest	Not developed coarse parallel	Rocky, barren with shrubs	Plateau and pediments	High
6	pediments	Dark brown	Coarse and uneven	Often undulating to gentle slope	Fine dendritic	Dry, cultivation at lower parts	Dissected structural plateaus and pediplains	Low
7	Pediplains	Medium to dark gray, sometimes reddish due to cultivation	Fine and even	Rectangular and field pattern	Well-developed dendritic pattern	Intensive cultivation	Denudational hills, buttes, linear ridges pediments etc.	Low
8	Plateau top with thick soil cover	Dark-Grayish fine tone	Fine	Irregular, but at places rectangular and field pattern	Dendrite	Cultivation	Dissected structural plateaus	High
9	Valley fills	Dark reddish tone	Fine	Linear, curvilinear and elongated	Coarse - dendrite	Intensive cultivation and dense vegetation	Dissected structural plateaus	Low
10	Older alluvium	Light yellowish gray	Fine to medium	Elongated and present as narrow belts along the river further from the younger alluvium	Dendrite	Extensively cultivated	Pedi plains and younger alluvium	Low
11	Recent alluvium	Dark yellowish gray	Fine and smooth	Elongated and present as narrow belts along the river	Internal	Extensively cultivated	Older alluvium	Low

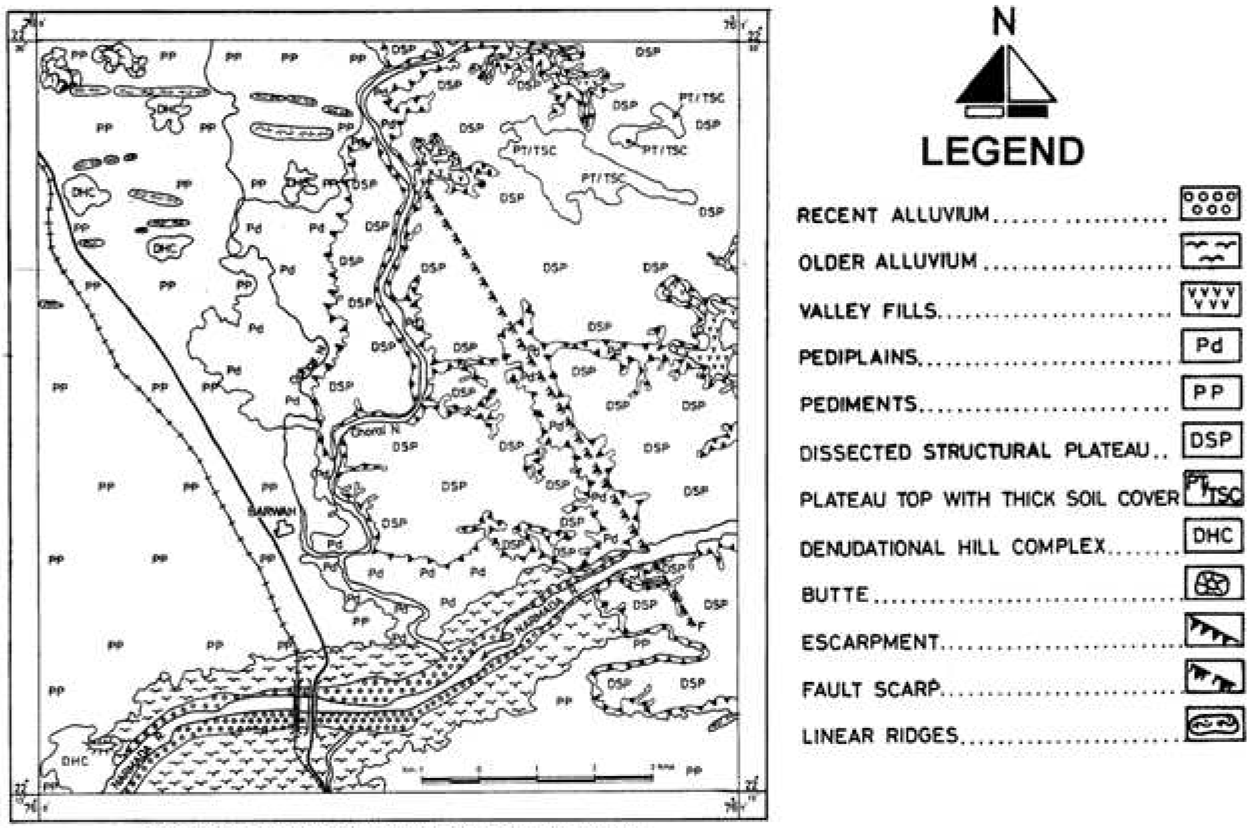

FIG. 1 GEOMORPHOLOGICAL MAP OF THE AREA

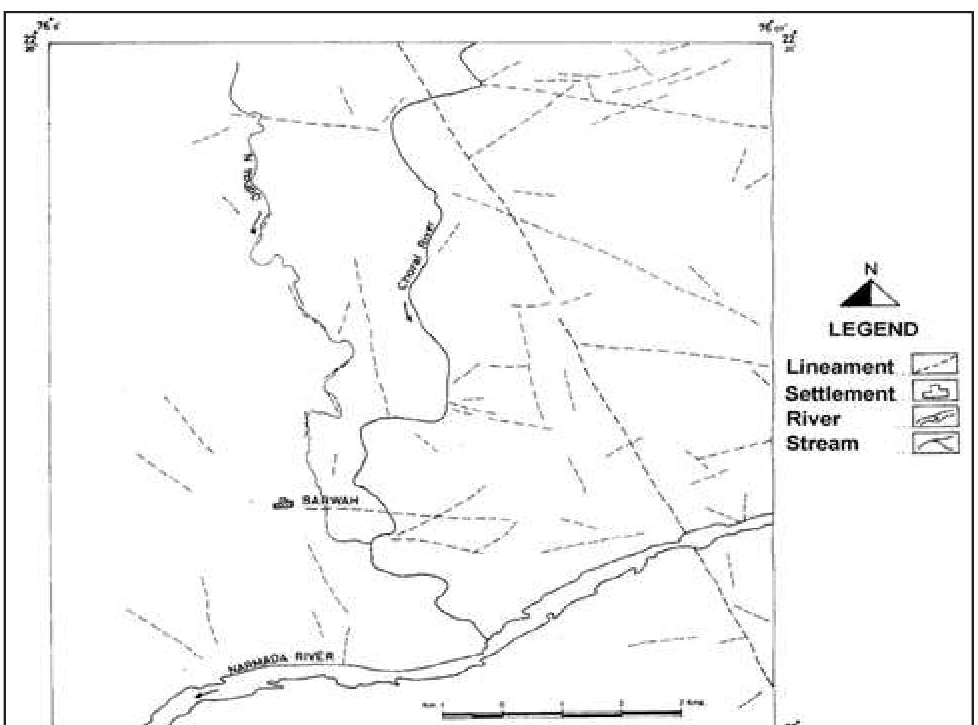

FIG.2 LINEAMENT MAP OF THE AREA

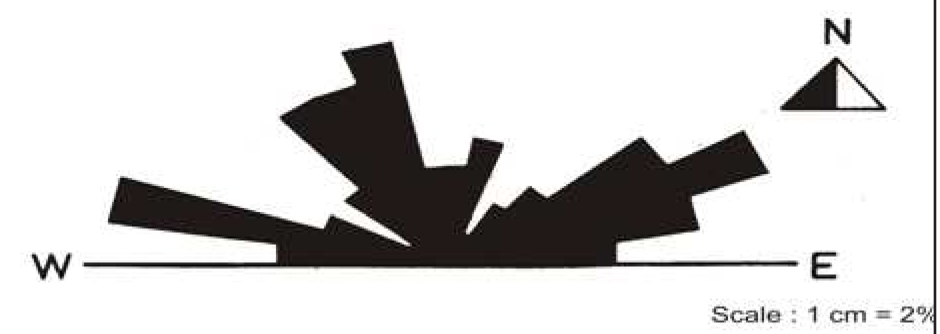

FIG. 3 ROSE DIAGRAM SHOWING FREQUENCY DISTRIBUTION OF LINEAMENTS
(Based on LANDSAT-5 TM Image)

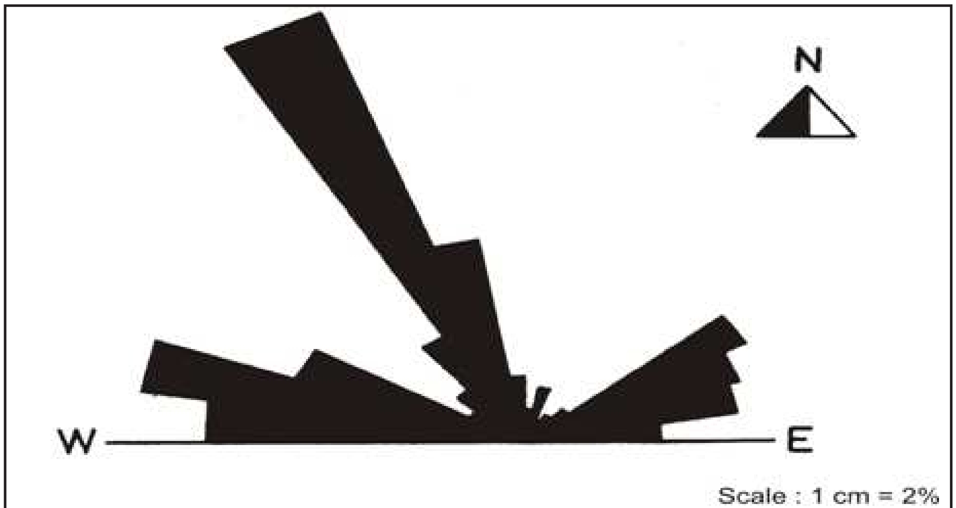

FIG. 4 ROSE DIAGRAM SHOWING FREQUENCY DISTRIBUTION OF LENTH OF LINEAMENTS
(Based on LANDSAT-5 TM Image)

****

Sex Ratio Of Mandsaur District Madhya Pradesh

Dr. Akhtar Bano*

Introduction - Population is the most important resource in a region. Sex ratio determines the demographic structure of a region. It affects the fertility marriage, labour, status of women and many social and moral evils. Therefore in this paper an attempt has been made to analyze the sex ratio of Mandsaur District Tehsil wise from 2001 to 2011.

Study Area - Mandsaur District is situated in the Western part of Madhya Pradesh. The district has been divided into five Tehsils, namely Bhanpura, Garoth, Malhargarh, Mandsaur and Sitamau.(Table 1)

Table 1 : Mandsaur District : Area and Population

S.	Tehsil	Geographical area (in hectare)	Population	
			2001	2011
1	Bhanpura	103918	132722	151135
2	Garoth	113669	224325	260953
3	Malhargarh	80605	185079	203822
4	Mandsaur	126608	3969919	445692
5	Sitamau	127369	244679	278230
	District	552169	1183724	1339832

Methodology - The study is based on secondary data. Tehsilwise data regarding sex ratio have been obtained from District Statistical Book, Mandsaur(MP) 2001 and 2011.

Objectives -

1. To examine the changing sex ratio.
2. To find out the reasons of low rate of sex ratio in the study area.

Sex Ratio in the Study Area - Sex ratio means the number of females per thousand males. It affects the social and economic activity in a region.

Table 2 shows the different sex ratio in different Tehsils. Every Tehsil has recorded the sex ratio much above the State of M.P. and India.

Table 2 :Mandsaur district: Tehsil wise Sex Ratio

S.No.	Tehsil Name	Sex ratio	
		2001	2011
1	Bhanpura	939	945
2	Garoth	952	964
3	Malhargarh	970	983
4	Mandsaur	955	967
5	Sitamau	961	963
	District	956	966
	Madhya Pradesh	919	930
	India	933	940

It is the fact that the sex ratio is always increasing from 1971 to 2011 in Mandsur District. It is a good sign for all types of development in the study area. Sex ratio affects the labour. If the number of males is higher than females, more labour will be available. Sex ratio affects the birth rate in the society. Sex ratio is also related to the status of women and employment.

Reasons for lower sex ratio - Table 2 shows that in the study area the sex ratio is low. There are some reasons for this situation such as:-

Death of women in the early age because of early marrige. Infant mortality among girls is very high in the study area due to poverty. Importance of boys in the all types of society, and gender disparity.

Conclusion - In all we can say that in Mandsaur District the sex ratio is appreciable in all five Tehsils. The sex ratio has increased due to the policy of Government like Beti Bachao and female literacy and education. Women employment should be increased by Government.

References :-

1. Ghos7): Fundamentals of Population Geogrphy, Strerling publishers h, B.N. (198, New Delhi.
2. Bano, Sabina (2012): Gender Disparity in Varanasi city. The Deccan Geographer (Pune) Vol. 50(1), 2012, 39-53.

****

* Asst. Professor (Geography) R.G. Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

प्रतीक अध्ययन-ग्वालियर नगर के अन्तर्गत मांढरे की माता, कम्पू क्षेत्र में स्थित मलिन बस्ती का भौगोलिक अध्ययन

कंचन दुबे * डॉ. अंजू गुप्ता * *

गन्दी बस्ती का अर्थ एवं परिभाषा – 'गन्दी बस्ती वास्तव में अनाधिकृत एवं घिनावना रिहाइशी क्षेत्र है। इस शब्द का प्रयोग वर्तमान में ऐसे रिहाइशी क्षेत्रों के लिये प्रयुक्त किया जाता है, जहाँ नगरीय निर्धन लोग घटिया आवासों में निवास करते हैं। इनका विकास नगरीय क्षेत्र में ऐसे स्थलों पर होता है जो आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक व राजनीतिक दृष्टि से पिछड़े होते हैं।1

ग्वालियर नगर में मलिन बस्ती की समस्या – ग्वालियर मध्य प्रदेश राज्य का तीसरा बड़ा महानगर है। ग्वालियर नगर की मलिन बस्तियों में रहने वाली कुल जनसंख्या 101695 है जो कि ग्वालियर की कुल जनसंख्या का 19.7% है। ग्वालियर शहर में 39 मलिन बस्ती क्षेत्र है जो कि 50.2 हैक्टेयर भूमि पर फैला है जिसमें 22 लश्कर, 5 मुरार तथा 12 पुराने ग्वालियर क्षेत्र में स्थित हैं। ग्वालियर नगर के व्यावसायिक केन्द्र का विकास लश्कर में हुआ है एवं इसका औद्योगिक क्षेत्र मुरार और ग्वालियर में 3 कि.मी. के अर्धव्यास में फैला है। यही कारण है कि मुरार और ग्वालियर क्षेत्र में कुल मलिन बस्तियों की लगभग आधी बस्तियाँ स्थित हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधार्थी ने मलिन बस्ती के जनांनाकीय, सामाजिक एवं आर्थिक स्वरुप का अध्ययनकरने हेतु अपने शोध का विषय ' प्रतीक अध्ययन-ग्वालियर नगर के अन्तर्गत मांढरे की माता, कम्पू क्षेत्र में स्थित मलिन बस्ती का भोगोलिक अध्ययन' चुना है।

शोध प्रविधि –ग्वालियर नगर के अन्तर्गत मांढरे की माता कम्पू क्षेत्र में स्थित मलिन बस्ती के अध्ययन हेतु शोधार्थी ने साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन विधियों का प्रयोग करते हुये निवासरत 59 परिवारों के जनानांकीय स्वरुप समाजिक स्वरुप एवं आर्थिक स्वरुप का अध्ययनकिया। प्राप्त प्राथमिक समकों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण तालिका क्रमांक 1 -9 तक में प्रस्तुत किया गया है।

मलिन बस्ती का जनांकिकी स्वरुप

तालिका क्रमांक – 1

सर्वेक्षित परिवारों की कुल एवं लिंगानुसार जनसंख्या

क्र.	कुल/लिंग	संख्या	प्रतिशत
1	कुल	285	100%
2	महिला	128	44.92%
3	पुरुष	157	55.08%

तालिका क्रमांक – 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 1 में सर्वेक्षित परिवारों के सदस्यों की कुल एवं लिंगानुसार जनसंख्या का वर्गीकरण किया गया है। तालिका दर्शाती है कि, इस मलिन बस्ती के सर्वेक्षित परिवारों में कुल जनसंख्या 285 है। जिसमें 128 (44.92%) महिलायें तथा 157 (55.08%) पुरुष है। इससे स्पष्ट है कि महिलाओं की संख्या पुरुषों की तुलना में कम है।

तालिक क्रमांक -2 में सर्वेक्षित परिवारों के लोगों की आयु एवं लिंग के अनुसार वर्गीकरण किया गया है। जिसमें पुरूषों में न्यूनतम आयु 0-6 माह के शिशु 8.28 प्रतिशत तथा अधिकतम आयु 60 वर्ष से ऊपर के वृद्ध 0.63 प्रतिशत पाये गये। सर्वाधिक पुरूषों की संख्या 15 से 34 के युवाओं की 51.59 प्रतिशत पाई गई।

महिलाओं में 10.60 प्रतिशत लड़कियाँ 0-6 माह आयु की पाई गई तथा 27.38 प्रतिशत महिलायें अधिकतम आयु 35-59 वर्ष की पाई गई। सर्वाधिक महिलाओं की संख्या 51.59 प्रतिशत युवा महिलाओं की 15-34 वर्ष सर्वेक्षित परिवारों में पाई गई।

बस्ती सर्वेक्षित परिवारों में कुल 285 लोग पाये गये जिसमें 157 पुरूष एवं 128 महिलायें पाई गई इस प्रकार महिलाओं की संख्या पुरूषों की तुलना में कम पाई गई। युवाओं का प्रतिशत सर्वाधिक होने का कारण उनके गांव में फसले नष्ट हो जाने के कारण अपने परिवार के भरण पोषण हेतु गांव छोड़कर शहर के किनारे आकर अवैध रुप से रहने लगना और मजदूरी करना हो सकता है।

इस बस्ती में बसे लोगों में युवाओं विशेषकर पुरुषों की संख्या अधिक होने का कारण ग्वालियर के आस पास के गाँव बेला, पिपरोली, घाटीगॉव, बिलउआ, चीनौर, पनिहार बरई आदि में फसले नष्ट हो जाने के कारण अपने परिवार के भरण पोषण हेतु काम की तलाश में युवा वर्ग के लोग विशेषकर पुरुष यहाँ आकर अवैध रुप से झोंपड़ पट्टी बनाकर रहने लगाना है।

ग्राफ क्रमांक – 1 सर्वेक्षित परिवारों के सदस्यों की आयु एवं लिंग(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

मलिन बस्ती का सामाजिक स्वरुप

तालिका क्रमांक – 3

सर्वेक्षित परिवारों का धर्मानुसार वर्गीकरण

धर्म	संख्या	प्रतिशत
हिन्दू	56	94.91
मुस्लिम	03	05.08
सिक्ख	00	00.00
ईसाई	00	00.00
योग	**59**	**100.00**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 3 में सर्वेक्षित परिवारों का धर्मानुसार वर्गीकरण किया गया है। तालिका दर्शाती है कि 94.91% परिवार हिन्दू व

* शोधार्थी (भूगोल) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (भूगोल) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

5.08% परिवार मुस्लिम हैं। इस प्रकार इस मलिन बस्ती में हिन्दू परिवारों का बाहुल्य पाया गया। सिक्ख व ईसाई परिवारों की संख्या निरंक पाई गई।

ग्राफ क्रमांक – 2

सर्वेक्षित परिवारों का धर्म (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 4

सर्वेक्षित परिवारों का जाति के अनुसार वर्गीकरण

जाति	संख्या	प्रतिशत
जाटव	28	47.45
गुर्जर	05	8.47
यादव	04	6.77
खान	03	5.08
काढी	02	3.38
शाक्य	02	3.38
कुशवाह	02	3.38
कोरी	01	1.69
नाई	01	1.69
प्रजापति	01	1.69
रावत	01	1.69
धानुक	01	1.69
चंदेल	01	1.69
मौर्य	01	1.69
बाल्मीक	01	1.69
पीपल	01	1.69
बरार	01	1.69
गोस्वामी	01	1.69
धाकड़	01	1.69
आर्य	01	1.69
योग	**59**	**100.00**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 4 में सर्वेक्षित परिवारों की जातियाँ प्रदर्शित की गई हैं। आंकडे दशाते हैं कि सर्वाधिक परिवार 7.45% जाटव जाति के हैं। द्वितीय स्थान पर गुर्जर परिवार 8.47% तथा तृतीय स्थान पर 6.77% यादव परिवार मिले। चतुर्थ स्थान पर 3.38% काढी, शाक्य एवं कुशवाह परिवारों का है। शेष 13 अन्य जातियों के परिवार भी रहते हैं। जिसमें प्रत्येक का प्रतिशत 1.69% है।

ग्राफ क्र. – 3 सर्वेक्षित परिवारों की जातियाँ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. – 5 सर्वेक्षित परिवारों का लिंगानुसार शैक्षिक स्तर

शैक्षिक स्तर	पुरूष		महिलायें		योग	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
प्राथमिक	19	6.66	17	13.28	36	12.63
माध्यमिक	17	5.96	15	11.71	32	11.22
हाईस्कूल	32	11.22	23	17.96	55	19.29
हायर सैकेंड्री	15	5.26	06	04.68	21	7.36
स्नात्कोत्तर	04	1.40	00	00.00	04	1.40
योग	**87**	**30.52**	**61**	**21.39**	**148**	**51.89**
अशिक्षित	70	24.56	67	23.50	137	48.06
कुल योग	**157**	**55.08**	**128**	**44.92**	**285**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 5 में सर्वोक्षित परिवारों का शैक्षिक स्तर लिंगानुसार प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है। कि 51.89% परिवार शिक्षित हैं जिनमें 30.52% प्रतिशत पुरूष एवं 21.39% प्रतिशत महिलायें शिक्षित मिली है। 48.06% अशिक्षित व्यक्तियों में 24.56% पुरुष एवं 23.50% महिलायें सम्मलित है।

हाई स्कूल शिक्षित व्यक्तियों का प्रतिशत सर्वाधिक पाया गया है। शिक्षा का न्यूनतम स्तर प्राथमिक 16.62% पाया गया जिसमें 6.66% पुरुष 5.96% महिलायें पायी गई। स्नातक स्तर की शिक्षा अधिकतम पायी गई इसके अर्न्तगत 1.40% पुरुष पाये गये स्नातक स्तर पर महिलाओं का प्रतिशत निरंक पाया गया। शिक्षित महिलाओं की शिक्षा का प्रतिशत पुरुषों के प्रतिशत की तुलना में कम होने तथा स्नातक स्तर पर महिलाओं की संख्या निरंक होने का कारण उन लोगों में स्त्री शिक्षा के महत्व के प्रति अज्ञानता तथा निर्धनता है।**ग्राफ क्रमांक – 4 सर्वेक्षित परिवारों का लिंगानुसार शैक्षिक स्तर (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक – 6

सर्वेक्षित परिवारों की आवासीय स्थिति

कमरों की संख्या	सर्वेक्षित परिवार	
	संख्या	प्रतिशत
01	26	44.06
02	27	45.76
03	03	5.08
04	03	5.08
योग	**59**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 6 में सर्वेक्षित परिवारों के कमरों की स्थिति दर्शाई गई है। सर्वाधिक परिवार 45.76% दो कमरों के मकानों वाले, द्वितीय स्थान पर 44.06% परिवार एक कमरे के मकान वाले हैं। तीन एवं चार कमरों वाले मकानों की संख्या बहुत ही कम अर्थात् क्रमश: 5.08% तथा 5.08% पाई गई। दो कमरे वाले मकानों की संख्या का प्रतिशत सर्वाधिक होने का कारण बस्तीवासियों की निर्धनता एवं बेरोजगारी है।

स्वास्थ्य दशायें – अधिकांश बस्तीवासी 1 या 2 कमरों के मकान में निवास करते है। स्थानाभाव एवं संसाधनों की कमी के कारण इनके घरों में स्वच्छता का अभाव पाया जाता है। इस कारण यहॉ अधिकतर संक्रामक बीमारियों की संभावनायें बनी रहती हैं। बड़ों की अपेक्षा बच्चे संक्रामक बीमारियों के अधिक शिकार होते है। (ग्राफ क्र. – 5)

ग्राफ क्रमांक – 5 सर्वेक्षित परिवारों की आवासीय स्थिति (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

मलिन बस्ती का आर्थिक स्वरुप

तालिका क्रमांक – 7

सर्वेक्षित परिवारों की व्यावसायिक स्थिति

व्यवसाय	संख्या	प्रतिशत
छत ढ़लाई	01	1.69
ड्राइवर	02	3.38
बर्तन सफाई	01	1.69
मजदूरी	40	67.79
प्राइवेट शिक्षण	02	3.38
प्राइवेट नौकरी	02	3.38

चौकीदार	01	1.69
पल्लेदारी मजदूरी	01	1.69
बेलदारी	05	8.47
कारीगरी	01	1.69
फल का ठेला	01	1.69
कवाड़े की दुकान	01	1.69
सब्जी का ठेला	01	1.69
योग	**59**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 7 में सर्वेक्षित परिवारों की व्यावसायिक स्थिति दर्शाई गई है। तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक परिवार (67.79 प्रतिशत) का व्यवसाय मजदूरी है। 3.38 प्रतिशत परिवारों का व्यवसाय ड्राइवरी, 3.38 प्रतिशत का प्राइवेट शिक्षण तथा 3.38 प्रतिशत का प्राइवेट नौकरी करना है, शेष परिवारों में अन्य प्रकार के कार्य किये जाते हैं, जैसे सब्जी या फल का ठेला लगाना, कबाड़ी की दुकान, कारीगरी, बर्तन सफाई आदि। इन सभी का प्रतिशत 1.69 प्रतिशत है। मजदूरी करने वाले व्यक्तियों की संख्या सर्वाधिक होने का कारण उनकी अशिक्षा, अज्ञानता एवं निर्धनता है।

ग्राफ क्रमांक – 6 सर्वेक्षित परिवारों की व्यावसायिक स्थिति (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 8
सर्वेक्षित परिवारों में प्रकाश का स्वरुप

प्रकाश स्त्रोत	**सर्वेक्षित परिवार**	
	संख्या	**प्रतिशत**
बिजली (मीटर लगा है)	27	45.76
बिजली (मीटर नहीं लगा है)	25	42.37
चिमनी	07	11.86
योग	**59**	**100**

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 8 में सर्वेक्षित परिवारों में प्रकाश व्यवस्था दर्शाई गई है। तालिकानुसार 88.13% मकानों में बिजली है किन्तु केवल 45.76% मकानों में मीटर लगा है। 42.37% मकान बिना मीटर के पाये गये, 11.86% मकानों में बिजली नहीं है। वे चिमनी जलाकर गुजारा करते हैं। मकानों में मीटर न लगे होने तथा बिजली न होने का कारण उनकी बेरोजगारी एवं निर्धनता है।

तालिका क्रमांक – 9
सर्वेक्षित परिवारों में उपलब्ध संसाधन

उपलब्ध साधन	**सर्वेक्षित परिवार**	
	संख्या	**प्रतिशत**
टेलीवीजन	44	74.57
कूलर	26	44.06
पंखा	41	69.49
तखत	02	3.39
टंकी	05	8.47
खटिया	04	6.77
अलमारी	01	1.69
मोटर साईकिल	02	3.38
साईकिल	01	1.69
हीटर	02	3.38

उपरोक्त तालिका क्रमांक – 9 में सर्वेक्षित परिवारों में संसाधनों की उपलब्धता दर्शाई गई है जिससे उनका आर्थिक स्वरूप प्रदर्शित होता है। तालिका दर्शाती है कि दूरदर्शन सर्वाधिक लोकप्रिय संसाधन है क्योंकि इसकी उपलब्धता का प्रतिशत सर्वाधिक 74.57% पाया गया। 44.46% परिवारों में कूलर उपलब्ध है तथा 69.49% परिवार पंखे का उपयोग करते हैं, 8.47% परिवार पानी भरने हेतु टंकियों का उपयोग करते हैं। 6.77% परिवारों पर खटिया तथा 3.38% परिवारों पर तखत उपलब्ध है, शेष परिवारों के लोग जमीन पर सोते हैं। 3.38% परिवारों पर मोटर साईकिल तथा 1.69% पर साईकिल है, शेष परिवार पैदल यात्रा करते हैं,
3.38% परिवार हीटर पर खाना पकाते हैं, शेष परिवार चूल्हों पर भोजन पकाते हैं। इस प्रकार इस मलिन बस्ती में रहने वाले लोगों के पास संसाधनों की अत्यधिक कमी है तथा उनके पास मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। इससे उनके रहन सहन का निम्न स्तर प्रर्दशित होता है जो उनके परिवार के आर्थिक स्वरुप का दर्पण है।

ग्राफ क्रमांक – 7 सर्वेक्षित परिवारों में उपलब्ध संसाधन (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – सर्वेक्षित मलिन बस्ती में ग्वालियर नगर के आस पास के गॉवों के बेरोजगार लोग अपने परिवार के भरण पोषण के उद्देश्य से कैसर पहाडी, माढरें की माता के मंदिर के पीछे अवैध रुप से बस गये हैं। इस बस्ती में पुरुषों की संख्या महिलाओं की तुलना में अधिक है। यहाँ के बस्ती निवासियों में युवाओं का प्रतिशत अधिक है। यहाँ हिन्दू और मुस्लिम दो धर्मो को मानने वाले लोग रहते हैं जिनमें हिन्दू धर्मियों का बाहुल्य है। इस बस्ती के निवासियों में विभिन्न जातियों के लोग रहते हैं। जिनमें जाटव लोगों का प्रतिशत अधिक है। यहाँ शिक्षित एवं अशिक्षित लोगों का प्रतिशत लगभग बराबर है। शिक्षित लोगों का न्यूनतम शैक्षिक स्तर प्राथमिक व अधिकतम स्नातक है। सर्वाधिक लोग हाईस्कूल शिक्षित हैं। स्त्रियाँ पुरुषों की तुलना में कम शिक्षित हैं। यहॉ के लोगों में अधिकतर लोग मजदूरी करते हैं। इस बस्ती में अधिकतर लोग दो कमरों के मकानों में रहते हैं। मकानों में बिजली है किन्तु कुछ लोगों के मकानों में मीटर नहीं लगे हैं। यहाँ के मकानों में शौचालय नहीं बने हैं और न ही जल आपूर्ति की व्यवस्था है। गलियाँ संकरी हैं व मकान अनियमित तरीके से बने हैं। जल निकास हेतु नालियों का कोई प्रबंध नहीं है। बरसात में कीचड़ बढ़ जाने के कारण नारकीय दृश्य बन जाता है। इनके पास मूलभूत सुविधाओं एवं घरेलू संसाधनों का अभाव है। केवल टी.वी. के प्रति रुझान अधिक होने के कारण अधिकांश परिवारों में टी.वी. उपलब्ध है। उपरोक्त समस्त विवरण से स्पष्ट होता है कि मलिन बस्ती निवासी अस्वास्थ्यकर एवं अभावग्रस्त वातावरण में रहने के लिये मजबूर हैं। इनका रहन सहन का निम्न स्तर इनके निम्न आर्थिक/सामाजिक स्वरुप को चित्रित करता है।

सुझाव – यद्यपि सरकार ने गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को शिक्षा, राशन, चिकित्सा आदि विभिन्न क्षेत्रों में सुविधायें दी हैं परंतु वे अपार्यप्त महसूस होती हैं। मलिन बस्ती में रहने वाले लोगों की स्थिति में सुधार लाने के लिये निम्नानुसार सुझाव प्रस्तुत हैं–

- गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को सरकार द्वारा सस्ते व किश्तों पर मकान उपलब्ध कराने चाहिये जिससे नगर में विभिन्न स्थानों पर अनियमित रूप से बनी झुग्गी, झोपड़ियाँ व गंदगी समाप्त होंगी। सरकार द्वारा हाउसिंग बोर्ड के माध्यम से आवंटित मकान संवाहन व प्रकाश युक्त होंगे तथा उनमें विधिवत नालियों का निकास होगा, इस प्रकार नगरों का वातावरण शुद्ध व सुरक्षित होगा।

- गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों को साईकिल व अन्य घरेलू संसाधन सस्ती दरों पर व किश्तों में उपलब्ध कराने चाहिये।
- समय-समय पर इन बस्तियों में नि:शुल्क चिकित्सा शिविर तथा स्वास्थ्य शिक्षा शिविर लगाने चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बंसल, सुरेशचन्द्र, 'नगरीय भूगोल मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 2009 पृष्ठ क्र. 710-715 ।
2. कुमार, प्रमिला 'मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन' , मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1996 ।
3. कुशवाह, रामभुवन सिंह 'मध्यप्रदेश आज और कल : 2007 । खत्री, हरीश कुमार 'नगरीय भूगोल' कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल 2014
4. Agnihotri, Pushpa, `Powerty Amidst Prosperity : Survey of slums', M.P. Publication, New Delhi.
5. Internet (i) www.gwalior.nic.in
   (ii) en.wikipedia.org

तालिका क्रमांक - 2
सर्वेक्षित परिवारों का आयु एवं लिंग के अनुसार वर्गीकरण

आयु	पुरूष		महिलायें		योग	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
0-6 माह (शिशु)	13	8.28	14	10.60	27	9.47
7-14 वर्ष (बालक)	19	12.10	12	9.37	31	10.87
15-34 वर्ष (युवा)	81	51.59	68	51.51	149	52.28
35-59 वर्ष (प्रोढ़)	43	27.38	34	25.75	77	27.01
60 वर्ष (वृद्ध)	01	0.63	00	0.00	01	0.35

ग्राफ क्रमांक - 1 सर्वेक्षित परिवारों के सदस्यों की आयु एवं लिंग

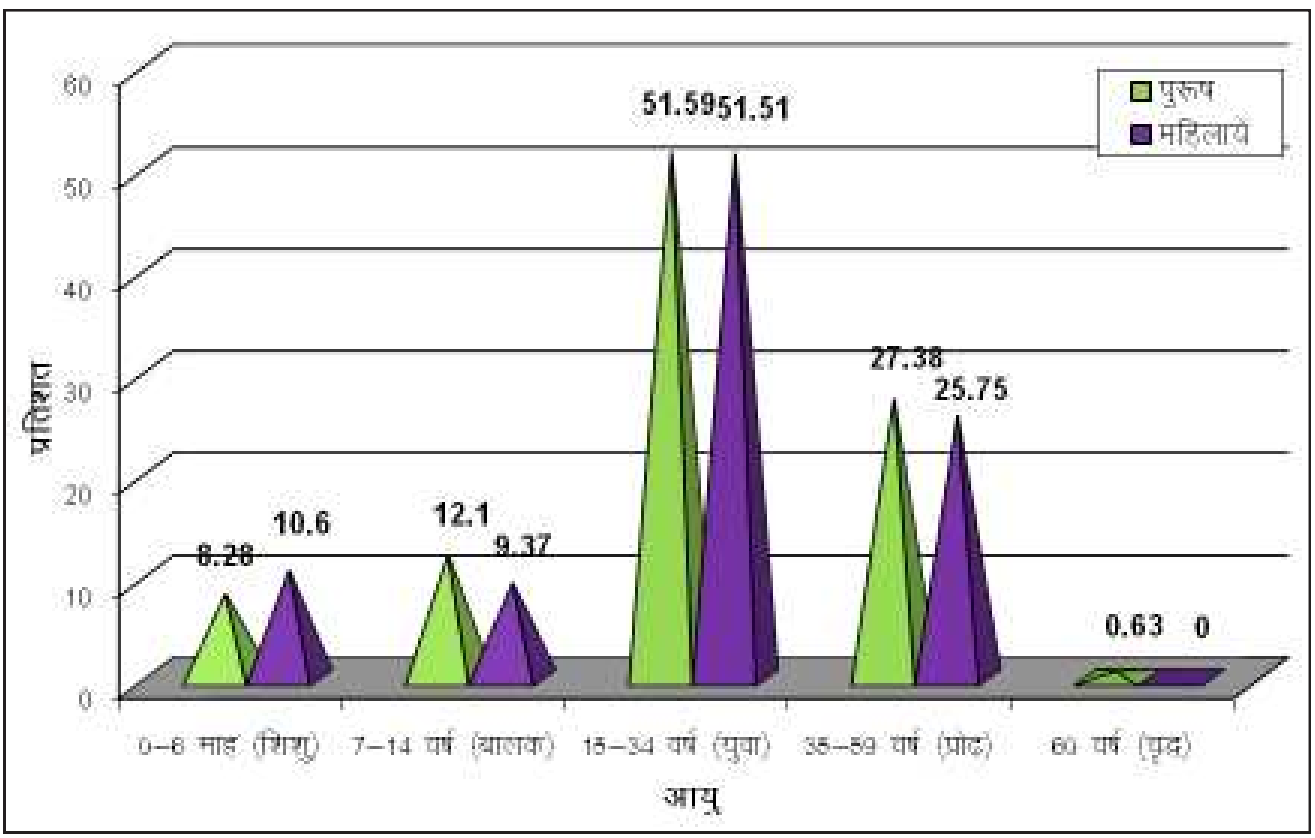

ग्राफ क्रमांक – 2 सर्वेक्षित परिवारों का धर्म

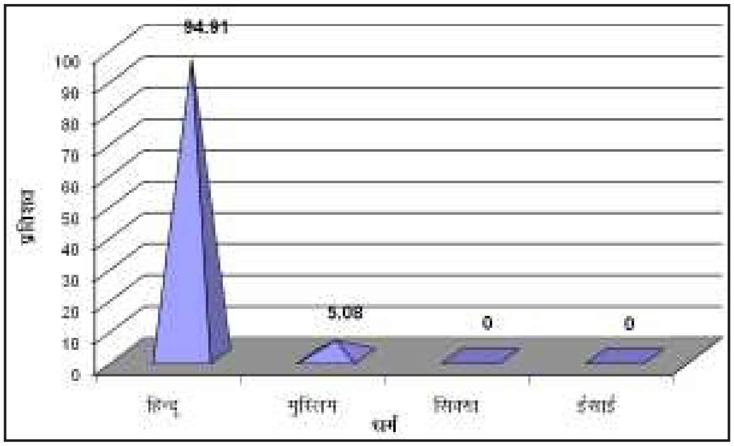

ग्राफ क्र. – 3 सर्वेक्षित परिवारों की जातियाँ

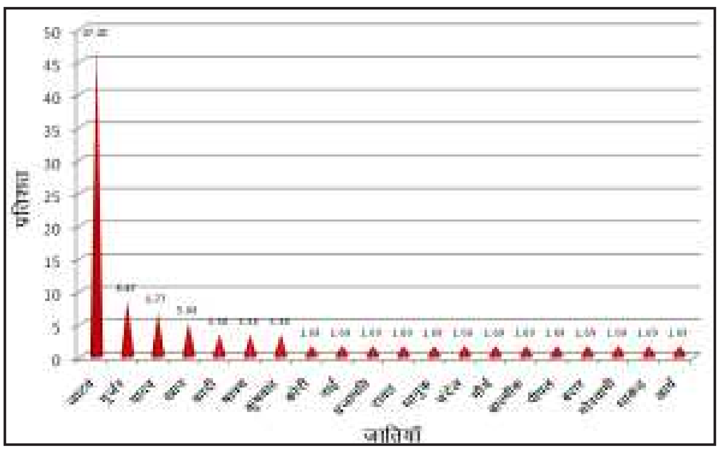

ग्राफ क्रमांक – 4 सर्वेक्षित परिवारों का लिंगानुसार शैक्षिक स्तर

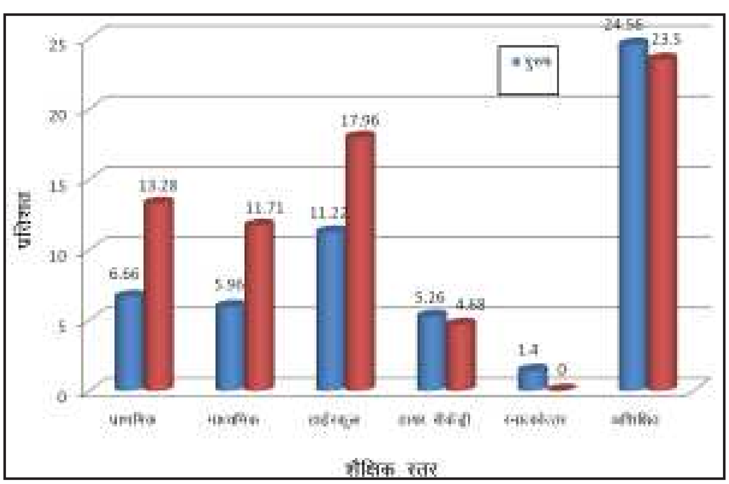

ग्राफ क्रमांक – 5 सर्वेक्षित परिवारों की आवासीय स्थिति

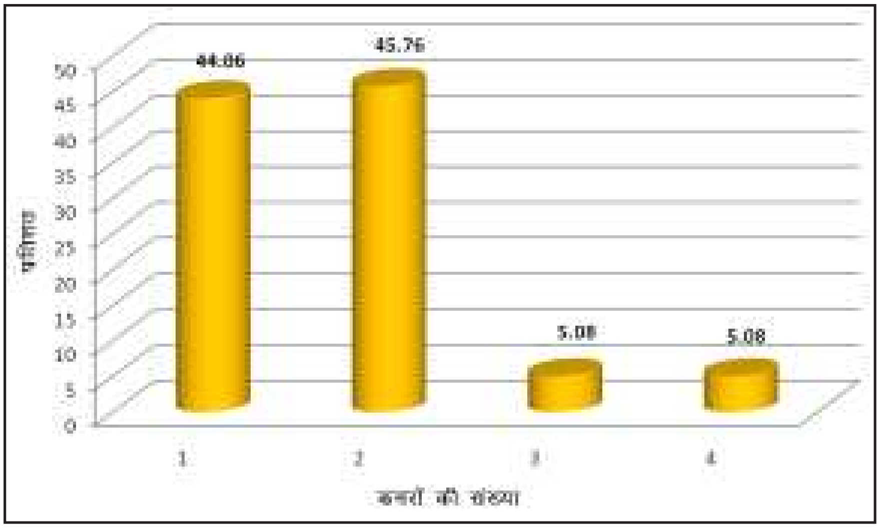

ग्राफ क्रमांक – 6 सर्वेक्षित परिवारों की व्यावसायिक स्थिति

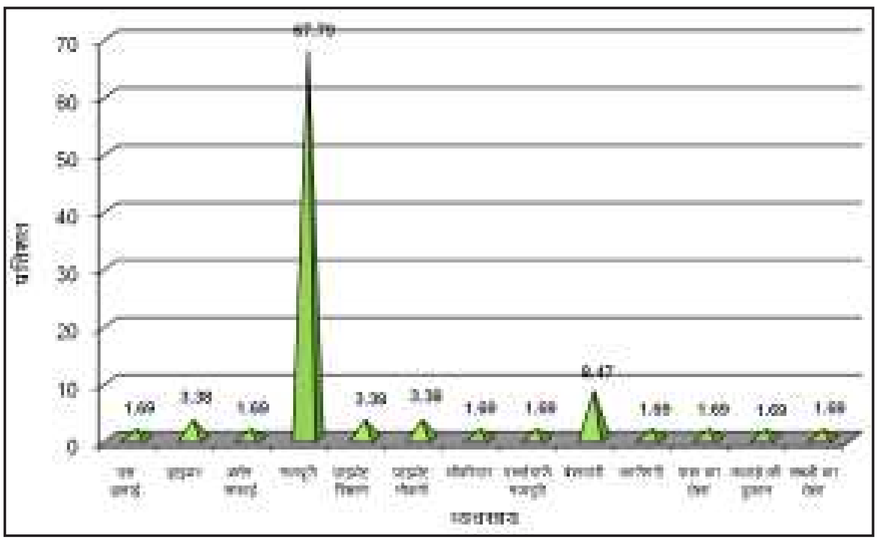

ग्राफ क्रमांक – 7 सर्वेक्षित परिवारों में उपलब्ध संसाधन

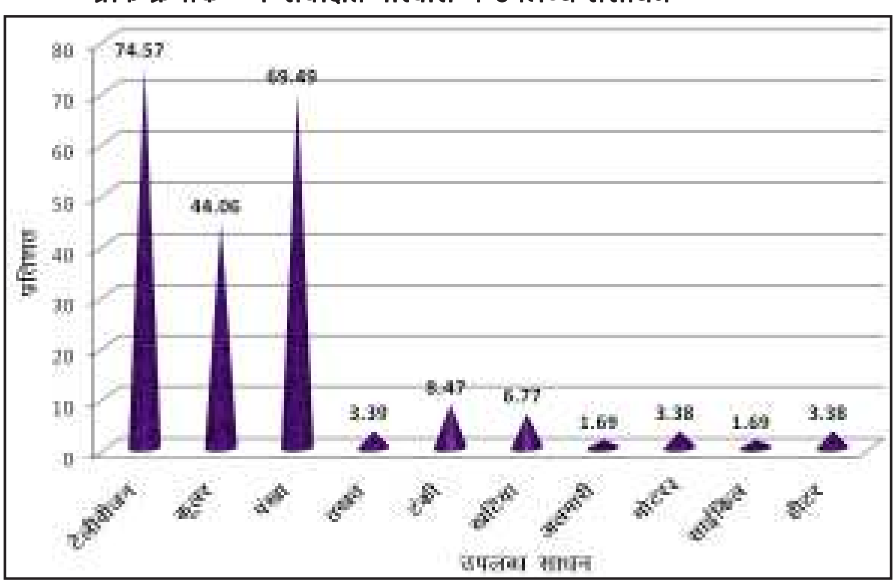

भारत के चिकित्सा क्षेत्र में नारी योगदान (प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान काल तक)

सुकचैन सिंह धुर्वे *

प्रस्तावना – प्राचीन एवं पौराणिक कथाओं में नारी को युद्ध, अशांति और झगड़ों की जड़ बताया जाता रहा है, फिर चाहे वह महाभारत की द्रोपदी हो या रामायण की सीता। जबकि देखा जाय तो नारी–माँ, पत्नी, बहन और बेटी प्रत्येक रूप में केवल प्यार व सद्‌भाव ही बाँटती है और स्वयं अनेक दर्द झेलती है। वहीं प्रत्येक परिवार में किसी सदस्य के रोगी होने पर उसके उपचार व चिकित्सा के लिये सेवा–सुश्रूषा कर अपनी अहम् भूमिका अदा करती है। समाज में माँ के रूप में नारी का योगदान अतुल व अमूल्य है। 'माँ ही बालक की प्रथम शिक्षिका है तथा माँ हजार शिक्षकों के बराबर होती है।' यह भी सत्य है कि 'माँ ही शिशु की प्रथम चिकित्सक है।' किसी भी व्यक्ति के जीवन का प्रारंभिक काल–गर्भावस्था, शैशवावस्था व बाल्यावस्था माँ के संरक्षण व देखरेख में ही व्यतीत होता है। जन्म के बाद शिशु कुछ समय तक बहुत असहाय स्थिति में रहता है। वह भोजन और अन्य आवश्यकताओं के लिये मुख्यत: अपने माता–पिता और विशेष रूप से अपनी माता पर निर्भर रहता है। शिशु के गर्भावस्था के दौरान उचित आहार, दिनचर्या एवं विविध उपचारों से माँ उसके स्वास्थ्य की रक्षा करती है। जन्म के पश्चात् स्तनपान, स्नान, मालिश, निद्रा, वस्त्र आदि से शिशु का स्वास्थ्य देखभाल करती है। नवजात शिशु के लिये आहार रूप में माँ का दूध अमृत होता है। यह दूध शिशु को अनेक रोगों से बचाती है।

मानव के उद्‌भव से ही माँ गर्भावस्था व शैशवावस्था में प्रथम चिकित्सक रही है और जो स्वस्थ बालक के निर्माण में अमूल्य योगदान करती है। किसी राष्ट्र के संदर्भ में स्वस्थ बालक ही स्वस्थ युवा बनकर एक स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण करता है। इसका आधार चिकित्सक व शिक्षक के रूप में नारी होती है।

उद्देश्य –

1. स्वस्थ राष्ट्र एवं नारी योगदान में सम्बन्ध का अध्ययन।
2. चिकित्सा क्षेत्र में नारी योगदान का अध्ययन।
3. शिक्षा पाठ्यक्रम में प्राथमिक चिकित्सक के रूप में नारी योगदान को उजागर करना।
4. परिवार के प्राथमिक चिकित्सक के रूप में नारी योगदान को विस्तृत व उन्नत करना।

भारत में चिकित्सा एवं नारी – भारत में चिकित्सा एवं नारी योगदान का अध्ययन इतिहास के विभिन्न कालों के अनुसार किया जा सकता है–

अ. प्रागै्तिहासिक काल– मनुष्य इस पृथ्वी पर कब और कैसे प्रकट हुआ? प्रारम्भ में उसकी जीवन प्रणाली कैसी थी और उसने सभ्यता के मार्ग पर कैसे प्रगति की आदि प्रश्न अत्यंत मनोरंजक किन्तु साथ ही साथ उलझे हुये हैं। आधुनिक मावन विज्ञान सम्बन्धी अनुसंधानों से सिद्ध होता है कि संसार के सभी देशों में मनुष्य ने अत्यंत आदिम एवं बर्बर अवस्था में अपना जीवन आरम्भ किया था। 'मानव जीवन के दो अभिशाप थे– पेट के भीतर की भूख और दूसरा रोग। रोग की पराकाष्ठा ही मृत्यु थी। भूख और रोग से मनुष्य ने युद्ध आरम्भ किया। इस संघर्ष में उसने प्रकृति के एक–एक वनस्पति का निरीक्षण किया। उसे विश्वास था कि समीप के प्राकृतिक वैभव में ही वह क्षमता निहित है जिसके द्वारा भूख और रोग से छुटकारा पाया जा सकता है।

भारत में पुरापाषाण युगीन अवशेषों के अनुसंधानों से विद्वानों का मत है कि इस आदि मानव को सर्दी, गर्मी, वर्षा, बिजली, तूफानों एवं बाढ़ों से सुरक्षा के लिये गुफाओं, नदियों की कगारों एवं वृक्षों की शाखाओं का सहारा लेना सीख लिया था। पेड़ों के पत्ते व छाल ही उसके एक मात्र वस्त्र थे। इस काल में मानव ने अग्नि का अविष्कार किया था। भोजन में कन्द–मूल फल आदि का भी प्रयोग करता था।

उत्तर पाषाण काल में पशुपालन, कृषि, वस्त्र बनाना आदि कार्यों के साथ–साथ वन, सूर्य व नदी आदि की पूजा करते थे। जिसका उद्देश्य प्राकृतिक प्रकोपों व रोगों से बचना था। शवों को दफनाने की क्रिया इसी काल में प्रारंभ हुई। इस तरह प्रागै्तिहासिक काल में चिकित्सा एक स्वतंत्र कार्य नहीं थी किन्तु सर्दी, गर्मी, वर्षा तूफानों आदि से बचने के लिये गुफाओं का शरण लेना, पत्ते व छाल आदि से शरीर ढ़कना, आग का प्रयोग, पर्यावरणीय रोगों से शारीरिक सुरक्षा तथा शव दफनाने का कार्य पर्यावरणीय स्वच्छता की ओर मानव के प्रारंभिक निरोधक चिकित्सीय कदम थे। आदिम काल में इन कार्यों को ही हम चिकित्सीय कार्य कह सकते हैं। संभवत: इस काल में स्त्री एवं पुरूष दोनों का चिकित्सीय कार्य में समान योगदान रहा होगा।

ब. सिन्धु सभ्यता काल (3300 ई.पू. से 1300 ई.पू.)– इस काल में भारतीय सभ्यता उच्च कोटि की थी। पुराविदों एवं हड़प्पा सभ्यता के अवशेषों के अनुसार– हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, चहुन्दड़ो, रोपड़, रंगपुर, लोथल व कालीबंगा आदि केन्द्रों में नगरों का योजनाबद्ध निर्माण, परिवहन हेतु बैलगाड़ी, धार्मिक कार्यों में पशुपति की शिव पूजा, वृक्षों में पीपल की पूजा, मातृ देवी की पूजा, कब्रिस्तान आदि के प्रमाण सिन्धु सभ्यता की भव्यता को परिलक्षित करते हैं। निश्चिततः इन सुनियोजित नगरों में लोगों का जीवन स्वस्थ व सुखी रहा होगा।

स्वास्थ्य सुरक्षा हेतु सिन्धु के लोग जिन औषधियों का प्रयोग करते थे यह कहना कठिन है। किन्तु काले रंग की एक वस्तु मिली है जो पानी में घोलने में गहरे बादामी रंग की हो जाती है। अनुमान है कि यह शिलाजीत है। शिलाजीत चट्टानों का स्त्राव है जो आज भी अजीर्ण और यकृत की बीमारियों के लिये काम आता है। हिरण तथा बारहसिंगे की सींग तथा पीली हरताल का भी प्रयोग होता था। सम्भवत: सिन्धुवासी नीम के औषधीय गुणों से परिचित थे।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, बरही, जिला-कटनी (म.प्र.) भारत

हड़प्पा संस्कृति में मृण्मयी मूर्तियों के अन्तर्गत मानव मूर्तियों में पुरूष प्रतिमाओं की अपेक्षा स्त्री मूर्तियों की अधिकता है। इनमें माँ-पुत्र की मूर्तियाँ विशेष रूप से सजीव प्रतीत होती है। इस सभ्यता में समाज में स्त्रियों का बड़ा सम्मान था उनका कर्तव्य शिशु पालन होता था। अत: हम यह कह सकते हैं कि सिन्धु सभ्यता काल में महिलाएँ परिवार व समाज में चिकित्सा कार्यों के अन्तर्गत निरोधक सेवाओं द्वारा शिशुओं व अन्य रोगियों का स्वास्थ्य देखभाल करती थी। प्रसव कालीन सेवाओं के लिये सम्भवत: दाईयों का योगदान लिया जाता रहा होगा।

स. वैदिक व पौराणिक काल (3000 ई.पू. से 1000 ई.पू.)- वैदिक कालीन चिकित्सा इतिहास वेदों, उपनिषदों आदि में समाहित है। रोगों के उपचार हेतु यज्ञ को केन्द्र बिन्दु माना गया। यह माना जाता है कि भारतीय हिन्दु चिकित्सा का मौलिक स्त्रोत् ऋग्वेद है जिसमें अनेक देवी देवताओं ऊषा, अग्नि, अदिति, पृथ्वी आदि से संबंधित आराधनाएँ व स्तुतियाँ मिलती हैं। उन्हीं देवी देवताओं से चिकित्सीय व सर्जिकल प्रवीण्यताएँ (skills) प्राप्त होती हैं। यज्ञ में अनेक ऋचाओं व मंत्रों का प्रयोग होता था। इस समय तक लोग रोगों के चिन्हों व लक्षणों से परिचित हो चुके थे तथा उनके उपचार हेतु औषधियाँ तथा अनेक सर्जिकल प्रक्रियाओं से अवगत हो चुके थे।

अथर्ववेद में अनेक प्रकार की बीमारियों के इलाज हेतु औषधियों के प्रयोग करने की चर्चा है। असुरमाया रूप या महाअसुरमयी नामक प्रथम महिला चिकित्सक की चर्चा मिलती है। जिसने कोढ़नाशक औषधि का अविष्कार किया। यह एक शूद्र स्त्री थी की जानकारी होती है। सम्भवत: इस काल में चिकित्सा की प्राकृतिक एवं आयुर्वेदिक प्रणाली प्रचलित थी। वैदिक युग में अनेक ऐसी स्त्रियों के नाम आते हैं जो मंत्र द्दष्टा होकर ऋषि पद पा चुकी थी। इनमें घोषा, लोपमुद्रा, विश्वतारा, गौतमी, पलोमी जैसी विदुषियों ने मंत्रों की रचना की हैं। उत्तरवैदिक काल में गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषी थी।

पौराणिक काल में आत्रेयी, अनुसुईया, अहिल्या, शबरी, ताड़का आदि नारियों ने चिकित्सीय ज्ञान को जीवित बनाये रखा। इस तरह वैदिक व पौराणिक काल में भारतीय नारियों ने चिकित्सीय ज्ञान को प्रगति प्रदान की है।

द. बौद्ध काल (563 ई.पू. से 477 ई.पू.)- बौद्ध काल में भारतीय चिकित्सा पद्धति को अधिक समर्थन व गति मिली थी। स्वयं बुद्ध ने अपनी बीमार शिष्यों की देख-रेख की थी। छठी ईसा पूर्व में जिवका को बुद्ध का व्यक्तिगत चिकित्सक माना गया। जिसने अनेक अवसरों पर मस्तिष्क की हड्डियों की सफलतापूर्वक सर्जरी की थी। महात्मा बुद्ध की मृत्यु के बाद उसके पुत्र राहुल के शिष्य सम्राट अशोक ने अपने पुत्र महेन्द्र के साथ पुत्री संघमित्रा को लंका भेजा था। संभवत: संघमित्रा को चिकित्सा का पर्याप्त ज्ञान रहा हो। अशोक की रानी तिष्यरक्षिता को चिकित्सा के क्षेत्र में काफी जानकारी थी। उसने बीमार अशोक की जान बचायी थी और पुरस्कार स्वरूप सात दिनों के लिये मौर्य साम्राज्ञी बनी थी।

वहीं संगमकाल के दौरान प्रसव के बाद दसवें दिन रात में नारियाँ शुद्ध होने के लिये सरोवर में जाकर स्नान करती थीं। उस समय प्रेत-पिशाच आदि के उपद्रव से मुक्त रखने के लिए दासियाँ नीम के पत्ते और श्वेत सरसों और धूप लगाती थी।

बौद्धकाल में बौद्ध विहार धार्मिक केन्द्रों के साथ चिकित्सा शिक्षा व चिकित्सा के धुरी बनते गये। इन केन्द्रों में बौद्ध भिक्षुणियों ने चिकित्सीय ज्ञान को अर्जित कर जीवंत रखा। भारतीय चिकित्सा पद्धति का स्वर्णकाल बुद्ध युग को माना जाता है। जब इसका बहुमुखी विकास हुआ। मुगल काल में आयुर्वेद पिछड़ गया। इस समय यूनानी और होम्योपैथी पद्धति को मुगलों ने 6 वीं से 13 वीं सदी तक प्रचार किया। 18वीं सदी में प्राकृतिक उपचार प्रचलित रहा। इस काल में भी महिलाओं द्वारा चिकित्सीय कार्य घरों तक ही सीमित रहा।

द. स्वतंत्रता के पूर्व का काल- भारत की स्वतंत्रता के पूर्व के काल में चिकित्सा प्रणालियों में प्रगति खास नहीं थी। 19वीं सदी में ब्रिटिश कालीन भारत में चिकित्सा प्रणाली या ऐलोपैथिक चिकित्सा को बढ़ावा दिया गया।

भारत में आधुनिक चिकित्सा का प्रारंभ 16वीं शताब्दी में अलबुकर्क द्वारा गोवा में अस्पताल की स्थापना के साथ किया गया। 1703 में ईसाईयों द्वारा यहाँ चिकित्सा के क्षेत्र में आरंभिक प्रशिक्षण प्रारंभ कराया गया। सन् 1859 में अंग्रेजी शासन द्वारा सर्वप्रथम एक रायल कमीशन की स्थापना सेना की स्वास्थ्य समस्याओं का अध्ययन व समाधान हेतु सुझाव के लिये करके भारतीय जन-स्वास्थ्य सेवाओं का श्रीगणेश किया गया। 1864 में बम्बई, मद्रास एवं बंगाल प्रान्तों में स्वास्थ्य कमिश्नरों की नियुक्ति की गई। 1869 में उत्तर-पश्चिमी प्रांत, अवध, पंजाब व सेन्ट्रल प्रान्तों में स्वास्थ्य कमिश्नरों की नियुक्ति गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया के द्वारा की गई।

इस काल में कुछ भारतीय महिलाओं के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं जो कि भारत में आधुनिक चिकित्सा के लिये परम्परा से हटकर प्रयास किया। इनमें 1883 में चन्द्रमुखी बसु और कादम्बनी गांगुली ब्रिटिश साम्राज्य और भारत में चिकित्सा क्षेत्र में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने वाली पहली महिलाएँ बनी। कादम्बनी गांगुली पहली दक्षिण एशियाई महिला चिकित्सक थी। इसी तरह 1886 में सं.राज्य अमेरिका से चिकित्सा में स्नातक उपाधि कर दूसरी भारतीय महिला होने का गौरव आनंदी गोपाल जोशी को प्राप्त है। कादम्बनी गांगुली व आनंदी गोपाल जोशी पश्चिमी दवाओं में प्रशिक्षित होने वाली भारत की पहली महिलाएँ थी। इन महिलाओं के अतिरिक्त अमेरिकन महिला Dr. Sophia Scudder ने सन् 1900 में 40 शैय्या वाला क्रिश्चियन मेडीकल कालेज एवं हास्पिटल की स्थापना वेल्लोर (तमिलनाडु) में की। 1903 में यहाँ महिला कम्पाउण्डर नर्सिंग ट्रेनिंग स्कूल स्थापित कर नर्सो के प्रशिक्षण कार्यक्रम की शुरूआत की गई। 1918 में महिला चिकित्सकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम की शुरूआत कर 1942 में इसे क्रिश्चियन मेडीकल कालेज के रूप में स्थापित करने में इनकी विशेष भूमिका रही। इसी तरह दूसरी विदेशी महिला Dame Edith Mary Brown ने क्रिश्चियन मेडीकल कालेज लुधियाना की संस्थापक थी, जो एशिया में सर्वप्रथम महिलाओं के लिये मेडिकल ट्रेनिंग सुविधा प्रदान करती थी।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम के अंतर्गत गठित भोर कमेटी 1943 की रिपोर्ट के अनुसार स्वतंत्रता के पूर्व तक भारत में कुल 70-80 महिला चिकित्सा अधिकारी थी जो प्रसव व शिशु सुरक्षा के लिये कार्य करती थी। गुरूबाई कर्मारकर पेन्सलवानिया के महिला चिकित्सा महाविद्यालय से चिकित्सा में स्नातक उपाधि प्राप्त करने वाली दूसरी भारतीय महिला थी।

फ. स्वतंत्रोत्तर काल (वर्तमान काल)- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात आधुनिक चिकित्सा क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ती गई। भोर कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार देश में महिला चिकित्सकों के साथ-साथ नर्स, मिडवाइफ, महिला कम्पाउन्डर, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता, महिला स्वास्थ्य सहायक, प्रशिक्षित दाईयों के रूप में महिलाओं ने प्राथमिक, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों व अन्य अस्पतालों में चिकित्सीय कार्य में सहयोग प्रदान किया है।

भारत की महिलाएँ जो देश की स्वतंत्रता पश्चात् चिकित्सा क्षेत्र में अपना अमूल्य योगदान दिया है उनमें प्रमुख हैं-

1. **डॉ. मथुलक्ष्मी रेड्डी–** पद्म भूषण से सम्मानित डॉ. रेड्डी प्रसिद्ध पेशेवर चिकित्सक एवं समाज सुधारक महिला थी।

2. **बानू जहाँगीर कोया जी–** यह भारतीय चिकित्सा वैज्ञानिक थी, इन्होंने परिवार नियोजन, बाल स्वास्थ्य एवं जनसंख्या नियंत्रण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन्होंने समुदाय के स्वास्थ्य कर्मियों के माध्यम से महाराष्ट्र के देही इलाकों के लिये कई कार्यक्रम प्रारंभ किये। वह केन्द्र सरकार की स्वास्थ्य सलाहकार थी। उन्हें 1989 में पद्मभूषण तथा 1993 में रेमन मैगसेसे पुरूषकार से नवाजा गया।

3. **Ketayun Ardeshir Dinshow –** डॉ. दिनशा ने केन्सर के इलाज हेतु महत्वपूर्ण कार्य किया और प्रभावशाली रेडियेशन थैरेपी को विकसित किया। 2001 में इन्हें पद्म श्री पुरूस्कार से नवाजा गया।

इसके अतिरिक्त डॉ. अल्का बेओत्रा, डॉ. प्रेमा मुखर्जी, डॉ. शैल बालकृष्णन, इंदिरा हिन्दुजा, डॉ. वन्दना जैन, डॉ. जेरूसा जिराद, डॉ. फारिया पावेल, सुनेजा गुप्ता, अर्चना शर्मा, शिवारामकृष्ण अय्यर पद्मावती, आसमा रहीम, शशि बाधवा आदि महिला चिकित्सकों का देश के चिकित्सा के क्षेत्र में योगदान है। चिकित्सा उपचार के सफल संचालन के लिये चिकित्सकों के साथ नर्सिंग कर्मियों की भी अहम् भूमिका होती है। इनके बिना चिकित्सा सेवा मृत प्राय हो जाता है।

सन् 1951 में नर्सों की कुल संख्या 16,550 तथा सन् 1987 में 2,19,300 पंजीकृत नर्स थे। ए.एन.एम. की संख्या 8,000 थी जो 1997 में बढ़कर क्रमश: 5,65,696 तथा 283168 थी। 1992 में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में 21,724 स्वास्थ्य सहायक (महिला), 1,22,469 स्वास्थ्य कार्यकर्ता (महिला), 6,00,126 प्रशिक्षित दाई तथा 1,12,932 अप्रशिक्षित दाई चिकित्सा सेवा में संलग्न थे।

ब्रिटिश मेडीकल जर्नल यलेन्सेट के अनुसार 05 दन्त चिकित्सकों में 01 महिला चिकित्सक, 10 फार्मासिस्ट्स में 01 महिला फार्मासिस्ट, भारत में कार्यरत हैं। देश में 80 प्रतिशत नर्स और 85 प्रतिशत मिडवाइफ महिलाएँ हैं। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक उपचार एवं स्वास्थ्य कार्यकर्ता के रूप में आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, सहायिका एवं आशा कार्यकर्ता महिलाएँ होती हैं। मार्च 2015 की स्थिति में 12,87,851 आँगनवाड़ी कार्यकर्ता, 1,16,45,41 सहायिका तथा 9,07,918 आशा कार्यकर्ता स्वास्थ्य एवं उपचार क्षेत्र में अपना योगदान दे रही हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि आदिकाल से वर्तमान काल तक नारियाँ अप्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप से माँ, गृहणी, दाई, दादी माँ, नर्स, चिकित्सक वैज्ञानिक, आषा कार्यकर्ता आदि के रूप में चिकित्सा सेवा क्षेत्र में अपना योगदान स्थापित कर रही हैं।

निष्कर्ष– स्वस्थ माँ–स्वस्थ्य शिशु, स्वस्थ्य युवा– स्वस्थ्य परिवार, तथा स्वस्थ्य समाज, स्वस्थ्य राष्ट्र इस बात पर निर्भर करता है कि माँ, शिशु, युवा, परिवार, समाज व राष्ट्र के स्वास्थ्य व चिकित्सा क्षेत्र में महिलाओं के योगदान का प्रतिशत कम है या अधिक। शिक्षित और विकसित राष्ट्र के लिये आवश्यक है स्वस्थ्य राष्ट्र। स्वस्थ्य राष्ट्र के लिए आवश्यक है चिकित्सा क्षेत्र में घर से चिकित्सा केन्द्रों तक नारियों की भागीदारी अधिक हो। प्राचीन काल में महिलाओं का योगदान सामाजिक परम्पराओं के कारण सीमित और हाशिये पर थी। किन्तु सामाजिक परिवर्तन के साथ ही आज उनकी भूमिका स्वस्थ्य समाज के लिये अनिवार्य हो गई। अत: यह अपेक्षित है कि माध्यमिक या उच्चतर माध्यमिक शिक्षा में प्राथमिक उपचार व चिकित्सा के साथ स्वास्थ्य शिक्षा व्यवहारिक रूप में शामिल हो, जिससे समाज का हर व्यक्ति स्वस्थ व शिक्षित हो सके तथा महिलाएँ चिकित्सा के प्राथमिक कदम सीखकर शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा कर स्वस्थ्य भारत का निर्माण कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंघई, जी.सी., चिकित्सा भूगोल वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
2. डॉ. राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन–I राजपाल एण्ड संस दिल्ली।
3. आर्य सत्यदेव, स्वास्थ्य विज्ञान, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
4. दुबे सत्यनारायण, भारत का इतिहास, शिवलाल एण्ड कम्पनी।
5. प्राचीन भारत का इतिहास, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
6. खत्री, हरीश कुमार, स्वास्थ्य भूगोल, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल।
7. प्रसाद ओमप्रकाश व गौतम, प्रशान्त ई बुक– प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. मैसी मीनाक्षी, ए हैण्ड बुक ऑफ ए.एन.एम. बर्धन पब्लिशर्स एण्ड डिस्टीब्यूटर्स जयपुर।
9. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, भारतीय समाज व संस्कृति, विवेक प्रकाशन, जवाहरगंज दिल्ली, संस्करण 2001।
10. www.google.in.woman docters in india.
11. www.times of india.indiatimes.com-16.jan.2011
12. www.wcd.nic.in

****

वर्तमान परिपेक्ष्य में वृद्धजनो की स्थिति एवं समस्याऍं

डॉ. एस. एस. बघेल * दीप्ति यादव **

प्रस्तावना – जहॉं बोला जाता है शुभ कार्यो में बडे का आशीर्वाद जरूरी होता है। उनका आशीर्वाद किसी भी काम को करने के लिए जरूरी है तो क्यों उन्हें वृद्धावस्था में सम्मान नहीं दिया जा रहा है।

'युवा पीढी द्धारा उन्हें क्यों वृद्धावस्था में आश्रम में रहने के लिए मजबूर किया जा रहा है ?'

भारतीय संस्कृति में बडों का सम्मान एवं उनका आदर सर्वोपरी माना जा है। लेकिन वर्तमान परिपेक्ष्य में व्यक्ति अपने अंहकार में बड़ों के सम्मान को भूलता जा रहा है। हम जब भी संस्कृति की अनेको विशेषताओं का उल्लेख करते है, तो एक विशेषता आवश्यक रूप रूप से हम सभी का ध्यान अपनी और आकृष्ट करती है **– अपने से बड़ों का सम्मान ।**

विशेषकर हिन्दू धर्म अपने से बड़ों के सम्मान को जीवनचर्या का एक अभिन्न अंग मानता है भारतीय संस्कृति की इस विशेषता का साक्षात् दर्शन करने वाले विदेशी एवं गैर हिन्दू लोग भी आश्चर्य मिश्रित सुखद अनुभूति का अनुभव करते है। हमारी संस्कृति हमसे कहती है कि संस्कृति यह पाठ हमें अपने माता–पिता, दादा–दादी, ताऊ–ताई, चाचा–चाची, बडे भाई–बहन और अन्य प्राथमिक नातेदारो से सीखने को मिलता है। ऐसे सभी नातेदार हमारी प्राथमिक पाठशाला होते है, जो हमे समाज में रहने सम्बंधी नियम सिखाते है अर्थात् हमारा समाजीकरण करके हमे जीने योग्य बनाते है अपने इन बड़ों की छत्रछाया में हम एक ऐसा रक्षाकवच मिलता है जो हमें सामाजिक, आर्थिक,सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक सुरक्षा प्रदान करता है चूँकि ये बड़े हमें समाज में रहने योग्य बनाते है इसलिए हमारा भी दायित्व बनता है कि अपने और उनके जीते जी हम उनकी सेवा करें, उन्हें किसी भी प्रकार का सामाजिक , आर्थिक, मानसिक और शारीरिक कष्ट न होने दें। जब वे जीवन को त्यागे तो उनके चेहरे पर हमारे लिये आशीर्वाद के भाव हो, फिर चाहे वे हमारे माता–पिता व अन्य नातेदार हो, परिचित हो, पडोसी या फिर गुरू। किन्तु वर्तमान समय में क्या हो रहा है हम अपने नातेदारो, पडोसी, परिचितो एवं गुरूजनो की सेवा की बात को छोडिये, हम अपने माता–पिता के साथ क्या कर रहे है ? जब तक हम अपने पैरों पर खड़े नहीं हो जाते, अपने माता–पिता को अपना भगवान मानते है। माता–पिता भी हमें अपनी वृद्धावस्था की लाठी समझकर अपना सारा सुख चैन और सारी जमापूँजी हम पर खर्च कर डालते है किन्तु जब हम युवा होकर कुछ बन जाते है और हमारे माता–पिता वृद्ध होकर लाचार और असहाय हो जाते है, जब हम क्या करते है? विवाह करके पति–पत्नी के साथ एक अच्छे से शहर में जाकर बस जाते है माता–पिता को छोड देते है। वृद्धावस्था के ऐसे कष्टदायी जीवन में जिसमें है बीमारी निर्धनता, मानसिक तनाव, सामाजिक तिरस्कार और ऑखो में आसू।

विगत वर्षो में जब म.प्र के धार जिले में जनांनिकी संरचना का अध्ययन किया तो यह पाया गया है कि बुजुर्ग पुरूषों की अपेक्षा बुजुर्ग महिलाओं की संख्या अधिक है।

विश्व का ऐसा भी कोई समाज न होगा, जहॉं वृद्ध न रहते हो वृद्धावस्था जहॉं समस्या न बन चुकी हो किन्तु जब किसी समाज में वृद्धो की संख्या अत्यधिक बढ़ने लगे और वृद्धावस्था एक श्राप बन जाये तब वृद्धजनों की समस्या का नितान्त आवश्यक है। विगत वर्षो में भारत में जनांनिकी संरचना में भारी परिवर्तन आया है

यूनाइटेट नेशनल ग्लोबल एक्शन और एजिंग में भारत में वृद्धों की संख्या 4.4 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है जबकि विश्व में औसत 2.6 प्रतिशत का है भारत में लोगो की औसत आयु 100 वर्ष पूर्व 25 वर्ष थी जो अब बढकर 65 वर्ष हो गई है तथा मृत्यु दर प्रति हजार में 25 से घटकर 8 रह गई है फलस्वरूप प्रत्येक 12 भारतीयों के पीछे एक वृद्ध है वृद्धों की जनसंख्या के संदर्भ में भारत आज विश्व का दूसरा सबसे बडा देश हो गया है।

भारत में वृद्धों की समस्याऍं – भारत में कभी वृद्धावस्था को अनुभव की पूॅंजी माना जाता था समाज में वृद्धाजनों का मान सम्मान था उनकी बात में वजन होता था और उनकी बात को सुना जाता था वजन आज भी है किन्तु युवा पीढी वृद्धजनों को बोझ और उनकी बात को बकवास समझती है परिवार और समाज में उन्हें उपेक्षा और दुष्कार मिलती है जो माता–पिता अपने बच्चों के लिए समय व धन खर्च करते है वे ही बच्चें बडे होकर उनसे छुटकारा पाना चाहते है वह अपने माता–पिता को निर्धनता, अकेलेपन तथा विभिन्न रोग वृद्धावस्था को नारकीय बना रहे है उनका जीवन की अषक्त और लाचार संध्या सिसक रही है जिन्होंने घर परिवार की स्मृतिके लिये अपना खून पसीना एक कर दिया, सुख–दुख की चिन्ता नहीं की उन्हीं के लिये परिवार में कोई स्थान नहीं है उनसे छुटकारा पाने के लिए वृद्धाश्रम के द्धारा खटखटाये जाते है इससे बडी बिडम्बना और क्या हो सकती है कि वृद्धजनों के प्रति न ता परिजन संवेदनशील है और न ही समाज सरकार और व्यवस्था।

जब वृद्धावस्था की समस्या के विषय में धार जिले के धार शहर में एक वृद्धाश्रम का अध्ययन किया गया तो पाया कि जनवरी 2015 में ही एक पुत्र द्धारा वृद्ध माता को उस वृद्धाश्रम में छोड दिया गया। कारण जानने कि कोशिश की गई तो पाया कि पुत्र के विवाह के बात पुत्र की पत्नी को उनका व्यवहार, अच्छा नहीं लगता था । जब उस वृद्ध मॉ के द्धारा पुत्र से पुछा गया कि मुझे वृद्धाश्रम क्यो छोड़ रहे हो तो पुत्र के द्धारा बोला गया कि अब मुझे सुख से रहने दो अब मैं दुखी नही रहना चाहता ।

ये है आज की युवा पीढी जो मॉ अपने पुत्र को 9 माह अपनी कोख में रखती है वो पुत्र अपने जीवन का दुख बोल रहा है

सुझाव – हमें यह समझना होगा कि वृद्धजनों के पास अनुभव की अपार धन

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

होता है किन्तु हमने उन्हें अनुपयोगी समझकर सामाजिक पूँजी से पृथक कर दिया है ध्यान रहे कि जो राष्ट्र अपने वरिष्ठ नागरिकों को सम्मान करता है वह सुनहरे भविष्य के लिए सामाजिक पूँजी का निवेश करता है यदि हम भविष्य सुधारना चाहते है तो हमें वरिष्ठ नागरिको के प्रति संवेदनशील बनना होगा।

1. भारत के लोग अपने बच्चों का भविष्य पर तो ध्यान दें, किन्तु इतनी पूँजी और सामार्थ्य बचा कर रखे कि वृद्धावस्था में अपना भरण पोषण स्वयं कर सके।
2. हमारे युवाओं को यह भी स्मरण करना होगा कि हमारे माता–पिता का विश्वास हमारे साथ ठीक उसी प्रकार से जुडा हुआ है जिस प्रकार से हमारा विश्वास हमारे बच्चों से जुड़ा हुआ है।
3. देश के पर्याप्त मात्रा में वृद्धाश्रम खोले जाने की आवश्यकता है ताकि उपेक्षित वृद्ध ससम्मान अपना जीवन इन वृद्धाश्रमों में व्यतीत कर सके।
4. यदि कोई संतान अपने माता–पिता पर अत्याचार करती है तो ऐसे माता–पिता को मेटीनेस एवं वेलफेयर ऑफ पेरट्स एवं सीनियर सिटीजेस विधेयक 2007 का प्रयोग करते हुए अपनी संतान पर कड़ी कार्यवाही करनी चाहिये जब संतान स्वार्थी है तो माता–पिता का निस्वार्थ भाव किस काम का।
5. सम्पूर्ण जीवन माता–पिता की सेवा करने वाले बच्चों को गैर सरकारी संगठनों की सहायता से सरकार सम्मानित करने की योजना बनाकर युवाओं को वृद्धजनों की सेवा की ओर प्रोत्साहित कर सकती है सेवारत लोगो की प्रमोशन को माता–पिता या फिर समाज के अन्य आश्रित वृद्धजनों की सेवा से जोड दिया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. डी.एस. बघेल,2013 कैलाश पुस्तक, भोपाल।
2. डॉ. जी.आर. मदन 2012,विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली।
3. अग्रवाल, बीना, 1994, अ पिफल्ड ऑफ वन्स आनः जेंडर एंड लैंड राइट्स इन साउथ एशिया, वैफम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली।
4. ब्रेमन, जान, 1974, पेट्रोनेज एंड एक्सप्लॉयटेशन चेजिंग अग्रेरियन रिलेशन्स इन साउथ गुजरात, यूनिवर्सिटी ऑफ वैफलिपफॉरनिया प्रेस, बर्वफले।

****

The Case Study Of A Gifted Child With Superior Intellectual Ability (Aged 4 Years 10 Months)

Dr. Smita Jain *

Introduction - Name: XYZ **Date of Birth**: 15.7.2009 **Chronological Age:** 4 years, 10 months **Date of Evaluation:** 6.6.2014

Chief characteristics of the boy - The parents reported that their son is the elder of two siblings and his developmental milestones have been reported to be age appropriate, however, his mental ability seemed to be very superior and the child was a very voracious reader and a very inquisitive child. By nature he appeared friendly to all and very amicable.

Reason for referral - The parents of the boy wanted to find out his intellectual ability so that they could plan his education and put him in an appropriate school right form the very beginning.

General observation - The child appeared very comfortable, warm and was very eager to talk. In a one-to-one environment, he was neither nervous nor stressed.

Psychological Test administered - Wechsler Preschool and Primary Scale of Intelligence, Fourth Edition (WPPSI-IV).

The WPPSI-IV is a recently revised (2012), nationally standardized assessment measure of intelligence for children ages 2 through 7. The WPPSI-IV provides an estimate of overall cognitive ability (Full Scale I.Q.) in addition to five other composite scores. The five composites assessed by the WPPSI-IV are:

(1) Verbal Comprehension - a child's ability to use language in reasoning, as well as a measure of the child's fund of knowledge acquired from his/her environment

(2) Visual Spatial - a child's use of visual and spatial infonnation to solve problems

(3) Fluid Reasoning - a child's ability to think logically and solve novel problems

(4) Working Memory - a child's ability to actively hold visual and visual/spatial information in short-term memory

(5) Processing Speed - the rate at which a child is able to scan, perceive, understand, and act upon visual information

As an example, a student was administered the six core subtests used to determine the Verbal Comprehension Composite and Full Scale I.Q., as well as four additional subtests, appropriate for chil-dren between the ages of 4 and 7:7 years. The additional subtests were administered so as to derive the Visual Spa-tial, Fluid Reasoning, Working Memory, and Processing Speed Composite scores. A child's scores are derived by comparison against a cohort of same-aged peers.

The student's WPPSI-IV Full Scale I.Q. and his five composite scores are reported below. These scores are based upon a mean (Average) score of 100, with a standard deviation of 15. Percentile ranks are based upon an average of 50. Standard scores between 90 and 109 (25-75%) are considered in the Average range. The confidence intervals below are reported at the 95% level of confidence (the interval within which there are 95 chances in 100 that a child's "true" score would fall, given the same testing conditions). While the confidence intervals speak to the reliability of the instrument, it should be noted that scores obtained on young children are less stable and more likely to change than those obtained on older children.

The child's Standard Scores, which show the current pattern of his strengths and weaknesses across individual indexes, are also listed below. Strengths and weaknesses were computed utilizing the mean of all five index scores. Strengths are indicated by "S" and weaknesses are in-dicated by "W". A Standard Score of 100 represents the strict average or 50th percentile. Subtests that are supplemental to the core and that do not contribute to the overall Full Scale I.Q. are noted in parentheses. These subtests were administered as a means of providing additional in- information and are in support of the core subtests. Specifically, the Object Assembly, Picture Concepts, Zoo Locations, & Cancellation tasks were administered so that the Visual-Spatial, Fluid Reasoning, Working Memory, and Processing Speed Composites could be calculated.

(see table in next page)

This child obtained a Full Scale I.Q. of 131, placing him in the Very the 98th percentile of his age group. His verbal comprehension skills fell in the Very Superior range while his working memory and fluid reasoning skills fell in the Superior range. His visual spatial and processing skills fell in the High Average range.

The Verbal Comprehension Index assesses a child's ability to use language in reasoning, as well as his/her fund of knowledge acquired from the environment. The child scored

* Professor & Head (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

in the Very Superior range (99th percentile) on the Verbal Comprehension Index. This index is made up of two subtests: Similarities and Information. When asked to describe how two items were con-ceptually alike or categorically related (Similarities), the student easily provided full clear and complete answers on the earlier items, and appeared to carefully contemplate his answers as the questions became more challenging. He/she efficiently demonstrated his knowledge of general information on the Information subtest. He/she performed in the Superior range (98th percentile) on both subtests.

The Visual Spatial Index assesses a child's use of visual and spatial information to solve unfamiliar problems. The child scored in the High Average range (88th percentile) on the Visual Spatial Index. This index is made up of two subtests: Block Design and Object Assembly. The Block Design subtest measures a child's ability to replicate spatial patterns using blocks while the Object Assembly subtest requires the child to assemble pieces into an articulated design. He/she performed in the High Average range (84th percentile) on the Block Design and Object assembly subtests.

The Fluid Reasoning Index is a measure of inductive reasoning, broad visual intelligence, simultaneous processing, conceptual thinking, and classification ability. The child scored in the Superior range (95th percentile) on the Fluid Reasoning Index. This index is made up of two subtests: Matrix Reasoning and Picture Concepts. The Matrix Reasoning subtest requires the child to complete visual patterns by inducing relationships among their parts. The Picture Con-cept subtest measures the child's ability to recognize conceptual similarities among pictured items. The student scored in the High Average (91st percentile) on both subtests.

The Working Memory Index assesses a child's visual and visual/spatial memory. The student scored in the Superior range (95th percentile) on the Working Memory Index. This index is made up of two subtests: Picture Memory and Zoo Locations. Picture Memory measures the child's ability to remember target pictures and identify them amongst an array of pictured objects. The Zoo Locations subtest requires the child to remember spatial locations of pictures. The child performed in the Superior range (95th percentile) on Picture Memory and in the High Average range (84th percentile) on Zoo Locations.

The Processing Speed Index assesses the rate at which a child is able to scan, perceive, understand, and act upon visual information. The child scored in the High Average range (84th percentile) on the Processing Speed Index. This index is made up of two subtests: Bug Search and Cancellation. Bug Search measures the child's ability to mark a target picture within an array of pictures within a time limit. Cancellation measures a child's ability to mark pictures of a shared category within a time limit. The child scored in the High Average range (84th percentile) on Bug Search and in the Average range (75th percentile) on Cancellation.

Summary - The child presented himself as a friendly and respectful young boy. He maintained a smile throughout testing and worked to the best of his ability on each of the cognitive challenges presented during the current evaluation. He appeared comfortable and he exhibited good attention/ concentration. His results indicate overall intellectual ability in the Very Superior Range.

Full Scale I.Q. and Primary Index Scale/Subtests (with Corresponding Additional Subtests):

	Standard Score *	Scaled Score**	Confidence Interval	Percentile	Description
Full Scale I.Q.	131		124-135	98	Very Superior
Verbal Comprehension	135 S		126-140	99	Very Superior
Information		16		98	Superior
Similarities		16		98	Superior
Visual Spatial	118		107-125	88	High Average
Block Design		13		84	High Average
Object Assembly		13		84	High Average
Fluid Reasoning	124		115-130	95	Superior
Matrix Reasoning		14		91	High Average
Picture Concepts		14		91	High Average
Working Memory	124		114-130	95	Superior
Picture Memory		15		95	Superior
Zoo Locations		13		84	High Average
Processing Speed	115		124-135	84	High Average
Bug Search		13		84	High Average
Cancellation		12		75	Average

***Standard Scores between 90-109 are within the Average range.**

**Scaled Scores between 8-12 are within the Average range.

पर्यावरणीय एवं शैक्षिक अभिवृत्तियों पर लिंग का प्रभाव

कमलेश उपाध्याय *

शोध सारांश - डॉ.डी.एन.श्रीवास्तव एवं **कुमारी शशिप्रभा दुबे, जबलपुर** द्वारा निर्मित पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी तथा **डॉ.सी.भसीन, जबलपुर** द्वारा निर्मित शैक्षिक अभिवृत्ति मापनी का उपयोग प्रदत्त संकलन हेतु किया गया। अध्ययन का उद्देश्य कक्षा 12वीं में अध्ययनरत अंग्रेजी माध्यम के छात्रों तथा छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति तथा शैक्षिक अभिवृत्तियों के स्तर का मापन करना था। इस हेतु 2X2 कारक अभिकल्प का उपयोग करते हुए दोनों मापनियों का प्रशासन 40 प्रयोज्यों 20 छात्रों तथा 20 छात्राओं पर यादृच्छिक प्रतिदर्श विधि का उपयोग करते हुए किया गया।अध्ययन के परिणाम दर्शाते हैं कि - **1.** छात्राओं की दोनों अभिवृत्तियां छात्रों की तुलना में अधिक सकारात्मक पाई गई है। **2.** पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति के स्तर में .01 विश्वास के स्तर पर सार्थक अंतर पाया गया। **3.** अध्ययन में सम्मिलित चर लिंग की अंत:क्रिया का सार्थक प्रभाव पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति पर.01 विश्वास के स्तर पर पाया गया। **4.** अध्ययन में सम्मिलित समूहों में छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति सर्वाधिक तथा छात्रों की शैक्षिक अभिवृत्ति न्यूनतम पाई गई। **5.** पर्यावरण अभिवृत्ति का सर्वाधिक अनुकूल स्तर **90%** तथा उच्च धनात्मक शैक्षिक अभिवृत्ति का प्रतिशत सर्वाधिक **75%** पाया गया। **6.** छात्रों तथा छात्राओं की पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति में धनात्मक श्रेणी का नगण्य सहसंबंध पाया गया।

प्रस्तावना - साधारण शब्दों में अभिवृत्ति से हमारा तात्पर्य व्यक्ति के उस दृष्टिकोण से है जो किसी व्यक्ति वस्तु संस्था अथवा स्थिति के प्रति किसी विशेष प्रकार के व्यवहार को इंगित करता है। अन्य शब्दों में अभिवृत्तियां उन व्यक्तित्व प्रवृत्तियों की ओर संकेत करती हैं जिनके द्वारा किसी निश्चित वस्तु व्यक्ति या स्थिति के प्रति व्यक्ति व्यवहार का निर्णय लिया जाता है। रेमर्स, रूमेल एवं गेज के शब्दों में 'अभिवृत्ति अनुभवों के द्वारा व्यवस्थित वह संवेगात्मक प्रवृत्ति है जो किसी मनोवैज्ञानिक पदार्थ या वस्तु के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रतिक्रिया करती है।[1]

हमारे आसपास की वे सभी एवं भिन्न-भिन्न अवस्थाएं जो हमारे आयुमान और जीवनयापन को प्रभावित करती हैं और हमारे शारीरिक एवं मानसिक विकास पर प्रभाव डालती है, हमारा वातावरण बनाती हैं।[2] बेल, फ्रेजर तथा लूमिस के अनुसार 'पर्यावरणीय मनोविज्ञान व्यवहार तथा निर्मित एवं स्वाभाविक पर्यावरण के अंतरसंबंद्ध का अध्ययन करने वाला विज्ञान है।' क्रमबद्धता - इस उपागम या दृष्टिकोण में व्यवहार पर्यावरण संबंध को एक ऐसी इकाई के रूप में समझा जाता है जिसमें पारस्परिक प्रभाव होता है अर्थात जिसमें व्यवहार पर्यावरण को प्रभावित करता है तथा पर्यावरण व्यवहार को प्रभावित करता है। समस्या उन्मुखता- इस दृष्टिकोण से पर्यावरणीय विचार वस्तु तथा महत्वपूर्ण पर्यावरणीय विचार वस्तु या समस्या का समाधान को युक्तिसंगत कार्य माना जाता है। सामाजिक मनोवैज्ञानिक संदर्भ- इस संदर्भ में इस बात पर बल डाला जाता है कि किस तरह से सामाजिक संबंध तथा सामाजिक अंत:क्रिया आपस में भौतिक पर्यावरण से संबंधित होते हैं।[3]

Methodology -

Objective -अध्ययन का उद्देश्य निम्नलिखित समस्याओं का अध्ययन करना है:-

1. लिंग पर पर्यावरण अभिवृत्ति के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. लिंग पर शैक्षिक अभिवृत्ति के प्रभाव अध्ययन करना।
3. लिंग पर पर्यावरण अभिवृत्ति एवं शैक्षिक अभिवृत्ति की अंत:क्रिया के प्रभाव का अध्ययन करना।

Hypothesis - उपरोक्त समस्याओं के अध्ययन हेतु यह परिकल्पना की जाती है कि निम्नांकित समूहों के पर्यावरण और शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी मध्यमान प्राप्तांकों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

अ. लिंग -छात्र और छात्राएं

इ. अभिवृत्ति के प्रकार - पर्यावरण व शैक्षिक अभिवृत्ति

उ. छात्रों एवं छात्राओं की गृह पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी अंत:क्रियाओं के मध्यमानों के मध्य।

Sampling - वर्तमान अध्ययन का प्रतिदर्श मप्र के नीमच जिले से लिया गया है। इस अध्ययन में प्रदत्त संकलन के लिए कक्षा 12वीं के अंग्रेजी माध्यम के 10 छात्रों तथा 10 छात्राओं को पर्यावरण अभिवृत्ति के प्रयोज्यों के रूप में लिया गया और शैक्षिक अभिवृत्ति के 10 छात्रों व 10 छात्राओं को प्रयोज्यों के रूप में लिया गया। इस प्रकार यादृच्छिक रीति से कुल 40 प्रयोज्यों पर प्रदत्तों का संग्रहण किया गया। जिनकी आयु सीमा 15 से 17 वर्ष के मध्य थी।

Tool Used - डॉ.सी.भसीन जबलपुर के द्वारा निर्मित शैक्षिक अभिवृत्ति मापनी का उपयोग प्रयोज्यों की अभिवृत्ति के स्तर का मापन करने हेतु किया गया है। मापनी में कुल 40 कथन सम्मिलित हैं जिनमें 20 सकारात्मक तथा 20 नकारात्मक कथन हैं। प्रयोज्य को अपना प्रत्युत्तर सहमत, अहसमत दो श्रेणियों में देना होता है। सकारात्मक कथन हेतु सहमत के लिए 1 अंक और असहमत के लिए 0 अंक दिया जाता है जबकि नकारात्मक कथन के लिए अहसमत पर 1 अंक तथा सहमत के लिए 0 अंक दिया जाता है। मापनी में छात्रों तथा छात्राओं के लिए पृथक-पृथक Z-Score,T-score मानक दिये

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

गये हैं। प्रयोजयों के लिए Row Score से भी प्रयोज्यो की शैक्षिक अभिवृत्ति का श्रेणीवार विश्लेषण करने हेतु तालिका दी गई है। मापनी का फलांकन स्कोरिंग की कि सहायता से भी किया जा सकता हैं मापनी का मानकीकरण 950 छात्र–छात्राओं पर किया गया, जिनमें से 550 छात्र तथा 400 छात्राएं थी, जिनकी आयु सीमा 13 से 21 वर्ष थी। मापनी की विश्वसनीयता अर्द्धविच्छेद विधि से .72 और परीक्षण पुनर्परीक्षण (छह माह के अंतराल से) विधि से .69 पाई गई है। परीक्षण की वैधता .86 पाई गई।

डॉ.डी.एन. श्रीवास्तव एवं कुमारी शशिप्रभा दुबे द्वारा निर्मित पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी का उपयोग प्रस्तुत शोध कार्य हेतु किया गया। मापनी में कुल 40 पद हैं जिनमें प्रयोज्यों को सहमत, अनिश्चित तथा असहमत की श्रेणी में अपना प्रत्युत्तर देना होता है। सहमत के लिए 2 अंक, अनिश्चित के लिये 1 अंक तथा अहसमत के लिये 0 अंक प्रदान किया जाता है। मापनी का मानकीकरण 12 से 22 वर्ष के शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के 800 लड़कों तथा 350 लड़कियों पर किया गया है। मापनी में छात्रों तथा छात्राओं के लिए पृथक–पृथक Z–Score,T-score मानक दिये गये हैं Row Score की सहायता से भी पर्यावरण अभिवृत्ति की श्रेणी के वर्गीकरण हेतु तालिका पृथक से दी गई है। परीक्षण का परीक्षण–पुनर्परीक्षण की विश्वसनीयता .78 अर्द्धविच्छेद विधि से .75 पायी गई है। परीक्षण वैधता .001 विश्वास के स्तर पर उच्च पाई गई है।

Design - उपरोक्तानुसार परिकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए **2 x 2** कारक अभिकल्प का उपयोग किया गया। अध्ययन के चर लिंग के दो मूल्य छात्रों तथा छात्राओं एवं अभिवृत्ति के प्रकार के दो मूल्य पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति को लिया गया। इस प्रकार कुल 40 विद्यार्थियों पर प्रदत्तों का संकलन किया गया है।

Results ans Discussion – तालिका 1 – छात्रों तथा छात्राओं के पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी मध्यमानों मानक विचलनों , **t** परीक्षण एवं सहसंबंध तालिका **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका 1 जो कि कक्षा 12वीं के अंग्रेजी माध्यम के छात्रों तथा छात्राओं के पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी मध्यमानों, मानक विचलनों व **t** मूल्य को दर्शाती है। प्राप्त **t=0.66** सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक नहीं है, फिर भी मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट है कि छात्राओं की अभिवृत्ति छात्रों से अधिक पाई गई है। अत: हमारी पूर्व निर्मित परिकल्पना $\mathbf{H_{01}}$ स्वीकृत की जाती है। छात्रों एवं छात्राओं की पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्तियों में निम्न श्रेणी का धनात्मक सहसंबंध पाया गया है।

तालिका 2 – पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति पर लिंग के प्रभाव को दर्शाती **t** परीक्षण तथा सहसंबंध तालिका **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका 2 जो कि पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति के संबंध में मध्यमानों, मानक विचलनों व **t** मूल्य को दर्शाती है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्राप्त t=15.78 df=38, p<.01=2.71 सार्थक है, अत: हमारी पूर्व निर्मित परिकल्पना H_{02} पर्यावरण अभिवृत्ति के समर्थन में .01 विश्वास के स्तर पर अस्वीकृत की जाती है। छात्रों तथा छात्राओं की अभिवृत्तियों में निम्न श्रेणी का धनात्मक सहसंबंध पाया गया।

तालिका 3 – प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति पर लिंग के प्रभाव को दर्शाती है **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका 3 जो कि अध्ययन में सम्मिलित दोनों चरों के दोनों आयामों की अंत:क्रियाओं के प्रभाव के संबंध में प्रसरण विश्लेषण की गणना को दर्शाती है, तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि कक्षा 12वीं के अंग्रेजी माध्यम के छात्रों तथा छात्राओं की पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्तियों में सार्थक अंतर F=88.025, df=3,36, p<.01=4.31पाया गया है, अत: हमारी पूर्व निर्मित परिकल्पना H_{03} विश्वास के स्तर .01 पर अस्वीकृत की जाती है।

तालिका 4 – अध्ययन समूहों के दोनों परिवृत्यों के दोनों आयामों के मध्यमानों तथा मानक विचलनों के मध्य अंतरों को दर्शाती है– **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका 4 जो कि अध्ययन में सम्मिलित दोनों समूहों के दोनों चरों के दोनों आयामों के पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी मध्यमानों, मानक विचलनों तथा उनके अंतरों को दर्शाती है, तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि सर्वाधिक पर्यावरण अभिवृत्ति छात्राओं की M_2=70.1 तथा न्यूनतम शैक्षिक अभिवृत्ति छात्रों की M_3=31.3 पायी गई है।

तालिका -5 पर्यावरण अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों तथा अंशों को अभिवयक्त करती तालिका **(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

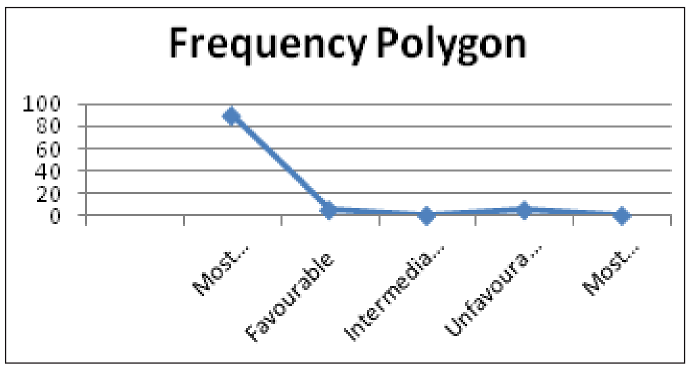

तालिका –6 शैक्षिक अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों तथा अंशों को अभिवयक्त करती तालिका

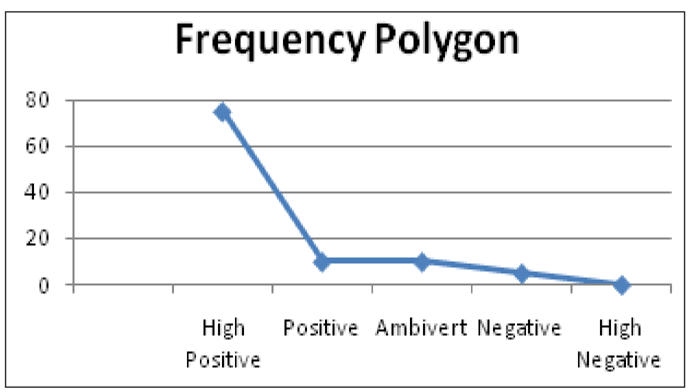

Inferences -

1. छात्रों की तुलना में छात्राओं की पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति का स्तर अधिक पाया गया। (तालिका क्रमांक 1)
2. पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति में .01 विश्वास के स्तर पर सार्थक अंतर पाया गया। (तालिका क्रमांक 2)
3. छात्रों तथा छात्राओं की पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति में धनात्मक श्रेणी का नगण्य सहसंबंध पाया गया। (तालिका क्रमांक 1 व 2)।

4. अध्ययन में सम्मिलित दोनों चरों के दोनों आयामों की अंत:क्रिया का सार्थक प्रभाव .01 विश्वास के स्तर पर पाया गया। (तालिका क्रमांक 3)।
5. अध्ययन में सम्मिलित समूहों में छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति सर्वाधिक तथा छात्रों की शैक्षिक अभिवृत्ति न्यूनतम पायी गयी। (तालिका क्रमांक 4)।
6. सर्वाधिक अनुकूल पर्यावरण अभिवृत्ति का प्रतिशत 90 तथा सर्वाधिक प्रतिकूल पर्यावरण अभिवृत्ति का प्रतिशत न्यूनतम 0 प्रतिशत पाया गया है। (तालिका क्रमांक 5)।
7. उच्च धनात्मक शैक्षिक अभिवृत्ति का प्रतिशत अधिकतम 75 प्रतिशत तथा उच्च ऋणात्मक शैक्षिक अभिवृत्ति का प्रतिशत न्यूनतम 0 प्रतिशत पाया गया है। (तालिका क्रमांक 6)

Recommedation -

1. छात्रों की पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति छात्राओं से कुछ कम पायी गई है, इन्हें सुझाव है कि ये अपनी साथी छात्राओं के साथ तालमेल बनाकर अपनी अभिवृत्ति में सकारात्मक वृद्धि हेतु विशेष प्रयास करें।
2. पर्यावरण अभिवृत्ति का सकारात्मक पाया जाना सुखद एवं प्रशंसनीय है तथापि सुझाव है कि इसे बनाए रखा जाए।
3. शैक्षिक अभिवृत्ति का पर्यावरण अभिवृत्ति की तुलना में कम पाया जाना चिंता का विषय है अत: पर्यावरणविदों, शिक्षाविदों एवं मनोवैज्ञानिकों के साथ मिलकर पर्यावरण एंव शिक्षा में धनात्मक सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किये जाने की सलाह दी जाती है।
4. उभयमुखी शैक्षिक अभिवृत्ति के 10 प्रतिशत प्रयोज्यों पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है ताकि इन्हें धनात्मक शैक्षिक अभिवृत्ति की दिशा में सहजतापूर्वक उन्मुख किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.महेश भार्गव, 'आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन' हरप्रसाद भार्गव प्रकाशन , आगरा नवम संस्करण पृष्ठ क्रमांक 262 से 286
2. डॉ.सत्येन्द्र आर्य, स्वास्थ्य विज्ञान राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर प्रथम संस्करण 1976 पृष्ठ क्रमांक 17 से 21
3. अरूणकुमार सिंह, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली प्रथम संस्करण 1991 पृष्ठ क्रमांक 678 से 711
4. डॉ.सी.भसीन जबलपुर द्वारा निर्मित शैक्षिक अभिवृत्ति मापनी का मैन्युअल
5. डॉ.डी.एन.श्रीवास्तव, एवं कुमारी शशिप्रभा दुबे द्वारा निर्मित पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी को मैन्युअल
6. कुमारी रचना पगारिया 'पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति का तुलनात्मक एव सहसंबधात्मक अध्ययन' मेरे मार्गदर्शन में विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन से संबंध श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच केमनोविज्ञान विभाग को प्रस्तुत स्नातक शोध प्रोजेक्ट सत्र 2009-10

तालिका - 1 छात्रों तथा छात्राओं के पर्यावरण एवं शैक्षिक अभिवृत्ति संबंधी मध्यमानों मानक विचलनों , t परीक्षण एवं सहसंबंध

Gender	N	Means	SDs	Df	t-cal	t-crit.	Decision	r
Male	10	48.10	18.87	38	0.66	2.71	Non Significant	+0.12
Female	10	52.10	18.27					

तालिका 2 - पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति पर लिंग के प्रभाव को दर्शाती t परीक्षण तथा सहसंबंध

Attitudes	N	Means	SDs	Df	t-cal	t-crit.	Decision	r
Environmental	10	67.50	7.98	38	15.78	2.71	Significant at .01	+0.10
Educational	10	320.78	5.37					

तालिका - 3 प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका पर्यावरण तथा शैक्षिक अभिवृत्ति पर लिंग के प्रभाव को दर्शाती है

Source of Variance	Sum of Square	df	Mean Square	F-Ratio	Decision
Between	12284.80	3	4094.93	88.025	Significant at .01
Within	1674.80	36	46.52		

तालिका 4 - अध्ययन समूहों के दोनों परिवृत्यों के दोनों आयामों के मध्यमानों तथा मानक विचलनों के मध्य अंतरों को दर्शाती है

Gender / Attitude	Male		Female		Difference	
	Means	SDs	Means	SDs	Means	SDs
Environmental	64.9	10.0	70.1	3.59	-5.2	6.41
Educational	31.3	6.85	34.1	2.58	-2.8	4.27
Difference	+33.6	+3.15	+36	+1.01	+2.4	2.14

तालिका – 5 पर्यावरण अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों तथा अंशों को अभिवयक्त करती तालिका

Category of Environmental Attitude	XII English Medium		Total	% of Different Category	Degree
		M F			
Most Favourable	8	10	18	90	324
Favourable	1	0	1	5	18
Intermediary	0	0	0	0	0
Unfavourable	1	0	1	5	18
Most unfavourable	0	0	0	0	0
Total	10	10	20	100	360

तालिका – 6 शैक्षिक अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों तथा अंशों को अभिवयक्त करती तालिका

Category of Environmental Attitude	XII English Medium		Total	% of Different Category	Degree
		M F			
High Positive	8	7	15	75	270
Positive	0	2	2	10	36
Ambivert	1	1	2	10	36
Negative	1	0	1	5	18
High Negative	0	0	0	0	0
Total	10	10	20	100	360

****

किशोरावस्था - समस्याएँ व समाधान

ज्योत्सना झारिया *

प्रस्तावना – मानव जीवन के विकास की विभिन्न अवस्थाओं में बाल्यावस्था के अंत तथा प्रौढ़ावस्था के प्रारंभ के मध्य संक्रमण करने वाली अवस्था किशोरावस्था है। किशोरावस्था शब्द अंग्रेजी के `Adolescence' शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है, इसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Adolescere से हुई है जिसका तात्पर्य है परिपक्वता की और बढ़ना (To grow to maturity) किशोरावस्था को संक्रमण की अवस्था कहा जाता है, जिसमें व्यक्ति की गणना न तो बालकों में होती है और न प्रौढ़ों में होती है। किशोरावस्था में शारीरिक परिपक्वता के साथ-साथ मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक परिपक्वता भी पायी जाती है। किशोरावस्था परिवर्तन का काल माना जाता है क्योंकि उनकी रूचियों, व्यवहारों, शारीरिक दशाओं और संवेगों में परिवर्तन पाया जाता है। इस अवस्था को संवेगात्मक तूफान और तनाव की अवस्था भी कहा जाता है। (जी. स्टेनले हल 1844-1924)

कारमाइकेल (1968) के अनुसार- 'किशोरावस्था जीवन का वह समय है, जहाँ से एक अपरिपक्व व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक विकास एक चरम सीमा की ओर अग्रसर होता है। दैहिक दृष्टि से एक व्यक्ति तब किशोर बनता है जब उसमें वय: संधि अवस्था आरंभ होती है एवं उसमें संतानोत्पत्ति की योग्यता विकसित होने लगती है। वास्तविक आयु की दृष्टि से बालिकाओं में वय: संधि अवस्था बारह वर्ष की आयु से पन्द्रह वर्ष की आयु के मध्य प्रारंभ होती है। इस आयु अवधि में 2 वर्ष की आयु किसी और घट बढ़ सकती है। बालकों के लिये वय: संधि का प्रारंभ इसी आयु में प्रारंभ होता है, बहुधा यह बालिकाओं की अपेक्षा 1 या 2 वर्ष देर से प्रारंभ होता है।'

जर्सील्ड (1978) के अनुसार- 'किशोरावस्था वह अवस्था है जिसमें एक विकासशील व्यक्ति बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर बढ़ता है।'

रेबर तथा रेबर (2001) के अनुसार- किशोरावस्था विकास की वह अवधि है जो आरंभ में तारूण्य के प्रारंभ द्वारा और अन्त में शारीरिक या मनोवैज्ञानिक प्रौढ़ता की प्राप्ति द्वारा चिन्हित होती है।'

हरलॉक ने किशोरावस्था के काल को निम्नलिखित रूप से विभाजित किया है-

1. पूर्व किशोरावस्था - 10 से 12 वर्ष
2. प्रारंभिक किशोरावस्था- 13 से 16 वर्ष
3. उत्तर किशोरावस्था- 17 से 21 वर्ष

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ साइकोलॉजी के अनुसार परिपक्वता की दृष्टि से लड़के-लड़कियों में किशोरावस्था का समय थोड़ा भिन्न होता है। लड़कियों की किशोरावस्था का काल 13 से 21 वर्ष और लड़कों की किशोरावस्था का काल 15 से 21 वर्ष के मध्य होता है।

किशोरावस्था: समस्याओं की अवस्था - किशोरावस्था को समस्या बाहुल्य की अवस्था कहा जाता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि किशोरावस्था की अनेक समस्याएं हैं। किशोरों के सुखी एवं सफल जीवन के लिए इन समस्याओं का समाधान व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिये आवश्यक है।

किशोरावस्था की समस्याओं की आयु इसलिए कहा जाता है कि इस अवस्था में किशोर अपने माता-पिता, संरक्षकों और अध्यापकों आदि के लिए एक समस्या होता है तथा साथ ही साथ वह अपनी नई विकास अवस्था के नये अभिनयों के साथ समयोजन नहीं कर पाता है अत: उसमें चिंता, उत्सुकता, अनिश्चतता और भ्रम के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, यह किसी न किसी रूप में उसके लिये समस्या ही है। किशोरों की समस्याओं में वैयक्तिक भिन्नताएँ पायी जाती हैं।

हरलॉक (1974) ने अपने अध्ययनों के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि किशोरों की अधिकांश समस्याएँ भिन्न क्षेत्रों से सम्बंधित होती है- शारीरिक दिखावट और स्वास्थ्य से सम्बन्धित समस्याएँ, परिवार में सामाजिक सम्बन्धित, परिवार से बाहर के लोगों से सम्बन्ध, विपरीत सेक्स के लोगों से सम्बन्धित समस्याएँ, स्कूल-कॉलेज के कार्य, भविष्य की समस्याएँ जैसे-शिक्षा, व्यवसाय के चयन और भावी जीवन-साथी का चुनाव, सेक्स, नैतिक व्यवहार, धर्म और अर्थ से सम्बन्धित समस्याएँ इत्यादि।

किशोरों की कुछ सामान्य समस्याएँ एवं उनका समाधान-

1. **सामाजिक समस्याएँ-** किशोरावस्था में बालक बालिकाओं को कई तरह की सामाजिक समस्याओं से जूझना पड़ता है। इस अवस्था में उनमें स्वायत्तता का भाव अधिक पाया जाता है। ऐसी स्थिति में अभिभावकों व परिजनों के साथ उनका सामाजिक सम्बन्ध तनावपूर्ण बन जाता है। अभिजात समूह के प्रभाव से वे अनेक परंपरागत मूल्यों को त्यागकर नवीन मूल्यों का अर्जित कर लेते हैं। सामजिक दबाव के कारण समूह की माँगों को पूरा करने एवं पुराने मूल्यों का अनुपालन करने में वे अपने आपको अक्षम पाते हैं।

समाधान- किशोरों की एक सहज एवं प्रबल आवश्यकता वास्तव में स्वायत्तता है। इस अवस्था में उनमें संवेगात्मक स्वतंत्रता की आवश्यकता प्रबल होती है। वे अभिभावकों के बंधन से मुक्त होना चाहते हैं। अत: माता - पिता को चाहिए कि वे अपने किशोर बच्चों पर भरोसा करें, उन्हें कुछ उत्तरदायित्व सौंपें एवं आवश्यकतानुसार पर्याप्त स्वतंत्रता भी दें। उत्तरकालीन किशोरावस्था में यौन भिन्नता के आधार पर सकारात्मक मूल्यों को अर्जित करने हेतु अभिप्रेरित करें।

2. **समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ -** किशोरावस्था में बालक-बालिकाओं को कई तरह की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे-सामाजिक समायोजन, पारिवारिक समायोजन, संवेगात्मक समायोजन, स्वास्थ्य समायोजन, आर्थिक समायोजन, शैक्षिक समायोजन इत्यादि।

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

किशोरावस्था में स्वायत्तता की आवश्यकता के कारण वे पारिवारिक बंधनों से मुक्त होना चाहते हैं। वे अपने अभिजात समूह के साथ अनुपालन Conformity से प्रेरित होते हैं, फलस्वरूप उनके मूल्यों व विश्वासों में परम्परागत मूल्यों व विश्वासों के विपरीत भिन्न रूप में परिवर्तन होते हैं जिससे उनमें तनाव तथा द्वंद उत्पन्न होता है परिणामत: उनमें उपरोक्त समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

समाधान – किशोर समाज में यौन भिन्नता के आधार पर नर–सामाजिक भूमिका एवं नारी सामाजिक भूमिका को निभाने का प्रयास करते हैं और इस प्रयास में वे जिस सीमा तक सफल हो पाते हैं उसी सीमा तक उन्हें संतुष्टि मिलती है (वेलपर्सन 1989) अत: अभिभावकों व शिक्षकों को चाहिये कि वे किशोरों को सही भूमिका निर्वाहन एवं समाज द्वारा स्वीकृत विश्वास व्यवहारों एवं मूल्यों को प्राप्त करने में उनकी मदद करें। ताकि उनमें तनाव एवं द्वंद उत्पन्न न हो। और व्यवहार समायोजनशील बने।

3. रूचि सम्बन्धी समस्याएँ – किशोरावस्था में रूचि सम्बन्धी समस्याएँ भी देखने को मिल जाती हैं। प्रारंभिक किशोरावस्था में किशोरों की रूचियों में स्थायित्व नहीं हो तो लेकिन उत्तरकालीन किशोरावस्था आने तक उनमें कुछ स्थायित्व आने लगता है। किशोरों की रूचि सम्बन्धी समस्याएँ कई क्षेत्रों से सम्बन्धित हो सकती हैं जैसे– सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक, व्यावसायिक, मनोरंजन, खानपान व पहनावा एवं फैशन से संबंधित। इस अवस्था में अपनी रूचियों के सम्बन्ध में वे स्वतंत्र निर्णय लेना चाहते है। किंतु माता–पिता के दबाव एवं रूचियों में स्थायित्व न होने की वजह से उन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

समाधान– समय काल एवं उम्र के हिसाब से व्यक्तियों की रूचियों में परिवर्तन होता रहता है। माता–पिता को चाहिए कि किशोरों के रूचि सम्बन्धी निर्णय लेने में उनकी मदद करें न कि अपनी रूचि और इच्छा उन पर थोपें इससे किशोरों को खुशी भी मिलती है और आत्मविश्वास भी जाग्रत होता है। रूचि सम्बन्धी समस्याओं के समाधान में माता–पिता के अलावा शिक्षक एवं अभिजात समूह की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

4. शैक्षिक समस्याएँ – किशोरावस्था में लड़के–लड़कियों को कई तरह की शैक्षिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। विशेष रूप से विषय चयन, परीक्षा एवं श्रेणी सम्बन्धी समस्या से उत्पन्न प्रतिबल का सामना उन्हें करना पड़ता है। अध्ययन विशय के चयन में एक और माता–पिता का दबाव, दूसरी और शिक्षक की सलाह और फिर अभिजात समूह (Peer Group) के साथ अनुपालन से उत्पन्न द्वंद के वे शिकार बन जाते हैं। इसी प्रकार परीक्षा परीणाम एवं श्रेणी को लेकर माता–पिता की किशोरों से अपेक्षाओं को पूरा न कर पाने पर उससे उत्पन्न भय, चिंता, द्वंद आदि से वे पीड़ित हो जाते हैं। फलस्वरूप उनमें कई तरह की विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। जैसे– बीच में पढ़ाई छोड़ देना, बंक मारना, घर से भाग जाना, व्यक्तित्व विकृतियों से पीड़ित हो जाना, विद्रोही होना, अनुशासनहीन होना यहां तक कि आत्महत्या इत्यादि।

समाधान– शैक्षिक समस्याओं के समाधान में माता–पिता एवं शिक्षक दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जब शैक्षिक समस्या गंभीर होती है जैसे– शिक्षालय से भाग जाना, तोड़ फोड़ करना, उद्दंडता करना, अनुशासनहीनता, बार बार फेल होना, कुसमायोजन इत्यादि, तब ऐसी स्थिति में मनोवैज्ञानिक परामर्शदाता की मदद ली जा सकती है। विषय चयन एवं व्यावसायिक चयन सम्बन्धी निर्णय लेने में अभिभावक एवं शिक्षक महत्वूपर्ण दिशा निर्देश दे सकते हैं डॉक्टर का बेटा डाक्टर, इंजीनियर का बेटा इंजीनियर, व्यवसायी का बेटा व्यवसायी इस तरह का दबाव किशोरों पर न डालें बल्कि उनकी योग्यता एवं रूचि के अनुसार निर्णय लेने में मदद करें। इसके अलावा माता–पिता एवं शिक्षक किशोरों की क्षमता एवं उनकी योग्यता से अधिक उनसे अपेक्षाएँ न करें।

5. संवेगात्मक समस्याएँ– किशोरावस्था में बालक बालिकाओं को कई तरह की संवेगात्मक समस्याओं एवं संवेगात्मक संघर्षों का सामना करना पड़ता है। (बोल्स–1979) इसका मुख्य कारण उनके शरीर में होने वाले शारीरिक, मानसिक एवं हार्मोनल परिवर्तन हैं। इसमें प्रत्याशित भूमिकाएँ एवं अभिजात समूह का भी हाथ होता है। परागमन अवधि अत्यधिक तनावपूर्ण होती है। जिसमें संवेगात्मक संघर्ष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। (सिमोन्स 1987, रिच एवं रेडकिन 1987) किशोरावस्था में साधारण से गंभीर संवेगात्मक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं जिसका परिणाम– चिंता, तनाव, शारीरिक अस्वस्थ्यता एवं आत्महत्या तक हो सकती है। (मास्टरसन 1967) माता–पिता द्वारा किशोरों से उनकी क्षमता से अधिक शैक्षिक, व्यावसायिक एवं अन्य क्षेत्रों में अपेक्षाएँ रखना उनमें संवेगात्मक तनाव उत्पन्न करता है।

समाधान– सकारात्मक संवेग जहाँ किशोरों को शारीरकि एवं मानसिक रूप से स्वस्थ्य रखते हैं वहीं नकारात्मक संवेग उनमें संवेगात्मक विक्षुब्धता उत्पन्न करते हैं। संवेगात्मक समाधान हेतु समस्याओं के पूर्ववर्ती कारकों का पता लगाकर उनको नियंत्रित करना चाहिए। माता–पिता एवं शिक्षकों को संवेगात्मक समस्या से ग्रसित किशोरों के साथ सहानुभूतिक व्यवहार करना चाहिये। शिक्षकों तथा अभिभावकों को चाहिये कि उनकी शिक्षा की व्यवस्था उनकी रूचि के अनुकूल करें। बौद्धिक रूप से प्रतिभाशाली, सामान्य एवं मंद बुद्धि बालकों के लिए अलग–अलग शैक्षिक कार्यक्रम की योजना बनाई जाये एवं तदनुसार उनकी शिक्षा की व्यवस्था की जाये। गंभीर रूप से संवेगात्मक समस्या से पीड़ित किशोरों को मनोचिकित्सकों एवं मनोवैज्ञानिक निर्देशक एवं परामर्शदाताओं की सेवा उपलब्ध कराना चाहिए।

6. वित्तीय समस्याएँ – किशोरावस्था में बालक बालिकाओं में कई तरह की आवश्यकताएँ बढ़ जाती है जिससे उन्हें वित्तीय समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऊपरी दिखावा, आकर्शक दिखने एवं अपने अभिजात समूह की अपेक्षाओं को पूरा करने के चक्कर में उनका खर्चा बढ़ जाता है। अच्छे परिधान, सौन्दर्य प्रसाधन, ब्यूटी पार्लर का खर्च, महंगा मोबाइल, गाड़ी, पार्टियाँ एवं मनोरंजन हेतु उन्हें पैसों की आवश्यकता होती है। अभिभावक फिजूल खर्ची समझकर उन्हें आर्थिक मदद नहीं करते परिणामत: वे चोरी करके या गलत तरीके से वित्तीय समस्याओं का समाधान करते हैं।

समाधान– अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने बच्चों पर नजर रखें कि उनके मित्र किस तरह के हैं वे किस तरह का मनोरंजन करते हैं व उनकी वास्तविक आवश्यकताएं क्या हैं? ताकि वे झूठ बोलकर गलत तरीके से माता–पिता से पैसे न लें। किशोरों को जेबखर्च जरूर दें किन्तु फिजूलखर्ची से बचने एवं पैसों की बचत करने हेतु उन्हें अभिप्रेरित करें। क्रोध एवं उत्तेजित होकर नहीं बल्कि बड़े ही स्नेह एवं सहजता से उनसे उनके खर्चे के बारे में पूंछें व आवश्यकतानुसार आर्थिक मदद करें।

7. लिंगीय समस्याएँ – किशोरावस्था की सबसे गंभीर व संगीन समस्या लिंगीय समस्या है सिग्मण्ड फ्रायड (1856–1939) ने अपने मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत के अन्तर्गत मनोलैंगिक विकास की पाँच अवस्थाओं का उल्लेख किया है जिसमें अन्तिम पाँचवी अवस्था जनेन्द्रिय अवस्था है जिसका सम्बन्ध किशोरावस्था से है। इस अवस्था में लिंगीय आवेगों के साथ साथ संवेगात्मक आवेगों की प्रधानता होती है। इस अवस्था

में शारीरिक परिपक्वता के कारण उनके यौन अंग विकसित हो जाते हैं, जिससे लिंगीय इच्छा तीव्र बन जाती है किन्तु मनोवैज्ञानिक परिपक्वता में कमी की वजह से वे अपनी यौन इच्छा को नियंत्रित नहीं कर पाते। अभिभावकों के बंधन से स्वतंत्र होकर वे स्वायत्तता के नाम पर आपस में खुलकर मिलते हैं और प्राकृतिक अथवा अप्राकृतिक लिंगीय संबंध स्थापित करना चाहते हैं। हमारे भारतीय समाज के रीति-रिवाज, परम्पराएँ, सामाजिक मूल्य इस तरह के विवाह पूर्व उन्मुक्त यौन व्यवहार को अनैतिक व अवांछनीय मानते हैं, फिर भी जो किशोर-किशोरियाँ इस तरह की लिंगीय क्रियाओं को अनैतिक व अवैध मानते हैं उनके लिये आज भी पूर्व वैवाहिक लिंगीय व्यवहार प्रतिबलक का कार्य करता है। जब किशोरों को इसकी लत लग जाती है तो आगे चलकर वह उनमें कई तरह की विकृतियाँ उत्पन्न करती हैं जैसे- यौन विकृतियाँ, चारित्रिक विकृतियाँ, व्यक्तित्व विकृतियाँ, वैवाहिक कुसमायोजन एवं आपराधिक प्रवृत्ति आदि।

समाधान- किशोरों में लिंगीय समस्याओं की रोकथाम का सबसे अच्छा उपाय यौन शिक्षा है। माता-पिता तथा शिक्षकों को चाहिए कि वे किशोरों में होने वाले शारीरिक परिवर्तनों एवं उनकी इच्छाओं के बारे में उन्हें जानकारी दें। वे किशोरों को यौन के संबंध में सही सूचना दें तथा गलत सूचनाओं से बचने की सलाह दें। अभिभावकों को घर में किशोरों को प्रत्यक्ष रूप से यौन के विभिन्न पक्षों के संबंध में सही सूचना देना चाहिए एवं यौन के प्रति सकारात्मक व स्वस्थ्य मनोवृत्ति विकसित करना चाहिए। उन्हें अवैध यौन पारितोषण (Sex gratification) के कुप्रभावों से भी अवगत कराना चाहिए। यौन के क्षेत्र में चुप्पी तथा रहस्य की अपेक्षा स्पष्ट रूप से सही सूचना देना कम खतरनाक होता है। शिक्षकों को चाहिए कि वे भी किशोरों को स्पष्ट रूप से सही जानकारी दें। स्ट्रेन (1979) के अनुसार फिल्मों के माध्यम से यौन शिक्षा दी जा सकती है। किशोरों के स्वस्थ्य वैवाहिक जीवन एवं सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिये यौन शिक्षा अति आवश्यक है।

8. औषधि दुरूपयोग तथा मद्य व्यवसनता संबंधी समस्याएँ - वर्तमान समय में किशोरों में औषेध तथा मादक का इस्तेमाल काफी बढ़ गया है। हाई स्कूल के छात्रों मे औषधि दुरूपयोग तथा मद्यव्यसनता ज्यादा देखने को मिलती है। किशोरों में इन पदार्थों के सेवन करने के कई कारण हो सकते हैं। जैसे- जिज्ञासा, चिंता, तनाव, दिखावा, मदमस्त होने की चाह इत्यादि। गलत सूचनाओं और संगत के प्रभाव से अक्सर किशोर मद्य व्यसनी हो जाते हैं। औषधि एवं मादक दुरूपयोग आगे चलकर किशोरों में कई तरह की शारीरिक एवं मानसिक विकृतियों का कारण बनता है। एवं कभी-कभी किशोर अपराध के लिए भी उत्तरदायी होता है।

समाधान - अभिभावकों व शिक्षकों को चाहिये कि वे किशोरों को मादक पदार्थों के कुप्रभावों से परिचित करायें। संभाषण के बजाय, चलचित्र, दूरदर्शन, एवं नाटिकाओं के माध्यम से इन पदार्थों के कुप्रभावों को बताया जा सकता है। जो किशोर इन पदार्थों का सेवन करते हैं उन्हें नशामुक्ति केन्द्र ले जाना चाहिए जहाँ सही इलाज एवं उचित परामर्श से इस समस्या का समाधान संभव है। शासन द्वारा भी किशोरों द्वारा इन पदार्थों की खरीदी व सेवन पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। स्कूलों में इस विशय पर कार्यशालाएँ होना चाहिए ताकि किशोर इस प्रवृत्ति से बच सकें एवं उनमें नशा न करने संबंधी जागरूकता आये।

निष्कर्ष - किशोरावस्था को समस्याओं की अवस्था कहा जाता है। इस अवस्था में शारीरिक परिपक्वता के साथ मनोवैज्ञानिक अपरिपक्वता की वजह से आशंकाओं, जिज्ञासाओं, तनावों के कारण बालकों को कई तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अभिभावकों, पालकों एवं शिक्षकों द्वारा जिन किशोरों की पूर्व किशोरावस्था में किशोरावस्था के आगमन की सही तैयारी करा दी जाती है वो इस अवस्था में सहजता से बिना किसी समस्या के प्रौढ़ावस्था में प्रवेश कर जाते हैं। किन्तु किशोरावस्था पूर्व सही तैयारी एवं ज्ञान के अभाव में कई किशोर उपरोक्त समस्याओं से ग्रसित हो जाते हैं। अत: दिये गये समाधानों को अमल में लाकर किशोरों को समस्याओं से मुक्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आलम काजी गौस एवं अन्य (2002) आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान, प्रकाशक-मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली पृ.क्र. 150-156
2. मित्तल संतोष, दीपशिखा मित्तल (2005) बाल मनोविज्ञान, प्रकाशक-यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा.) लि. जयपुर, पृ. क्र. 181-186
3. सुलैमान मुहम्मद (2012) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, प्रकाशक-मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली पृ.क्र. 271-286
4. वर्मा प्रीति, डी. एन. श्रीवास्तव (2010) बाल मनोविज्ञान: बाल विकास, प्रकाशक- अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा-2, पृ.क्र. 371-377
5. अन्य- व्यक्तिगत सर्वे एवं शोध।

****

नैतिक मूल्यों के विकास का एक आयाम - नैतिक शिक्षा

सुधा शाक्य *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध आलेख नैतिक मूल्यों के विकास के लिए नैतिक शिक्षा की आवश्यकता के उद्देश्य से प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान युग में मनुष्यों में नैतिक मूल्यों का ह्रास एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। समाज में व्याप्त अराजकता, औद्योगीकरण, जनसंख्या, विस्फोट, असुरक्षा की भावना, असंवेदनशीलता, भ्रष्टाचार, दुष्कर्म, लिंग विभेदीकरण, अनैतिकता, कर्तव्यहीनता, ईर्ष्या घृणा आदि दुष्प्रवृत्तियों ने सामाजिक विकृति को जन्म देकर आज हर व्यक्ति का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है कि देश में रहने वाले हर नागरिक को नैतिक शिक्षा देकर उसमें नैतिक मूल्यों का विकास कर अपने पथ में भटके हुए व्यक्ति को सही रास्ते पर लाने की आवश्यकता हो गई और विभिन्न साधनों तथा माध्यमों के द्वारा नैतिकता का विकास कर इन सभी समस्याओं से मुक्त हो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का उचित विकास कर देश और विश्व में सुख शांति और खुशहाली ला सकता है।
कुंजी शब्द– नैतिक मूल्य, नैतिक शिक्षा।

प्रस्तावना – हर सिक्के के दो पहलू होते हैं, उसी प्रकार व्यक्ति के व्यक्तित्व के भी दो पहलू होते हैं। अच्छा और बुरा, जब व्यक्ति सद्‌कर्मो की ओर अग्रसर होता है तो लोग उसे अच्छा कहते हैं और जब व्यक्ति दुष्कर्मो, दुष्प्रवृत्तियों के ओर आगे बढ़ता है तो उसे बुरा व्यक्ति कहते हैं। व्यक्ति के कर्म, व्यक्तित्व आदि कैसा रहेगा यह उसके संस्कार सीखी हुई आदतों, सोच आदि पर निर्भर करता है। यदि उसे बचपन से ही उच्च नैतिक मूल्यों की भी शिक्षा दी जाती है तो व्यक्ति के व्यक्तित्व में सकारात्मक गुणों का विकास होता है। यदि हम इतिहास देखे तो प्राचीन काल में शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य में अंत:शक्ति और ज्ञान का विकास करना था इस तरह वैदिक काल में शिक्षा का आधार नैतिक शिक्षा था। सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के अनुसार विश्व कल्याण के लिये चिन्तन किये जाते थे। मानव कल्याण हेतु यंत्र-तंत्र, तप-जप आदि किये जाते थे तथा तपस्या की जाती थी उस नियमों का पालन करना अपना कर्तव्य समझा जाता था और छात्र सदैव निर्देशों के अनुसार अनुशासित रहते थे, संयम में रहना गुरुओं और बड़ों का आदर तथा श्रद्धाभाव रखना अपने जीवन काअंग मानते थे। वैदिक काल में नैतिक शिक्षा का संबंध नैतिक मूल्यों से था और उस समय शिक्षा में नैतिक शिक्षा समाहित थी स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षण संस्थाओं में नैतिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं रह गया। स्वतंत्रता के पश्चात जितने भी आयोग गठित हुए सभी ने नैतिक शिक्षा के शिक्षण पर जोर दिया। राधाकृष्णन् विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49), माध्यमिक (मुदालियर) शिक्षा आयोग (1952-53), मूल्यांकन समिति (1959) तथा शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग) 1964-65 सभी ने नैतिक शिक्षा के शिक्षण पर जोर दिया। शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए महात्मा गांधी जी ने कहा था शिक्षा से मेरा अर्थ उस प्रक्रिया से है जो बालक और मनुष्य के शरीर मन तथा आत्मा के रुपों का सर्वांगीण विकास करे।

नैतिक शिक्षा की आवश्यकता – स्वामी विवेकानंद जी ने कहा था हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा चरित्र निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। आज कई व्यक्तियों में नैतिक शिक्षा के अभाव से विभिन्न प्रकार के अपराध जन्म ले रहे हैं। वह यह भूल गया है कि हम एक मनुष्य हैं, उसकी सोच मानवीय गुण विकृत होते जा रहे हैं और इन नैतिक गुणों का दिनों दिन पतन होता जा रहा है। समाचार पत्रों और दूरदर्शन तथा समाज में इन अपराधिक घटनाओं की खबरों की संख्या बढ़ रही है। लोगों का सम्मान के साथ जीवन बिताना मुश्किल हो गया है कई प्रकार के मानसिक रोग से व्यक्ति ग्रसित हो रहे हैं। भौतिक युग की बदलती हुई परिस्थितियों में नैतिक शिक्षा के द्वारा ही मानव मात्र की विचारधारा में परिवर्तन लाया जा सकता है और आज आवश्यकता है कि प्रारंभिक जीवन से ही नैतिक शिक्षा को देना प्रारंभ कर दिया जाए, नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब संसार के मानचित्र के भारत वर्ष भी नैतिक पतन की सीमाओं में आ जाएगा।

नैतिक शिक्षा का उद्देश्य –

- नैतिक शिक्षा के द्वारा व्यक्ति में नैतिक मूल्यों का संचार करना।
- व्यक्ति की विचारधारा दृष्टिकोण एवं सोच में सकारात्मक परिवर्तन लाना।
- विश्वशांति एवं मानवता की सुरक्षा की भावना को विकसित करना।
- जीवन शैली को उन्नत और भविष्य के लिए स्वयं को तैयार करना।
- आधुनिकता एवं पुरातनता के मध्य सामन्जस्य स्थापित करने में सहायक होना।
- व्यक्तियों में अनैतिक कार्यो का विरोध करने योग्य बनाना।
- भयमुक्त होकर मूल्य आधारित कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त करना।
- मानसिक शक्ति तथा आध्यामिकता का विकास करना।
- छात्रों को इसके लिए प्रेरित करना कि वे अपने विचार और व्यवहार में उदार बने और धर्म, भाषा, जाति, क्षेत्र लिंग आदि पर आधारित गलतफहमियों से ऊपर उठें।
- देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के संबंध में उनमे जागरुकता उत्पन्न करना एवं वांछित सुधार लाने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना।

अरविन्द जी ने कहा है कि मनुष्य की प्रकृति, मनुष्य की आदतें तथा मनुष्य की भावनाओं को शुद्ध और सुंदर बनाकर मानव हृदय का परिवर्तन करना ही नैतिक शिक्षा का उद्देश्य है।

नैतिक शिक्षा- शिक्षण के मूल अभिकरण – नैतिक मूल्यों के द्वारा केवल देश की समस्या ही नहीं बल्कि यह विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है और आज हर बच्चे, बड़े और बुजुर्गो को नैतिक शिक्षा की आवश्यकता महसूस हो रही है। नैतिक शिक्षा के विभिन्न मार्गो को खोलने पर कुछ ऐसे स्त्रोत मिले हैं जिससे व्यक्ति को नैतिक शिक्षा प्राप्त हो सकती है और इन अभिकरणों से नैतिक शिक्षा का पाठ पढ़ाने में सहयोग मिलता रहता है।

1. **परिवार –** सर्वप्रथम परिवार से ही बालक नैतिक शिक्षा प्राप्त करता है बालकों में सच्चरित्रता, सज्जनता, शालीनता, विवेक शीलता आदि नैतिक गुण माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्यों से मिलते हैं। हरलॉक (1950) ने अध्ययन में पाया कि लगभग 90 प्रतिशत अपराधी विघटित अनुशासनहीन

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

परिवारों की देन होते हैं। उर्मिलारानी (1991) में पाया कि परिवार में उदार या कठोर अनुशासन शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों के नैतिक निर्णय को प्रभावित नहीं करता बल्कि माता-पिता की मृत्यु या उनमें तलाक तथा उनकी नैतिक अभिवृत्ति विद्यार्थियों के नैतिक निर्णयों को प्रभावित करती है। डॉ. के.एन. शर्मा का कथन है कि 'संयुक्त परिवारों में बालकों का विकास उचित रीति से होता है उनको सामाजिक तथा नैतिक शिक्षा जन्म से ही प्राप्त होने लगती है, संयुक्त परिवार में परस्पर प्रेम, सहयोग, उदारता, आज्ञा देने एवं पालन करने की शिक्षा प्राप्त होती है'। इस प्रकार परिवार का नैतिक मूल्यों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।

2. **शिक्षा एवं शिक्षण संस्थाएं –** शिक्षण संस्थाओं का वातावरण एवं शिक्षक का व्यक्तित्व विद्यार्थियों में विभिन्न मूल्यों को विकसित करने में सहायक है। पाण्डेय (2004) में राजकीय सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक व विद्या भारती स्कूल के कक्षा 9 के बच्चों के अध्ययन में पाया की सभी विद्यालय के विद्यार्थी देश भक्ति के मूल्य को सर्वाधिक प्राथमिकता देते हैं। बालक विद्यालय में अनुशासन, प्रेमव्यवहार, आज्ञा पालन विभिन्न आदर्श आदि नैतिक मूल्यों को सिखाता है तथा शिक्षक के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर सदाचार एवं नैतिकता के गुणों को सीखता है। यदि शिक्षक योग्य, शिष्ट तथा नैतिक विचार के हैं तो बच्चों में नैतिक विकास को उचित दिशा मिलेगी। अध्ययनों में पाया कि प्रात: कालीन सभा में दी गई नैतिक शिक्षा, नैतिक निर्णय के विकास को अनुकूल रुप से प्रभावित करती है। जोन्स (1926) के अनुसार विद्यालयों में नैतिक शिक्षा पर बल देकर तथा उसका महत्व समझाकर बच्चों में नैतिक विकास की गति तेज की जा सकती है।

3. **समाज –** मानव समाज का एक अभिन्न अंग है और समाज से ही सामाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान ही व्यक्ति रीति-रिवाजों, सेवा भाव, सत्याचरण, मान-मर्यादा, सामाजिक मानक, नियमों आदि नैतिक मूल्यों को सीखता है, समाज में व्याप्त कुरीतियों, लिंग भेद तथा सामाजिक दबाव का प्रभाव भी नैतिक मूल्यों पर होता है। जायसवाल (1972) ने पाया की सौन्दर्यात्मक व धार्मिक मूल्य में बालिकाएं बालकों से श्रेष्ठ होती हैं। कालिन्स (1974) ने अध्ययन में पाया की लड़के आरामदायक जीवन कल्पना शील मूल्यों को लड़कियों से अधिक महत्व देते हैं जबकि लड़कियां समन्वय, स्वसम्मान, बुद्धि, क्षमाशीलता व स्नेह को लड़कों की अपेक्षा अधिक महत्व देती हैं। प्रचीन काल में ही विभिन्न धर्मग्रंथों, पुराण आदि के द्वारा समाज में फैली कुरीतियों को नष्ट करने तथा सदाचार, कर्तव्य निष्ठा, उदारता, शालीनता, सहकारिता आदि को बढ़ाने के लिए शिक्षा दी जाती थी। कई समाज सुधारक ऐसे हुए जिन्होंने समाज में व्याप्त जाति प्रथा, बालविवाह, सतीप्रथा, पर्दाप्रथा आदि सामाजिक बुराईयों को समाप्त कर लोगों में नई सोच को विकसित किया। मैथ्यू अर्नाल्ड जैसे कवि आलोचक भी ये मानते हैं कि 'जीवन का तीन चौथाई आधार अच्छा चाल चलन है और इसका तात्पर्य है कि हम अपने कार्य एवं व्यवहार दोनो को नैतिक रखें।

4. **अन्य अभिकरण –** परिवार शिक्षक, शिक्षण संस्थाओं एवं समाज के अलावा पाठ्य सामग्री क्रियाओं, बुद्धि, आयु, लिंग, मित्र मंडली, धार्मिक संगठनों, व्यक्तित्व विभिन्नताएं, धर्म, चलचित्र एवं पुस्तकें, सामाजिक आर्थिक वंचन मनोरंजन के अन्य साधन सूचना एवं प्रौद्योगिकी तथा सभी व्यक्तियों में नैतिक मूल्यों को विकसित करने तथा उसे पोषित कर जीवन बिताने में सहयोग प्रदान करने हैं। बौरेन तथा बिरने (2005) ने पाया कि 'माध्यम हिंसा प्रतिअनावरण (Exposure to Media Vioience) के कारण उच्च स्तरीय हिंसा विकसित होती है। 'फिलिप्स (1983) ने अध्ययन में पाया कि हिंसक घटनाओं के प्रसारण से भी व्यक्ति आक्रामक व्यवहार करने के लिये प्रोत्साहित होता है।

समाचार पत्रों में वे उत्तेजक तथा हिंसक घटनाओं से भी हिंसक व्यवहार को बल मिलता है। सीरिया (1990) ने अध्ययन में पाया कि कम बुद्धि वाले बच्चे (11 से 12 वर्ष) बड़ों के प्रति सम्मान नामक मूल्य की ओर अभिमुख होते हैं। परंतु (14 से 15 वर्ष) आयु वाले बच्चे उच्च बुद्धि वालों की तुलना में आत्म नियंत्रण के मूल्य को अधिक प्राथमिकता देते हैं। सूचना और प्रौद्योगिकी नैतिक शिक्षा का एक सशक्त माध्यम होता है। यदि वह नैतिक शिक्षा और मूल्यों को विकसित करने में सकारात्मक भूमिका निभाए।

सुझाव –

- सूक्तियों एवं नैतिक वचनों के द्वारा नैतिक शिक्षा दी जाए।
- पाठ्यक्रम में विश्व की विभूतियों के प्रेरक प्रसंगों को अनिवार्यता शामिल किया जाए।
- नैतिक मूल्यों, नैतिकता को विकसित करने वाले कार्यक्रमों के प्रसारण संचार के विभिन्न माध्यम से किया जाये।
- बच्चों में नैतिक मूल्यों के विकास हेतु माता-पिता परिवार शिक्षण संस्थाओं, शिक्षक एवं समाज की मुख्य भूमिका अदा करना।
- कार्यशाला, संगोष्ठी एवं सम्मेलनों, वार्तालाप को आयोजिक कर नैतिक मूल्यों को विकसित किया जाए।

निष्कर्ष – व्यक्तित्व के जिन गुणों के कारण मानव को मानव कहा जाता है उन गुणों को अपने व्यवहार में ढालना ही नैतिकता है। यदि पानी में तरलता और शीतलता न हो तो उसे पानी कौन कहेगा ? उसी प्रकार मानव में मानवीय गुण न हो तो वह मानव न होकर पशु तुल्य हो जाएगा, अर्थात व्यक्तित्व में उचित शील गुणों का विकास नैतिक शिक्षा के शिक्षण से ही संभव है। जब तक नैतिक शिक्षा के सामान्य शिक्षा का एकीकृत अंग नहीं बनाया जाएगा तब तक व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र अधूरे हैं। नयी पीढ़ी से मूल्यों के सृजन का आधार ही नैतिक शिक्षा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आलम के.जी. एवं अन्य (2003) आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान तृतीय संस्करण मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली, पृ.क्र. 310-312
2. गोलबलकर, एस.एवं भाटी एस.एस. (2010) मूल्य शिक्षा, प्रथम संस्करण, राधा प्रकाशन, मंदिर प्रा.लि. आगरा पृ.क्र. 132-39
3. Jain, S.P. (2014) “Role of National Service Scheme in personaligy development” Naveen Shodh Sansar International Research Journal pp 51-52.
4. कदम, एस. (2014) ग्रह विज्ञान शिक्षा में गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक त्रिआयामी पाठ्यक्रम योजना, नवीन शोध संसार, अंतर्राष्ट्रीय शोध जर्नल पृ.क्र. 230-32
5. Pandey, P.K. & Tiwari, A. (2014)"Quality Enhancement in Higher Education in Relation with Best Precties in Teaching and Learning”. Naveen Shodh Sansar International Research Journal Vol. I (Special Ed.) pp 233-35
6. पारियान, जी. एवं कृष्णा बी.के. (2005) पर्यावरण नैतिकता: ईकोसौफी, रिसर्च लिंक जनरल इंदौर अंक 17 (III) पृ.क्र. 96-97
7. सुलेमान, एम. एवं कुमार डी. (2010) मनोविज्ञान एवं सामाजिक समस्याएं, प्रथम संस्करण मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली पृ.क्र. 283
8. शर्मा, आर.के. एवं दुबे एस.के. (2011)-मूल्यों का शिक्षण, प्रथम संस्करण, राधा प्रकाशन आगरा पृ. क्र. 10-11
9. वर्मन, आई.(2007)-'मूल्य शिक्षा की आवश्यकता: समाजशास्त्री अध्ययन, रिसर्च लिंक जर्नल इंदौर अंक 34 (V-9) पृ.क्र. 71-72
10. बझलबार जी, एवं अन्य (2006)- 'आदिवासी क्षेत्रों में कार्यरत शिक्षकों के मूल्यों का अध्ययन रिसर्च लिंक जर्नल इंदौर अंक 27 (V-2) पृ.क्र. 125-27

भारत में जनजाति समाज की प्रस्थिति

डॉ. ममता बर्मन *

शोध सारांश – आदिवासी समाज मानव समाज का ही एक भाग है। भारतीय समाज विभिन्न प्रजातियों एवं संस्कृतियों का सम्मिश्रण है। ग्रामवासियों एवं नगरवासियों से भिन्न दूर जंगलों, पठारों एवं दुर्गम स्थानों में निवास करने वाले आदिवासी भी भारतीय समाज को विविधिता प्रदान करते हैं। आदिवासी समाज अपेक्षाकृत पृथक तथा अन्तर्मुखी है जो उत्पादन एवं उपभोग की दृष्टि से समरूप हैं। इनका निवास स्थान कोई एक प्रदेश न होकर सम्पूर्ण भारत वर्ष हैं। उत्तर पूर्वी क्षेत्र में सिक्किम की लेपचा जनजाति, असम की रांभा, मेचा, काछारी एवं मिकिर, मेघालय की गारो और खासी, अरूणाचल की अका एवं डफला मिरी, नागालैण्ड की कोनयक, रंगपण, रोमा, अंगामी, चंग और रेम जनजातियाँ हैं। मध्य क्षेत्र में सबरा, गडवा, बोण्ढो, हो, सन्थाल, उराँव, मुण्डा, बिरहोर, खरिया, बैगा, तथा बस्तर की मुरिया और माड़िया गोण्ड जनजातियाँ हैं। दक्षिण क्षेत्र की चेंचू, टोडा, कोटा, पनियन, इरूला, कादर, माला आदि जनजातियाँ, अण्डमान निकोबार द्वीपसमूह में निकोबारी, ओंग, जरवा, शाम्पेन एवं अण्डमानी प्रमुख जनजातियाँ है। पश्चिमी क्षेत्र की भील, खासा आदि प्रसिद्ध जनजातियाँ हैं।

भारतीय आदिवासी समाज परिवर्तन के नाजुक दौर से गुजर रहा है। नए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक बल पुरातन सामाजिक जीवन को उद्धेलित कर रहे हैं। आदिवासी जीवन का संतुलन भंग होने से वे अनेक विषम समस्याओं के चक्रव्यूह में फँस गए हैं। संवैधानिक प्रावधानों एवं जनजातीय कल्याण नीतियों के बावजूद न तो उनकी आकांक्षाएँ पूरी हो पा रही है और न ही शिक्षा एवं रोजगार में आदिवासी, अन्य समुदायों के बराबर आने में सफल हो पा रहे हैं। प्रस्तुत शोध आलेख में आदिवासी समाज की अवधारणा, समस्याएँ, सामाजिक-सांस्कृतिक परिचय, नेतृत्व, अर्थव्यवस्था एवं भविष्य में जनजातीय परिदृश्य के विवेचन का प्रयास किया गया हैं।

प्रस्तावना – भारतीय समाज व संस्कृति को आदिवासी समाज निराली छवि प्रदान करता है। इन्हें वन्य जाति, जनजाति, आदिमवासी, आदिम जाति, गिरिजन, कबीली आबादी, एबोरिजनल आदि नामों से पुकारा जाता है। 1931 ई. की जनगणना तक 'आदिवासी' अथवा 'दलित वर्ग' जैसे प्रचलित शब्द 1941 ई. के पश्चात जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति संवैधानिक शब्दावली हैं।

भारत की जनसंख्या में 8.01% जनसंख्या आदिवासियों बस्तियों की हैं। मध्यप्रदेश भारत में सर्वाधिक जन-जाति वाला राज्य हैं। मध्यप्रदेश का झाबुआ जिला आदिवासी जनसंख्या की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं, जहां 12,11,116 आदिवासी लोग निवास करते हैं जबकि भिण्ड जिले में सबसे कम आदिवासी 6,720 व्यक्ति निवास करते हैं। जनसंख्या प्रतिशत के अनुसार झाबुआ जिला सर्वोपरि है, जहां जनसंख्या का 85.67% भाग आदिवासीयों का हैं।

अवधारणा– गिलिन एवं गिलिन के अनुसार- 'स्थानीय आदिवासीयों के किसी भी ऐसे संग्रह को हम जनजाति कहते हैं जो एक सामान्य क्षेत्र में निवास करता हो, एक सामान्य भाषा बोलता हो तथा सामान्य संस्कृति के अनुसार व्यवहार करता हो।'

आदिवासी जन-जातियाँ बहुत सी उप जन-जातियों में विभाजित हैं, जो स्वयं अपने आप में एक जनजाति समूह बनाती हैं,। भारतीय जनजातियों में मुख्यत: निम्नलिखित सामान्य विशेषताएँ पाई जाती है-(1) ये जनजातियाँ आज भी सभ्यता से काफी अलग हैं तथा दुर्गम एवं पहाड़ी प्रदेशों में रहती है। (2) ये मुख्यत: नीग्रोटो, आस्ट्रेलॉयड और मंगोल जातियों से बनी हैं। (3) ये एक ही जन-जातीय भाषा बोलती हैं। (4) ये 'प्रेतवाद नामक प्राचीन धर्म को मानती हैं तथा भूत-प्रेतों की पूजा पर विशेष बल देती हैं। (5) ये प्राचीन उद्यमों तथा जंगली फल, फूल, मूलकन्दों को इकठा करना, शिकार करना अथवा मछली मारना जैसे कार्य करती हैं। (6) ये अधिकांशत: माँसाहारी हैं। (7) अधिकांश जन-जातियाँ नग्न एवं अर्द्धनग्न अवस्था में रहती हैं तथा वस्त्रों के स्थान पर वृक्षों की छाल एवं पत्तियों का प्रयोग करती हैं।(8) ये हमेशा प्रसन्न रहते हैं तथा मदिरापान व नृत्य के विशेष शौकीन होते हैं।

गोंड भारत की सबसे बड़ी जनजाति हैं। भारतीय गणराज्य में आदिवासी समाज को संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है ताकि वे अपना सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक स्तर ऊँचा कर सकें, अपनी संस्कृति को बनाए रखकर भारत की मुख्य विचार धारा में सम्मिलित होकर भारतीय समाज के विकासें अपना योगदान दे सके।

आदिवासी महिलाएँ– भारतीय आदिवासी समाज में महिलाओं की स्थिति सामाजिक संरचना में उनको मिले स्थान तथा उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यो के आधार पर एक समान नहीं रही हैं। यहाँ श्रम विभाजन का आधार लिंग भेद हैं । पितृवंशीय जनजातियों में अर्थव्यवस्था में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका के कारण परिवारों में महिलाओं का प्रभुत्व बना रहता है। मातृवंशीय जनजातियों में पुरूषों की तुलना में महिलाओं को अधिक स्वतंत्रता प्राप्त होती है, स्थिति ऊँची होती हैं।

वर्गीकरण एवं सांस्कृतिक विभिन्नताएँ– आदिवासी समाज भौगोलिक, भाषायी, प्रजातीय, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक आधार पर वर्गीकृत की गई हैं। पृथक्करण की विशेषता के कारण से प्राय: सभ्य जगत से दूर दुर्गम स्थानों में निवास करती है, जिनकी अपनी एक जनजातीय संस्कृति होती है, अपना एक स्वतंत्र संगठन होता है। आवागमन एवं संचार के साधन का अभाव, उनकी परम्पराएँ पिछडेपन ही समस्या स्वरूप उन्हें राष्ट्रीय जीवन से

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

पृथक किए हैं। उनकी विशिष्ट संस्कृति ही संपूर्ण विश्व का ध्यान इनकी ओर आकृष्ट किए है। विवाह की इनकी विशिष्ट प्रणाली है, विवाह की आयु अपेक्षाकृत कम है, दहेज और वधू मूल्य प्रथा है, आर्थिक कार्यो में सहयोग देने के कारण स्त्रियाँ पुरूषों के समान ही प्रतिष्ठित है तथा व्यक्तित्व विकास का उन्हें पूरा अवसर प्राप्त होता है। अनेक प्रकार के विवाह संबंधी निषेध भी पाए जातें है जैसे-(1) निकटाभिगमन निषेध (2) बाहिर्विवाह (3) अन्तर्विवाह (4) अधिमान्य विवाह।

कुछ विवाह भेद भी है जैसे-(1) एक विवाह (2) बहुविवाह(बहुपत्नी/ बहुपति) (3) समूह विवाह, जीवन साथी चुनने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं, जैसे- क्रय विवाह(वधू मूल्यदेना), परिवीक्षा विवाह, अपहरण विवाह, परीक्षा विवाह, सेवा विवाह, विनिमय विवाह, सहमति व सह पलायन विवाह, हठ विवाह आदि।

जनजातीय नेतृत्व- जनजाति पंचायत आदिवासी समाज में नेतृत्व प्रदान करती है। एक परम्परागत मुखिया या प्रधान एवं सहायता के लिए निर्मित परिषद् ही नेतृत्व का कार्य करती हैं। कार्यविधि प्रजातांत्रिक होती है तथा अधिकार निर्णय सर्वसम्मति से किए जाते हैं।

धर्म, विश्वास, व्यवहार एवं टोटम- आदिवासी जीवन एवं व्यवहार धार्मिक विश्वास, जादू, टोटम एवं टैबू से प्रभावित एवं निर्धारित होता हैं धार्मिक विश्वासों एवं व्यवहार के आधार पर पाए जाने वाले अनेक निषेध टैबू है, जबकि टोटम का अर्थ विभिन्न क्रियाओं तथा विश्वासों की उस व्यवस्था से है जिससे जनजातीय गौत्र के सदस्य एक विशिष्ट आन्तरिक संबंध रखते हैं।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम और आदिवासी की भूमिका - राष्ट्रीय पुनर्जागरण और स्वतंत्रता संग्राम मे वनवासियों ने समूचे राष्ट्र को प्रेरित कर इतिहास में गौरवशाली अध्याय स्थापित किया। गोंड रानी वीरांगना दुर्गावती पर बादशाह अकबर की सेना द्वारा आक्रमण होने पर बैतूल के गोंड वीरों ने रानी की सेना में सम्मिलित होकर मुकाबला किया और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए बलिदान दिए। सन् 1930 के जंगल सत्याग्रह के आव्हान के समय हर आदिवासी कंधे पर कंबल और हाथ में लाठी लेकर ब्रिटिश साम्राज्य को चुनौती देने जंगल और पहाड़ो से निकल पड़ा था। शाहपुर के निकट बंजारीडाल का गंजन सिंह कोरकू के नेतृत्व में आदिवासियों पर गोलियाँ बरसाने से कोमा गोंड घटना स्थल पर शहीद हो गया। गंजन सिंह सुरक्षित स्थान पर पहुंचने में सफल रहा। जम्बाड़ा में गिरफ्तार आदिवासियों को छुड़ानें के लिए आसपास के आदिवासी इकट्ठे हुए। पुलिस से संघर्ष में रामू और मकडू गोंड घटनास्थल पर ही शहीद हो गए।

1942 में घोड़ोडोंगरी-शाहपुर क्षेत्र के आदिवासी सेनानियों का एक बड़ा समूह 19 अगस्त 1942 को विष्णु गोंड़ के नेतृत्व में घोडोडोंगरी रेलवे स्टेशन के पास एकत्रित हुआ। इस आदिवासी समूह ने रेल की पटरियाँ उखाड़ी, पुलिस थाने और घोडोडोंगरी रेलवे स्टेशन के पीछे स्थित लकड़ी के विशाल डिपो को आग के हवाले कर दिया। पुलिस और वन अधिकारी घटनास्थल पर आए। बिना चेतावनी गोलियों की बौछार से वीरसा गोंड की शहादत हो गई। और जिर्रा गोंड की मृत्यु कारावास में हुई। गोंड़ और कोरकू आदिवासी ने सिद्ध कर दिया कि स्वतंत्रता की बलिदेवी पर प्राणोत्सर्ग करने की जो परम्परा महारानी दुर्गावती ने स्थापित की थी, वह धूमिल नहीं पड़ी।

आदिवासी समाज का अतीत एवं भविष्य- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आदिवासी समाज को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने के लक्ष्य से सरकार ने उनके सामाजिक-आर्थिक उत्थान हेतु उन्हें वैधानिक संरक्षण प्रदान किया। प्राचीन एवं मध्य काल में जनजातियाँ अपने क्षेत्र में अनेक प्रकार से अन्य लोगों के साथ अन्तर्क्रियाएँ करती थी। इसलिए ऐतिहासिक दृष्टि से यह कहना उचित नहीं हैं, कि आदिवासी समाज सदैव सभ्यता से पृथक रही हैं। औपनिवेशिक काल में अग्रेंजों ने अपना शासन सुदृढ़ करने तथा प्राकृतिक साधनों को खोजने हेतु भारत के विभिन्न भागों को केन्द्रीय प्रशासन के साथ जोड़ दिया, आदिवासी समाज का पश्चिमीकरण प्रारम्भ हो गया, बाहरी लोगों द्वारा बड़े पैमाने पर सीधे-सादे आदिवासियों का शोषण किया जाने लगा संस्कृतिकरण, पर संस्कृतिग्रहण, सस्ंकृतिग्रहण तथा आत्म-सात्मीकरण जैसी सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं ने जनजातीय अस्मिता पर ग्रहरा प्रहार किया तथा आदिवासी संस्कृति में आमूल-चूल परिवर्तन होने प्रारम्भ हुए। आत्मसात्मीकरण द्वारा जातीय संस्तरण, पुनर्जनजातिकरण से उनकी अपनी विशिष्ट परम्परागत संस्कृति लुप्त हो गई। संवैधानिक प्रावधान, आरक्षण नीति तथा विभिन्न विकास योजनाएँ आदिवासी समाज की आकांक्षाओं को पूरा नहीं कर पर रही हैं, आज भी जनजातियाँ अनेक समस्याओं से ग्रसित हैं, उनकी समस्याएँ कम होने का नाम नहीं ले रहीं हैं। अनेक सीमान्त प्रदेशों में रहने वाली जनजातियाँ विद्रोही हो गई है तथा अलग राज्य की माँग करने लगी हैं। इनकी उपयोगी संस्थाओं, रीतिरिवाजों एवं प्रचलनों के संरक्षण की आवश्यकता एवं वांछनीयता को स्वीकार करते हुए उनका विकास एवं पुनर्वास हेतु सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं की प्राथमिकता समझते हुए वांछित समाधान आस्तित्व एवं अच्छा भविष्य संयोजन में सकारात्मक कदम साबित होगा। आदिम अर्थव्यवस्था में बाजारी अर्थव्यवस्था के प्रभाव के परिणाम स्वरूप हुए परिवर्तन प्रारम्भिक अवस्था के ही है, आदिवासी जनजीवन प्रभावित एवं परिवर्तित हो रहा हैं। गरीबी हटाओं एवं आदिवासी विकास योजनाओं के लाभ दरिद्रता उन्मूलन का उपाय हैं। नगरों एवं औद्योगिक केन्द्रों के विकास ने आदिवासी निर्धन परिवारों को रोजगार के नवीन अवसर उपलब्ध कराए हैं, तथापि उनको कम वेतन देकर उनके आर्थिक शोषण में वृद्धि हुई है।

संक्षेप में- आदिवासी समाज की विभिन्न्न समस्याओं के समाधान हेतु उनके समग्र विकास की आवश्यकता हैं। विविधता हमारी सांस्कृतिक विरासत की समृद्धि का सूचक है। तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा को प्रोत्साहन भ्रष्टाचार मुक्त शासकीय प्रयास ही विवेकपूर्ण और व्यावहारिक समाधान के साथ राष्ट्रीय एकता का स्वपन साकार करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. कुमार, प्रमीला - मध्यप्रदेश का एक भौगोलिक अध्ययनम.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. खन्ना, सी.एल. - यूनीफाइड भूगोल शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी पुस्तक प्रकाशन।
3. महाजन, डॉ. धर्मवीर, महाजन, डॉ. कमलेश - जनजातीय समाज का समाजशास्त्र विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली।
4. सिद्दकी, शादाब अहमद - मध्यप्रदेश, सम्पूर्ण अध्ययन, उपकार प्रकाशन आगरा।
5. Sharma K.L.: Caste and Class in India Rawat Publications Jaipur.

****

'कामायनी' छायावादी काव्यधारा का प्रतिनिधि काव्य

डॉ. साजिया खॉन *

प्रस्तावना – छायावादी काव्य हिन्दी का स्वर्ण काव्य माना जाता है। हिन्दी कविता में नवीन युग का प्रारम्भ छायावादी युग से होता है। छायावादी काव्य हिन्दी कविता में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रतीक है। आधुनिक काल के सर्वोत्तम काव्य को हम छायावादी काव्य में देख सकते हैं। आधुनिक काल के प्रतिभा सम्पन्न कवि जयशंकरप्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा छायावाद के ही थे। यप्रसाद छायावाद के इन चार स्तम्भों में से एक है। वर्तमान काव्यों में प्रसादजी का महाकाव्य 'कामायनी' महत्वपूर्ण स्थान रखता है। संसार के किसी भी साहित्य के सामने टक्कर लेने वाला महाकाव्य 'कामायनी' भी छायावाद की ही रचना है। 'कामायनी' हिन्दी जगत का गौरव ग्रंथ है। वह प्रसादजी का कीर्ति स्तम्भ है। प्रसाद के काव्य में दार्शनिक परिवेश के कारण रहस्यात्मकता का समावेश हुआ है।

बौद्ध साहित्य की करूणा तथा वेदान्त की विराट चेतना ग्रहण करके कवि ने आनन्दवाद को उसमें प्रतिष्ठित किया है उनके काव्य में करूणाजनित वेदना की धारा निरन्तर प्रवाहित होती है, किन्तु आनन्दवाद भी आशा का अमर संदेश प्रदान करता है। प्रसाद ने 'कामायनी' के माध्यम से समरसता का दिव्य संदेश प्रसारित किया है। 'कामायनी' की कथावस्तु वैदिक उपाख्यान से ली गई है। मनु और श्रद्धा के सहयोग से मानवता का नया विकास किस प्रकार हुआ, यही 'कामायनी' का प्राणतत्व है।

कामायनी की कथावस्तु – मनु और श्रद्धा के सहयोग से 'कामायनी' मानवता के विकास की कथा है। जल-प्रलय के पश्चात् मनु हिमगिरी के अतुंग शिखर पर चिन्तित बैठे हैं। इस समय 'कामायनी' (श्रद्धा) का आगमन होता है। मनु उससे परिचित होते हैं। श्रद्धा उनको आत्म-समर्पण करके लोक-मंगल के लिए कर्म करने के लिये प्रेरित करती है। मनु में देव संस्कार के कारण विलास और हिंसा की भावना जाग्रत हो जाती है। श्रद्धा गर्भवती होती है। उसका प्रेम बँट जाता हैं। इससे मनु को ईर्ष्या होने लगती है। उनका मन उचट जाता है। वे श्रद्धा को छोड़कर चले जाते है। सारस्वत प्रदेश की रानी इड़ा उनका स्वागत करती है। इड़ा देवों की बहिन थी और मनु के अन्न से पली थी। परन्तु मनु इस रहस्य को नहीं जानते थे। इड़ा अपने राज्य का भार मनु को दे देती है। मनु इससे सन्तुष्ट न होकर इड़ा की ओर हाथ बढ़ाते है और उसके साथ बलात्कार करने पर उतारू हो जाते हैं। इस पर देवता क्रुद्ध होते है और प्रजा मनु के विरूद्ध विद्रोह कर देती है। मनु युद्ध में घायल होकर बेहोश हो जाते हैं। दूसरी ओर श्रद्धा स्वप्न में घायल मनु को देखती है। वह अपने पुत्र मानव को साथ लेकर उनकी खोज में निकल पड़ती है। वह मनु को पा लेती है और अपने उपचार से उनको होश में लाती है।

अब मनु अपने पर पश्चाताप करते हुए लज्जित होकर भाग निकलते हैं। इड़ा भी दु:खी होती है। वह श्रद्धा से उसका पुत्र माँगती है। श्रद्धा इड़ा को लोक-कल्याण का उपदेश देकर अपना पुत्र उसे देती है और स्वयं मनु की खोज में निकल पड़ती है। मनु उसे एक घाटी में मिल जाते है। अब वे अपनी भूलों से परिचित हो चुके हैं। वे श्रद्धा का अनुसरण करते हैं। श्रद्धा उनको संसार के विविधि रूपों को दिखाती हुई कैलाश तक ले जाती है जहाँ मनु को एकात्म की अनुभूति होती है। वे यहाँ विराट नृत्य का दर्शन करते हैं और आनन्द में लीन हो जाते हैं।

कामायनी के कथानक में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और रूपक तत्व –

'कामायनी' के कथानक में मनोवैज्ञानिक तत्वों का पूर्ण रूप से निर्वाह है। कथानक के रूप में मानव का क्रमिक विकास उपस्थित हो गया है। 'कामायनी' में मानवत्व की विवेचना प्रतीकात्मकता रूप में हो गई है। किन्तु उसका आधार ऐतिहासिक ही रहा है। 'कामायनी' के सर्गों का नाम मानवीय भावनाओं के आधार पर है। उन भावनाओं का क्रमिक विकास उपस्थित हो जाता है।

मनु मन के प्रतीक हैं। प्रत्येक व्यक्ति का मन न जाने कितनी चिन्ताओं का निवास-स्थान होता है। चिन्ता किसी-न-किसी अभाव के कारण उत्पन्न होती है। इस अभाव से मुक्ति पाने के लिए हृदय में आशा का उदय होता है। आशा के पश्चात् यश्रद्धा जीवन में आती है। श्रद्धा के मिल जाने से काम का प्रभाव होता है। यकाम के पश्चात् वासना और फिर लज्जा जीवन का प्रधान गुण बनकर आती है। इसी समय जीवन में कर्म की प्रधानता होती है। और साथ ही साथ ना समझी के कारण ईष्या भी होने लगती है ईर्ष्या से मानव पथ-भ्रष्ट हो जाता है। ईर्ष्या अहं को जन्म देती है, जिससे मनुष्य इड़ा (बुद्धि) की शरण लेता है और भौतिक विकास का स्वप्न देखता है परन्तु बुद्धि और भौतिकता के अतिरेक में संघर्ष होता है जिससे मनु पुन: श्रद्धा की शरण में आता है। वह संकुचित होकर भागना चाहता है, किन्तु श्रद्धा उसका साथ नहीं छोड़ती और उसे ऊपर उठाती हुई आनन्द की ओर ले जाती है। अब मन में यनिर्वेद आ जाता है। मन द्वैत बुद्धि को त्याग देता है। वह क्रिया, ज्ञान और इच्छा को त्यागकर श्रद्धा की सहायता से आनन्द में लीन हो जाता है। इस प्रकार मन चिन्ता का परित्याग कर श्रद्धा, काम, वासना, कर्म, लज्जा, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन और रहस्य की भूमिकाओं को पार करता हुआ अन्त में आनन्द को प्राप्त करता है।

कामायनी का प्रारम्भ ही वैसे प्रकृति की गोद से होता है और उसका पर्यावसान भी प्रकृति की शीतल छाया से हुआ है।

प्रसादजी के काव्य कामायनी में छायावादी – काव्य की सभी विशेषताएँ मिलती है–

1. प्रकृति का मानवीकरण।
2. प्रेम ओर सौंदर्य का अंकन।
3. प्रतीकों का अधिकता से प्रयोग

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) एम. ए., पीएच.डी., 65, बनियावाड़ी, दीक्षित फोटो स्टीडियों के पास, धार (म.प्र.) भारत

4. मूर्त उपमेय एवं अमूर्त उपमानों का अधिक प्रयोग

सौन्दर्य दर्शन – प्रसादजी ने प्रेमसाधना के पथ में प्रकृति को अपना सबसे बड़ा सम्बल बनाया है। उन्हें बहिर्जगत में जितनी वेदना एवं निराशा मिली, वह सब उनके काव्य में प्रकृति का सहारा लेकर अभिव्यक्त हो उठी। प्रकृति में उन्होंने अनन्त चेतन सौंदर्य के दर्शन किये। सुमनों में उन्होंने अभीष्ट मुस्कान पाई। उषा में प्रेयसी का साक्षात्कार किया। खग–कुल के कलरव में उन्होंने प्रेम संगीत की अलौकिक ध्वनि सुनी। प्रकृति उनके लिए जड़–पदार्थो का सुन्दर भण्डार मात्र न होकर सजीव सुन्दरी बन गई उन्होंने एक–दूसरे के हृदय की व्यथा–कथा कही–सुनी।

उषा सुनहले तीर बरसाती जय लक्ष्मी सी उदित हुई।
उधर पराजित काल–रात्रि भी जल में अन्तर्निहित हुई।

प्रसादजी के महाकाव्य 'कामायनी' की नायिका श्रद्धा का निर्माण ही पराग परमाणुओं से हुआ है।

कुसुम–कानन–अंचल में मन्द,
पवन प्रेरित सौरभ–साकार।
रचित परमाणु पराग शरीर,
खड़ा होले मधु का आधार।।

प्रसादजी अमृत भावों का सौंदर्य– चित्र उपस्थित करने में तो अपनी समता नहीं रखते । उन्होंने 'कामायनी' में चिन्ता, वासना, काम, लज्जा आदि सभी मानवीय भावों को मूर्तिमान कर दिया हैं।

वैसी ही माया में लिपटी
अधरों पर उँगली धरे हुए।
माधव के सरस कुतूहल का,
आँखों में पानी भरे हुए।।

मानव सौंदर्य का वर्णन – श्रद्धा का रूप वर्णन करते हुए प्रसादजी ने कामायनी में लिखा हैं –

नील परिधान बीच सुकुमार,
खुल रहा मृदुल अध खुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघ बन बीच गुलाबी रंग।।

'कामायनी' में सौंदर्य वर्णन – कामायनी में कवि ने मानवीय वृत्तियों का बड़ा ही भव्य वर्णन किया है। चिन्ता के लिए कहा हैं –

हे अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खल लेखा।
हरी भरी सी दौड़ धूप औं, जल माला की चल रेखा।

स्वानुभूति सुख–दुख का निरूपण – **कवि की अस्थि माँस–** निर्मित काया की अन्तर्ब्राह्य की कुछ अपनी अनुभूतियाँ होती हैं। वह उन्हें जब अपने अन्तर में समाहित नहीं कर पाता तो वे ही भाव उसके छन्द बनकर फूट पड़ते हैं। 'कामायनी' महाकाव्य के यश्रद्धा सर्ग में मनु की निराशा के ऊपर श्रद्धा का आशा और प्रेरणात्मक जीवन्त सन्देश इसका सुन्दर उदाहरण है।

भूलता ही जाता दिन–
रात सजल अभिलाषा कलित अतीत,
बढ़ रहा तिमिर गर्भ में नित्य,

दीन जीवन का यह संगीत।प्रकृति का मानवीकरण – छायावादी शैली की प्रमुख विशेषता मानवीकरण का प्रयोग है। प्रसादजी ने मानवीकरण के सजीव चित्र उपस्थित किये हैं।

सिन्धु सेज पर धरा वधू
अब तनिक संकुचित बैठी सी।
प्रलय निशा की स्मृति हलचल में
मान किए सी, ऐंठी सी

आध्यात्मिकता – श्रृंगार में रमने वाला कवि कोरी ऐहिक वासना या भौतिकता में लीन नहीं है। वह इस चराचर में किसी अव्यक्त सत्ता के दर्शन भी करता है, जो विश्व के कण–कण में व्याप्त है। उसी के भ्रू–भ्रंग से यह समस्त विश्व संचालित हो गया है।

तृण वीरूध लहलहे हो रहे, किसके रस में सिंचे हुए?
सिर नीचा कर किसकी सत्ता सब करते स्वीकार यहाँ?
सदा मौन ही प्रवचन करते जिसका वह अस्तित्व कहाँ?
हे अनन्त रमणीय ! कौन तुम यह मैं कैसै कह सकता?

मानवता का महत्व – प्रसादजी अपने काव्य में छायावादकी अभिव्यक्ति में पूर्णसफल हुए हैं। वे छायावादके आदि और प्रमुख कवि हैं। उनको लेकर छायावाद एक वाद के नाम से साहित्य में अपना अस्तित्व स्थापित कर सका। प्रसाद में मानव मात्र की समानता, विश्वबन्धुत्व करूणा के भाव सर्वत्र व्याप्त हैं। 'कामायनी' की नायिका श्रद्धा स्पष्ट करती है –

औरों को हँसते देखो मनु, हँसों और सुख पावों।
अपने सुख को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ।

अभिव्यंजना में लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता और मूर्तिमत्ता – छायावादी भावगत विशेषताओं से जहाँ प्रसाद की काव्य–निधि पूर्ण है, वहाँ उनकी शैली में छायावादी सभी विशेषताएँ देखने को मिलती है। वह छायावादी शैली के सभी अंगो–उपांगो से पूर्ण है। लाक्षणिकता, वैचित्यमूलक विरोधाभास, मानवीकरण, विशेषण–विपर्यय, छन्द–वैचित्र्य, प्रतीक–विधान, सादृश्य से आगे बढ़कर उनके काव्य में सार्धमूलक उपमाएँ, रमणीय कोमल कल्याण के सहारे अप्रस्तुत विधान,भाषा में कोमलता तथा स्निग्धता आदि विशेषताएँ जैसे प्रसाद की अपनी हैं।

प्रसादजी का काव्य अनुभूति प्रधान है। कलापक्ष ने अभिव्यकित्व को निखार दिया हैं। प्रसादजी मुख्यत: सौंदर्य और प्रेम के कवि हैं। उनका लौकिक प्रेम विकसित होकर अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति करने लगता है। प्रसादजी के काव्य में प्रकृति के विस्तृत चित्र उपस्थित हुए है।

'कामायनी' में प्रकृति के सौम्य और रोद्र दोनों ही रूप देखने को मिलते हैं। 'कामायनी' के प्रलय वर्णन में प्रकृति के कठोर रूप का चित्रण किया है।

लहरें व्योम चूमने उठतीं चपलायें असख्य नचतीं।
गरल जलद की खड़ी झड़ी में बूँदें निज संसृति रचतीं।
चपलाएँ उस जलधि विश्व में स्वयं चमत्कृत होती थीं।
ज्यों विराट बाड़व ज्वालायें खंड–खंड हो रोती थीं।

प्रतीकात्मकता – प्रतीकात्मकता का सहारा लेकर छायावादी कवियों ने अपने अन्तस की गहनता, विदग्धता, भावुकता और मार्मिकता को सफल अभिव्यक्ति दी है। कवि प्रसाद तो प्रतीकों के लिए प्रसिद्ध हैं। उनके सभी सम्भाव्य उपमान प्रतीकों के सहारे ही काव्य की कलित काया में अभिव्यक्त हुए हैं। वे मूर्त में अमूर्त और अमूर्त में मूर्त का विधान करते हुए सौंदर्य की सृष्टि करते हैं।

इन्द्रनील मणि महाचषक था,
सोम–रहित उलटा लटका।
आज पवन मृदु सांस ले रहा,
जैसे बीत गय खटका।

मूर्तिमत्ता – प्रसादजी का शब्द–विधान ऐसा सुनियोजित एवं संगठित है कि वह शैली में गतिशीलता एवं संगीतात्मकता के साथ चित्रमयता उपस्थित करता चलता है।

मसृण गांधार देश के नील, रोम वाले मेषों के चर्म।
ढँक रहे थे उसका वपु कान्त, बन रहा था वह कोमल वर्म।

रसयोजना – प्रसादजी के काव्य में रस परिपाक स्वाभाविक रूप से हुआ है। शान्त और श्रृंगार रस की पवनधारा प्रवाहित होती है, किन्तु उसका पर्यावसान प्रसादत्व में हो जाता है।

शान्त रस तो 'कामायनी' में सर्वत्र मिलता है, विशेषकर अंतिम सर्गों में श्रृंगार रस के दर्शन भी अन्त में शान्त में बदल जाते हैं। श्रृंगार रस द्धारा शान्त रस की खोज ही 'कामायनी' का विषय है।

बन जाता सिद्धांत प्रथम, तब पुष्टि हुआ करती है।
बुद्धि उसी कण को सबसे ले, सदा भरा करती है।
पवन वही हिलकोर उठाता, वही तरलता जलमें।
वही प्रतिध्वनि अन्तर्गत की, छा जाती नभ तल में।

प्रसादजी की कोमल कल्पना ने प्रेम के स्वरूप को उपस्थित करते हुए मधुर और कोमल भावनाओं से कविता कामिनी का श्रृंगार किया।

अलंकार योजना के रूप में प्रकृति चित्रण – अलंकृत वर्णनों की तो प्रसादजी के प्रकृति चित्रण में कमी ही नहीं है। कामायनी के श्रद्धा सर्ग में तो श्रद्धा का रूप चित्रण करते हुए कवि ने सौंदर्य के लिए प्राकृतिक उपादानों की झड़ी लगा दी है। रंग साम्य एवं प्रभाव साम्य की दृष्टि से यह सादृश्य योजना अत्यन्त स्वाभाविक एवं मार्मिक है।

और उस मुख पर वह मुसकान,
रक्त किसलय पर ले विश्राम,
अरूण की एक किरण अम्लान,
अधिक अलसाई हो अभिराम।।

मूर्त उपमेय – श्रद्धा
श्रद्धा के अमूर्त उपमेय – 'हृदय की अनुकृति बाह्य उदार'
श्रद्धा के अमूर्त उपमान – 1. 'उषा की पहली लेखा कांत' 2. 'भोर की तारक द्युति की गोद', 3. 'खिला हो ज्यों बिजली का फूल'

प्रसादजी का काव्य 'कामायनी' काव्य–कला की सच्ची अभिव्यक्ति है। सच्ची मानवता के दर्शन उनके काव्य में बिखरे पड़े हैं। 'कामायनी' में मानवता ने भौतिकतावाद पर विजय पाई है। उसमें भावपक्ष और कलापक्ष का मणिकांचन संयोग हुआ है। सोने में सुहागा मिलकर आपकी एक दर्शनीय और प्रशंसनीय काव्य–साधना मूर्त हो गई हैं।

निष्कर्ष – प्रसादजी प्रेम और प्रकृति के कवि हैं। सौंदर्य के अनूठे चित्र उनकी कविता में मिलते हैं। प्रकृति जीवन में रहस्य भावना का आरोप प्रसादजी ने किया। उन्होंने नारी और प्रकृति का मूल्यांकन नये दृष्टिकोण से किया है। नारी उन्हें जीवन की प्रेरणा देती है और प्रकृति जीवन के लिए विश्वास।

प्रसादजी के चिन्तन पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव था। उनका अध्ययन विशाल था। वेद–वेदान्तों का उन्होंने मन्थन किया था। बौद्ध साहित्य से करूणा तथा वेदान्त में उन्होंने विराट चेतना ग्रहण की थी और शिवतत्व की आराधना से आनन्दवाद का सन्देश दिया था। जन कल्याण की भावना प्रसाद काव्य की मुख्य भावना है। मानव जीवन के लिए आनन्द का विधान वे सर्वोपरि समझते थे।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रसादजी का नाम युग प्रवर्तक साहित्यकार के रूप में सुरक्षित रहेगा। उनके समान मौलिक प्रतिभा बहुत कम कवियों में पाई जाती है। छायावाद के साथ उनका नाम सदैव जुड़ा रहेगा।

उनके अमर ग्रन्थ 'कामायनी' ने उन्हें प्रथम कोटि का कवि सिद्ध कर दिया। उनकी लेखनी के स्पर्श से साहित्य का प्रत्येक अंग जगमगा उठा है। 'कामायनी' में प्रसादजी की काव्य साधना अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में 'कामायनी' का शीर्ष स्थान है। वह छायावादी काव्यधारा का प्रतिनिधि काव्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सम्पादक एवं परिवर्धक हिन्दी साहित्य – डॉ. शिशिर एवं शालिनी, विद्याभवन, 620 खजूरी बाजार, इन्दौर।
2. आर.पी. श्रीवास्तव एवं के.एल. गुप्ता – संघवी प्रकाशन, इन्दौर।
3. केशरीनंदन मिश्र (पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) शास. महाविद्यालय, खरगोन।
4. हिन्दी एच्छिक – डॉ. मंजुला सक्सेना, अरविन्द बुक हाउस।
5. हिन्दी दर्शन एम.एल. जैन, बी.एल. त्रिवेदी, गुप्ता प्रकाशन देवास गेट, उज्जैन।
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य दुर्गाशंकर मिश्र।

****

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्य परकता की आवश्यकता

डॉ सुनील शर्मा *

शोध सारांश – असफलता तब ही आती है, जब हम अपने आदर्श, उद्देश्य और सिध्दांत तथा मूल्य भूल जाते है।

मूल्य हमारी आस्थाओं और सामाजिक मर्यादाओं पर आधारित आचरण के सिध्दांत है। मानवीय मूल्य भारतीय संस्कृति की पहचान है। पूर्वजों से विरासत में मिली अनमोल धरोहर है। जो संपूर्ण विश्व में भारत की पहचान का प्रतीक है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान में मूल्यों की संख्या 83 बतलाई गई है। जिनमें संयम, स्वानुशासन, स्वसम्मान, स्वसमर्थन, आत्म निर्भरता, कृतज्ञता, अहिंसा, दया, ईमानदारी, समय की पाबंदी, न्याय, सहिष्णुता आदि मुख्य है।

प्रस्तावना – मानवीय मूल्य मानव जीवन की रीढ है। जिस पर बडी-बडी इमारतें खडी की जा सकती है। भारतीय सभ्यता के इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो रामायणकाल की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होता है। जिसमें उस काल के नर नारी नैतिकता के आचरण से परिपूर्ण रहे थे। मर्यादा पुरूषोत्तम राम स्वयं नैतिकता की पराकाष्ठा के सशक्त उदाहरण है, जिन्होंने पिता के वचन के लिए बिना अपराध के ही 14 वर्षो का वनवास सहर्ष स्वीकार किया था। साथ ही जीवन पर्यन्त नैतिकता का आचरण करते रहे वहीं उनके अनुज भरत ने 14 वर्ष बाद राम के वनवास से लौटने पर राज्य राम को वापस किया। भगवतगीता में 26 मानवीय मूल्यों की विवेचना है जो कि वाल्मिकी रामायण के समान ही है। इसी प्रकार महाभारत काल में भी आपसी युध्द के बावजूद भी मर्यादाओं का तथा नैतिकता का आचरण किया जाता रहा। युध्द के अपने नियम थे, धोखेबाजी नहीं थी तथा समय का पालन होता था। मूल्य परकता भारतीय संस्कृति की पहचान हमेशा से रही है। जो पूर्वजों से मिली विरासत के रूप में अनमोल है। विश्व में भारत की पहचान अपने जीवन मूल्य है। जहॉ बेटा (श्रवणकुमार) माता-पिता की कावड को अपने कंधों पर रखकर तीर्थाटन करवाता है। वहीं शिष्य (एकलव्य) गुरूदक्षिणा में अपना अंगूठा गुरू को दान करता है, शिष्य (अरूणी) गुरू के आदेश खेत को बाढ से बचाने के लिए स्वयं खेत लेटकर बंधान का काम करता है। भारत ही विश्व में ऐसा देश रहा है, जहॉ जन्म से पहले ही गर्भाधान से ही व्यक्ति को संस्कार देने की परंपरा रही है। वर्ण, आश्रम, पुरूषार्थ, संस्कार आदि के द्वारा व्यक्ति को नैतिक, बौध्दिक एवं भौतिक रूप से परिस्कृत किया जाता रहा है।

मानवीय मूल्यों के संबंध में गया है कि **मानवीय मूल्य हिमालय के समान दृढ, विष्णु के समान शूरवीर, चंद्र के समान सोम्य तथा आनंददायक है। जो पृथ्वी के समान धैर्यवान, कुबैर के समान दानी भी है।**

देश के इसके बाद का इतिहास भी बेहतर मूल्यपरक आचरण से परिपूर्ण रहा है। किंतु 20 सदीं के अंत तथा 21 वी सदीं के बाद से आचरण में निरंतर परिवर्तन हो रहे परिलक्षित होते है। आज भाई-भाई का शत्रु बनकर कार्य कर रहा है। पुत्र का माता- पिता के प्रति ऐसा आचरण हो रहा है कि पीडित अभिभावकों को वृध्दाश्रमों को अपनी शरण स्थली बनना पड रहा है। वहीं लगातार चोरी, डकैती, बलात्कार, यौन अपराधों, हत्या, आत्महत्या आदि की धटनाओं में लगातार वृध्दि हो रही है। यह नैतिक मूल्यों के पतन की पराकाष्ठा ही है। आज टी0वी चैनलों में ऐसे कार्यक्रम दिखाए जा रहे है जो परिवार के समस्त सदस्य एक साथ बैठकर नहीं देख सकते। मादकपदार्थो का बेरोक-टोक सेवन बढता जा रहा है। वहीं साइबर अपराध और दूषित वेवसाईट इनको बढ़ावा दे रही है। आज बाजार में नैतिक आचरण को सकारात्मक बनाने का साहित्य भी नदारद होत जा रहा है।

आज समाचार पत्रों में प्राय: ऐसी धटनाऐं प्रकाशित होती रहती है कि जिस पढकर पालको के मुख से ये शब्द स्वत: ही निकल पडते है कि समाज कितना गिर गया है। नैतिकता नाम की कोई चीज नहीं रह गई है। जब कही कोई गलत या अनुचित घटना घटती है तो लोग मानवीय मूल्यों की दुहाई देने लगते है। आधुनिक परिवार में पति-पत्नी में भी परस्पर समर्पण की भावना का अभाव स्पष्टत: परिलक्षित हो रहा है। दोनों के अपने -अपने अहंकार है और इसीलिय तलाक आदि के मामले बढ रहे है, जिनसे परिवारों का विधटन हो रहा है। समर्पण की कमी और अहंकार की अधिकता ने चारिऍिक पतन को भी विस्तार दिया है। आज धनवान और दबंग ही सामाजिक प्रतिष्ठा पा रहा है, ऐसा दृष्टिगोचर हो रहा है। भौतिक सुविधाओं की चकाचौध से सब अंधे हुए जा रहे है। देश और समाज के प्रति समर्पण की भावना कमतर नजर आ रही है। कर्तव्यनिष्ठा.समर्पण और मूल्यआधारित बात करने वाले व्यक्तियों को मूर्ख और अव्यावहारिक माना जा रहा है। क्योंकि सफलता के, सफल जीवन में मापदंड परिवर्तित हो गए है। उत्तरोत्तर मानवीय मूल्यों के अभाव में व्यक्ति के चरित्र में गिरावट आती रही है। अपराधों का ग्राफ लगातार बढता जा रहा है। चोरी, डकैती, बलात्कार, हत्याऐं इसलिए ज्यादा हो रही हैं कि व्यक्ति स्वयं के जीवन में उच्च आदर्शो, नैतिकता और मानवीय मूल्यों को जीवन में पर्याप्त स्थान नहीं दे पा रहा है। मनुष्य संसार की सर्वोच्च विकसित रचना है। जब भी मूल्यों की बात होती है, तब हमें प्रसिध्द समाजविद् श्री राधाकमल मुखर्जी का यह कथन स्मरण आता है मूल्य समाज द्वारा अनुमोदित उन इच्छाओं के रूप में प्रकट होते है, जिन्हें अनुबंधन या सामाजिकरण की प्रक्रिया द्वारा आत्मसात किया जाता है। जो व्यक्तिगत मानकों तथा आकांक्षाओं के रूप में परिवर्तित हो जाते है। मूल्य हमारे समग्र व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है। मूल्य ही व्यक्ति को सदाचारी अथवा कदाचारी

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

बनाते है। मूल्यों की सही पहचान और उनका अनुशरण हमें सामाजिक स्तर पर मान्यता प्रदान करता है। माननीय मूल्य मनुष्य के सुखी, संयमित और समाजोपयोगी जीवन के लिए सशक्त आधार प्रदान करते है। मूल्यों की कमी सामाजिक विधटन की ओर संकेत करती है। संपूर्ण जीव जगत में मनुष्य जीवन प्राणियों और वनस्पतियों से भिन्न है। व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना करना आज की महती आवश्यकता है। यह तब ही संभव है, जब मनुष्य अपने भीतर के अहंकार, स्वार्थ व स्वनिर्मित आत्मधाती भय से ऊपर उठने की साधना करें।

प्रगति की इस अंधी दौड में बराबरी करने के लिए युवा वर्ग किसी भी मर्यादा को नष्ट करने की स्थिति में हैं। जब माता-पिता ही बच्चों को समय नहीं दे पाते है तो बच्चों में मानवीय मूल्यों का विकास कैसे और क्यों होगा ?

सफलता और सफल जीवन के पैमानों पर परिवर्तन आ चुका है। भारत की 65 प्रतिशत आबादी युवावर्ग की है। युवा अनेक क्षेत्रों जैसे-खेल, विज्ञान, अंतरिक्ष तथा आर्थिक एवं राजनैतिक तथा समाजसेवा के क्षेत्र में कीर्तिमान बना रहा है। वहीं मूल्यपरकता पीछे छूटती जा रही है।

समाज से आदर्शों का विलुप्त होना, सदाचारों का खंडित होना या नष्ट हो जाना व्यक्तिगत जीवन मूल्यों का भी विनाश है और जीवन मूल्यों पर व्यक्तिगत अनास्था, सामाजिक चरित्र का पतन है। इसलिए सुधार व्यक्तिगत एवं समाज दोनों स्तर पर समानान्तर और समान रूप से होना बहुत आवश्यक है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली लार्ड मेकाले की शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् क्लर्क बनाने की पध्दति है कि न कि एक संपूर्ण मानवीय मूल्यपरक व्यक्तित्व निर्माण की । हम आजादी के 67 वर्ष बाद भी हम उसी शिक्षा के सहारे युवाओं में मूल्यपरकता की आशा कर रहे है। दया, माया, मोह, प्रेम, पड़ोस, धर्म का निर्वाह, परोपकार, त्याग, मानवता, भाईचारा, इन सभी शब्दों को हम मानवीय मूल्य कहते है। परंतु अब इन सभी मूल्यों का विधटन हो रहा है। आधुनिक परिवारों में बच्चों को अति-महत्वाकांक्षी बनाया जाता है। जिससे वह केवल भौतिक सुख-सुविधाओं को प्राप्त करने वाली मशीन की तरह बन जाता है। अभिभावकों द्वारा बच्चों को अच्छे संस्कार देने के स्थान पर उनके हाथों में लेपटॉप और मोबाईल इंटरनेट थमा दिए जाते है। बडे होने पर महंगे मोबाईल और महंगी गाडियॉ दिला दी जाती हैं, और इसे फर्ज पूरा कर लिया ऐसा माना जाता है।

अब समय आ गया है कि, वर्तमान शिक्षा प्रणाली में आधुनिकता के साथ-साथ भारतीय संस्कृति, संभ्यता से ओत-प्रोत मूल्यों पर आधारित शिक्षा का समावेष किया जावे। इसके लिए निम्न सद् प्रयासों की नितांत आवश्यकता है-

1. वर्तमान में संचालित प्रत्येक पाठ्यक्रम स्कूली शिक्षा से लेकर उच्चशिक्षा तक में मूल्यों पर आधारित कम से कम दो पुस्तकों का समावेष प्रत्येक वर्ष के पाठयक्रमों में किया जावे।
2. विधालयों, महाविधालयों में मूल्यपरकता पर आधारित प्रकोष्ठों की स्थापना की जावे।
3. विधालयों, महाविधालयों में विद्यार्थियों को सामान्य सुविधा वाले मोबाईल संचालित करने की अनुमति दी जावे, स्मार्ट मोबाईल प्रतिबंधित हो।
4. कम्प्युटर/इंटरनेट पर नैतिक आचरण के विरूध्द वेबसाइट प्रतिबंधित की जावे, इसका उपयोग करते पाये जाने पर कठोर कार्यवाही सुनिश्चित की जाना चाहिये।
5. प्रत्येक माह में मूल्यपरकता प्रकोष्ठ द्वारा नैतिकता पर आधारित निबंध, भाषण, वाद-विवाद, पोस्टर निर्माण, रांगोली आदि की प्रतिस्पध्दएिं आयोजित की जाना चाहिये।
6. महापुरूषों के सदविचारों, जीवनी आदि को विद्यार्थियों के पाठयक्रमों का हिस्सा बनाया जावे।
7. धैर्य, संस्कार, करूणा, ममता, दया, सहयोग, समभाव, प्रेम, परोपकार, आदर्श, आदि से संबंधित कहानियों, प्रसंगों को शिक्षा में समावेष किया जाना चाहिये।
8. शिक्षा में सभी बडों के प्रति सम्मान, आदरभाव के साथ ही मर्यादा, सात्विक जीवन और अनुशासन का पाठ नित्य रूप से पढाया जावे।
9. विद्यालयों/महाविद्यालयों में सामान्य शिक्षा के साथ ही योग, प्राणायाम, ध्यान आदि की सतत् कक्षाऐं आयोजित की जावे, जिनमें सभी विद्यार्थियों की उपस्थिति अनिवार्य हो। जिससे विद्यार्थी तन और मन से स्वस्थ्य हो सकेगे।
10. विद्यालयों/महाविद्यालयों में खेलमैदानों को विकसित करने के साथ ही प्रत्येक विद्यार्थी के लिए किसी न किसी खेल में सहभागिता अनिवार्य हो।
11. नैतिक मूल्य पर आधारित साहित्य का अधिक मात्रा में सृजन करने के साथ ही उनका समुचित प्रयोग सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

निष्कर्षत: कुल मिलाकर नैतिकता पतन के चरम पर पहुँच चूकी है। आवश्यकता है कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता को पुर्न जीवित किया जावे। इसके लिए वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्यपरकता का समावेश किया जाना आवश्यक है। इसके साथ ही टी0वी0 चैनल, साहित्य आदि को सकारात्मक बनाने की आवश्यकता है। पाठयक्रमों में मूल्य आधारित शिक्षा को अनिवार्यत: शामिल किये जाने की आवष्यकता है। इस संदर्भ में सब टीवी पर प्रसारित होने वाला सीरियल 'तारक मेहता का उल्टा चश्मा' युवा पीढी को आधुनिक परिवेश में जीने के साथ ही नैतिकता एवं बढों के प्रति आदर भाव के साथ ही मूल्यपरकता पर आधारित शिक्षा प्रदान करने में सफल हुआ है।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

रघुवीर सहाय का काव्य - संसार

डॉ. सरोज जैन *

शोध सारांश - हिन्दी साहित्य में रघुवीर सहाय की पहचान उनके केवल काव्य जगत् से नहीं है। वे पत्रकार और एक प्रकार से राजनीति कर्मी भी रहे। अपने बहुस्तरीय व्यक्तित्व के कारण रघुवीर सहाय ने विश्व और भारतीय समाज को संपूर्णता में देखा और उन्हें अपने लेखन के विविध रूपों में चित्रित किया। कवि, पत्रकार और राजनीतिकर्मी के रूप में उनका यह त्रिआयामी व्यक्तित्व एक-दूसरे से संपृक्त था। रघुवीर सहाय के आरंभिक दौर की एक कविता पंक्ति है 'यह दुनिया बहुत बड़ी है, जीवन लंबा है'। इस छोटी सी पंक्ति में उनकी रचना में यात्रा के महत्व का मर्म निहित है। अपने लेखन के आरंभिक वर्षो में ही दुनिया के बहुत बड़े होने के अहसास ने उन्हें बड़ा लेखक बनाया। त्रिलोचनजी के अनुसार 'कौन लेखक कितना बड़ा है इसकी पहचान इस बात से होती है कि उसकी दुनिया कितनी बड़ी है। उसके लेखन में मनुष्य और उसकी दुनिया का कितना बड़ा हिस्सा चित्रित हुआ है। प्रेमचंद सबसे पहले इसलिए बड़े लेखक है क्योंकि उनकी रचना का समाज किसी भी हिंदी लेखक की तुलना में बड़ा है। रघुवीर सहाय ने अपने समय के आदमी की दुनिया को सुक्ष्मता के साथ इतने अधिक स्तरों पर अंकित किया है कि उनका कोई क्षमतावान समकालीन भी ज्यादा दूर तक उनके साथ टिक नहीं सकता।

प्रस्तावना - रघुवीर सहाय का जन्म 9 दिसम्बर 1929 ई. को लखनऊ (उ.प्र.) में हुआ था। वे छोटी उम्र से ही कविता लिखने लगे थे। आरंभ के वर्षो में उनकी रचनाओं में जमीन की तलाश मिलती है। इन दिनों वे प्रगतिशील लेखक संघ की लखनऊ शाखा के संपर्क में भी रहे। 1951 में दूसरा सप्तक में उनकी प्रकाशित कविताओं ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया और उसी साल वे इलाहाबाद में अज्ञेय के साथ 'प्रतीक' में रहे। युग चेतना में हिन्दी विषय पर उनकी एक कविता प्रकाशित हुई। इस कविता पर हिन्दी के एक वर्ग ने रोष व्यक्त किया और अनेक पत्रों में इसका विरोध आया। विरोध करने वालों में से अधिकांश प्रभावशाली पदों पर थे। 'प्रतीक' के ही सिलसिले में वे दिल्ली आए और उसके बंद हो जाने पर मई 53 से मार्च 57 तक आकाशवाणी में संवाददाता रहे। 1959 में अज्ञेय के साथ अंग्रेजी त्रैमासिक वाक् निकाला। 1963 से फरवरी 1968 तक नवभारत टाइम्स के विशेष संवाददाता रहे। मार्च 1968 में समाचार संपादक होकर दिनमान में गए। 1970 से मार्च 1983 तक दिनमान का संपादन किया। इसके बाद वे स्वतंत्र लेखन करने लगे। अनुवाद, नाटक और कई पत्रों के स्तंभ लिखे। त्रिलोचनजी के अनुसार 'कौन लेखक कितना बड़ा है इसकी पहचान इस बात से होती है कि उसकी दुनिया कितनी बड़ी है। उसके लेखन में मनुष्य और उसकी दुनिया का कितना बड़ा हिस्सा चित्रित हुआ है। प्रेमचंद सबसे पहले इसलिए बड़े लेखक है क्योंकि उनकी रचना का समाज किसी भी हिंदी लेखक की तुलना में बड़ा है। रघुवीर सहाय ने अपने समय के आदमी की दुनिया को सुक्ष्मता के साथ इतने अधिक स्तरों पर अंकित किया है कि उनका कोई क्षमतावान समकालीन भी ज्यादा दूर तक उनके साथ टिक नहीं सकता।[1]

रघुवीर सहाय का जीवन हलचलों से भरा था। अपने लेखन के आरंभिक वर्षो से अंतिम वर्षों तक वे निरंतर रचना के अनेक मोर्चो पर सक्रिय रहे। बोली जाने वाली भाषा के साथ लगाव का ही एक रूप है उनकी कविता की मौखिक या श्रव्य परंपरा में गहरी दिलचस्पी थी। कविता पाठ के बारे में वे बेहद सजग थे और श्रोताओं तक अधिक से अधिक प्रभावी ढंग से पहुँचने के लिए लगातार प्रयत्न भी करते रहते थे। इसी प्रेरणा से उन्होंने कविता के मंचीय प्रस्तुतीकरण के लिए नाटकीय रूप में नहीं बल्कि उसकी श्रव्य सामर्थ्य को उजागर कराने के लिए एक दल भी तैयार किया जिसने अनेक बार स्वयं उनकी और दूसरे कवियों की कविताओं को आमंत्रित श्रोताओं के समक्ष बहुत रोचक ढंग से वाचन किया।

रघुवीर सहाय अत्यन्त जागरूक कवि है। आधुनिक संवेदना उनके काव्य में मूल रूप से दिखायी देती है। आज के प्रजातंत्र में सामान्य मनुष्य हर दिन मनुष्य से एक दर्जा नीचे रहने का दर्द झेल रहा है। यह स्थिति रघुवीर सहाय की कविताओं को आम आदमी की जोखिम भरी लाचारी की कविता बनाती है -

कुछ होगा कुछ होगा, अगर मैं बोलूगाँ।
न टूटे, न टूटे तिलिस्म सत्ता का।
मेरे अंदर एक कायर टूटेगा, टूट
मेरे मन टूट एक बार सही तरह।
अच्छी तरह टूट, मत झूठमूठ अब मत रूठ
मत डूब, सिर्फ टूट जैसे कि बरसों के बाद
वह आया बैठ गया आदतन एक बहस छेड़कर
गया एकाएक बाहर जोरों से नकली दरवाजा भेड़कर
दर्द-दर्द मैंने कहा क्या अब नहीं होगा
हर दिन मनुष्य से एक दरजा नीचे रहने का दर्द।

आम लोगों के संघर्ष, सत्ताधारियों की दुनिया तथा रोज-रोज तेजी से बदलती स्थितियों से उनका निकट का परिचय है। अपनी इस जानकारी का वे कविता में इस्तेमाल करते है। वे राजनीति और समाज के उस हलके में कविता की विषय वस्तु लाते हैं जहाँ कविता होगी यह कोई सोच भी नहीं सकता था। यही वजह है कि निराला के बाद वे कविता की दुनिया में नये-नये विषयों को तलाशने वाले सबसे बड़े कवि हैं।[2]

नेमीचंद्र जैन के अनुसार- 'रघुवीर सहाय की कविता का जो तत्व सबसे ज्यादा ध्यान आकर्षित करता है वह है रोजमर्रा के जीवन के सामान्य लगने वाले अनुभव में एक साथ अप्रत्याशित सघनता और वैचारिकता का समावेश। एक और उनकी कविता की दुनिया तरह-तरह के ऐसे भले-बुरे, छोटे-बड़े, साधारण विशिष्ट पर हमेशा जीते-जागते लोगों से भरी हुई है। जो अपने-

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

अपने खास नाम-धाम वाले इंसान हैं। इसने उनकी कविता को एक खास तरह की मूर्तता भी दी और तात्कालिकता भी।'[3]

रघुवीर सहाय की कविता में निरंतर सक्रिय वैचारिकता के दर्शन होते है। उनकी कविता में जिंदगी केवल सुंदर या असुंदर, आकर्षक या विक्षोभकारी स्वंतत्र चित्रों के रूप में नहीं बल्कि जीवन की विलक्षण छवियों के रूप में दिखाई देती है-

बड़ा हो रहा रहा है लड़का
उन औजारों के बिना
जिन्हे वह बनाता और तोड़ता हुआ बड़ा होता
वह सिर्फ बड़ा हो रहा है। (बड़ा हो रहा है- हंसो-हंसो जल्दी हंसो)
मैं चिथड़े चिथड़े हो गया हूँ
यही मेरी पहचान है।

शायद इसीलिए वह कविता और नाटक के गहरे संबंध को भी पहचान सके। दूसरा सप्रक में रघुवीर सहाय की सन् 1947 से 1949 ई. के बीच लिखी गयी 14 कविताएं संकलित है। - वसंत, पहला पानी, प्रभावी, याचना, गज़ल, भला, संशय, कोशिश, अनिश्चय, लापरवाही, समझौता, एकोऽहं, बहुस्याम, मुँह, अँधेरे और सायंकाल। रघुवीर सहाय के अनुसार- 'विचार वस्तु का कविता में खून की तरह दौड़ते रहना कविता को जीवन और शक्ति देता है, और यह तभी संभव है, जब हमारी कविता की जड़ें यथार्थ में हों ।

रघुवीर सहाय की कविताओं में शिल्प का प्रयोग सराहनीय है। जहाँ नई काव्य-भाषा के प्रयोग से अभिव्यक्ति सशक्त हुई है वही सटीक प्रकृतिक बिम्ब विधान एक नये सौंदर्य की सृष्टि करता है। 'पहला पानी' शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ-

बिजली चमकी'
सुरपति के इस लघु इंगित पर
लो यहाँ जामुनी बादल नभ में ठहर गए
आशीष दे रहे हाथों से।

'दूसरा सप्तक' में प्रकृति प्रधान ऐसी अनेक कविताएं है, जिनमें कथ्य और शिल्प दोनों का सुंदर प्रयोग हुआ। सायंकाल कविता में सूरज की तुलना शैतान छोकरे से की गई है -

दूर क्षितिज पर महुओं की दीवार खड़ी है
जिस पर चढ़कर सूरज का शैतान छोकरा झाँक रहा है।

डॉ. रामवचन राय के अनुसार कुल मिलाकर रघुवीर सहाय सप्तक परंपरा के एक सशक्त कवि हैं, जिनमें काव्य-प्रतिभा की दुर्लभ संभावनाएँ है।[4] डॉ. पवन कुमार मिश्र के अनुसार - 'रघुवीर सहाय सामाजिक यथार्थ के प्रति जागरूक है और वैज्ञानिक तरीके से वे समाज को समझने में समर्थक है'।[5]

रघुवीर सहाय का प्रथम काव्य संकलन सन् 1960 ई. में 'सीढ़ियों पर धूप' में नाम से प्रकाशित हुआ। अशोक वाजपेयी जी ने उस समय की उनकी रचनाओं को 'जीने के कर्म' की परिभाषा बताते हुए लिखा है- 'तब उनकी कविताओं में प्रेम था, स्त्री थी, सहज भावना थी, विस्मय, उत्साह, उत्सुकता थी। प्रकृति प्रेम और जिजीविषा के साथ चीजों के बीच मनुष्य होने का हर्ष, सुख और तनाव था। वह कविता कुछ आदिम से लगते संबंध और उनके विकल होकर बदलने की सुन्दरता और कोमलता की कविता थी। 'आत्म हत्या के विरूद्ध' नामक नये संकलन में जीने का कर्म, जीने के कर्म की कोशिश में बदल गया। उसका दृश्य शान्त और सहज नहीं, आक्रामक, छटपटाहट, चीत्कार भरी, सीधा, समकालीन और सार्वजनिक है।[6]

स्त्रियों और बच्चों पर होने वाले अत्याचार रघुवीर सहाय की बहुत सी रचनाओं में अभिव्यक्त हुए हैं -कई कोठरियाँ थी कतार में -

उनमें किसी में एक औरत ले जाई गई।
थोड़ी देर बाद उसका रोना सुनाई दिया।
उसी रोने हमें जाननी थी एक पूरी कथा
उसके बचपन से जवानी तक की कथा। (औरत की जिंदगी)

भाषा के साथ तो वे किसी कुम्हार या अच्छे बढ़ई की तरह श्रम करते थे। बनवारी के अनुसार 'वे अक्सर हमें बताते थे कि किसी लेख का शीर्षक' सिर्फ खूंटी नहीं होता कि वह लेख टांगने के लिए ही इस्तेमाल की जानी है। जब तक उसमें कोई रचनात्मक कौशल न हो तब तक वह शीर्षक किस काम का। सबसे सरस बात कहने के लिए भी कुम्हार की तरह मिट्टी को देर तक गूंथना पड़ता हैं या बढ़ई की तरह लकड़ी पर देर तक रंदा चलाना पड़ता है। डॉ. कांतिकुमार जैन के अनुसार - 'रघुवीर सहाय की भाषा खड़ी बोली के अपने व्यक्तित्व को बिना किसी साज-श्रृगांर अथवा दुख-संकोच के व्यवहार में लाने की भाषा है। रघुवीर सहाय की कविता की आन्तरिक बनावट में जो तनाव व्यंग्य और 'वलगेरिटी' होती है वह खड़ी बोली के अपने संस्कारों के बहुत पास है। रघुवीर सहाय अपनी कविता में चालू शब्दों के माध्यम से और विशिष्ट प्रकार की आनुप्रासिक योजना द्वारा बहुत व्यंजक अर्थवत्ता भर देते हैं।[7]' जैसे कि-

अन्याय आराम से होगा, हराम से होगा।
आम राय से होगा, नहीं तो कुछ नहीं होगा देश में।।

अशोक बाजपेयी जी के अनुसार यथार्थ की पहचान एक नई साहसिकता की माँग करती है ऐसी साहसिकता जिसमें अपने आपका जहरीला विश्लेषण कराना पड़े। रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, ऋतुराज, धूमिल आदि युवा कवियों की कविता इसलिए जोखिम की कविता है।[8] रघुवीर सहाय के शब्दों में -

भाषा कोरे वादों से
वायदों से भ्रष्ट हो चुकी है
सबकी न सही यह कविता
यह मेरे हाथ की छटपटाहट ही सही।

आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी ने 'नयी कविता' नामक अपने निबंध में हिन्दी की नयी कविता पर विचार व्यक्त करते हुए लिखा है 'वर्तमान काव्य का भविष्य बहुत कुछ देश के राजनीतिक भविष्य पर अवलंबित है। यदि देश में राजनीतिक क्रांति सफल हो गई तो वर्तमान काव्य का बहुत कुछ कायाकल्प हो जाएगा। हिन्दी कविता में प्रगतिवादी पक्ष का प्राबल्य होगा और नयी कविता वीर गीतों तथा वीर प्रबधों की ओर अग्रसर होगी।'[9]

देश में राजनीतिक क्रांति तो हुई किंतु वह सफल नहीं हो पायी राजनीतिक क्रांति के फलस्वरूप काव्य का कायाकल्प हुआ किंतु क्रांति की असफलता के कारण आचार्य वाजपेयी ने जिन वीर गीतों तथा वीर प्रबंधों की संभावना प्रकट की थी वह अधूरी रह गयी। राजनीतिक क्रांति की असफलता के फलस्वरूप देश में विद्रूप, विडम्बना और लाचारी का जो वातावरण है रघुवीर सहाय की कविता इसका ज्वलंत प्रमाण हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. त्रिलोचन, रविवारीय जनसत्ता मुख पृष्ठ दिनांक 13.01.1991
2. सुरेश शर्मा संपादक, रघुवीर सहाय रचनावली भाग-1 पृष्ठ9
3. नेमिचंद जैन, रविवारीय जनसत्ता, मुख पृष्ठ 13.01.1991
4. डॉ. रामवचन राय नई कविता उद्‌भव और विकास, पृष्ठ 138
5. डॉ. पवन कुमार मित्र प्रयोगवादी काव्य पृष्ठ 71
6. दूसरा सप्तक, पृष्ठ 150
7. डॉ. कांतिकुमार जैन नई कविता पृष्ठ 83
8. अशोक वाजपेयी फिलहाल पृष्ठ 124
9. नंददुलारे वाजपेयी नई कविता पृष्ठ 65

पर्यावरण - चुनौतियां एवं समाधान

डॉ. गुलाब सोलंकी * प्रो. वीणा बरड़े **

प्रस्तावना – पर्यावरण एक बाह्य शक्ति हैं जो कि हमें प्रभावित करती हैं। (रास जे.एस)

पर्यावरण किसी एक तत्व का नाम नहीं हैं बल्कि उन समस्त दशाओं या तत्वों का संपूर्ण योग हैं जो कि सभी प्रकार के सजीवों के जीवन एवं विकास को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

पर्यावरण दो शब्दों 'परि एवं आवरण' से बना हैं। परि-शब्द का तात्पर्य है, चारो तरफ एवं आवरण से आशय हैं, घेरा अर्थात पृथ्वी के चारो तरफ के घेरे को पर्यावरण कहते हैं।

पर्यावरण या एनवायरनमेंट शब्द फ्रेंच भाषा के एनवायरन से बना हैं जिसका अर्थ होता हैं, समस्त पारिस्थितिकी या परिवृत पर्यावरण में वह सब कुछ सम्मिलित किया जाता हैं जो मनुष्य एवं सजीवों को जीवन पर्यन्त जीवन शैली एवं कार्यशैली को प्रभावित करता हैं। मनुष्य एवं सजीवों के सभी पक्षो को पर्यावरण में सम्मिलित किया जाता हैं।

पर्यावरण के जैविक संघटको में सुक्ष्म जीवाणु से लेकर कीड़े-मकोड़े, सभी जीव जंतु और पेड़ पौधे आ जाते और इसके साथ ही उनसे जुड़ी सारी जैव क्रियाएं और प्रक्रियाएं भी। अजैविक संघटको में जीवन रहित तत्व और उनसे जुड़ी प्रक्रियाएं आती हैं, जैसे-चट्टाने, पर्वत, नदी, हवा और जलवायु के तत्व इत्यादि।

पर्यावरण का सीधा संबंध प्रकृति से हैं, अपने परिवेश में हम तरह-तरह के जीव जंतु, पेड़-पौधे तथा अन्य सजीव-निर्जीव वस्तुएं पाते हैं ये सब मिलकर पर्यावरण की रचना करते हैं। भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के संरक्षण को बहुत महत्व दिया गया हैं। भारतीय दर्शन यह मानता हैं कि मानव देह की रचना पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटको, पृथ्वी, जल, तेज वायु और आकाश से ही हुई हैं। भारतीय विचार धारा में जीवन के तीन आश्रम भी प्रकृति पर आधारित ब्रह्मचर्य, गुरूकुल, सन्यास।

भारतीय परम्परा में धार्मिक कृत्यों में वृक्ष पूजा का अत्यधिक महत्व हैं। पर्यावरण प्रकृति प्रदत्त एवं मानव निर्मित कहा जाता हैं। मनुष्य सामाजिक प्राणी हैं, जिसने अपने स्वार्थ के कारण प्राकृतिक पर्यावरण के साथ छेड़छाड़ की जिसका परिणाम यह हुआ कि प्रकृति का शुद्ध रूप मानवीय जीवन पर विपरित प्रभाव डालने लगा। प्रकृति की विनाशकारी शक्तियां मानव के बौद्धिक, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक जीवन को प्रभावित कर रही हैं।

पर्यावरण (देखे अगले पृष्ठ पर)

पर्यावरण मूलत: दो प्रकार के होते हैं - प्रथम प्रकृति प्रदत्त एवं द्वितीय मानव निर्मित, इन दोनो ही पर्यावरण से मनुष्य अपनी सीमित एवं असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति करता हैं। मनुष्य ने एक सामजिक प्राणी के रूप में अपने अधिकतम स्वार्थो की पूर्ति करने के लिए प्राकृतिक पर्यावरण के साथ छेड़छाड़ की जिसका परिणाम यह हुआ कि प्रकृति का शुद्ध रूप मानवीय जीवन पर विपरीत प्रभाव डालने लग गया हैं। मनुष्य के स्वार्थपूर्ति के कारण प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण प्रदूर्षित हो रहा हैं जिसके बारे में बड़े-बड़े वैज्ञानिक आने वाले भविष्य के लिए चिंतित हैं और अपना कथन प्रस्तुत किया है कि मानव इसी रूप में अपने अधिकतम लक्ष्यों की पूर्ति करने में लगा रहा हैं तो प्रकृति का रूप उग्र होने लगेगा तथा साथ ही प्रकृति की विनाशकारी शक्तियां मानव के बौद्धिक, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक जीवन को पूर्ण रूपेण प्रभावित करेगी।

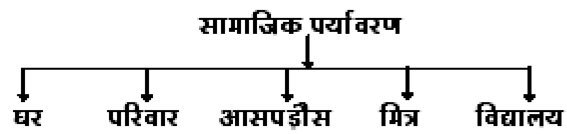

पर्यावरण संरक्षण तथा पर्यावरण नैतिकता आज की भूमण्डलीय मानवता एवं सरकारो की सबसे बड़ी जरूरत हैं। पर्यावरण प्रदूषण से आज समस्त मानवता के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया हैं मानव के गलत प्रयासो एवं समस्त अभिलाषाओं ने प्रकृति तथा मनुष्य के मध्य भारी असंतुलन पैदा कर दिया हैं।

भारत सरकार ने पर्यावरण प्रबंधन के लिए लगभग 200 से अधिक कानून लागू किये हैं। इनसेक्टीसाइड एक्ट 1968 वन्य जीव संरक्षण एक्ट 1972 वायु एक्ट 1981 आदि प्रमुख नियम हैं जो पर्यावरण विभाग द्वारा संचालित किये जा रहे हैं लेकिन इन नियमों की उपेक्षा की जा रही हैं। मानव द्वारा पर्यावरण का शोषण एवं विनाश आज मानव जाति को ही नहीं संपूर्ण सृष्टि को ही विनाश के कगार पर ला खड़ा किया हैं।

पर्यावरण प्रदुषण से आज समस्त मानवता के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया हैं। मानव के गलत प्रयासो एवं अभिलाषाओं ने प्रकृति तथा मनुष्य के मध्य भारी असंतुलन पैदा कर दिया हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य की दृष्टि से देखा जाए तो आज बड़े-बड़े शहरो में सांस लेने में तकलीफ एवं अनेक बीमारियों के कीटाणु फैल रहे हैं जिसमें-दिल्ली, मुम्बई जैसे शहर सम्मिलित हैं।

पर्यावरण अवनयन की समस्या भारतवर्ष में ही नही बल्कि संपूर्ण संसार विकसित एवं विकासशील देशों में हो रही हैं। सरकारी प्रयास ही पर्याप्त नहीं हैं मनुष्य को स्वप्रेरणा से पर्यावरण संरक्षण की ओर कदम बढ़ाना होगा, क्योंकि विकास एवं पर्यावरण का गहरा संबंध हैं तथा पर्यावरण की सुरक्षा के बिना विकास संभव नहीं हैं।

पर्यावरण संरक्षण हेतु शिक्षा के माध्यम से जनजागृति, प्रत्येक व्यक्ति हरियाली की ओर अग्रसर रहे, वर्षा जल का पुन:र्भरण एवं मकानों में वाटर रिजार्जिंग सिस्टम अनिवार्यत: लगाए जाए। धार्मिक संस्कारो के अनुसार

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला - धार (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद जिला-धार (म.प्र.) भारत

मूर्तियों का विसर्जन, फूल, मालाएं, नारियल आदि सामग्री जल प्रदूषित होता हैं अत: प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।

पर्यावरण संरक्षण हेतु केन्द्रीय एवं राज्य सरकारे लागू करती हैं। अतिमहत्वपूर्ण नियमों एवं अधिनियमों का उल्लेख–

1. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986
   (अ) केन्द्रीय सरकार को अधिकार
2. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981
3. जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण 1974
4. वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1972
5. वन संरक्षण अधिनियम 1980

भारत में लगभग 200 स्वयंसेवी संगठन हैं। जिनमें से लगभग 150 संगठन पर्यावरण शिक्षा व जागरूकता उत्पन्न करने में संलग्न हैं।
पर्यावरण संरक्षण हेतु विभिन्न अधिनियम पारित किए, जिनमें मुख्य हैं –

1. वायु प्रदूषण (अधिनियम 1981)
2. जल प्रदूषण (अधिनियम 1974)
3. 1985 में भारत सरकार ने पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का निर्माण। (विनियमन और नियंत्रण)
4. ध्वनि प्रदूषण (अधिनियम 2000)
5. पर्यावरण संरक्षण (अधिनियम 1986)
6. राष्ट्रीय पर्यावरण (ट्रिब्युनल अधिनियम 1995)

पर्यावरणीय संरक्षण हेतु बनाये गये अधिनियमों के उपरांत भी पर्यावरण की दशा का निरंतर अवनयन इस स्थिति तक हो रहा हैं कि अधिकांश प्राकृतिक संसाधनो जल, मृदा, वन, पादप एवं प्राणी समूह एवं खनिज आदि के अस्तित्व का अधिक संकट उत्पन्न हो रहा हैं।

सरकारी प्रयास ही पर्याप्त नहीं हैं, मनुष्य को भी स्व–प्रेरणा से पर्यावरण संरक्षण की ओर कदम बढ़ाना होगा, क्योंकि विकास एवं पर्यावरण का गहरा संबंध हैं, तथा पर्यावरण की सुरक्षा के बिना विकास संभव नहीं हैं।
पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव –

1. शिक्षा के माध्यम से जनजागृति।
2. वर्षा जल का पुनर्भरण एवं मकानों में वाटर रिचार्जिंग सिस्टम अनिवार्यत: लगाए जाये।
3. प्रत्येक व्यक्ति हरियाली में सहयोग करें।
4. गांव, नगर, शहरो में हरियाली एवं खशहाली योजना लागू कर जनता को प्रोत्साहित किया जावे।
5. पुराने वाहन जो धुआं आदि छोड़ते हैं उन्हे चलाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।
6. केन्द्र एवं राज्य सरकारे नदी संरक्षण परियोजनाओं पर अधिक ध्यान देवे, क्योंकि गांव, शहर, नगरो की सारी गंदगी नदियों में छोड़ दी जाती हैं जिससे जल को प्रदूषित होने से बचाया जा सके।
7. धार्मिक संस्कारो के अनुसार मूर्तियों का विसर्जन, फूल, मालाए, नारियल एवं अन्य सामग्री डालने पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए जिससे जल प्रदूषित न हो।

राष्ट्रीय स्तर पर विकास कार्यक्रमों एवं पर्यावरण संरक्षण के बीच तालमेल कर कार्ययोजना तैयार कर आम जनता को जागृत करना होगा। पर्यावरण की रक्षा के लिए तथा मानव के अच्छे जीवन के लिए एक स्वच्छ, स्वस्थ एवं शुद्ध प्रदूषणरहित वातावरण तैयार करना होगा। जिससे पर्यावरण शुद्ध बना रहें। पर्यावरण के संबंध में हमें शकुंतला का उदाहरण सामने आता हैं जिसमें उन्होंने पौधों को पानी देकर, फिर पानी पीना, किसी लताकुंज को नही सताना, पशु–पक्षियों को मातृवत् प्यार करना और वनों के सौंदर्य से सुख लेना एक गजब का तादात्म्य था इंसान और प्रकृति के बीच शकुंतला तो अपने आप में प्रकृति का प्रतीक बन गई थी मगर आज का मनुष्य प्रकृति का शत्रु बना बैंठा हैं प्रकृति को अजेयगढ़ को सेंध लगाकर उसमें सुख ढुढँना चाहता हैं। अत: मनुष्य ने स्वार्थवश प्राकृतिक पर्यावरण को जिस गति से प्रदूषित किया हैं उसमें सुधार करना अत्यंत आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. पर्यावरण विकास – मासिक पत्रिका 2005
2. पर्यावरण संरक्षण – डॉ. मंजु सिंह पृष्ठ संख्या 90, 91
3. शोध कार्य।

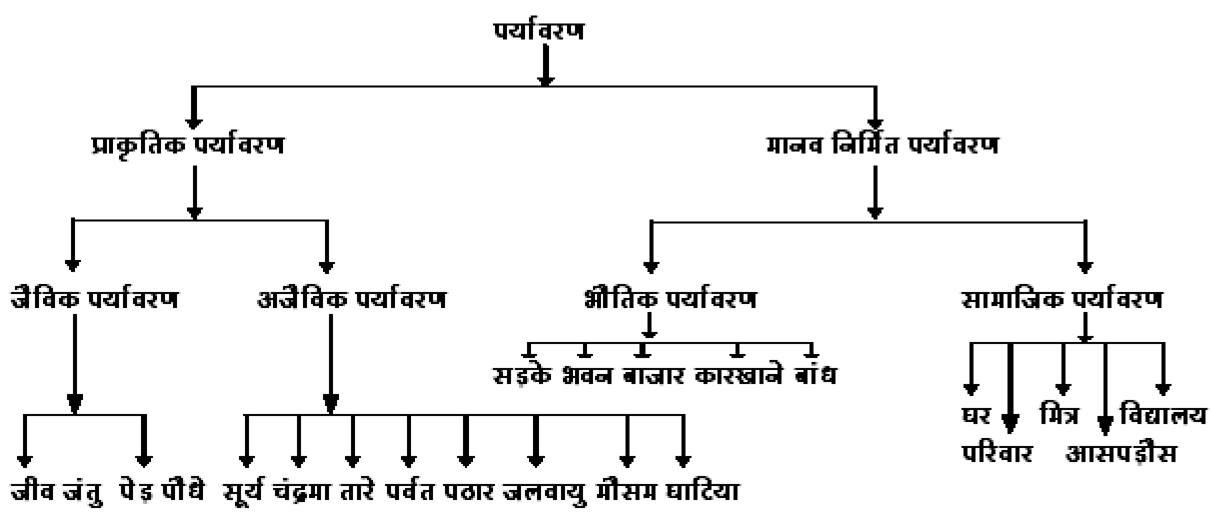

****

हिंदी आत्मकथा का जीवनी, संस्मरण और उपन्यास से तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – आत्मकथा से संबंधित विभिन्न बातें हैं। जैसे कि अपने ही मुख से कहा या अपना लिखा हुआ जीवन वृत्तांत ही आत्मकथा है, अर्थात आत्मकथा लेखक के अपने जीवन का समग्र वर्णन है। इसके द्वारा अपने बीते हुए जीवन का सिंहावलोकन और एक व्यापक पृष्ठभूमि में अपने जीवन का महत्व दिखलाया जाना है, इस प्रकार कहा जा सकता है कि आत्मकथा में व्यक्ति स्वयं अपने जीवन की कहानी लिखता है। व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का स्वयं उद्घाटन करता है, अत: उसमें व्यक्ति के गुण का ही समावेश हो सकता हैं इसी प्रकार जीवनी कोई दूसरा व्यक्ति लिखता है और आत्मकथा स्वयं लिखी जाती है। जीवनी जब नायक स्वयं लिखता है तो वह आत्मकथा कहलाती है। लेखक स्वयं जब अपना आत्म-परीक्षण तथा अपने व्यक्तित्व का उद्घाटन कर अतीत को अभिव्यक्ति प्रदान करता है, तब वह आत्मकथा कहलाती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्मकथा में व्यक्ति अपनी कथा कहता है। और उस कथा में उसके जीवन की अविस्मरणीय बातें आ जाती हैं। वर्तमान समय में आत्मकथाओं की स्थिति चिंतनीय तो है, पर भविष्य उज्जवल है।[1]

शब्द कुंजी – आत्मकथा, तुलनात्मक, प्राचीनकाल, साहित्य, अन्य विधा ।

प्रस्तावना – प्राचीनकाल से आत्मकथा साहित्य का अभाव रहा जिससे हिन्दी साहित्य को निश्चित ही हानि हुई है। कबीर, जायसी आदि कवियों के जीवनवृत के संदर्भ में भ्रम फैले हुए हैं। भक्तिकाल के प्रमुख सूर जैसे कवि के जीवन वृत्त में स्पष्टता नहीं हैं जिससे उनकी रचना प्रक्रिया समझने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। एक लंबे समय तक यह विधा उपेक्षित ही रही लेकिन धीरे-धीरे इस विधा की ओर कुछ लोग आकर्षित हुए। विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत प्रसिद्ध व्यक्तियों ने आत्मकथा लिखी और लोगों को आत्मकथा लिखने के लिए प्रेरित भी किया। हिन्दी में सर्वप्रथम अकबर के समय के आगरा निवासी जैन कवि बनारसी दास जी ने अपनी आत्मकथा 'अर्धकथन नाम से लिखी है। इसी परंपरा में हरिश्चन्द्र युग में भी आत्मकथा साहित्य-सृजन का प्रयत्न हुआ था। प्रतापनारायण मिश्र का प्रयत्न अधिक सफल रहा। स्वामी श्रद्धानन्द ने **'कल्याण मार्ग का पथिक'** नाम से अपनी आत्मकथा लिखी। भाई परमानन्द की 'आपबीती', स्वामी, भवानी दयाल सन्यासी की 'प्रवासी की आत्मकथा, श्री वियोगी हरि की 'मेरा जीवन प्रवाह, श्री मूलचन्द्र अग्रवाल की 'पत्रकार की आत्मकथा' प्रो. इन्द्र विद्यावाचस्पति की 'मेरी जीवन झांकियाँ', बाबू गुलाबराय की 'असफलताएं', डॉ. श्यामसुन्दरदास की 'आत्मकथा' महावीर प्रसाद की आत्मकथा, सियाराम शरण गुप्त की 'झूठ-सच तथा बालस्मृति', डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की आत्मकथा आदि लिखी गई। सेठ गोविन्ददास ने आत्मकथा के क्षेत्र में नया प्रयोग किया है। उनकी आत्मकथा 'आत्मनिरीक्षण' नाम से तीन भागों में प्रकाशित हुई है। डॉ. हरिवंशराय बच्चन जी ने आत्मकथा साहित्य में एक कड़ी और जोड़ दी है। हिन्दी का आत्मकथा साहित्य बढ़ता जा रहा है, परंतु वह तीव्र गति नहीं है जो होनी चाहिए।[2]

आत्मकथा और जीवनी को तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो जीवनी दूसरे द्वारा लिखी जाती है। 'जब लेखक किसी अन्य व्यक्ति के जीवन के संबंध में तटस्थ भाव से, अपने व्यक्तित्व को अलग रखकर प्रत्यक्ष अनुभव अव्यक्त (अप्रत्यक्ष रूप से) अध्ययन से प्राप्त जानकारी के आधार पर उसके जीवन के संबंध में सभी पहलुओं का सम्यक् विवेचन करता है उसे जीवनी कहते है।' जीवनी में इतिहास और साहित्य के तत्वों का समन्वय रहता है। जीवनी में वास्तविकता का परिचय करना, तटस्थ भाव से बिना अपना व्यक्तित्व उसमें मिलाये, किसी व्यक्ति के जीवन की घटनाओं, परिस्थितियों आदि का चित्रण करना लेखक का उद्देश्य होता है, लेकिन आत्मकथा में वास्तविकता का परिचय तो होता है पर तटस्थ भाव से नहीं, क्योंकि लेखक स्वयं अपने संबंध में तटस्थ भाव नहीं रख सकता। जीवनी में लेखक दूसरे व्यक्ति का चरित्र ही अपना वर्ण्य विषय बनाता है। आत्मकथा में लेखक का निजी जीवन ही वर्ण्य होता है। आत्मकथा में भाव-जगत का रहस्य-द्वार लेखक के सामने बिल्कुल खुला रहता है।[3] वह स्वेच्छापूर्वक उसमें प्रवेशकर तथ्य-चयन कर सकता है। आत्मकथा में अपने भावों और अपनी प्रतिक्रियाओं की अपेक्षाकृत अधिक विश्वस्त जानकारी होती है, अत: यह जीवनी की अपेक्षा जीवन की विभिन्न मनोवृत्तियों का अधिक वास्तविक, सजीव और विशद चित्रण कर सकता है। जीवनीकार कल्पना के अलंकारों से अपने चरित्र नायक की इतनी ही साज-सम्हालकर सकता है जितनी में उसका आकार-प्रकार न बदलने पाये, परन्तु, आत्मकथाकार यथार्थ को व्यक्त कर जैसा चाहे वैसा मोड़ दे सकता है। जीवनीकार सर्वज्ञता का भी दावा नहीं करता है। वह द्रष्टा के रूप में रहता है। वह अपने चरित्र नायक के बहुत से रहस्यों को जानता है किन्तु फिर भी वह उसके मन की सब बातों को पूरी दृढ़ता के साथ नहीं कह सकता है लेकिन आत्मकथा लेखक रहस्यों को दृढ़ता के साथ उदघाटित करता है ओर वह मात्र द्रष्टा नहीं सहयोगी और सहभोगी भी रहता है। जीवनी लेखक अपने चरित्रनायक के अन्तर-बाह्य स्वरूप का चित्रण कलात्मक ढंग से करता है। इस चित्रण में वह अनुपात और शालीनता का पूर्ण ध्यान रखता हुआ सहृदयता, स्वतंत्रता और निष्पक्षता के साथ अपने चरित्र नायक के गुण-दोषमय सजीव व्यक्तित्व एक आकर्षण शैली में उद्घाटन करता है। आत्मकथा में लेखक जितना अपने बारे में जान सकता है उतना लाख प्रयत्न करने पर भी कोई दूसरा नहीं जान सकता किन्तु हमसे कहीं तो स्वाभाविक आत्मश्लाघा की प्रवृत्ति बाधक होती है। और कहीं शील-संकोच का भाव आत्म-प्रकाश में रूकावट डालता है तथापि अनावश्यक आत्म-विस्तार कुछ अधिक

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

अवांछनीय है। जीवनी लिखने वाले को दूसरे के दोष और आत्मकथा लिखने वाले को अपने गुण कहने में सचेत रहने की आवश्यकता है।[4] 'जीवन चरित्र आत्मकथा से इस अर्थ में भिन्न है कि किसी व्यक्ति द्वारा लिखी गई किसी अन्य व्यक्ति की जीवनी, जीवन चरित्र है और किसी व्यक्ति द्वारा लिखी गई स्वयं अपनी जीवनी आत्मकथा है। एक सूक्ष्म अंतर कदाचित यह है कि आत्मचरित्र कहलाने वाली रचना किंचित विश्लेषणात्मक और विवेक प्रधान होती थी और अब आत्मकथा कही जाने वाली कृति अपेक्षाकृत अधिक रोचक और सुपाठ्य होती है।'[5] जीवनी नायक के जीवन के विविध पहलुओं के विकास का क्रमबद्ध इतिहास हमारे सामने रखती है और उसके व्यक्तित्व के निर्माण में योग देने वाले परिवेश या परिस्थितियों के विविध रूपों का परिचय देती चलती है। जीवनी, विचार और भाव साहित्य के मध्य की वस्तु है। इसमें तथ्यात्मकता की प्रधानता और इतिहास के प्रति आग्रह होता है। जीवनी से मिलता-जुलता दूसरा रूप आत्मकथा का है। आत्मकथा स्वयं के अनुभव पर आधारित अनुभूतियों से पूर्ण होती है, क्योंकि संभव है जीवनी लेखक को नायक के जीवन की ऐसी बहुत सी विशेषताएं न भी मालूम हों जो साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हों, लेकिन जब नायक स्वयं लिखता है। तो सरलता से उन घटनाओं को छांट सकता है जिनका उसके व्यक्तित्व और कृतित्व से घनिष्ठ संबंध है। जीवनी में जीवन के संपूर्ण रूप की अभिव्यक्ति होती है। आत्मकथा एवं जीवनी मूलत: व्यक्ति प्रधान है। उनमें अपने व्यक्तित्व का रंग भरने की पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। आत्मकथाओं के साथ-साथ जीवनी भी लिखी गई है। उनमें परिस्थितियों की प्रतिक्रियों में व्यक्ति के चरित्र का विकास दिखाया गया है। नायक के जीवन क्षेत्र के विस्तार और संकोच के अनुरूप ही जीवनी का कथानक भी विस्तृत या संकुचित होता है। **डॉ. लाल का कहना है** कि आत्मकथा में लेखक उतने समय का ही वर्णन कर सकता है जितना लिखते समय तक बीत चुका है लेकिन जीवनी में प्राय: संपूर्ण जीवन लिखा जाता है। यों इसमें अपवाद भी देखने में आएँ हैं।[6]

आत्मकथा और संस्मरण को तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो **संस्मरण** में लेखक का उद्देश्य दूसरे व्यक्ति के चरित्र पर प्रकाश डालना है। लेखक का उस व्यक्ति से निजी संपर्क होना आवश्यक है। यह नहीं हो सकता कि अध्ययनके आधार पर संस्मरण लिख दिया जाय। लेखक चरित्र नायक के संपर्क में पहले से रहा है। संपर्क घंटे-दो घंटे से लेकर जीवन भर तक का हो सकता है, शारीरिक साक्षात्कार भी हो सकता है अथवा पत्र व्यवहार भी हो सकता है। संपर्क ऐसा होना चाहिए जिसकी प्रतिक्रिया लेखक के मन पर हुई हो। संस्मरण में आत्मनिष्ठा आ जाती है। लेखक नायक के व्यक्तित्व के मूल्यांकन करने की प्रतिक्रिया में भावों-प्रतिक्रियाओं का भी अभिव्यंजन करता है। संस्मरण में एक खतरा उत्पन्न हो सकता है, वह यह कि लेखक की असावधानी से उसका अपना व्यक्तित्व प्रधान हो जाय और चरित्र नायक का व्यक्तित्व गौण हो जाय। 'जब लेखक वैकक्तिक की स्मृति के आधार पर किसी अन्य व्यक्ति के जीवन के किसी एक पहलू या कुछ खास पहलुओं का आत्मनिष्ठ चित्रण करता है तो उसे संस्मरण कहा जाता है। संस्मरण जीवनी-साहित्य के अंतर्गत आते हैं। वे प्राय: घटनात्मक होते है किन्तु वे घटनाएँ सत्य होती हैं और साथ ही चरित्र की परिचायक भी।[7] इस प्रकार के संस्मरण महादेवी ने सफलता पूर्वक लिखे हैं। संस्मरण चरित्र के किसी एक पहलू कि झांकी देते है। संस्मरण में संपूर्ण जीवन के चित्रण की व्यपकता नहीं होती, पर वास्तविक अनुभव की गहराई या मार्मिकता अधिक होती है। चरित्र नायक के व्यक्तित्व के किसी एक ही पहलू पर प्रकाश पड़ता है पर यह प्रकाश इतना तीव्र होता है कि उसमें उस पहलू की विविध बारीकियाँ साफ झलक जाती हैं। आत्मकथाओं की भांति संस्मरण में भी लेखक अपने को नायक बना सकता है किन्तु संस्मरण में नायक की दृष्टि अन्य पात्रों के जीवन से भी संबंधित होती है। आत्मकथा में जहाँ लेखक स्वयं नायक बनता है, यहां संस्मरण में अन्य व्यक्ति भी नायक बनाया जा सकता है। जीवनी और आत्मकथा में एकसूत्रता मिल सकती है लेकिन संस्मरण छोटे-छोटे अनेक बिखरे सूत्रों को लेकर लिखे जाते है, जीवनी और आत्मकथा में नायक का कोई उद्देश्य रहता है जिसको वह समाज के सामने रखता है लेकिन संस्मरण में यह आवश्यक नहीं कि किसी स्पष्ट लक्ष्य की अभिव्यंजना हो। संस्मरण लिखने में लेखक के संपर्क में आने वाले पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण, वातावरण की कुशल सृष्टि तथा आत्मीयता के द्वारा सरसता की उद्भावना होती है और व्यंजना से उद्देश्य व्यक्त किया जाता है।

उपन्यास जीवनी और काव्य के बीच की वस्तु है। वह इतिहास या जीवनी की-सी वास्तविकता का अनुकरण करता है। 'उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।' उपन्यासकार आत्मकथाकार की भांति सर्वज्ञता का दावा कर सकता है। उपन्यास भी आत्मकथा की भांति जीवन का समग्र रूप प्रस्तुत करता है। उपन्यास के पात्र कल्पित होते हैं जबकि आत्मकथा के पात्र वास्तविक होते हैं। आत्मकथा उत्तम पुरूष में लिखी जाती है पर उपन्यास अन्य पुरूष में लिखा जाता है। इस प्रकार हिन्दी में आत्मकथा का अभाव तो है पर भविष्य उज्जवल है।

निष्कर्ष यह है कि हिन्दी साहित्य में आत्मकथात्मक साहित्य का अन्य विधाओं की तुलना में अभाव सा है। बहुत कम आत्मकथाएँ हिन्दी साहित्य में अपनी संपूर्णता के साथ उपलब्ध हैं, वर्तमान समय में आत्मकथाओं की स्थिति चिंतनीय तो है पर भविष्य उज्जवल है। वास्तव में आत्मकथा हिन्दी साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा है यह व्यक्ति के जीवन का आत्म परीक्षण है जो गुण-दोषों को लेकर पाठकों के समक्ष उपस्थित होता है। आवश्यकता है इस विधा को और भी अधिक विस्तार देने की।[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आलोचना त्रैमासिक अंक 25, राजकमल प्रकाशन नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्ली पृष्ठ 28
2. नया ज्ञानोदय, भारतीय ज्ञानपीठ की मासिक साहित्यिक पत्रिका 2008, 18 इन्टीटयूशलन एरिया नई दिल्ली, पृष्ठ 58
3. राष्ट्रवाणी, त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका, दिसंबर 2009 अंक 4 महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा पुणे पृष्ठ 26
4. अक्षरा, अंक 90, 2008 मध्यप्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति हिन्दी भवन भोपाल, पृष्ठ 32,
5. जनसत्ता समाचार पत्र नई दिल्ली 30 नवंबर 2008 पृष्ठ 5
6. दैनिक भास्कर समाचार पत्र इन्दौर 26 अक्टूकर 2009, पृष्ठ 6
7. पाखी, इंडिपेंडेट मीडिया इनिशिएटिव सोसायटी बी-107 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश फरबरी 2010
8. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

****

जयशंकर प्रसाद की कहानियों की विवेचना

डॉ. रेणु अग्रवाल *

प्रस्तावना – प्रसादजी की समग्रत: रोमांटिक कथाकार है। उनकी कहानियों में स्वच्छन्दतावादी तत्व उसी सघनता से दिखाई देते हैं जिस सघनता से उनके काव्य। कहानी और कविता एक दूसरे से काफी निकट पड़ने वाली विधायें हैं। कविता की तरह उनकी कहानियां भी प्रगीतात्मक है। अतीत के प्रति आसक्ति होने के कारण कुछ कहानियों में उनकी चेतना भी बद्ध है।

प्रसादजी के कहानीकार के विकास की तीन मंजिलें हैं – प्रारंभिक, विकासात्मक और प्रौढ़ा। प्रसादजी के मुख्यत: 5 कहानी संग्रह है – (1) छाया, (2) प्रतिध्वनि, (3) आकाशदीप (4) आँधी एवं (5) इन्द्रजाल। उनकी पहली कहानी 'ग्राम' अगस्त 1910 ई. में इन्दु में प्रकाशित हुई थी। यह कहानी रेखा चित्र अधिक है, कहानी कम।

'प्रसादजी' की कहानियों में प्रथम संग्रह 'छाया' नाम से 1912 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें 'ग्राम', 'चन्दा', 'मदन मृणालिनी', 'रसिया बालम', तानसेन', 'चन्दा' ये पांच कहानियां हैं।

प्रसादजी का दूसरा कहानी संग्रह 'प्रतिध्वनि' है। जो कि 1926 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें कुल 15 कहानियां हैं।

तीसरा कहानी संग्रह 'आकाशदीप' है। यह 1929 ई. में प्रकाशित हुआ था। इस संग्रह में 19 कहानियां हैं।

प्रसाद का चौथा कहानी संग्रह 'आंधी' नाम से 1929 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें कुल ग्यारह कहानियां हैं।

'इन्द्रजाल' प्रसादजी का पांचवा और अंतिम कहानी संग्रह हैं। यह 1936 ई. में प्रकाशित हुआ था। इसमें इन्द्रजाल, सलीम, छोटा जादूगर, नूरी, परिवर्तन, संदेह, भीख में, चित्रवाले पत्थर, चित्र मंदिर, गुण्डा, अनबोला, देवरथ, विराम चिन्ह और सालवती। इन कहानियों में प्रसादजी का दृष्टिकोण बौद्धिक, मनोवैज्ञानिक एवं यथार्थवादी होने लगा था।

इनमें कुछ कहानियां गांव के परिवेश को लेकर लिखी गई है। कुछ प्रेम मूलक हैं तो कुछ कहानियों में बेमेल विवाह, कुछ ऐतिहासिक हैं। सभी पहलुओं पर प्रसादजी ने लिखा है। 'छाया' की कहानियां प्रेमवृत पर आधारित है। उनमें कथातत्व झीना है और प्रकृति के काव्यपरक चित्रणों का भी समावेष किया गया है।

ग्राम कहानी, 'छाया' संग्रह की बहुत ही अद्भूत कहानी है। इस कहानी में लेखक ने प्रकृति का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया है। उनकी कहानियों को पढ़कर लगता है प्रकृति के प्रति उनका बड़ा लगाव था। वे भावुक थे, उन्होंने ग्राम कहानी में संध्या के समय का विवेचन बड़े ही सुन्दर शब्दों में सुन्दर ढंग से किया है– जैसे –श्रावण मास की संध्या भी कैसी मनोहारिणी होती है। मेघ माला विभूषित गगन की छाया सघन रसाल कानन में पड़ रही है। अधिचारी धीरे–धीरे अपना अधिकार पूर्व गगन में जमाती हुई, सुशासनकारिणी महारानी के समान, विहंग प्रजागण को सुख–निकेतन में शयन करने की आज्ञा दे रही है। आकाश रूपी शासन पत्र पर प्रकृति के हस्ताक्षर के समान बिजली भी रेखा दिखाई पड़ती है...........।(1) इस तरह पढ़कर लगता है जैसे वह दृश्य आंखों के सामने आ गया हो।

'ग्राम' कहानी में प्रसादजी ने गांव की एक महत्वपूर्ण समस्या को उभारा है। उन्होंने जमींदारों द्वारा ग्रामीणों को कर तले दबाना, बताया है। इस कहानी में किसी गरीब का कोई वजूद नहीं हैं और वह व्यक्ति यदि अनपढ़ है तो उसे जमींदार समझा–बुझा कर थोड़े से पैसे देकर उन उधार के पैसों पर ब्याज, दर ब्याज जोड़कर उसे इतना कर्जदार बना देता है कि वह चुकाने की अवस्था से ऊपर उठ जाता है और जो उसकी अपनी मूल भूमि होती है उससे उसे निकाल दिया जाता है। इस समस्या को प्रसादजी ने इस ग्राम कहानी में स्त्री के माध्यम से व्यक्त किया है– हमारे पति इस प्रांत के गण्य भूस्वामी थे और वंश भी हम लोगों का उच्च था। जिस गांव का आपने नाम लिया है, वहीं हमारे पति की प्रधान जमींदारी थी। कार्यवश कुंदन लाल नामक एक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। कुछ भी विचार न करने से उनका बहुत रूपया बढ़ गया और जब ऐसी अवस्था पहुंची थी, अनेक उपाय करके हमारे पति धन जुटाकर उनके पास ले गये, तब उस धूर्त ने कहा– ' क्या हर्ज है बाबू साहब। आप आठ रोज बाद आना, हम रूपया ले लेंगे और जो घाटा होगा, उसे छोड़ देंगे। आपका इलाका फिर जायेगा, इस समय रेहननामा भी नहीं मिल रहा हैं।'[2] अन्त में उस स्त्री के पति की कर न चुका पाने व अपनी भूमि के छिन जाने पर उसे बहुत चोट पहुंचती है और उसकी मृत्यु हो जाती है।(2)

अशोक में प्रकृति चित्रण भी बहुत अच्छा बन पड़ा है और पति पत्नी के प्रेम भी बड़ा सहज है। 'कुनाल' अशोक कहानी का पात्र है उसकी गोद में मृग शावक आकर गिर जाता है। वह अपनी पत्नी से उस शावक को बच्चे की तरह पालने का कहता है। वह उसे सहर्ष स्वीकार कर लेती है। परन्तु कुनाल उसके मन को भी जानना चाहता है वह पूछता है तुम राजकुमारी तुम्हें यह सब अच्छा लगता है?तुम्हें मेरे साथ बहुत कष्ट है। धर्मरक्षिता (पत्नी)– 'नाथ, इस स्थान पर यदि सुख न मिला, तो मैं समझूंगी कि संसार में कहीं सुख नहीं है।'[1] इस तरह पति–पत्नी के बीच निश्चल प्रेम झलकता दिखाई देता है और कुनाल की पत्नी पतिव्रता नारी भी है।

प्रसाद जी की कहानियों में हम हर मार्मिक पहलू, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक गांव की आर्थिक स्थिति, जाति प्रथा, करूणा, प्रेम, जमींदारी सब चीजें देख सकते हैं। करूणा की विजय 'प्रतिध्वनि' कहानी संग्रह से ली गई है। इसमें लेखक ने अनाथ बच्चे गरीबी के कारण किस तरह मर जाते हैं इसे बहुत अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है ऐसा महसूस होता है। मानों वह दृश्य आंखों के सामने घटित हो रहा हो।

इस कहानी से प्रसादजी ने दरिद्रता और करूणा पर बहुत ही व्यंगात्मक प्रहार किया है– 'देखों जी, मेरा कैसा प्रभाव है।' करूणा ने कहा– 'मेरा सर्वत्र राज्य है, तुम्हारा विद्रोह सफल न होगा।' दरिद्रता ने कहा– ' गिरती हुई बालू की दीवार कहकर नहीं गिरती। तुम्हारा काल्पनिक क्षेत्र नीहार की वर्षा से

* अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

कब तक सिंचा रहेगा?' अभिमान ने कहा- 'जिधर की जीत देखूंगा।'[1]

करूणा ने विश्रान्त बालकों को सुख देने का विचार किया। मलय हिल्लोल की थपकी देकर सुला देना चाहा। दरिद्रता ने दिन भर की जीम हुई गर्द कदम्ब के पत्तों पर से खिसका दी। बालकों के सरल मुख ने धूल पड़ने से कुछ विकृत रूप धारण किया। दरिद्रता ने स्वप्न में भयानक रूप धारण करके उन्हें दर्शन दिया। मोहन का शरीर कांपने लगा। दूर से देखती हुई करूणा भी कांप उठी। अकस्मात् मोहन उठा और झोंक से बोला- 'भीख न मांगूंगा, मरूंगा।'[2]

एक क्रन्दन और धमाका। रामकली को कुएं ने अपनी शीतल गोद में ले लिया। डाल पर दरिद्रता ने अट्टहास की तरह उल्लू बोल उठा। उसी समय बंगले पर मेहंदी की टट्टी से घिरे हुए चबूतरे पर आसमानी पंखे के नीचे मसहरी में से नगर पिता दण्डनायक चिल्ला उठे- 'पंखा खींचों।'[3]

'आकाशदीप' प्रसाद जी का तीसरा कहानी संग्रह है। इसमें कुल 19 कहानियां हैं। यह प्रसाद जी का बृहत्तम कहानी संग्रह है। यह उनकी रोमान्टिक कला का भी आकाशदीप है। यहां आकाश के लगभग सारे अर्थ लागू हो सकते हैं। इसकी कहानियों के संदर्भ में डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र ने भूमिका में लिखा है कि इनमें 'जो रस और मर्म है, वह केवल बहिर्जगत से सम्बद्ध नहीं, अपितु हृदय की उन छिपी हुई भावनाओं पर प्रकाश डालता है, जिनका बोध आपको कभी-कभी ही हुआ करता है। ऐसी रहस्यमयी वृत्तियों को प्रस्फुटित करना, उन पर प्रकाश डालना ही छायावाद का उद्देश्य है.......।'

दूसरी कहानी 'ममता' जो कि ऐतिहासिक परिवेश और कल्पना सम्पन्न कहानी है। यह कहानी शीर्षक अपनी अतीव उत्कृष्ट एवं प्रौढ़ भाषा और प्रभावी चित्रण के कारण उत्कृष्ट कहानी मानी जा सकती है। ममता का महिमामय व्यक्तित्व महाप्राण निराला की 'विधवा' कविता का स्मरण दिलाता है, वह 'इष्टदेव के मंदिर की पूजा-सी'' और 'दीप शिखा सी शान्त भाव में लीन' अवश्य है।

प्रसाद हिन्दी की प्रतीकात्मक कहानी के जनक है।

'देवदासी' पत्र शैली में लिखित सफल एवं श्रेष्ठ कहानी है। हिन्दी में पत्र शैली की कहानियां एक उत्कृष्ट निबंध का विषय है। इसमें भी प्रसाद का एक निश्चित स्थान है।

'देवदासी' कहानी में इस अप्राकृतिक प्रथा के सत्य का उद्घाटन बड़ी शालीनता के साथ किया गया है।

'वैरागी' एक मार्मिक घटना है। कलात्मक कहानी नहीं। किन्तु इसमें यथाशीर्षक नायक का प्रस्तुतीकरण अतीव प्रशस्य है।

आँधी प्रसाद जी का चौथा कहानी संग्रह है। इसमें 11 कहानियाँ संग्रहीत हैं। इन संग्रहों में नारी के हृदय का अंर्तद्वन्द उभर कर आया है। इस संग्रह की अंतिम कहानी पुरस्कार अपने विन्यास एवं शिल्प में अद्वितीय हैं।
पुरस्कार कहानी की कथावस्तु का गठन ऐतिहासिक धरातल पर हुआ है। इसमें प्रेम और कर्तव्य वैयक्तिकता और राष्ट्रीयता का अद्भूत सामंजस्य दिखाया गया है। कहानी की नायिका मधूलिका के आंतरिक संघर्ष का अद्भूत चित्र उनके समग्र व्यक्तित्व को उभार कर कला का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। मधूलिका कहानी की मुख्य नायिका है।

प्रसादजी के छः कहानी संग्रह है। उनमें से इन्द्रजाल भी प्रमुख हैं। कलात्मक दृष्टि से इस संग्रह की कहानियां काफी सशक्त हैं। गुण्डा, नूरी,सालवती और देवस्थ नामक कहानियां इतिहास प्रधान हैं। अन्य कहानियां यथार्थवाद एवं मनोवैज्ञानिकता से ओत-प्रोत है। इसमें प्रसाद एक प्रौढ़ कहानीकार के रूप में समाज के विभिन्न वर्गो का प्रभावी चित्रण करने में सफल हुए हैं।

इन्द्रजाल यथार्थवादी कहानी है। बंजारों के चलते-फिरते दल में से बेला और युवक गोली के चरित्र की धारा बड़ी उज्जवल और स्वाभाविक हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि लेख कइस श्रेणी की मनोवृत्ति का पूर्ण ज्ञाता है किन्तु प्रसाद की किसी कहानी में भावुकता न हो यह असंभव है। जैसे इस कहानी में -'उव निर्जन प्रान्त में जब अंधकार खुले आकाश के नीचे तारों से खेल रहा था, तब बेला बैठी कुछ गुनगुना रही थी।'

छोटा जादूगर को प्रसाद का ईदगाह कहा जा सकता है। अपनी अपरिसीम संवेदनशीलता और अद्वितीय चित्रण सामर्थ्य के कारण ईदगाह संसार की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रसाद जी की कहानियों में कल्पना, प्रकृति भावुकता, अन्तर्द्वन्द्व एवं यथार्थ का अद्भूत सामरस्य है और उद्देश्य भी स्पष्ट है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1 द्वारा प्रकाशित, कहानी संग्रह छाया। अशोक पृष्ठ संख्या 38
2. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, कहानी संग्रह छाया (ग्राम), पृष्ठ संख्या 15 द्वितीय संस्करण 2003
3. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1द्वारा प्रकाशित, कहानी संग्रह छाया (ग्राम) पृष्ठ संख्या-18
4. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1द्वारा प्रकाशित, कहानी संग्रह छाया। अशोक पृष्ठ संख्या 38
5. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग इलाहाबाद-1, कहानी संग्रह, प्रतिध्वनि/करूणा की विजय, पृष्ठ संख्या 96,97
6. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग इलाहाबाद-1, कहानी संग्रह, प्रतिध्वनि/करूणा की विजय, पृष्ठ संख्या 96,97
7. प्रसाद की सम्पूर्ण कहांनिया एवं निबन्ध साहित्य, लोक भारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग इलाहाबाद-1, कहानी संग्रह, प्रतिध्वनि/करूणा की विजय, पृष्ठ संख्या 96,97

****

रीतिकाल - पौरुष का महापर्व

डॉ. सुभाष शर्मा * जयप्रकाश शर्मा **

प्रस्तावना – अभी तक हम केवल इतना ही जानते हैं और हिन्दी साहित्य के नये-पुराने इतिहास लेखकों ने भी यही लिखा है कि रीतिकविता श्रृंगार की कविता है - सौंदर्य की कविता, कविता ने कदाचित् पहली बार जाना था कि अपने सौंदर्य में वह इतनी रसीली, इतनी रंगीली और इतनी सलौनी भी हो सकती है, जो उसे एक बार पढ़ लेता है, उस पर 'जादू' और सुन लेता है, उस पर 'टोना' हो जाता है, मैं रीतिकाल के कलाधरों को नमन करता हूँ, उनकी कला को, उनकी कविता को प्रणाम करता हूँ, निस्संदेह, गुलामी के उस तपते हुए वातावरण में रस की शीतल बूँदें बरसाकर लोगों को अपने ढँग से शांति प्रदान की, इसके लिए हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं,

किंतु सच्ची कविता वह होती है जिसमें अपने समाज की चिन्ता, अपने समाज का चिन्तन होता है, हम देख रहे हैं आज नदियाँ सूख रही हैं, लोगों को चिन्ता हो उठी है, नर्मदा का जल क्षिप्रा तक ले आये हैं, आज जंगल मर रहे हैं, खेत उजड़ रहे हैं - वृक्षारोपण अभियान चला रखा है, वृक्षारोपण के लिए जगह-जगह सेमिनार और सम्मेलनों का आयोजन किया जा रहा है, ओजोन परत में छेद हो गया है, दुनिया के वैज्ञानिक चिंतित हो उठे है और समाधान ढूँढने में लगे हैं, सड़क पर कहीं गड्ढा हो जाता है, सरकार दूसरे ही दिन डामरीकरण करवा देती है, रीतियुग की छाती पर इतने गड्ढे, इतने घाव थे, कविता को उन्हें भरना था, उसके समाज की तमाम समस्याएँ, तमाम संघर्ष, तमाम गुत्थियाँ थी, जिन्हें उन्हें सुलझाना था, किंतु रीतिकवियों को काव्य शास्त्र की गुत्थियों को सुलझाने से ही फुरसत नहीं थी,

इतिहास के विद्वान जानते हैं कि रीतिकाल का वातावरण कितना विषाक्त था, सर्वत्र पारस्परिक वैमनस्य- स्वार्थ, फूट और छल-कपट का वातावरण था, आये दिनों सेनाएँ सजती थी, लोहा बजता था और लोहू बहता था, शासकों के लिए यह सोचना भी कठिन था कि कब, कौन, किस पर आक्रमण कर देगा ? कौन-सा रनिवास कब ऑसुओं में डूब जायेगा ? कब कौन-सी बेगम पर 'गम' के पहाड़ आ टूटेंगे ? कोई नहीं जानता था कि गलीचों पर सोने वालों को कब गालियों की खाक छाननी पड़ जायेगी ? पूरा देश घनघोर गुलामी की ज्वाला में जल रहा था, तब हमारे कवि कुच-कलश, कर-मृणाल, और अघर-प्रवालों के स्वप्न में वेसुध थे, आपकी नॉलेज के लिए बता देना चाहता हूँ कवियों के इस क्लीवत्व का विरोध भी उसी युग में शुरू हो गया था,

'मास की गरेथी कुच-कंचन-कलश कहैं,
मुख चंद्रमा जो असलेषमा कौ घर है,
दौनों कर जुगल-मृणाल, नाभी कूप कहैं,
हाड़ ही कौ जंघा ताकि कहैं रंभातर है,
हाड़ कौ दसन ताहिं हीरा मोती मूँगा कहैं,
चाम कौ अधर ताहि कहैं विंवाफर है,
ऐती झूठी जुगति बनावै औ कहावैं कवि
ताहू पै कहैं कि हमें शारदा कौ वर है,'

रीतिकाल का श्रृंगारी-कवि जब किसी सुंदरी के कुचों को देखता था तो स्वर्ण-कलश कह उठता था जाँघों को देखता तो रंभातर कह उठता था, चाम के अधरों को देखता तो विम्वाफल से उपमित कर उठता था, जब किसी सुंदरी के मुँह को देखता तो कह उठता था, वाह ! कितना सुन्दर मुँह है, जैसे चंद्रमा है, शायद उन्हें चन्द्रमा की असलियत नहीं पता थी, मुँह को कभी फाड़कर तो देखा होता, थूक, लार, दुर्गंध इनके अलावा कुछ भी नहीं है, नाक कवियों को शुक जैसी लगती थी, यदि कभी उन्होंने नायिका की नाक को उठाकर देखा होता, तो देख पाते कि उसके भीतर कैसा गंदा, लसलसा पदार्थ भरा है, कामिनी के दॉतों को हीरा, मोती, मूँगा कहने वाले यदि उनकी हकीकत को जान पाते कि उनके हीरा हड्डियों के बने हैं, रास्ते में यदि हमें कही हड्डी पड़ी मिल जाये तो हम बचकर निकलना चाहते हैं, किंतु रीतिकवियों की मलिन सोच देखिये कि वे उसे चूमना चाहते हैं, कितनी विडम्बना है, कितनी बेवकूफी है, कितनी बकवास है,

किंतु धैर्य रखिये, रीति कविता केवल कामिनी नहीं है, वह काली भी है, वह रमणी ही नहीं है, वह रमा भी है, रीतिकाल में जिस पिता के यहाँ लाल, सूदन और चिंतामणि जैसे घोर श्रृंगारी-पुत्र पैदा होते हैं, वहाँ भूषण जैसा उद्भट सुभट भी पैदा होता है, जैसे होम पावक से एक और जहाँ होम-घूम निकलता है, दूसरी ओर होम - सुरभित ज्वाला भी निकलती है , ठीक उसी प्रकार श्रृंगार-प्रधान-स्त्रैण-भाव साधना के समानान्तर रीति-काव्य के आँगन में एक ऐसी अन्त: सलिला भी प्रवहमान है, जो देह की राजनीति से दूर देश की जागृति की साधना में तपोलीन हैं, जिसने वाणी को विलास और वासना से ऊपर उठाकर उसे शौर्य, शक्ति और सामर्थ्य की वाहिनी बनाने का स्तुत्य प्रयास किया है, चिंतन और चेतना के अंश से निकली यह एक ऐसी महाचेतना है, जिसमें भारत का उदग्र पौरुष गरज रहा है, इस कविता में हम अपने उस भारत को देख सकते हैं, जो पराजय के क्षणों में भी अपनी अपराजेयता में वह दुनिया के सामने शीश तानकर खड़ा है, रीतिकाल के क्षितिज पर जब हम विहंगम दृष्टि निक्षेप करते हैं तो पाते हैं कि कवियों का एक वृहद्-समुदाय है, जो पंजाब से लेकर महाराष्ट्र तक गुजरात के भुज और कच्छ से लेकर बंगाल तक राजस्थान, मध्यभारत, सभी प्रदेशों में राष्ट्र की अस्मिता और राष्ट्र-गौरव के प्रति सचेत होकर कविता लिख रहा था, अपनी विस्फोटक वाणी द्वारा जनमानस में नया उत्साह, नयी ऊर्जा, नया साहस जगाने का प्रयास कर रहा था, गुलामी से उपजी निराशा और अनास्था से जूझने का साहीत्यिक और सचेष्ट बौद्धिक प्रयास कर रहा था, डॉ0 टीकमसिंह तोमर ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से डी0 फिल0 के लिए 'रीतिकालीन वीर

* प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, विजयपुर, जिला - श्योपुर (म.प्र.) भारत
** एम.ए. (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, विजयपुर, जिला-श्योपुर (म.प्र.) भारत

काव्य'[1] विषय पर शोध ग्रंथ लिखकर बड़े परिश्रम से अनुसंधान कर अपने शोध-ग्रंथ में 53 ऐसे कवियों को खोज निकाला है, जो रीतिकाल में वीर रस की साधना कर रहे थे, यह बात दूसरी है कि शोधकर्ता ने 53 कवियों में से केवल 12 प्रतिनिधि कवियों के 16 महत्वपूर्ण ग्रंथों के आधार पर रीतिकालीन वीरकाव्य का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत कर अपना शोध ग्रंथ पूरा किया है, हिन्दी वीर-काव्य का समग्रता मूलक अध्ययन तोमर साहब नहीं कर सके हैं, संभव है उन्हें तब तक 53 कवि ही उपलब्ध हो सके होंगे।

रीतिकालीन वीर काव्य पर सबसे महत्वपूर्ण कार्य सन् 1987 में डॉ0 भगवानदास तिवारी ने 'रीतिकालीन हिन्दी वीर काव्य'[2] ग्रंथ लिखकर किया है - जिसे हिन्दी की लब्ध प्रतिष्ठ संस्था 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग' ने प्रकाशित किया है, इस ग्रंथ में विद्वान लेखक ने रीतिकालीन हिन्दी वीर काव्य के 211 कवियों और उनकी 232 रचनाओं का उल्लेख किया है, यह उल्लेखनीय है कि डॉ0 टीकमसिंह जी तोमर के 'हिन्दी वीरकाव्य' में दिये गये 53 कवियों की अपेक्षा 158 (लगभग तिगुने) कवियों की अतिरिक्त जानकारी हमें दी है, किंतु बड़ी निराशा हुई जब मैंने डॉ0 तिवारी के ग्रंथ 'रीतिकालीन हिन्दी वीर काव्य' में ईसा की अठारहवी सदी में रचित 'खाण्डेराय रासो' का नाम नहीं पाया, इसका कारण डॉ0 तिवारी के लिए 'खाण्डेराय रासो' की अनुपलब्धि को ही मानता हूँ, क्योंकि खाण्डेराव रासो की प्रति का पता ही 1990-91 ई0 में चल पाया था, यह ठीक है कि 'खाण्डेराय रासो' की पुस्तक अनुपलब्ध थी, किंतु अनुपस्थित नहीं थी, कोटा राज्य के सारोला के 'गुलगुले दफ्तर' में इसका विवरण था, ग्वालियर के सरदार आनन्दराव भाऊ साहब फालके द्वारा 'शिन्देशाही इतिहासाची साधने - भाग 2' की 'शिन्देदाराची भालेराई' शीर्षक प्रस्तावना में खाण्डेराय रासो का संक्षिप्त परिचय तथा कुछ सन्दर्भित उद्धरण मौजूद थे, हो सकता है, डॉ0 तिवारी की पैनी शोध-दृष्टि वहाँ तक पहुँच नहीं सकी थी।

बहरहाल, इतना तो साफ है, हमारे पुराने साहित्येतिहास-लेखक जिस काव्यधारा को रीतिमुक्त और रीतिकाल की अप्रधान काव्यधारा समझते रहे हैं, वह रीतिकाल की उतनी ही प्रधान और समृद्ध काव्यधारा है, जितनी शृंगार की धारा है, बल्कि शृंगार की धारा से जो कही अधिक प्रशस्त और व्यापक है, यदि शृंगार की कविता के साथ इस कविता को तौला जाये, तो शृंगार काव्य तौल में कम बैठ सकता है,

अब आपके सामने बिहारी, मतिराम, केशव आदि कुछ गिने-चुने शृंगारी कवि है, दूसरी ओर राष्ट्र गौरव और राष्ट्र गरिमा को विस्तार देने वाले कवियों की वृहद् सूची है, तो क्या अब भी रीतिकाल को शृंगार काल कहना चाहोगे ?

क्या अब भी कुछ लोगों की शृंगार-सीमित सोच को पूरे युग की कविता स्वीकार किया जाता रहेगा ? लिखने वाले इतिहास लेखको ने अभी तक रीतिकाल का आमुख ही लिखा है रीतिकाल का इतिहास कब लिखा जायेगा ? यदि किसी बगीचे के सारे पेड़ अमरूद के हैं, दो-चार पेड़ आम या जामुन के हैं, तो वह अमरूद का ही बगीचा कहा जायेगा, आम या जामुन का नहीं, अन्यथा उसमें अव्याप्ति दोष आ जायेगा,

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रीतिकालीन वीर काव्य - टीकमसिंह तोमर।
2. रीतिकालीन हिन्दी वीर काव्य - डॉ. भगवानदास तिवारी।
3. खाण्डेराय रासो।

****

बुंदेली लोक कवि 'ईसुरी' के काव्य में फागो के रंग

डॉ. अर्चना देवी अहलावत *

प्रस्तावना – बुंदेलखण्ड के अलमस्त लोकजीवन में लोक कवि 'ईसुरी' को फागो का सिरमौर कहा गया है। जिस प्रकार बुंदेली के ही लोक कवि घाघ भड्डरी का वर्षा वायु विज्ञान किसानों के जीवन कृषि-खेती से संबंधित भविष्यवाणियॉ करता है। उसी प्रकार 'ईसुरी' की फागें रसिकों के मन में अमृत घोल देती हैं।

बुंदेली लोक जीवन में 'ईसुरी' को श्रंगार का सम्राट माना गया है। श्रंगार के महाकवि 'ईसुरी' की हर उद्‌भावना मौलिकता और मार्मिकता लिए हुए हैं। बुंदेलखण्ड में शरीर पर गोदने की प्रथा बहुत ही पुरानी है। गाल पर गुदना गुदवाने के विषय में 'ईसुरी' कवि का कहना है-

'गुदना गोरे गाल पै नीको मन मोहन सब ही को कै निर्मल दरपन के ऊपर सुमन धरो अरसी को।

बंसत को सभी ऋतुओं का राजा माना गया है। ऋतुराज बसंत के आगमन पर आम के वृक्षों पर मंजरी का बौर छा जाता है। फूलों पर भंवरे मंडराने लगते हैं। प्रकृति नई लताओं और नवीन पुष्पों का श्रंगार धारण कर लेती है। प्रकृति के मादक उपादान जहॉ मन को मोह लेते हैं वहीं रसिको, प्रेमी-प्रेमिकाओं के ह्रदय में उथल-पुथल मचा देते हैं।

मकड़ी के जाले, बांस का पिंजरा जैसे प्रतीकों का प्रयोग महाकवि 'ईसुरी' ने अपने लोक गीतों में किया है। बुंदेली के इस लोक कवि ने कभी उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं की किन्तु प्रेमिका के हाथों में रहकर सुख की कल्पना में यह लोक कवि शेक्सपीयर से भी ऊँची कल्पना रखता है-

'जो तुम छैल छला हो जाते पड़े उंगरियन रातें।
में पोंछन गाल खों लगते, कजरा देत दिखाते।
धरी-धरी घूँघट खोलन में मोरे सामूं रात।'

बुंदेली लोक कवि 'ईसुरी' की प्रेम विषयक फागें अपना कोई सानी नही रखती।

'अब दिनां आय बसंती नीरे ललित और रंग भीरे, टेसू और कदम फूले हैं कालिन्दी के तीरे।
बसते रात नदी तट पै मजे में पण्डा धीरे 'ईसुर' कात नार बिरहन पै पिउ-पिउ रटत पीरे।।

अब बसंत के मन-भावन और रंगीले दिन निकट आ गए हैं। यमुना के तट पर कदम्ब और पलाश नदियों और तालाबों के किनारे पण्डे लोग आराम से समय बिताने लगे हैं। लेकिन -'ईसुरी' कवि कहते हैं कि विरहणी-नारी पर तरस खाकर पपीहे पिउ-पिउ की रट लगा रहे हैं।

विरहणी नायिका के बाद विरही का चित्र 'ईसुरी' की एक प्रेम से परिपूर्ण फाग में दिखता है-

जब से भई प्रीत की पीरा, खुशी नई जौ जीरा।
कूरा-माटी भओ फिरत है इतै-उतै मन हीरा।
कमती आ गई रक्त मांस में बहो हरान में नीरा।
फूँकत जात विरत की आगी सूकत जात सरीरा।।
ओई नीम में मानत 'ईसुर'ओई नीम को कीरा।

जब प्रेम की पीड़ा होने लगी व्याकुल कूड़ा -सा होकर इधर-उधर भटकता फिरता है। शरीर में रक्त मांस भी कम हो गया है, नेत्रों से आंसू भी बरसने लगें हैं। ये आंसू विरह की आग फूंक रहे हैं। जिससे शरीर में रक्त मांस भी कम हो गया है, नेत्रों से आंसू भी बरसने लगे हैं। ये आंसू विरह की आग फूंक रहे हैं। जिससे शरीर सूखता जा रहा है, जिस नीका कीड़ा होता है, उसी में सुखी रहता है।

बुंदेलखण्ड में गीतों की विविधता और रसिकता पर सुनने वालों का मन एकदम से मुग्ध हो जाता है। इन लोकगीतों में सामाजिक जीवन की झांकी मिलती है।

मोरे मन की हरन मुनैयां, आज दिखानी नइयां।
के कऊॅ हुयै लाल के संगै, वकरी पिंजरा मइयां।।
पत्तन-पत्तन ढूँढ फिरे हैं, बैठी कौन डरईयां।
कात 'इसुरी' इनके लाने टोरी सरग-तरइयॉ।
मोरे मन की हरन मुनैयां, आज दिखानी नइयां।।

कवि कहता है, मेरे मन का हारने वली मुनैयां आज दिखायी नहीं दे रही हैं या तो वह कहीं लाल के साथ होगी या किसी पिंजरे कैद होगी। मैं तो उसे पत्ते-2 खोज आया, पता नहीं किस डाल पर जाकर बैठी है उसके लिये मैं स्वर्ग के तारे भी तोड़ चुका हूॅं।

फाग जीवन की रसमयता का एक सांस्कृतिक पहलू भी है। पर्वतीय और वन्याचंलों में फाग को लोग बड़े चाव से सुनते हैं। 'इसुरी' के दो उदाहरण यहॉ द्दष्टव्य हैं-

'जाती नर भरन जमना कै/टैके काजर बांके
पन पीस पैंजनियां पहिरे/तारत जात घुमा के
जौन गली होकर कड़ जाती/मॉ खिंच जात सनाखें।
'गुदना गुदवाउत रोदौ/तनक दरद या सउतो
अंसुआ झड़क गिरै/गालन, कजरा, रन मॉ मौत
इसुरी प्रान छनक गै मोरे/आड़े विराना मौत।

होली के अवसर पर बुंदेलखण्ड में रंग्रों और गुलाल की मस्ती सी छा जाती है। भर-भर मुटठी गुलाल एक-दूसरे के गालों पर लगाने की होड़ युवक-युवतियॉ लग जाती हैं। ईसुरी की फागें इस अवसर पर अपनार अलग रंग बिखेरती प्रतीत होती हैं-

ब्रज में खेले फाग कन्हाई/ राधे संग सुहाई।
चलत अबीर रंग केसर को/नभ अरूनाई छाई।
लाल-लाल ब्रजलाललावन/वीथिन कीच मचाई
ईसुर नर-नारिन के मन में/अति आनंद सरसाई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मासिक 'आजकल' मार्च 1991, पृष्ठ-27-स0, सुरेश चन्द्र शर्मा

*प्राध्यापक (हिन्दी) दयानंद आर्य कन्या महाविद्यालय, मुरादाबाद (उ.प्र.) भारत

पुन: मूषको भव - त्रिपदी - आशापूर्णा देवी

डॉ. संध्या खरे *

शोध सारांश – आशापूर्णा देवी बंगला साहित्य जगत की अत्यन्त ख्यातिप्राप्त रचनाकार हैं। उन्होंने अपनी कहानियों, उपन्यासों में बंगोय नारी की अनेक भंगिमाओं के चित्र खींचे हैं। त्रिपदी उपन्यास में आशापूर्णा देवी ने युवा वर्ग की उन्मुक्त कल्पना पर आधारित विचित्र-सी स्थिति का चित्रण किया है। उपन्यास के प्रमुख पात्र संदीप, सुरभि और अतीश समाज के नियम चक्र को तोड़कर एक साथ रहने का दुस्साहस करते हैं। किन्तु अंत में उन्हें सामाजिक मर्यादाओं के अनुरूप जीवन निर्वाह् के आदर्श को स्वीकार करना पड़ता है।

प्रस्तावना – सुरभि, अतीश, संदीप ये तीनों कैसे एकत्रित हुये यह उन्हें याद नहीं है किन्तु नित्य एक निश्चित स्थान पर वे रोज मिलेंगे यह निश्चित है। बड़े घर का लड़का संदीप, सामान्य घर का लड़का अतीश और निहायत गरीब घर की लड़की सुरभि।[1] तीनों की पृष्ठभूमि में भिन्नता है, स्वभाव में भिन्नता है, उद्देश्य में भिन्नता है। सुरभि दोनों के आकर्षण का केन्द्र है। उसकी उपस्थिति से ही उनकी मैत्री पूर्ण होती थी। उसी के कारण वे समाज के नियमों को चुनौती देने के गौरव का अनुभव करते थे।

यही स्थिति सुरभि की भी है। वह भी दोनों के प्रति समान आकर्षण का अनुभव करती है। इस तरह एक अद्‌भुत निकटता का सृजन हो गया इन तीनों व्यक्तियों के बीच। इस - एक लड़की, दो लड़कों की लघुत्रयी ने मन-ही-मन यह निश्चत कर लिया था कि वे इस मित्रता को किसी प्रकार टूटने या गर्हित नहीं होने देंगे।..... तीन से दो होने की बात उस नियम के विरूद्ध थी।[2]

यह त्रिशक्ति सम्मेलन कल्पना की उड़ानें भरने लगा। वे समाज के सामने एक नया आदर्श रखना चाहते हैं। जीवनयापन हेतु सामान्य सी आमदनी हो, सिर छुपाने लायक एक घर हो और स्वछंद विचरण हो सारे संसार में। सिनेमा, गंगा किनारे टहलना, होटलबाजी, एकांत में बैठकर गप्पें।

एक साथ जीवन निर्वाह करने का यह सपना काफी समय तक सपना ही बना रहता है। लेकिन समाज के नियमों के विपरीत इस तरह एक लड़की के दो लड़कों के साथ घूमने-फिरने की स्वछंदता के कारण सुरभि के घर पर रोज-रोज तनाव होता है। आखिर घर खोजने का अभियान जारी होता है। और कोशिश करने पर सांप की आँख, बाघ का नख तक मिल जाता है, मकान ऐसी बड़ी क्या चीज है। मकान मिला। मगर कलकत्ता में नही, सवर्ब में।[3]

त्रिशक्ति सम्मेलन के कानून के अनुसार अपने-अपने घर से कोई भी सामान लिये बिना सुरभि और अतीश नये मकान में गये। मकान में पहुंचने पर अचानक सुरभि को लगा, वह और अतीश जैसे एक जात के हैं।.... किंतु संदीप किसी और ही जात का है।[4]

देखते-देखते नयी गृहस्थी बस गयी। इसके बाद भी अतीश और सुरभि संदीप के पैसों से सस्ता मार्का पर्दा, रंगीन बेडकवर, टूटी-सी सस्ती फूलदानी, सस्ता फर्नीचर खरीदकर घर सजाने के आयोजन लगे रहते। संदीप को लगता वह सुरभि जो घंटों गणतंत्र और आर्थिक समानता पर बहस करती थी, समाज को धिक्कार देती थी, पूंजीपतियों को गाली निकालती थी, दो-दो पुरूषों के बीच बैठकर समान भाव से उनसे तर्क वितर्क करती थी, वह क्या पार्क की बेंच पर ही छूट गयी ?[5]

त्रिशक्ति सम्मेलन की विचार गोष्ठी स्वतंत्र विचरण क्रांतिकारी आदर्श सब विलीन होने लगे। और संदीप देखता अतीश भी उसमें सुरभि का ही साथ देता है। वह भी घर से बाहर नहीं जाना चाहता। संदीप को लगता जैसे वे समगोत्र हैं। संदीप के साथ उनका मेल नहीं बैठता।[6]

तीनों का अपने को बंधनमुक्त समझने सुख समाप्त होता जा रहा है। वह महत् प्रयोजन जिसकी कल्पना में उन्होंने घर छोड़ा था, वह कहां है ? गरीब घर की महत्वाकांक्षी सुरभि निरंतर नाप-तौल में लगी है। यदि दोनों में से एक को चुनना पडे ़तो वह कौन होगा ? अतीश जो रूपया लेकर रेजगारी वापस नहीं लौटाता., महीने का खर्चा मांगे-मांगे मुश्कि ल से देता है, या संदीप जो रूपये का नाम सुनते ही बंडल भर रूपये फेंक देता है, हिसाब के नाम पर कान बंद कर लेता है।

सुरभि लगातार द्वन्द्व में है। संदीप उसे अपनी पहुंच से बहुत ऊपर, बहुत ऊंचा लगता है। अतीश सुरभि को बहुत लघु, बहुत छोटा, तुच्छ लगता है। पर सांसारिक हिसाब-किताब में निपुण सुरभि सोचती कि यदि आत्मसम्मान खोना ही हो तो दुर्लभ के ही लिये खोया जाये, कानी कौड़ी के लिये क्यों खोया जाये।[7]

अतीश के साथ रहने पर सुरभि को अतीश कानी कौड़ी, ओछा-छोटा, मिट्टी का प्राणी लगता है। संदीप के साथ रहने पर वह सुरभि को आकाशचारी अयर्थाथ, अद्‌भुत और सनकी लगता है। वह उस पर कैसे निर्भर हो ? क्योंकि निखालिस सोना मूल्यवान होता है, मगर उससे गहना नहीं बनता। उसके लिये तांबा मिलाकर सोने का मजबूत करना पड़ता है।[8]

संदीप निश्चित ही खरा सोना और अतीश तांबा है। संदीप श्रद्धा, विस्मय, प्रशंसा, अभिनंदन के योग्य है किंतु सुरभि की पहुंच से बहुत ऊपर है। और जल्दी ही सुरभि और अतीश निम्नवर्गीय आदतों- झूठ, चालाकी, लुका-छिपी में लिप्त हो जाते हैं। सुरभि अतीश संदीप से छिपाकर गुप्त नये रोमांच से भर उठे। सतरंगे आलोक. से अंतर का कोना-कोना रंगीन हो उठा। ..... वह लुका-चोरी, आंखों-आंखों में कुछ कह लेने की कामना, संदीप के सामने उसकी नजर बचाकर उंगली से उंगली छुआ लेने की चातुरी .....।[9]

इसी लुका-छिपी के बीच संदीप को अपने बड़े भाई के एक्सीडेंट के कारण अपने घर रायबाड़ी जाना पड़ा। केवल अड़तालीस घंटे के एकांत में अतीश और सुरभि की सारी क्रांति हवा हो गई। प्रकृति के सामान्य चक्र ने

* प्राध्यापक (हिन्दी)शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

अपना काम किया तब से सुरभि ने न खाया, न पिया। रो-रोकर हलकान हुई जा रही है। अब तू ही बता रजिस्ट्री कैसे होगी। [10]

अतीश, सुरभि, संदीप तीनों को एक बात बहुत अच्छी तरह से समझ में आ जाती है कि बड़ी-बड़ी हवाई बातें, क्रांतिकारी विचार, कल्पना की उड़ान जीवन का यथार्थ नहीं है। उन्हें एक बात अच्छी तरह समझ में आ गयी कि प्रकृति के विरूद्ध विद्रोह करने का कोई लाभ नहीं है। उससे प्रकृति की प्रतिषोघ भावना और प्रबल हो उठती है। [11]

उपन्यास का अंत ऋषि के हाथों चुहिया से युवती बनी कहानी के अंत की तरह होता है। जब चुहिया सूर्यदेव, वायुदेव, हिमदेव के स्थान पर चूहे को अपने वर के रूप में पसंद करती है। निम्न वर्ग से बाहर निकलने की तमाम चेष्टा के बावजूद सुरभि ऊंची वंश-मर्यादा से युक्त संदीप के घराने की बहू बनने के स्थान पर अंततः अपने ही वर्ग के अतीश का चुनाव करके पुनः मूषको भवः के कथन को चरितार्थ करती है। उपन्यास के अंत में सामाजिक मर्यादाओं, परम्पराओं, हिन्दु आदर्शों की विजय दिखायी गयी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 15
2. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 17
3. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक.- 30
4. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 33
5. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक.- 61
6. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लोर रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 60

7,8. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लोर रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 63

9. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लो रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक.- 75

10,11. आशापूर्णा देवी : त्रिपदी, प्रकाशक - सन्मार्ग प्रकाशन, 16-यू, बी बैंग्लोर रोड, दिल्ली- 110007, संस्करण- 1997, मूल्य- 60 रुपये, पृष्ठ क्रमांक - 83

****

समाचार पत्रों में हिन्दी विज्ञापनों की भूमिका

डॉ. संध्या टिकेकर *

शोध सारांश – हिन्दी , आधुनिक विज्ञापनों की प्राण भाषा है।वैज्ञापनिक हिन्दी में उपभोक्ता की तार्किक संतुष्टि करने , उनकी भावनाओं का पोषण करने और उनमें उत्पाद के प्रति विश्वास जगाने की अदभुत क्षमता है। विश्व के पूर्ण विकसित देशों को भी भली–भांति ज्ञात हो चुका है कि भारत के बाजार में अपना माल तेजी से खपाने के लिए उन्हें हिन्दी की शरण लेनी ही होगी अन्यथा उनके उत्पाद धरे के धरे रह जाएंगे। यही कारण है कि चीन अपने देश से अब तक हजारों युवक–युवतियों को हिन्दी सीखने और हिन्दी में विज्ञापन कला के गुर जानने के लिए भारत पहुंचा चुका है। आस्ट्रेलिया , जापान ने भारतीय बाजार में पैर जमाने के लिए अपने देष के कई स्कूलों में हिन्दी पढ़ाए जाने की व्यवस्था कर ली है। हिन्दी विज्ञापनों के बहाने ये देश भारत की संस्कृति–सभ्यता , रीति रिवाज और परंपराओं से परिचित हो रहे हैं जो भूमंडलीकरण की दिशा में एक ठोस कदम है। विज्ञापन जगत ने हिन्दी के माध्यम से जो रिकार्ड तोड़ धनार्जन किया है , वह भाषिक संसार की अपूर्व और अद्‌भुत घटना है।

प्रस्तावना – वर्तमान युग विज्ञापन का युग है। आज की उपभोक्ता संस्कृति विज्ञापनों से इतना अधिक प्रभावित है कि उपभोक्ताओं का जीवन स्तर , खान पान , रुचियां , और भावी गतिविधियों का निर्धारण भी विज्ञापनों से होने लगा है। प्रात: बिस्तर छोड़ते ही किस ब्रश ,टूथपेस्ट या मंजन से मुंह साफ करना है से लेकर रात को सोने से पहले कौनसा लोशन लगाना है , तक की समस्त गतिविधियां विज्ञापन के प्रभाव से संचालित हो रही हैं। **विज्ञापन** शब्द में ज्ञापन का अर्थ है –ज्ञापित करना , जानकारी में देना , सूचना देना या बताना। उपसर्ग वि य का अर्थ है विशेष। अर्थात किसी उत्पाद या सेवा की विशेष जानकारी देना। हिन्दी शब्द सागर के अनुसार – 'जिसके द्वारा कोई बात लोगों को बतलाई जाती है , वह सूचना पत्र , इश्तहार , बिक्री आदि के माल या किसी बात की सूचना जो सब लोगों को विशेषत: सामयिक पत्रों के द्वारा दी जाती है।[1]

एस रोलैंड हॉल के शब्दों मे – 'विज्ञापन विक्रय कला की ऐसी प्रणाली है जिसमें वस्तु की लेखन,मुद्रण तथा चित्रण द्वारा सूचनाएं दी जाती हैं।'[2]

आधुनिक जीवन व्यस्तताओं से भरा हुआ है। उपभोक्ताओं के पास इतना समय नहीं है कि वे स्वयं जाकर अपेक्षित वस्तुओ या सेवाओं के बारे में जानकारी जुटा सकें। ऐसे में विज्ञापन एक मात्र आधार है जो अपने उत्पाद या सेवाओं की जानकारी स्वयं उपभोक्ताओं तक पहुंचाते हैं। उत्पादक और उपभोक्ता का संबंध , अर्थशास्त्र के मांग और पूर्ति य के नियम पर कार्य करता है तथा विज्ञापन इन दोनों के लाभ के लिए बनाए जाते हैं। ई0 एफ0 एल0 ब्रेच के शब्दों में –विज्ञापन का उद्देश्य उपभोक्ताओं को लाभ पहुंचाना , उपभोक्ताओं को शिक्षित करना , विक्रेता की मदद करना , प्रतिस्पर्धा समाप्त कर व्यापारियों को अपनी ओर आकर्षित करना और सबसे अधिक तो उत्पादक और उपभोक्ता के संबंध अच्छे बनाना है।[3] वस्तुत: विज्ञापन एक ऐसी कला है जो कल्पना के सहारे उपभोक्ता के मस्तिष्क में नवीनता को जगाती है , उसे उतपाद या सेवा के लिए शिक्षित कर वशीभूत करती है और अनेक बार आवश्यकता – क्षमता के अभाव में भी उत्पाद क्रय करने या सेवाओं के उपयोग के लिए विवश करती है।

हिन्दी में विज्ञापन लेखन –

विज्ञापनों का प्राण तत्व है – भाषा। जिस प्रकार धमनियां और शिराएं रक्त को शरीर के कोने–कोने तक पहुंचाती हैं, उसी प्रकार विज्ञापन उत्पाद और सेवाओं की जानकारी को शब्दभाषा , चित्रभाषा चिह्नभाषा तथा रंगभाषा के माध्यम से हर उपभोक्ता तक पहुंचाते हैं।वस्तुत: विज्ञापन ऐसा पुल है जो उपभोक्ता और उत्पादक को जोड़ने का कार्य करता है। विज्ञापन जगत से हिन्दी भाषा का संबंध बहुत पुराना है और गहरा है। विज्ञापन और हिन्दी के अंतर्संबंधों ने उत्पादक और उपभोक्ता को इस तरह जोड दिया है कि वे परस्पर निर्भरता की स्थिति में आ गए हैं। हिन्दी में विज्ञापन लेखन का प्रारंभ 18वीं सदी के उत्तरार्ध से हो गया था। यद्यपि ब्रिटिश शासन और अंग्रेजी के वर्चस्व के कारण हिन्दी में विज्ञापनों की संख्या सीमित थी तथापि कुछ उदाहरण अवश्य मिल जाते हैं जो विदेशी उत्पादों से स्पर्धा करते हुए ,स्वदेशी के क्रय हेतु ग्राहकों को प्रेरित करते जान पड़ते हैं जैसे – दिल्ली की बिस्कुट कंपनी का यह विज्ञापन – ये ताजा हैं , पौष्टिक हैं और आयातित या निर्यातित पुराने बिस्कुटों से सस्ते भी हैं। धारीवाल मिल का ऊनी वस्त्रों का विज्ञापन – ऊनी वस्त्र –भारत के लिए , भारत में बने। इसी प्रकार स्वदेशी पेन , जूते , होल्डर , बिना आदि के विज्ञापनों का प्रारंभिक दौर में बोलबाला रहा। देश में हिन्दी में विज्ञापनों की निरंतरता सन् 1990 से देखी जा सकती है। इस समय खडी बोली स्वयं को स्थापित करने के लिए संघर्षरत थी। यह हिन्दी का स्वयं को ब्रज भाषा से मुक्त करने का दौर था। इस संदर्भ में भारत मित्र य में प्रकाशित विज्ञापन दृष्टव्य है – पुराने बुखार की दवाई बहोत बढ़ियां , बुखार वाले के बिगर खिलाए मालूम नहीं होगा , बहुत जल्दी निरोग होगा।[4]

प्रिंट मीडिया का प्रमुख साधन – समाचार पत्र हिन्दी विज्ञापनों के लिए सबसे अनुकूल माध्यम है इसीलिए इनमें हिन्दी में विज्ञापन धड़ल्ले से छप रहे हैं।दैनिक भास्कर ,जनसत्ता , दैनिक जागरण , नव दुनिया , राजएक्सप्रेस आदि समाचार पत्रों में प्रकाशित हिन्दी विज्ञापनों की सहजता उपभोक्तओं को व्यापकता से आकर्षित कर रही है। यथा– ' जिंदगी के साथ भी , जिंदगी के बाद भी। जीवन बीमा निगम।' अपने पानी को बनाएं सबसे शुद्ध–केन्ट प्यूरीफायर' भूलने की समस्या भूल जाइए , अपनाइए –मैमोरी मंत्र' समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापन सामान्यत: चार श्रेणियों के होते हैं –डिसप्ले विज्ञापन ,वर्गीकृत विज्ञापन , मिश्रित विज्ञापन और समाचार विज्ञापन।

डिसप्ले या सजावटी विज्ञापनों में उत्पाद को पूरी साज –सज्जा के साथ , रंगीन चित्रों , प्रतीक चिह्नों और संदेष के साथ प्रकाशित किया जाता है।[5] विज्ञापन के महत्व और आवश्यकतानुसार समाचार उसे पत्र के पूरे , आधे या

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय,बीना, जिला सागर (म.प्र.) भारत

चौथाई पृष्ठ पर जगह दी जाती है। अनेक सजावटी विज्ञापनों में हिन्दी में कही गई बात बरसों बरस उपभोक्ता के मानस पटल पर बनी रहती है जैसे–

1. 'जो बीबी से करे प्यार वो प्रेस्टीज से कैसे करे इन्कार' प्रेस्टीज कुकर के इस विज्ञापन में कुकर की विशेषताएं और कम ईंधन में जल्दी खाना पकाने के संदेश के साथ साथ पति–पत्नी के प्रेम को दर्शाता रंगीन चित्र का विज्ञापन समाचार पत्रों में प्राय: देखने को मिल जाता है।
2. ' नहीं सहना पडेग़ा , पुराने से पुराना जोडों का दर्द– डॉ0 आर्थो इस विज्ञापन में जोडों के दर्द वाले मरीजों को उत्पाद खरीदने के लिए प्रेरित करने को अनेकों उसी मर्ज के लोगों के फोटो और उनके अनुभवों के साथ डिसप्ले किए गया हैं।
3. समाचार पत्र के पूरे पेज पर प्रकाशित यह सजावटी विज्ञापन –

विश्व की सबसे ज्यादा माइलेज देने वाली बाइक
102 दशमलव 5 किलो मीटर प्रति लीटर
स्प्लेंडर एक स्मार्ट सोच ।

हिन्दी के वर्गीकृत विज्ञापनों में चित्रों का प्रयोग प्राय: नहीं होता है , तब वहां हिन्दी के सटीक शब्दों से वह प्रभाव उत्पन्न किया जाता है जिससे उपभोक्ता का ध्यान खिंच सके। एक समान प्रवृत्ति के विज्ञापनों को समाचार पत्र के एक या दो पृष्ठों पर जगह दी जाती है। जैसे वैवाहिक विज्ञापन – वर चाहिए , वधू चाहिए अन्य विज्ञापन जैसे– सेल्स मेन चाहिए , मकान किराए पर देना है आदि। इस प्रकार के विज्ञापनों में एक जैसी प्रकृति के विज्ञापन पास पास प्रकाषित किए जाते हैं ।जैसे –

1. तंदुरुस्त बालों के लिए जरूरी है प्राकृतिक औषधियों का पोषण , ट्रीचप ऑइल , सुंदर बाल जीवन भर ।
2. 3 दिनों में बालों का झड़ना रोके – ऋतुराज , ऋतुराज का विश्वास शीघ्र करे बालों की पूर्ण देखभाल ।
3. कोई भी सर्जरी बिना बालों को जड़ से उगाया जा सकता है, प्राकृतिक तरीके से। **टाट पर बाल उगाने का एक अनोखा क्लीनिक – तारा क्लीनिक ।**
4. महिलाओं की खास तकलीफों का संपूर्ण समाधान – हेमपुष्पा ,90 वर्षो से महिलाओं का नंबर 1 टॉनिक।

5 अब धूप से सुरक्षा पाइए फ्रूट एस0 पी0 एफ0 के साथ स्किन फ्रूट्स ।

मिश्रित प्रकार के विज्ञापनों में सजावट और प्रभावी षब्दों के प्रयोग से वह असर पैदा किया जाता है कि ध्यानाकर्षित हो सके। ऐसे विज्ञापनों में छोटे व्यापारिक , प्रतीक चिह्नों का प्रयोग भी होता है। जैसे–

1. जी0 बी0 नि0– अर्थात जीवन बीमा निगम के विज्ञापन में प्रतीक वाक्य – 'योगक्षेमं वहाम्यहम' लिखा मिलता है और प्रतीक चिह्न में दोनों हथेलियों के बीच जलता हुए दीपक का चित्र अंकित होता है।

2. धर्म विश्वास से जुड़ा एक विज्ञापन है जिसमें किसी रंगीन रत्ननुमा पत्थर का चित्र बना है और लिखा है– ब्लू टोपाज खोलता है प्रगति के बाधित द्वार ,षनि के ढैय्या और साढ़े साती में होता है , चमत्कारिक लाभ। 4– प्रार्थना होगी स्वीकार , जेड ब्लैक प्रीमियम अगरबत्ती 3 इन 1।:5– सुर्या नमक –आपकी अच्छी सेहत और लंबे जीवन के लिए ।

समाचार विज्ञापनों को संक्षिप्त समाचारों की भांति लिखा जाता है। सेवा क्षेत्र के विज्ञापन इसी श्रेणी में आते हैं। उत्पाद क्षेत्र और सेवा क्षेत्र के विज्ञापनों में मूल अंतर यह होता है कि उत्पादक का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है जबकि सेवा संस्थान का प्रयोजन उपभोक्ताओं को प्राय: नि:शुल्क रूप से अथवा न्यूनतम शुल्क पर अधिक लाभ देना है। जैसे– म0 प्र0 शासन की कन्यादान योजना , पोलियो से बचाव हेतु– एक बूंद जिंदगी के लिए , जल ही जीवन है। मतदाता जागरूकता अभियान , स्वच्छता मिशन आदि। समाचार पत्रों में प्रकाशित कुछ उदाहरण हैं –

1. मिशन इन्द्रधनुष –मध्यप्रदेश शासन
समझदारी दिखाएं , अपने बच्चे का संपूर्ण टीकाकरण करवाएं।
लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग म0 प्र0

———

2. भारत भवन ओडिशा महोत्सव ,
8 अप्रेल, शाम 6:30– पट्टचित्रों की प्रदर्शनी का शुभारंभ ।
9 अप्रेल, शाम 6:30 –श्री चित्रसेन एवं सहयोगी कलाकारों द्वारा गोटीपुआ लोक नृत्य ।
10 अप्रैल,शाम 6:30 –श्री राजेन्द्र महापात्र और सहयोगी कलाकारों द्वारा रानापा ,शंखनाद प्रस्तुति।
सभी कार्यक्रमों में प्रवेष नि:शुल्क।
भारत भवन का प्रतिष्ठा समारोह

————————————

4– 70 हजार जिंदगियों में बदलाव
इस अभियान से जुड़ कर लाएं बड़ा बदलाव
जल शुद्धिकरण सिस्टम की पहल – यस कम्यूनिटी , यस बैंक।

समाचार विज्ञापनों में लोकहित प्रमुख होता है इसलिए ऐसे विज्ञापनो का प्रकाशन ऐसी समयावधि में किया जाता है ताकि उपभोक्ता बिना किसी हडबड़ाहट के उसे पढ़ सकें , लाभान्वित हो सकें।

निर्ष्कष – भारत का बहुत बड़ा भाग हिन्दी समाचार पत्रों का पाठक है फलत: विज्ञापनों को हिन्दी में अपनी बात कहने में और अपने लक्ष्य की प्राप्ति में शत–प्रतिशत सफलता मिल रही है। उत्पाद देशी हो या विदेशी , हिन्दी के विज्ञापनों में अपने उपभोक्ताओं के मन के भीतर उतरने का ऐसा सफल प्रयास किया है कि उनके उत्पाद उपभोक्ताओं की मात्र तात्कालिक जरूरत भर न रहे बल्कि उनकी जीवन शैली का अभिन्न हिस्सा बन जाए। हिन्दी यहां उत्पादकों के लिए एकदम उपयुक्त सिद्ध हुई है। हिन्दी उपभोक्ताओं का भावनात्मक पोषण करने , उन्हें तार्किक संतोष देने तथा उत्पाद के प्रति निरंतर विश्वास जगाने में सफल रही है। हिन्दी चूंकि देश की संस्कृति की भाषा है अत: उपभोक्ताओं के धार्मिक विश्वास , चमत्कारिक आस्थाओं , अतिशीघ्र लाभ की भावना ,कम से कम व्यय की प्रवृत्ति , मानवीय रिष्तों की निकटता , संबंधों की गरमाहट , एक दूसरे के प्रति सम्मान की अभिव्यक्ति , उत्पादों के लंबे जीवन की कामना ,उनकी गुणवत्ता और उपयोगिता के साथ साथ उत्पादों में सौंदर्यबोध की आकांक्षा आदि सभी अनिवार्य कारकों की पूर्ति में हिन्दी विज्ञापन सार्थक सिद्ध हो रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 प्रेमचंद पातंजलि , आधुनिक विज्ञापन , वाणी प्रकाशन नई दिल्ली , प्र0 सं0 997 पृष्ठ 12।
2. वही पृ0 14 3. वही पृ0 83 4. वही पृ0 85
5. डॉ0 के0 बी0 पण्डा , प्रधान संपादक ,भाषा कौशल एवं संचार माध्यम , म0 प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल सं0 2013

6. सहयोगी संदर्भ ग्रंथ :-

1. डॉ0 विनय दुबे ,संपादक , प्रयोजन मूलक हिन्दी , म0 प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल सं0 2001 ।
2. बृजमोहन गुप्त , जनसंचार : विविध माध्यम , राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली सं0–1992 ।

****

The Experience of Reality

Dr. Vandana Bakshi *

Abstract - Until we reach the end of our journey we are subject to the law of karma which makes out that our desires and acts deter-mine the pace of our progress. Our present state is conditioned by our past and what we do now will determine our future. Death and rebirth do not interrupt this process. For our present condition, we are ourselves responsible. We need not blame God or our parents or the existing social order. Even as we are responsible for what we are, we can make ourselves into what we shall be. We are not doomed to continue in our pres-ent condition. If we have courage and determination, we can mould our future into a new pattern. Karma is not fatalism. If we are sincere in our intentions and earnest in our efforts, it does not matter whether we succeed or not. Whatever advance we make is not without worth. Whatever the outward results may be, inner betterment is achieved .This paper attempts to show man's experience of reality

Key Words - existence , communion , spiritual, consciousness , insecurity.

Introduction - The old belief which was current even a few decades ago that if scientific research were given free play, superstition would be destroyed and mystery exposed and man would be-come master not only of the world but of himself has been given up even by the scientists, who approach their task in a spirit of humility, conscious that before the wonders and mys-teries of the world, man is an ignorant being knowing not whence he comes or whither he goes. Scientists are not certain that they know anything for certain. Every advance in knowledge reveals a greater unknown. It does not answer the vital questions whether existence has any meaning, whether lifemakes sense, whether rightness is inherent in the nature of things. Kant, who attested his reverence for the cosmic order, felt that natural laws had little to say about value or ob-ligation. For him there was a kingdom of ends which was ordered according to an inviolable moral law even as the empirical world is by the laws of nature. Ludwig Wittgenstein acknowledges the undemonstrability of ultimate values by ob-jective science. He says: "We feel that even if all possible scientific questions were answered, our vital problems are not yet touched." [1] Life is larger than science and the human quest is a many-sided one.

Simply because we believe in reason, it does not follow that we should not recognise a mystery when we meet one. Only in the statement of this mystery we should not suffer a conflict between what is reasonably regarded as established knowledge and religious truth. Belief in the religious reality may not be capable of logical proof but belief in it may be shown to be reasonable. Reason itself may take us from the realm of law or science to the realm of wonder, mystery or religion.

The most obvious fact of life is its transitoriness, its perish-ableness,. Everything in the world passes away, the written word, the carved stone, the painted picture, the heroic act. Our thoughts and acts, our deeds of glory, our economic ar-rangements, our political institutions, our great civilisations are a part of history, subject to the law of time. The earth on which we live may one day become unfit for human habitation as the sun ages and alters. All things belong to the world of becoming, of process, of time. Existence and transitoriness are interchangeable.

In all forms of Indian thought, time is symbolised by birth and death. The world is represented by the wheel of time, of births and deaths. The question for philosophy is whether this all-devouring time, this samsara is all or whether there is any-thing else beyond time, Is this world, this perpetual procession of events self-maintaining, self-sustaining, self-established or is there a beyond, underlying it, standing behind it, inspiring it, holding it together.

Non-being is dependent on the Being it negates. The very word non-being indicates the ontological priority of Being over non-being. There could be no non-being if there were not a preceding Being. The personal God is the first determination from which flow all other determinations. Being embraces it-self and that which is opposed to it, non-being. Non-being belongs to Being. It cannot be separated from it. When it is said that God has power, it means that Being will overcome the resistance of non-being. It affirms itself against non-being. Hegel makes out that negation is the power driving the Abso-lute Idea towards existence and driving existence back towards the Absolute Idea which, in the process, actualises itself as Absolute Mind or Spirit.

If this universe were an organic expression of the Divine Being and Consciousness, the Divine would be subjected to the forms of this universe. It would not be the free choice of the Divine from out of a boundless realm of possibilities. If

*Asst. Prof. (English) Institute of Excellence in Higher Education, Kolar Road, Bhopal (M.P.) INDIA

it were a free choice of the Divine, it means that the Divine Creativity is not bound up with this world in such a way that the changes of this world affect the integrity of the Divine. God is absolute freedom for he is from himself. This world is the expres-sion of freedom, of the joy of the Supreme.

The world is not an accident or a contingency in the sense that it is causally undetermined. Freedom means that the de-termining cause has no ultimate necessity. It is given; it can-not be logically derived from the nature of the Supreme. We may call it the irrationality, or the mystery of the freedom of the Supreme. Aristotle makes out that there could be no motion in the universe without the presence of God, who is the mover; he moves only by being an object of appetition to the world but he remains himself unmoved. The changes of the world do not affect his nature. Creation is the activity of self-communication which belongs to God's life.

There is order in the universe and all order is the expression of a mind and so the universe is the expression of a Supreme Mind. The adaptation of means to ends which we find in the world cannot be due to chance. It suggests an ordering and organising Mind.We do not know how life got into the mate-rial world or how mind crept into the world of life. If our ex-perience consists of sense impressions how do we get knowl-edge? How is it that we put a construction on what our senses receive from the world? What AbtVogler thinks of music is true of all creation:

I know not if, save in this, such gift is allowed to man That out of three sounds he frame, not a fourth sound but a star.

Whitehead says that "what men call God— the Supreme God of rationalised religion" is "the actual but non-temporal entity whereby the indeterminateness of mere creativity is transmuted into a determinate freedom." [2]

The cosmic process would be a shapeless chaos, the universe would be an inert mass, if the cosmic principle of order and movement, what the ancient Greeks called the Logos, did not function. The Divine Intelligence is the intermediary between the Absolute Being and the cosmic process. The cosmic order and progress are explained by the hypothesis of a living God in action. All initiative in nature and history is due to the working of the Spirit, inspiring the insight of the seers, the knowledge of the wise, the genius of the artist and the skill of the craftsman. The Bhagavadgita tells us: "Whatsoever being there is, endowed with glory and grace and vigour, know that to have sprung from a fragment of Mysplendour." [3] From the Supreme Spirit come the endowments of all those who wish to inaugurate the reign of God on earth. The real which accounts for the existence of the universe is Being, its character which accounts for the ordered advance is conscious-ness with freedom and joy .

When we work from the cosmic end, we are led to the hypothesis of a Supreme whose nature is Being, Consciousness, Freedom, Power and Goodness. The Absolute is the abode of infinite possibilities and in its creative aspect one of these pos-sibilities is freely chosen for accomplishment. The power of creativity is not alien to Being. It does not enter it from out-side. It is in Being, inherent in it. When we stress the crea-tive side, the Supreme Godhead or the Absolute Brahman is called God. Brahman and Isvara, Godhead and God are one. Brahman refers to infinite being and possibility and Isvara to creative freedom. This world is presided over by the cosmicLord (Hiranyagarbha), who is the manifestation of Brahman- Isvara. The world is a manifestation of the cosmic Lord and a creation of God. The universe is an incarnation in which one Idea of God is made flesh. The unincarnate God has a wider range than the incarnate God. The Absolute Creative God and the Cosmic Lord are not to be regarded as separate entities. They are different ways of viewing the One Transcendent Be-ing.[4]The Incomprehensible at the centre makes all other things coherent and comprehensible. Pure Being is not an ab-straction, not a barrenness but is the source of all variety. It is Being in its most concrete form including within itself every manifestation of Being. The world in which we live is subject to change. It is sarhsara, the stream of existence, the realm of flux and becoming. It is also the place where we have the opportunity of finding the meaning of life. Until we reach the further shore of enlightenment, we have to move in the stream. All things in the world, though unreal and fleeting, contain an element of reality for Being is present in them all. We can live eternally in this world for this world is one of the modes of manifestation of the Absolute.

The universe is not just what the senses aided by the scien-tific instruments show to us. We must know not only the in-terior of the atom but also the inner world of man. The precept of the Upanisads, know the self, , the injunc-tion of the Greeks, "Know thyself," stress the importance of self-knowledge. From early times, religious thinkers tried to detect the vibrations of the individual, explore his secret move-ments, and follow his obscure preoccupations. Man remains a mystery to himself.. Man is always more than he is able to comprehend of himself. When he looks upon himself as an object, he is the subject which apprehends and knows itself. Thus man is forever transcending himself. The self goes beyond the perceptions of ideas, realisations of meanings and experi-ences of suffering and bliss. It is however an illusion to think that the human individual can understand himself as he really is. Plato makes fun of the philosophers who believed that they For the Indian thinkers, the problem of religion is bound up with man's intellectual nature, his distinctive way of knowing himself and the world in which he lives. Consciousness and choice distinguish men from other species. Consciousness leads to moral responsibility through choice. Man suffers from un-awareness which gives rise to selfish desire . Man is in a stricken or fallen condition. He has slowly evolved from the animal level and has developed self-consciousness which is an unhappy and divided consciousness. The Buddha says that life is suffering. We live in a world governed by karma or necessity.

The symbolism of the Fall expresses the same truth. Man tastes the fruit of the tree of knowledge and the result

is his fall. Intellectual knowledge is a leap forward in man's awareness but is said to be a fall since it produces a fissure or a cleavage in man's life, a break in the natural order. Adam and Eve were smitten with fear the moment they became aware of the new relationship with reality into which they entered by eating of the fruit of the tree of the knowledge of good and evil. They are afraid that they may not rise equal to the sense of obligation which that awareness imposes. Their state is said to be a fallen one, as they search for light as for something lost, which they are able to glimpse dimly. The narrative in Genesis is not to be understood as a literal account of what happened. It is a myth or a symbol contrasting the state of Adam before the Fall and his state after it. The former is God's intention for human life; the latter is his actual life by virtue of the frustration of that intention by man's disobedience.

For man, to live means to give existence to the possible. Every moment we literally make ourselves by choosing from the future, which is the realm of the possible. Whenever we live creatively we overcome the force of non-being and affirm the Being in us. In every act of creative freedom we try to become what we potentially are, to actualise the Being in us. A free choice is liberation from servitude. It is not continuous with the past. It is a leap, not a development. Man exists because he has freedom.

Man's self-consciousness, knowledge of good and evil, free-dom and anxiety, which are the symptoms of non-being, these make him yearn for spiritual safety and security, harmony and courage which are the results of the conquest of Being over non-being. Awareness of non-being produces fear, anxiety and discord, and these states, which belong to the structure of human consciousness, are evidence of the non-being which seeks to be overcome by Being. The thirst for religion, the striv-ing for integrality, the search for a different life show that man has to advance by way of consciousness. He must reach out beyond the frontiers of the dual, divided consciousness. The sense of Godforsakeness is itself the witness to the presence of the Divine. The precariousness of this world points to the world beyond. There is a longing for life eternal in the midst of time.

Human nature has immeasurable potentialities and the world process has no predestined goal. The power of free choice gives us hope for the future. We can remake the world. Whatever flaws of character or deficiencies of mind we have we can remove them. If we strive to do so, the forces of the universe will assist us. We can consciously direct the process of human evolution. Nature comes to its fulfilment in the human individual, who is the bearer of the creative process. He is the unique representative of the universe in whom the unconscious creativity of nature becomes conscious creativity. The inner discord means that he can contend with the disruptive forces, conquer them and attain peace. Human beings cannot remain for long within an impermeable solitude which holds them prisoners of their own anguished desires. The discord is a stage, not the terminus. It is there to be vanquished. It is the symbol of the unsolved tension between hope and fulfilment.

Indian thought asks us to liberate ourselves from bondage. We must pass from samsara, life in time subject to discords to moksa or enlightenment or eternal life. Until we reach the unitive life we will have opportunities. The doctrine of samsara governed by the law of karma stresses that each being has many chances to achieve his goal. Each person is the result of his actions and attitudes which he can modify by the exercise of his will.

The sense of insecurity arising from the contingency of cir-cumstances and the contemplation of death which dissolves the self, of anxiety arising from the liability to error and sin, of dis-cord and unrest due to a sense of the emptiness and meaning- lessness of life, the sense of fall bears witness to the divine in man which is struggling to become wholly manifest in his awakened consciousness. His alienation from the ground of his being, his unawareness has to be replaced by aware-ness . This is not purely intellectual. The rebellion against the divine in us is the cardinal sin. Man is ignorant and from ignorance evil ensues.

While the study of the cosmic process leads us to the reality of a Supreme Transcendent God who is the absolutely other, the analysis of human experience brings God near to man. If God and the human soul were completely different, no amount of logical reasoning or mediation could lead us to the reality of God. God-consciousness is as much an original endowment of human beings as self-consciousness. There are degrees of God- consciousness even as there are degrees of self-consciousness. In many men it is dim andconfused; only in the redeemed souls is it completely manifest.

Everything is known to us only through experience. Even such an abstract science as mathematics is based on the experi-ence of stated regularities. Philosophy of religion must base itself on religious experiences. The existence of God means the real or the possible experience of this Being. If the genuine standard of knowledge is experience, we must deny the char-acter of knowledge to our ideas of God unless they are traced to the experience of God.

An ancient Sanskrit verse says that the assertion of the reality of God is indirect knowledge, the experience of the reality of God is direct knowledge. I am Brahman, ahambrahmasmiof the Vedic seers, Jesus' words concerning his divinity, I am the Truth, ana al-Haqq of A1 Hallaj, have a family resem-blance. Thomas Aquinas speaks of "knowledge through connat- urality." There are two ways of judging things pertaining to a moral virtue, say, courage or fortitude. One may have a theo-retical, conceptual or rational knowledge of these virtues but himself be lacking in them. Another possesses the virtues in question in his own powers of will and desire, has them em-bodied in himself and is connatural with them in his own being. Even so we may have a knowledge of divine reality through theology and knowledge of divine reality by personal experience.

Spiritual apprehension insists on a participation of the know-ing subject in the spiritual reality, .a touching and tasting of the object of knowledge. We see, feel and taste the truth. This is the immediate awareness of being itself. It is experience by participation, by a renewal of the self. We apprehend it with all sides of our being. Jesus defines the first Commandment thus: “Hear, O Israel: The Lord our God, the Lord is One; and you shall love the Lord your God with all your heart, and with all your soul, and with all your mind and with all your strength.” [5] Truth is the vision of reality which satisfies one’s whole being. It is grasped by the complete man.

This direct experience is as old as humanity and is not limited to any one race or religion. The intimations of this type of experience are to be found not only in the realms of meta-physics and religion but also in art and communion with na-ture. In great love, in creative art, in philosophic endeavour, in moments of intense joy and acute suffering, in the presence of truth, beauty and goodness, we are lifted out of detailed con-tact with the world of change and succession into an experi-ence of unity and permanence. In these moments of insight in which subject and object are fused into an undifferentiated state, we enter a region beyond love and hate, where the limits of earthly experience fade away and time stands still. There is a world of light beyond the earthly shadows, where the ob-stinate questionings of the mind are answered and the troubles of the heart are allayed. To experience this reality, to live in it is moksa or life eternal. It is release from finitude, fragmentari-ness, distractedness, unawareness, bondage. It is to be born again, to live in a condition of joy and holy healthfulness.

Moksa, Nirvana, the Kingdom of God are not to be pictured as subsequent to or far off from our present existence. The Kingdom of Heaven is not a place of rest after death, some-thing which will someday come on earth. It is a change of consciousness, an inner development, a radical transforma-tion. Spiritual freedom is the power by which we can transcend the world and yet transform it. Here and now we can attain life eternal.

The modern mind with its naturalistic outlook is inclined to treat with scepticism and incredulity cases of conversion and renewal. But rebirth or renewal is not supernatural or unnat-ural. It is the logical result of the conviction that there is an-other order of reality interpenetrating the order of this world and continually functioning in it to restore and renovate, to direct and illuminate.

In persons of peculiar mental disposition spiritual experience is accompanied by great emotion and attended with unusual phenomena such as swoons and ecstasies, automatic voices and visions. Several other experiences are also permeated by strong emotion. All works of inspiration are by men who feel like possessed beings, but emotional excitement is not enough. This experience is not pathological, though it may happen to ac-company certain morbid states. The great seers are mentally healthy. The nervous disturbances which may develop some-times are merely accidental. The passage from the static to the dynamic, from ignorance to knowledge is a shock to the mental system. We cannot upset the usual relation of the conscious to the unconscious without a risk to the organism. The sudden breaking down of barriers, the exaltation of the mind may dis-turb mental equilibrium. Transports, raptures, delirium, frenzy, these are not the essentials of spiritual experience. They may arise from spurious sources. The real blessing is not the thrill but the experience of reality.

References: -

1. Ludwig Wittgenstein, TractatusLogico-Philosophicus ,Keganpaul German, 1921, p.52.
2. Alfred North whitehead, Science & the modern world, Simon and Schuster, 1926,p.90.
3. ibid p,41
4. SarvepalliRadha Krishnan, The Principal Upanishadas, Allen &Unwin; Harpa India, 1954,p.57.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

Karnads wedding album: Blend of cultural stereotypes and modernity

Aparna Ray *

Abstract - Wedding Album is Girish Karnads latest play, deals with an event so common in life of urban middle class in India today. The impending arrangement of a girl to a suitable expat boy. A blend of anxieties and resentment rooted in indian marriage institution. It discuses a Hindu family in context to caste, class, sexual conjugal, age related behaviour, sacrifices and selfishness chastity, obedience and authorities. The paper is an effort to peep into Karnad world has he deviated from myth folklore and history to cultural stereotypes and modernity. The paper is an effort to search his forte of myth, folklore and history, though not direct yet he has shown cultural stereotypes in mythical strature. Also the play explores the tension between forces of tradition and modernity varying for space in subjectivity.
Keywords - Modernity subjectivity, identity.

Introduction - *Wedding Album* is the most recent play of Girish Karnad. In it he gathers some vignettes from a typical Indian arranged marriage. Karnad explores a traditional Indian wedding with a view of exposing the strained relations when the farthest relatives come together to celebrate the wedding. Karnad also uses the occasion to explore several contemporary issues related to relationships and society. Vidula, the female protagonist, is about to get married to Ashwin the marriage appears to be arranged but actually both have known each other. through e-mails, video-conferencing and photo-sharing. Incidentally, the marriage of Vidula and Ashwin appears as an arranged marriage in the contemporary India which is changing rapidly under the impact of several global forces. One can notice a cooptation of postmodern technologies by a conservative social institution. Vidula is an educated modern girl; hence, why she agrees to such an arrangement is incomprehensible. Perhaps the occasion offers her an opportunity to be someone she cannot be otherwise, as is apparent from her internet-café conversation with her unknown friend. the internet-conversation offers her a veil of anonymity behind which she can be whatever she feels like. Accoring to Butler the identity is performative.People may become totally different persons when placed in different circumstances or in the company of different persons. By identifying the repetitive processes of inscription of social norms and the resistance offered to those norms, Vidula steps into a newly constructed 'self' in the internet café, and also when she is with Ashwin, her groom-to-be.

We notice a strain of hypocrisy in Vidula in opening scene of the play. Her brother Rohit is making a video of Vidula to be sent to Ashwin. He asks her to appear bright and cheerful and put her best foot forward. Vidula objects to this suggestion and says, "I just want him to know what I am like"; and she warns Ashwin, "I am not glamorous, as you can see. I am not exceptional in any way. I don't want you to be disappointed later" (6). It appears that Vidula herself is hardly aware of the possibilities within her. She appears to be ignorant of how glamorous she can be at times, as later shown in the café episode. Everyone considers Vidula to be timid and subservient, but in the internet café when she is attacked by the self-styled guardians of Hindu culture, she reacts in an aggressive manner, using expletives and threatening her assailants, "What gives you the right to come in here. I'll do what I like here. Who the hell are you to question me?" (70). And later, "Get out of here, you bloody bull-shitters. If you don't fuck off this minute . . ." (71). Vidula stands up to them for her rights and transforms into a bold, aggressive and aware woman in the face of a fanatically charged patriarchal attack on her individuality.

Vidula's arranged marriage with Ashwin is in a way similar to the master-slave arrangement of Vidula's imagination. Karnad obliquely hints at the reality of the patriarchal ownership of a woman and the exploitation involved in an Indian arranged marriage through Vidula, when she says that her old master, her father, is about to die and that, "His family is bound to throw me out. So I had to find a new master. A younger man. He lives in the US. He has paid a good price to my family" (64). This reveals her clear understanding on her part of how a woman is treated in a typical patriarchal Indian family before her marriage. All decisions related to her are taken by her father and, later, when she is married the role of the master is passed on to her husband who would decide about her life. Vidula remarks, "He can do whatever with me" (65). Her sister Hema too discusses the patriarchal arrangement in her married life where her husband takes all the decisions: Because they are all transferable jobs and the white wife refuses to go

*Asst.Prof. (English) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

trailing after her husband. We Indian women, on the other hand, are obedient Sati Savitris, ever willing to follow in our husband's foot Step Probably, this is the reason Hema has not been able to utilise her talent and education and remains a housewife, constantly worrying about her children and home. She is probably so neglected by her husband and her marital life is so dull that she is excited when Vivan, a boy even younger to her son, shows an interest in her. She is at first shocked at receiving attentions from a boy so young, but later she feels flattered and looks forward to short meetings with him and his erotically charged letters. But near the end of the play, Vivan dumps her for a younger girl. Karnad, through this episode, hints at the sexual openness prevalent in society where all limitations of age, relation and propriety disappear. The play is a winner because we do not find her surreptitiousness in any way immoral.

The moral police in the café episode are also too obviously snubbed by Vidula. In fact, Karnad does not even begin to judge the matter as moral or immoral. In Karnad's plays morality is assumed to be relative. It is difficult to pinpoint what we should call moral or immoral as it depends upon the situation, state of mind or the discourses of the time. The amoral stand of Karnad in this play can be compared to his stand in other plays like *The Fire and the Rain*, *Bali* and *Hayavadana*. In these plays too, Karnad does not comment on the propriety or impropriety of adultery. He neither condemns, nor justifies it. Karnad's stand on morality can be seen in the light of Nietzsche's views who considers morality as a weapon of the weak to get even with the strong. The weak label the strong as "evil" and, in turn, themselves as "good", and they uphold their tendencies as virtues but condemn those of their opponents as vices, creating an arbitrary system of morality to protect their interests.

The moral police in the play uses the discourse of Hinduism and its values and morals for certain political aims. The café attendant tells Vidula that those people charge money from him to let him run his business which, according to them, is a danger to their culture. The argument of culture/ morality/religious piety is, thus, a convenient tool to be moulded to suit one's ends.Ashwin's proclamations about preservation and propagation of Hinduism and Indian culture too appear to be a professional tactic to win people and impress upon them the imagined greatness of his culture, while, on the contrary, he also tells Vidula how he himself has seen,experienced and enjoyed every aspect of American culture: I have drunk life in the US to the lees. Girl friends, affairs, mistresses, one-night stands and on the public stage, glamour, success, social connections. I have been through them all. And I have come to the conclusion that that whole culture is empty of values now, bereft of any living meaning. It is shallow, you see what I mean, glittering and shallow . . . . Unlike the US, India has an ancient civilization. A culture which is full of wisdom and insight. India should have the capacity to lead the world. Ashwin tries to impress upon Vidula that he is looking for a lifepartner from a place like Dharwad because it means that the girl would be full of "innocence" and "purity" . It is a case of patriarchy using the discourses of religion and culture to exploit and suppress people by stereotyping genders, persons and places. Ashwin tells Vidula, "Someone like you carries within you the essence of Hindu spirituality. Woman as mother, wife, daughter. Womanhood as the most sacred ideal".

He expects Vidula to be a submissive housewife who should perform her duties within the circle of the household without expecting any gratitude or without thinking of her own life, career or economic independence. Ashwin tactically yet spontaneously uses the patriarchal discourse of woman as Devi. Such discourses construct certain subject positions which stereotype a woman, creating impracticable ideals for her to follow. Vidula, however, listens to all this hypocrisy in silence and does not object to it. It is difficult to believe that she is the same Vidula who reprimanded the moral guardians in the café episode so vehemently. On the other hand, it is Ma who seems to have emerged unscathed from the influence of patriarchy. She used to get severe beatings from her husband. But now it is she who takes the decisions. Father grumbles about having lost his commanding position in the family, but he praises Ma for her sacrifice and her skill at management. But this again reinforces the idea that a woman can only win applause in a patriarchal system if she makes sacrifices, reaffirming the woman as Devi.

The wedding is supposed to bring together all the family but it becomes an occasion for bringing past grudges and resentments. Hema, for example, has always thought that she is less beloved of her parents than Rohit and Vidula. She remembers that in her childhood when her parents got transferred, they did not take her along but left her with the relatives. She also feels that her parents could have spent more on her wedding. She envies the elaborate preparations being made for Vidula's wedding. Her father and mother feel that it was Hema who was in a hurry to get married, so they could not plan an elaborate wedding. Father even brings out a list of expenses incurred on the wedding, prepared accurately by Ramdas. He speaks lovingly about his brother Ramdas who he feels was very bright, but mother tells him that Ramdas hated him despite his affectionate concern for him: Later it is discovered that Vidula's birth certificate bears the name of Ramdas as her father. ma considers it a wilful action by Ramdas as he was jealous of father. Hema and Vidula feel that Ramdas probably had his eyes on ma since she was very beautiful.It appears that some notions of propriety and tradition are ingrained in their family and that is why ma feels that the wrong name on the certificate does not matter much and could be left as it is.

Through Rohit, the play gives us a glimpse of how the lure of money and fame could make a person opportunistic. Rohit loves Isabel, but the Sirur family wants him to marry their daughter Tapasya. They offer him foreign education and even assistance in setting up his own business. Rohit at first refuses but gradually the lustre of wealth tempts him and he gives in, dumping Isabel to suffer. Rohit marries

Tapasya and yet has his eyes on Isabel, and so invites her to join him when Tapasya is away. But the promise of prosperity and material well-beingmakes him suppress his emotions for Isabel. It is thus the conflict between wealth and prosperity on the one hand and love and emotion on the other which defines Rohit as a subject. Now another character Radhabai, the cook, too makes a similar move, when it comes to choosing between the love of a daughter and a job. Radhabai's daughter was a kept woman. She used to send money to her, with which Radha is able to come to the city and find a cook's job in a household. But she does not tell anyone about her daughter because it might cost her the job if the employer came to know that her daughter is a concubine. Incidentally, her daughter's master dies and his people turn her out. With no shelter or money and heaps of insults from people, she goes mad and starts running on streets in search of her mother. But her mother refuses to recognise her when she finally finds her house.

The incident, however, leaves Radha guilty and repentant, causing her to weigh and ponder her decision time and again, throwing her into fits of temper. The play ends with Radhabai contemplating the decisions she made, reliving the crucial moments and justifying to herself what she did and why she could not do otherwise. It appears that she repeats the incident to herself time and again in order to consider and reconsider her options: You can't keep a grown up daughter at home, can you? . . . It was paralyzed. Why is she here? What if my mistress sees her? What'll happen to me? The social discourse of morality commands her to make her choices. Keeping Radhabai in the periphery for so long shows Karnad's preoccupation with the Brahmin's point of view, but at the same time his compassion clearly rests on the other side. Radhabai's story is somewhat marginalised in the play, yet it certainly catches the eye of Pratibha and Rohit when they are planning the next episodes of their TV serial. Pratibha, Rohit's boss, finds it more realistic and melodramatic than the Vidula episode. They discuss how they can mould the ending a little to make it even more tear-jerking. Pratibha congratulates Rohit for having thought of such a great idea, Human grief, too, becomes a commodity in a kind of emotional cannibalism.

Conclusion - It is noteworthy that in *Wedding Album* Karnad moves from myth, folklore and history to cultural stereotypes and modernity. There is no direct allusion to either myth or history in it, yet the cultural stereotypes it showcases are of an almost mythical stature. Although it appears to be a comparatively modern play, yet the subjectivity it explores emerges out of ancient mythical and cultural discourses. The play explores the tension between forces of tradition and modernity, both varying with each other for a space in subjectivity, leaving a hole in the subject. It also depicts how the discourses of culture, morality and tradition are associated with a sense of guilt and remorse, as is apparent in the case of Radhabai and Rohit. Karnad's plays thus are a mirror to the formation of contemporary Indian subjectivity against the backdrop of several ages. He has a wider range Karnad explores the multiple layers of subjectivity in not only the mythical and historical but also the contemporary Indian subjects. His plays can be regarded as representing the contemporary Indian subjectivity across classes, genders and temporalities. He modernises the historical and mythical subjects, making them appear extremely contemporary. He deals with almost every strata of society including the royalty, the rural lower class and the urban middle Be it Rani of *Nagamandala*, the three protagonists of *Hayavadana* or Vidula, Radha and Rohit of *Wedding Album*, the subjects of Karnad are entangled in unprecedented turmoil. And through this turmoil, he explores the multiple layers of their existence in the world.

Similarly, Karnad's protagonists in *Nagamandala* and *Hayavadana* are faced with contemporary crises revolving around identity and existence. Rani oscillates between self-identification with the two roles assigned to her, that is, the role of an ideal Indian daughter-inlaw and that of a goddess; while Padmini finds it difficult to choose between intellect and beauty, wondering why she cannot have the best of both. A comparison can also be made between *Tughlaq*, *Nagamandala* and *Wedding Album* on the basis of Karnad's stand on morality. In *Wedding Album* Karnad seems to be justifying normal bourgeois morality, whereas in the other two plays the transgression of moral norms elevates the transgressors above ordinary human beings: Rani is accepted as a goddess after her adulterous relationship with Naga And in *Wedding Album* Karnad chooses to lay bare the workings of the forces of modernity on traditional institutions, depicting how the forces of materialism, individuality and consumerism on the one hand and culture, spirituality and ethics on the other, rend their subjects apart, pulling them in opposite directions and leaving behind a sense of loss and guilt.

References :-

1. Karnad, Girish.Wedding Album New Delhi : 2009
2. Mukherjee, Lutun.Girish Karnad's plays – Performances and Critical Perpective . New Delhi 2006
3. Agarwal, Malti . New Perseptive on Indian Writing, New Delhi creative Books 2009

****

The Study Of Poetry

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Abstract - There are some quires about English Poetry. When it began? Who wrote first as a poet? What shall we require of poetry? Delight, music, subtlety of thought. A word of the heart's desire, fidelity to comprehensible experience, a glimpse though magic casements, profound wisdom? All these things all different, yet not all contradictory have been required of poetry. We require the highest. All that can be demanded of any spiritual activity of man we must demand of poetry. This paper highlights on the essential qualities of all true poetry and contribution of poets.
Key words- Thought, quality, contribution.

Introduction - "Poetry Is' Metrical Composition' It Is The Art Of Uniting, Pleasure With Truth By Calling Imagination To The Help Of Reason And Its 'Essence' Is 'Invention'.

- Johnson

Mill says the thought and words in which emotion spontaneously embodies it. Macaulay says "By poetry we mean the art of employing words in such a manner as to preclude an illusion on the imagination, the art of doing by means of words what the painter does by means of colors". Carlyle declares poetry "we will call musical thought." Shally says Poetry in a general sense may be defined as the expression of the imagination." Hazlitt says "it is the language of the imagination and the passions". Leigh Hunt says, "Poetry is the utterance of a passion for truth, beauty, and power, embodying and illustrating its conception by imagination and fancy, and modulating its language on the principal of variety in unity." In Wordsworth phrase, "it is the breath and finer spirit of all knowledge and the impassioned expression which is in the countenance of all science." According to Matthew Arnold "it is simply the most delightful and perfect form of utterance that human words can reach" it is "nothing less than the most perfect speech of man, that in which he comes nearest to being able to utter the truth", it is "a criticism of life under the conditions fixed for such a criticism by the laws of poetic truth and poetic beauty. According to Edgar Allan Poe, It is "the rhythmic creation of beauty."

The full significance of poetry as an interpretation of life through imagination and feeling will be made apparent when we come presently to deal with the relation of poetry and science, and with the properties of poetic truth.

Poetry is a form of literature that uses aesthetic and rhythmic aesthetic and rhythmic qualities of language such as phonaesthetics, sound symbolism. And meter-to evokes meanings in addition to, or in place of, the prosaic ostensible meaning. Poetry has a long history,

When we speak of imagination of feeling as predominating in poetry we mean to distinguish these as general and constant characteristics of the poetic treatment of life; but we do not mean to say that their presence, even in the highest degree, is itself sufficient to constitute poetry. We may regard them as essential qualities of all true poetry. By poetic truth we mean fidelity to our emotional apprehension of facts, to the impression which they make upon us, to the feelings of pleasure or pain, hope or fear, wonder or religious reverence, which they arouse. Our chief element of poetry is its revealing power. It opens our eyes to sensuous beauties and spiritual meanings in the worlds of human experience and nature to which otherwise we should remain blind. Early English poetry was the earliest writing of the Indians in the English language. The first literary texts in English emerged from Bengal, and Raja Ram Mohan Roy (1774-1833), the progressive advocate of English civilization and culture, wrote numerous essays and treatises, which were collected in a complete volume in 1906. But it seems that poetry was the genre that first took flight in the Indian imagination, the best-known nineteenth-century poets being Henry Louis Vivian Derozio (1809-31), Michael Madhusudan Dutt (1827-73), Toru Dutt (1856-77), her cousin Romesh Chunder Dutt (1848-1909),and Manmohun Ghose (7-1924).

The trick is, to live your days
As if each one may be you

Peter Meinke, (Advice to my son)

The poet, Peter Meinke, addresses his son, advising him how to act as well as what to expect. Arnold is fundamentally concerned with poetry's "high destiny", he believes that "mankind will discover that we have to turn to poetry to interpret life for us, to console us, to sustain us"

All of these poets, in some degree, were influenced by the idealistic strain of romanticism. Their poets reflect Christian as well as lyrical sentiments. It has been noted that the first volume of poetry in English came out even before

* Asst. Professor (English) Govt. College, Junnardeo (M.P.) INDIA

these poets made their mark, such as Shair and Other Poems (1830) by Kasiprasad Ghose. By the turn of the century and into the early twentieth century, three more poets were to join their ranks, outdoing them with a far greater success and fame. These were Rabindranath Tagore (1861-1941), Sri Aurobindo Ghose (1872-1950), and Sarojini Naidu (1879-1949).

Rabindranath Tagore, mainly a lyrical poet, came to the attention of the West by his 1912 English translation of his Bengali poems. This collection was called Gitanjali, meaning song offering, and this volume secured him international recognition. Though he went on to translate more of his poetry, Macmillan publishing the Collected Poems and Plays in 1936, Tagore is still best known for his first collection of poems and the creation of his experimental school, Santiniketan, in Bolpur. Unlike Tagore, Sri Aurobindo wrote originally in English, more justly deserving the title of mystic and visionary with such well-known works as Savitri (1936) and The Life Divine (1939-40). Initially, Sri Aurobindo embarked on a career in the Indian civil service with a degree in the classics from King's College, Cambridge. The years of Anglicization came to an end when he rediscovered Indian religion and philosophy. After a period of nationalist activity, he established an ashram in Pondicherry, where he began to write his epic-style philosophical works and acquired a large religious following. Like Sri Aurobindo, Sarojini Naidu went to King's College in England, returning eventually to India on the advice of Edmund Gosse, who found her early poems “too English”. Her three volumes of poetry, The Golden Threshold (1905), The Bird of Time (1912), and The Broken Wing (1917), earned her much fame and popularity in England. At home, she became a well-known public figure.

One of the most remarkable things about the early poets is that they did not see any contradiction between the Indian and Anglicized identities. Henry Derozio, for instance, was a fervent nationalist; yet, his love of the romantics found him riding an Arab horse through the streets of Kolkata. Similarly, Toru Dutt went to Indian myth and legend for her themes in Ancient Ballads and Legends of Hindustan, freshly reinterpreting some of these; yet, she remained attached to France and French literature, even writing a novel in French and translating French poems into English. Thus these early writers did not merely reproduce the axioms of imperialism and mindlessly imitate Western literature. They were the mediators between the east and the west.

The future of poetry is immense, because in poetry, where it is worthy of its high destinies, our race, as time goes on, will find an ever surer end surer stay. There is not a creed which is not shaken, not an accredited dagma which is not shown to be questionable, not a received tradition which does not threaten to dissolve. Our religion has materialized itself in the fact, in the supposed fact; it has attached its emotion to the fact, and now the fact is failing it. But for poetry the idea is everything; the rest is a world of illusion, of divine illusion. Poetry attached its emotional to the idea; the idea is the fact. The strongest part of our religion to day is its unconscious poetry.

References :–

1. William Henry Hudson, An Introduction to the study of English Literature, Indian Publishing House, 2010 page no. 50.
2. Ruth Miller Robert A Greenberg, Poetry an Introduction St, Martin's press, New york.
3. J. Middleton Murry, Aspects of literature, strict book distributors, New Delhi, 2011.
4. A.A.khan & U.C Joshi, Indian English poetry & prose, sherry publishers, New Delhi, 2012.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

स्वस्थ्य शरीर के लिये योग

डॉ. भावना श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – योग शब्द वेदों, उपनिषदों, गीता एवं पुराणों में अति पुरातन काल से व्यवहृत होता आया है। भारतीय दर्शन में योग एक अति महत्वपूर्ण शब्द है। आत्म दर्शन व समाधि से लेकर कर्म क्षेत्र तक योग का व्यापक व्यवहार हमारे शास्त्रों में हुआ है। योग दर्शन के उपदेष्टा महर्षि पतंजलि यो शब्द का अर्थ 'वृक्ति निरोध' करते हैं –

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः योगदर्शन 1/2[1]

अर्थात ऐसी अवस्था जिसमें चिक्त की वृक्तियों का निरोध हो जाये, वह योग है। प्रमाण, विपर्यय विकल्प निद्रा एवं एवं स्मृकम ये पंचविध वृक्तियाँ जब अभ्यास एवम् वैराग्यादि साधनों में मन में लय को प्राप्त हो जाती है और मन दृष्टा (आत्मा) के स्वरूप में अवस्थित हो जाता है, तब योग होता है।[2] महर्षि व्यास योग का अर्थ समाधि लगाते हैं।

व्याकरण शास्त्र में युज् धातु से भाव अर्थ में घञ् प्रत्यय करने पर योग शब्द की व्युत्पत्ति होती है, जिसका अर्थ है 'मिलना' अर्थात जीवात्मा का परमात्मा की सत्ता में मिल जाना ही 'योग' है। आत्मा का परमात्मा के साथ योग करने (योग कर) समाधि का आनन्द लेना 'योग' है।

ऋषियों के अनुसार योग का तात्पर्य स्वचेतना और चेतना के मुख्य केन्द्र परम् चैतन्य प्रभु के साथ संयुक्त हो जाना है।

भारतीय वाड्मय में गीता का अपना महत्वपूर्ण स्थान है भारत के आधुनिक सन्तों ने तो गीता के योग का प्रचार विश्व भर में किया है। गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण योग को विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त करते हैं। अनुकूलता–प्रतिकूलता, सिद्धि–असिद्धि, सफलता–विफलता, जय–पराजय इल समस्त भावों में आत्मस्थ रहते हुए सम रहने को योग कहते हैं।

आत्मस्थ कुरू कर्माणि सड्.ग त्वक्तवा धनञ्जय।
सिद्धयसिद्धोः समौभूत्वा समत्वं योग उच्यते।।[4]

असड.भाव में दृष्टा बनकर अन्तर की दिव्य प्रेरणा से प्रेरित होकर कुशलतापूर्वक कर्म करना गीता में योग ही माना है – 'योगः कर्मसु कौशलम्' जैनाचार्यो के अनुसार जिन साधनों से आत्मा की सिद्धि और मोक्ष की प्राप्ति होती है वह योग है।[6] अन्यत्र जैन दर्शन में मन, वाणी एवं शरीर की शक्तियों को भी कर्मयोग कहा गया है।[7]

आधुनिक युग के योगी श्री अरविन्द के अनुसार परमदेव के साथ एकत्व की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना तथा इसे प्राप्त करना ही सब योगों का स्वरूप है।[8]

इस प्रकार संक्षेप में हम कह सकते हैं कि मन को एकाग्र करते हुए संयमपूर्वक साधना करते हुए आत्मा का परमात्मा के साथ योग करके (जोड़कर) समाधि का आनन्द लेना योग है।

दत्तात्रेय – योगशास्त्र तथा योगराज उपनिषद् में मंत्रयोग, लोग, हटयोग तथा राजयोग के रूप में योग के चार प्रकार माने गए हैं।[9]

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचि दात्मानमात्मना।
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे।[10]

गीता में ध्यान योग, साख्य योग एवं कार्य योग के बारे में विस्तृत विवेचना है।[10] गीता में पंचम अध्याय में सन्यास योग एवं कर्मयोग में कर्मयोग को श्रेष्ठ माना गया है।[11] महर्षि पंतजलि ने योगों में अष्टाड.योग को मुख्य तथा लक्षित कर योग सूत्रों में इसकी विवेचना की है।

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाध्योः
डष्टारावड्नि।।[12]

योग का अर्थ है अपनी चेतनाअस्तित्व का बोध। अपने अन्दर निहित शक्तियों को विकसित करने परम चैतन्य आत्मा का साक्षात्कार एवं पूर्ण आन्द की प्राप्ति। इन यौगिक प्रक्रिया की क्रियाओं का विधान हमारे ऋषि मुनिया ने किया है। यहाँ हम मुख्य रूप से अष्टांग योग (यम, नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारण,ध्यान व समाधि) से मानव पूर्ण स्वस्थ्य रह सकता है। योग से रक्त परिभ्रमण पूर्णरूपेण सम्पन्न रीति से होने लगता है और शरीर विज्ञान का यह सिद्धान्त है कि शरीर के मंत्रोचन व विमोचन होने से उनकी शक्ति का विकास होता है तथा रोगों की निवृक्ति होती है। योगासत्रों से यह प्रक्रिया सहज ही हो जाती है। आसन एवं प्राणायामों के द्धारा शरीर की ग्रंथियों व मांसपेशियों में कर्षण अपकर्षण, आकुंचन–प्रसारण तथा शिथिलीकरण की क्रियाओं द्धारा उनका आरोग बनाता है। रक्त को प्रदक्त करने वाली धमनियाँ एवं शिराएँ भी स्वरूप हो जाती है। अतः एवं यौगिक क्रिया से पोन्क्रियाज एक्टिव होकर इन्स्युलिन ठीक मात्रा में बनने लगता है जिससे डायबिटीज जब आदि रोग दूर होते जा हैं। पांचनतंत्र के स्वास्थ्य पर पूरे शरीर का स्वास्थ्य निर्भर करता है। सभी बीमारियों का मूल कारण पाचन की अस्वस्थता है। योग से पाचनतंत्र पूर्ण से स्वस्थ्य हो जाता है जिसमें संपूर्ण शरीर स्वस्थ्य एवं स्फुर्तिदायक बन जाता है। योग से हृदय रोग जैसी भयंकर बीमारी से भी छुटकारा पाया जा सकता है। फैफड़ों में पूर्ण स्वस्थ्य वायु का प्रवेश होता है, जिससे फेफड़े स्वस्थ्य होते हैं तथा दमा, श्वास, एलर्जी आदि से छुटकारा मिलता है। जब फेफड़ों में स्वस्थ वायु जाती है तो उसमें हृदय को भी बल मिलता है। यौगिक क्रियाओं से पेट का पाचन ठीक होकर शरीर का भार कहोता हे तथा शरीर स्वस्थ सुडौल एवं सुन्दर बनता है। योग से इन्द्रियों एवं मन का विग्रह होता है। यम्, नियमादि, अष्टांग योग के अभ्यास से माधम असत् अविधां के तमस से हटकर अपने दिव्य स्वरूप ज्योतिर्मय, आनन्द्यम, शांतिमय परमचैतन्य आत्मा एवं परमात्मा तक पहुंचने में समर्थ हो जाता है।

सुस्वास्थ्य ही संपूर्ण सुखों का आधार है। स्वास्थ है तो जहान है, नहीं तो शमशान है। ऋषियों ने स्वस्थ शब्द की बहुत ही व्यापक एवं वैज्ञानिक परिभाषा की है। स्वस्थ कौन है ऋषियों ने आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थसुश्रुत में ऋषि लिखते है –

समदोषाः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः
प्रसन्नतात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते।।[13]

जिनके तीनों दोष वात, पित्त एवं कफ सम हो, जठराग्नि सम हो, शरीर

* प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

को धारण करने वाली सप्त धातुऐं रस, रक्त, मास, मेद, अस्थि, मज्जा तथा वीर्य उचित अनुपात में हो, मल–मूत्र की क्रिया सम्यक प्रकार से होती है और दस इन्द्रियाँ (कान, नाक, आँख, त्वचा रसना, गुदा, उपस्थ, हाथ पैर व जिह्य) मन एवं इनका स्वामी आत्मा भी प्रसन्न हो तो ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ कहा जाता है। इस स्वस्थता की प्राप्ति हेतु आहार निज एवं बह्यचर्य तीन स्तम्भ है। इनके ऊपर यह शरीर टिका हुआ है – भगवद् गीता में योगैश्वर श्री कृष्ण भी कहते हैं –

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्रावबोधस्य योगो भवसति दु:खड़ा ।।[15]

जिनके आहार, विहार, विचार एवं व्यवहार संतुलित है, जिनके कार्यो में दिव्यता, मन में सदा पवित्रता व शुभ के प्रति अभीप्सा है, जिसका शयन एवं जागरण अर्थपूर्ण है, वही सच्चा योगी है।

आजकल देश विदेशों में सर्वत्र योग की चर्चा है। इसकी व्यापकता तथा अलौकिक शक्ति प्रदान करने वाली विद्या होने के कारण लोग अचानक इसकी ओर आकर्षित होते हैं पंतजलि देव ने निम्न सूत्र में स्पष्ट किया है –

सतु दीर्घकाल नैरंतर्य सत्कारा सेवितोद्दढ़ भूमि: ।

अर्थात दीर्घकाल तक निरन्तर सत्कारपूर्वक योग अभ्यास करने से योग की भूमिका दृढ़ होती है। आसन और प्राणायामों के द्धारा शरीर की ग्रंथियों व मांसपेशियों में कर्षण विकर्षण, आकुंचन–प्रसारण तथा शिथिलीकरण की क्रियाओं द्धारा उनका आरोग बनाता है। रक्त को प्रदक्त करने वाली धमनियाँ एवं शिराएँ भी स्वरूप हो जाती है। आसन एवं यौगिक क्रिया से शरीर के प्रत्येक अंग–प्रत्यंग को पूरी तरह क्रियाशीलता मिलती हैं एवं ये सक्रिऔर लचीले बन जाते हैं। आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास–प्रश्वास की गति को यथाशक्ति नियन्त्रित करके प्राणायाम से मनुष्य स्वस्थ बना रहता है।

यहाँ कुछ आसनों के बारे में बताऊगी जिसके करने से मनुष्य शरीर पर प्रभाव एवं लाभ होता है, जिनके कारण वह स्वस्थ बना रहता है।

1. **सर्वप्रथम 'पद्मासन'** करने से ध्यान के लिए उत्तम आसन है। मन की एकाग्रता व प्राणोत्थान में सहायक है। जठराग्नि को तीव्र करता है। वातव्याधि में लाभदायक है।

2. **'मत्स्यासन' –** पेट के लिए उत्तम है। आंतों को सक्रिय करके कब्ज को दूर करता है। थाइराइड, पैराथाइड एवं एड्रिनल को स्वस्थ बनाता है। सर्वाइकल पेन या ग्रीवा को पीछे की हड्डी बढ़ी हुई होने पर लाभदायक है। नाभि टलनाइज होता है। फेफड़ों के रोग दमा, श्वास आदि की निवृत्ति करता है।

3. **'वज्रासन' –** ध्यानात्मक आसन है। मन की चंचलता दूर करता है। घुटनों की पीड़ा दूर होती है। भोजन के बाद किया जाने वाला यह एक मात्र आसन है। इसके करने से अपचन अम्लपित, गैस, कब्ज की निवृक्ति होती है। भेजन के बाद 5 से 15 मिनिट तक करने से भोज्य का पाचन ठीक से हो जाता है।

4. **'मण्डूकासन' –** से अग्नयाशय (पेनिक्रियाज) को सक्रिय करता है, इसलिये इन्स्युलिन अधिक मात्रा में बनने लगता है। अतः डायबिटीज को दूर करने में सहायक होता है। उदर रोगों में उपयोगी है, हृदय के लिये लाभदायक है।

5. **'चक्रासन'** से रीढ़ की हड्डी को लचीला बनाकर वृद्धावस्था नहीं आने देता। जठर एवं आतों को सक्रिय करता है। शरीर में स्फूर्ति, शक्ति एवं तेज की वृद्धि करता है। कटिपीड़ा, श्वास, रोग, सिरदर्द, नेत्र विकारों, सर्वाइकल व स्पॉडोर्लाटिस में विशेष हितकारी है। हाथ पैरों की मांसपेशियों को सबल बनाता है। महिलाओं के गर्भाशय के विकारों को दूर करता है।

6. **'मर्कटारसन' –** से कमदर्द, सर्वाकल, स्पॉडोलाइटिस, स्लिपडिस्क एवम् सियाटिका में विशेष लाभकारी अभ्यास है। पेटदर्द, दस्त, कब्ज एवं गैस को दूर करके पेट को हल्का बनाता है। नितम्ब, जोड़ के दर्द में विशेष लाभदायक है। मेरूदण्ड की सभी विकृतियों को दूर करता है।

7. **'भुजंगासन'** – से सर्वाइकल, स्पोंडोलाइटिस व स्लिपडिस्क आदि समस्त मेरूदण्ड के रोगों के लिए अति महत्वपूर्ण आसन है।

8. **'धनुरासन'** से मेरूदण्ड को लचीला एवं स्वस्थ बनाता है। सर्वाइकल स्पोंडोलाइटिस, कमर दर्द एवं उदर रोगों में लाभदायक आसन है। नाभिट टलना दूर करता है। स्त्रियों की मासिक धर्म संबंधी विकृतियों में लाभदायक है। गुर्दो को पुष्ट करके मूत्र विकारों को दूर करता है।

9. **'मकरासन' –** की क्रिया करने से स्लिपडिस्क, सर्वाइकल एवम् सियाटिकी के लिए यह लाभकार्य अभ्यास है। अस्थमा व फेफड़े संबंधी किसी भी विकार तथा घुटनों के दर्द के लिए विशेष गुणकारी है।

10. **'अर्धमत्सयेन्द्रासन' –** के अभ्यास से मधुमेह एवं कमर दर्द में लाभकारी है। पृष्ठदेश की सभी नस–नाड़ियों में रक्त संचार को सुचारू रूप से चलाता है। उदर विकारों को दूर कर आँतों को बल प्रदान करता है।

इन यौगिक क्रियाओं को करने से मानव पूर्ण रूप से स्वस्थ रहता है। योग ही ऐसी विद्या है जो प्राणीमात्र को सफल जीवन की कला सिखाती है। अमतृत्व से सत् की ओर मृत्यु से अमरत्व की ओर अंधकार से प्रकाश की ओर तथा दुख से परम सुख की ओर असफलता से सफलता की ओर अग्रसर करने के लिये यह योग ही एकमात्र विज्ञान है। योग करने से ही मानव पूर्ण रूप से स्वस्थ रह सकता है। दुनिया का कर्ताधर्ता हारे जीवन से महेश्वर हो जाता है ऐसे व्यक्तियों को पूर्ण योगी या युक्त योगी कहते हैं भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है–

सर्व भूतस्य मात्मनि सर्वभूतानि चात्मनि।
ईछते योग युक्तात्मा सर्वत्र सम दर्शन: ।।[18]

सभी प्राणियों में अपने आप को देखता है तथा समदर्शी है वह योगकर्ता कहा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योगदर्शन – 1/2
2. योगदर्शन – 1/6
3. योग:समाधि:व्यासभाष्य – योगदर्शन 1/1
4. भगवद्गीता – 2/48
5. योग कर्मसु कौशलम्। भगवद्गीता – 1/50
6. मोक्षेण योजनादेव योगो ह्यत्र निरूच्यते – यशोविजय कृत्र द्धाचिंशिका – 10/1
7. तत्वार्थसूत्र – 6/1
8. श्री अरविन्द – योग समन्वय – पृष्ठ – 6/65
9. दत्रायोग – 18–19
10. भगवद्गीता – 3/24
11. भगवद्गीता – 5/2
12. योगदर्शन – 2/29
13. सुश्रुत सूक्त – 15/41
14. चरक सूत्र – 11/34
15. भगवद्गीता – 6/17
16. पंतजलि योग दर्शन – सूत्र संख्या – 14
17. योग साधना
18. श्री भगवद्गीता – 626

नैतिक मूल्यों की स्थापना में संत कबीर का योगदान

डॉ. पुष्पा कपूर *

शोध सारांश – नैतिक मूल्य शाश्वत हैं, मानव की सांस्कृतिक धरोहर है। इन मूल्यों का महत्व तब और बढ़ जाता है, जब वे जीवन में अपना स्थान बना लेते हैं। संत कबीर ने सामाजिक कुरीतियों का पुरज़ोर विरोध करते हुए मानव की गरिमा बनाए रखने में नैतिक मूल्यों को आत्मसात किये जाने में अपना अपूर्व योगदान दिया।

प्रस्तावना – संत कबीर के साहित्य का केन्द्रबिन्दु मानव है। उनकी विचारधारा जन-सामान्य को ऊँचाईयों की ओर प्रेरित करने की रही है। वे सरलता और स्पष्टता से समाज में व्याप्त कुरीतियों, धार्मिक आडम्बरों एवं द्वैषमय वातावरण को बदलकर मानव की चित्तवृत्ति को निर्मल कर देना चाहते हैं –

निंदक नियरे राखिये, आँगन कुटी छबाए।
बिनु पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।।

मानव को सदैव संतोष बनाए रखना चाहिए, उसे जीवन में जितना प्राप्त हुआ है, उसी से अपने जीवन को सुखी बनाते हुए जीवमात्र के प्रति समानता की दृष्टि रखना चाहिए।

सील संतोष सदा समदृष्टि, रहनि गहनी में पूरा।
ताके दरस परम भय भाजै, होई कलेस सब दूरा।।

कबीर ने मानव एकता और समाज में बराबरी पर बल दिया। मानवमात्र में एक ही तत्व का वे साक्षात्कार करना चाहते हैं। परस्पर वैमनस्य को वे मिटाना चाहते हैं। –

देखो रे जग बौराना साधु देखो रे जग बौराना
हिन्दू कहे राम है मेरा, मुसलमान रहिमाना
आपस में दोउ लरै मरत है, भेद न कोई जाना।।

कबीर नैतिक मूल्यों को मानव के सदाचार में सार्थक होते देखना चाहते हैं–

जाति पाति पूछे नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।

आज भी मानव समाज इस जातिगत विष को पचाए हुए है। मानव चरित्र की दृढ़ता में बाह्य आडम्बर को कोई स्थान नहीं होना चाहिए। मन को वश में करना अत्यन्त आवश्यक है –

माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माहीं।
मनुआ तो दस दिसि फिरै, सो तो सुमिरन नाहीं।।

कबीर मानव को काम, क्रोध, लोभ, मोह से दूर रहने की सलाह देते हैं। मनुष्य की चारित्रिक दृढ़ता को बनाए रखने में संगति का पूरा ध्यान रखना चाहिए क्योंकि कुसंगति मानव को पतन की ओर ले जाती है–

कबीर संगति साधु की, बेगि करीजै जाइ।।
दुरमति दूरी गंवाई सो देखी सुमति बनाइ।।

लोभ मनुष्य को आसक्ति की ओर ले जाता है और वह कभी न मिटने वाली तृष्णा का गुलाम बन जाता है। संत कबीर सांसारिक माया-मोह से जीवन में होने वाली हानि बताते हैं। जो मानव माया के वशीभूत हो जाते हैं, उन्हें शरीर छूटने पर भी माया से छुटकारा प्राप्त नहीं हो पाता।

माया मुई न मन मुवा, मरि मरि गया सरीर।
आसा तृष्णा ना मुई, यो कहि गया कबीर।।

मानव कल्याणार्थ – कबीर मानव हित में सत्य वचन अपनाने पर बल देते हुए कहते हैं –

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप
जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप।

कबीर समाज में मानव को बराबरी का दर्जा देने के पक्षधर थे। मानव में ऊँच-नीच की भेद दृष्टि का विरोध उन्होंने किया। हिंसक प्रवृत्तियों का विरोध किया। तभी वे कहते हैं –

दुर्बल को न सताइये, जा की मोटी हाय।
मरे बैल के चाम से, लौह भस्म हो जाय।।

वे एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से नीचा माने जाने का घोर विरोध दर्ज करते हैं जीवन की अनित्यता, क्षणभंगुरता को बताते हुए वे कहते हैं –

पानी केरा बुदबुदा, अस मानस की जात।
एक दिना छिप जाऐंगे, ज्यूँ तारा परभात।।

कबीर की वाणी मानव की अन्तरात्मा को जगाने का कार्य करती है, वे कहते हैं –

कबीरा सोई पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो काफिर बेपीर।।

कबीर सम्पूर्ण मानव जाति की रक्षा चाहते हैं, बिना किसी भेद दृष्टि के वे कहते हैं –

कबीरा खड़ा बाजार में, मांगे सबकी खैर।
ना काहु से दोस्ती, ना काहु से बैर।।

मानवतावादी विचार उन्हें जीवन में संतोष बनाए रखने की दृष्टि प्रदान करता है, तभी वे कहते हैं –

सांई इतना दीजिए जामें कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।।

निष्कर्ष – संत कबीर की निर्भीक वाणी मानवमात्र के कल्याण की पक्षधर रही है। समाज में व्याप्त जाति, धर्म, वर्ग, वर्ण सभी प्रकार के भेदों से उपजी विसंगतियों पर कुठाराघात करते हुए कबीर मानवता की रक्षा पर बल देते हैं। मानवीय मूल्यों की रक्षा किस प्रकार जीवन में की जा सकती है, यह कबीर के साहित्य में मुखरित होता दृष्टव्य है। वे न्याय और समानता को साकार देखना चाहते हैं। एक श्रेष्ठ चिंतक के साथ-साथ वे एक कर्मयोगी, साधना के मर्मज्ञ, भावना की अनुभूति जगाने की अद्भुत क्षमता रखने वाले मानवतावादी विचारक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कबीरदास – डॉ. कान्तिकुमार
2. कबीर ग्रंथावली– श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ 191
3. कबीरवाणी – डॉ. जयदेव सिंह, डॉ. वासुदेव सिंह
4. कबीर साहित्य की परख – आचार्य परशुराम चतुर्वेदी
5. हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि – डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना
6. कबीर की विचारधारा – डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत
7. कबीर – डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी

* प्राध्यापक (दर्शनशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

दृष्टि बाधित शिक्षा संस्था का व्यक्ति इकाई अध्ययन

डॉ. रमा त्यागी * इम्तियाज मंसूरी **

प्रस्तावना – मानव अधिकारों का सार्वभौम घोषणा पत्र जारी कर दिया गया है। इस घोषणा पत्र धारा 26 ने भारत जैसे प्रजातंत्र देश में प्रत्येक को शिक्षा का अधिकार है। प्रत्येक बालक को अधिकार है कि वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार शिक्षा ग्रहण करे। चाहे उसकी सामर्थ्य कम हो या अधिक। प्रजातंत्र राज्य की विचार धारा के अनुसार सभी बालकों को शिक्षा पाने के समान अवसर प्रदान किए जाए चाहे वह प्रतिभाशाली हो अथवा बाधित हो किसी भी रुप में जैसे शारीरिक या मानसिक बाधित, मानसिक मन्दित, दृष्टि बाधित, श्रवण बाधित, अपराधी प्रवृत्ति वाले हो सभी को शिक्षा को प्राप्त करने का हमारे संविधान में प्रावधान है।

शोध व अनुभव द्वारा यह स्पष्ट हो गया है कि विकलांग व्यक्तियों की समाज के साथ सभी स्तरों पर भागीदारी ही उन्हें जीवन के संघर्षो के लिए तैयार कर सकती है। समान व्यवहार व समान सहभागिता ही उनमें आत्मविश्वास विकसित कर समाज में गर्व के साथ जीने का साहस दे सकती है। भारत सरकार ने सभी के लिए शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक वर्ग के बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया है विकलांगों की शिक्षा सर्व शिक्षा अभियान का भी महत्वपूर्ण अंग है। इसी तरह म.प्र. दृष्टिहीन कल्याण संघ इन्दौर ने हेलर केलर शिक्षा अकादमी की स्थापना 27 जून 1974 को की गई।

अध्ययन की आवश्कता एवं महत्व – किसी कार्य को करने के पीछे कोई न कोई औचित्य अवश्यहोता है। जो कि उस कार्य के महत्व को दर्शाता है। हेलन केलर शिक्षा अकादमी एक विशिष्ट इकाई है क्योंकि इससे पहले इस विद्यालय पर कोई अन्य शोध अध्ययन नहीं हुए है। साथ ही यह विशिष्ट विद्यालय (दृष्टिबाधित छात्रों का)। अत: लघु शोध हेलन केलर शिक्षा अकादमी का इकाई अध्ययन हेतु चयन किया गया है।

इस अध्ययन के द्वारा वहा कि विभिन्न गतिविधियों एवं क्रियाकलापो का ज्ञान होगा जो कि अन्य विशिष्ट विद्यालयों के लिए एक प्रेरणा का कार्य कर सकता है। हेलन केलर शिक्षा अकादमी की विशेषताओं को ग्रहण कर अन्य संस्थायें भी समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। हेलन केलर शिक्षा अकादमी का महत्व इसलिए भी है क्योंकि दृष्टिबाधित छात्रों को आत्मनिर्भर बनाकर समाज की एकीकृत धारा में जोड़ना है। साथ ही दृष्टिबाधितों के लिए मानव गरिमा के साथ उनके अधिकारों का संरक्षण सभी क्षेत्रो में पूर्ण सहभागिता एवं सर्वांगीण विकास के लिए अवसरों की समानता ही संस्था का लक्ष्य है।

समस्या कथन – दृष्टिबाधित शिक्षा संस्था का व्यक्ति इकाई अध्ययन।

उद्देश्य –

1. संस्था की भौगोलिक स्थिति एवं संस्था की विशिष्टता का अध्ययन करना।
2. दृष्टिबाधित बालकों की शिक्षा के लिए संस्था द्वारा अपनायी जाने वाली विभिन्न शैक्षणिक विधियों एवं क्रियाओं का अध्ययन करना।
3. संस्था द्वारा दृष्टि बाधित छात्रों को दिए जाने वाले ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण का अध्ययन करना।
4. संस्था द्वारा दृष्टि बाधित छात्रों के ब्रेल शिक्षण का अध्ययन करना।
5. संस्था द्वारा दृष्टि बाधित बालकों को आत्म निर्भर बनाने के लिए प्रदान किए जाने वाले व्यवसायिक प्रशिक्षण का अध्ययन करना।
6. संस्था द्वारा दृष्टि बाधित बालकों के लिए आयोजित की जाने वाली विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों का अध्ययन करना।
7. संस्था द्वारा दृष्टि बाधित बालकों के मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त प्रणाली का अध्ययन करना।
8. संपूर्ण विद्यालयीन दृष्टि बाधित शिक्षा संस्था के संदर्भ में शिक्षकों, छात्रों एवं अभिभावको के मतों का अध्ययन करना।

एक इकाई: हेलन केलर शिक्षा अकादमी – हेलन केलर शिक्षा अकादमी के चयन का आधार इसकी विशिष्टता है। यह एक विशिष्ट इकाई है इसके इकाई अध्ययन हेतु यहा के प्रबन्धक, प्राचार्या, शिक्षकों, छात्रों, अभिभावको तथा कर्मचारियों सभी आवश्यकतानुसार सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त उद्देश्य अनुसार यहा कि विशिष्टताओं यहा कि विकासोन्मुख गतिविधियों, यहाँ के सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा यहाँ की अन्य गतिविधियों को अध्ययन हेतु सम्मिलित किया गया है।

उपकरण – प्रदत्तों के संकलन के लिए उपकरण के रुप बाहय निरीक्षणो, प्रतिक्रिया मापनी, साक्षात्कार अनुसूचियों का प्रयोग किया गया। इसके अतिरिक्त संस्था के विभिन्न अभिलेखों दस्तावेजों एवं संस्था की पुरानी लिखित सामग्रियों का प्रयोग प्रदत्तों के संकलन के लिए किया गया।

प्रदत्तों का एकत्रीकरण – शोध अध्ययन की पूर्णता के लिए प्रदत्तों को एकत्रित किया गया। प्रदत्तों के एकत्रीकरण की प्रक्रिया को निम्नलिखित शीर्षकों में वर्गीकृत किया गया।

नियोजन – सर्वप्रथम शोधकर्ता द्वारा संस्था के प्रबन्धक द्वारा प्रदत्तों को एकत्रीकरण की अनुमति ली गई। इसके उपरान्त उद्देश्य अनुसार विभिन्न गतिविधियों के सम्बंध में सूची बनाई गई। इस सूची के अनुरुप विभिन्न क्रियाकलापों के सम्बन्ध में उपयुक्त उपकरणों की समुचित व्यवस्था की गई। अध्ययन के लिए आवश्यक परिस्थितियों क्रियाकलापों तथा उससे सम्बन्धित कार्यकर्ताओं के संबंध में सूचनाऍ एकत्रित की गई प्रदत्तों के

* प्राचार्या, इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल आय.पी.एस. शिक्षा महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** देवी रुक्मणी शिक्षा महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

संकलन की उपयुक्त व्यवस्था की गई।

क्रियान्वयन – शोधकर्ता द्वारा वर्तमान शोध अध्ययन से सम्बन्धित व्यक्तियों (प्रबंधक, प्राचार्या, शिक्षकों एवं अभिभावको तथा छात्रों) को इस अध्ययन के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्रदान की गई तथा इस शोध अध्ययन की उपयोगिता बताई गई। उपयुक्त उपकरणो की सहायता से उद्देश्यानुसार विभिन्न व्यक्तियों से शोध से संबंधित जानकारी एकत्रित की गई।

प्रदत्तों का विश्लेषण – अध्ययन द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण उद्देश्यानुसार विषय वस्तु विष्लेषण विधि द्वारा किया गया। निरीक्षण द्वारा प्राप्त प्रदत्तों को व्यवस्थित कर व्याख्या की गई तथा साक्षात्कार एवं प्रतिक्रिया मापनी से प्राप्त मतों का विश्लेषण विषय वस्तु विश्लेषण विधि द्वारा किया गया। साथ ही साथ अभिलेखों पुरानी दैनन्दिनियों एवं पूर्व के चित्रों से प्राप्त आंकड़ो का विश्लेषण उद्देश्यानुसार किया गया।

परिणाम –

1. हेलन केलर शिक्षा अकादमी में सभी छात्रों को मध्यप्रदेश पाठ्यपुस्तक निगम के पाठ्यक्रम का अध्ययन कराया जाता है। सामान्य छात्रों के समान ही पाठ्यक्रम रहता है। लेकिन शिक्षण सीखने के लिए विशिष्ट उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।
2. हेलन केलर में दृष्टिबाधित छात्रों की उम्र को ध्यान में न रखते हुए अधिगम पर ध्यान दिया जाता है और उसके आधार पर छात्रों मूल्यांकन किया जाता है जिसमें समस्त प्रकार की शैक्षणिक गतिविधियों विकासोन्मुख भावी गतिविधियों ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण दैनिक क्रियाओं की गतिविधिया इत्यादि का अधिगम के आधार पर मूल्यांकन होता है।
3. हेलन केलर में दृष्टिबाधित छात्रों की प्रतिभा छुपी हुई आंतरिक प्रतिभाओं को विकसित करने के लिए विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियां सम्पन्न कराई जाती है। जैसे गायन, नाटक, डान्स, वाद–विवाद प्रतियोगिता, खेलकूद इत्यादि है। इन सांस्कृतिक गतिविधियों के माध्यम से जो छात्रों में विशेष योग्यता होती है उन्हें जन साधारण के कार्यक्रमों में भी भेजा जाता है। जन साधारण के कार्यक्रमों में कुछ छात्रों ने विशेष योग्यता भी अर्जित की है। इन दैनिक क्रियाओं एवं गतिविधि के प्रति शिक्षकों, छात्रों एवं अभिभावकों की प्रतिक्रिया सकारात्मक रही।
4. हेलन केलर में सभी छात्रों को स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी और चिकित्सा सुविधा प्रदान की जाती है।
5. हेलन केलर में दृष्टिबाधित छात्रों को आत्म निर्भर बनाने के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है। जैसे कम्प्यूटर प्रशिक्षण, कुर्सी बुनाई एवं हस्त कौशल, हेण्डलूम इकाई, क्राफ्ट, टेलीकाम आपरेटिंग, सुगम यांत्रिकी इत्यादि। व्यवसायिक प्रशिक्षण कक्षा 6 टी के विद्यार्थीयों से देना प्रारंभ किया जाता है।
6. हेलन केलर में सभी छात्रों को ब्रेल लिपि में शिक्षण कार्य कराया जाता है। हाईस्कूल की परीक्षा में दृष्टिबाधित छात्र अपने साथ परीक्षा में रायटर को ले जाते है। परीक्षा कक्ष में दृष्टिबाधित छात्र बोलता है, और रायटर लिखता है।
7. हेलन केलर में दृष्टिबाधित छात्रों को अलग–अलग प्रकार से दैनिक क्रियाएॅ एवं गतिविधियॉ सिखाई जाती है। जो रोजमर्रा जिंदगी के लिए उपयोगी है। इन दैनिक क्रियाओं एवं गतिविधियों के प्रति शिक्षकों छात्रों एवं अभिभावकों की प्रतिक्रिया सकारात्मक रही।
8. हेलन केलर में दृष्टिबाधित छात्रों के सीखने के लिए उपकरण कम मात्रा में उपलब्ध है।
9. हेलन केलर में सभी छात्रों को नि:शुल्क भोजन एवं आवासीय सुविधा प्रदान की जाती है। जिसमें सभी छात्रों एवं अभिभावकों की प्रतिक्रिया संतोषजनक रही।
10. सम्पूर्ण हेलन केलर शिक्षा अकादमी के संबंध में छात्रों, अभिभावकों एवं शिक्षकों के मत सार्थक रुप सें सकारात्मक रहे। सभी का मानना था कि ऐसे विशिष्ट विद्यालय एवं ऐसे क्रियाकलापो को अधिक से अधिक प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। तथा समाज में इसी के अनुरुप विद्यालय खुलने चाहिए।

शैक्षिक निहितार्थ –

1. शिक्षक – शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया का आधार स्तम्भ है व सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया को बहुत गहराई तक प्रभावित करता है। सम्पादित इकाई अध्ययन से दृष्टि बाधित विद्यालयों में शिक्षण कार्य करने वाले शिक्षक निम्न बातों को ध्यान में रखकर लाभाविन्त हो सकते है।

1. दृष्टि बाधित छात्रों की कक्षा में पढ़ाने से पहले पाठ योजना तथा सहायक सामग्री को तैयार करना चाहिए।
2. अध्यापक को दृष्टि बाधित विद्यार्थीयों की क्षमता नियमों एवं सामग्री की प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में अध्यापन कराना चाहीए।
3. अध्यापक द्वारा पढ़ाने के पश्चात् छात्रों से पूछें क्या पढ़ा और क्या लिखा है? फिर ब्रेल शिक्षण में जो लिखा है वह चेक करे।
4. अध्यापक कों दृष्टिबाधित विद्यार्थीयों को सामने लक्ष्य रखते हुए ज्ञानेन्द्रिय प्रषिक्षण दैनिक क्रिया, गतिविधियों तथा व्यवसायिक प्रशिक्षण देना।
5. व्यक्तिगत भिन्नताओं के आधार पर दृष्टिबाधित छात्रों को समूह में वर्गीकृत कर शिक्षा प्रदान करना चाहीए।

2. अभिभावक – अभिभावक अपने बच्चों पर पूरा ध्यान साथ ही अपने बच्चे के साथ स्नेह और प्रेम करे यह न समझे की वह कोई काम नहीं कर सकता है। एवं संस्था में जो अभिभावकों को प्रशिक्षण दिया जाता है। वह अपने बच्चों को घर पर भी दे समाज के सामूहिक कार्यक्रमों में भी अपने बच्चों को साथ में ले जाए और अभिभावकों को शिक्षक से सम्पर्क बनाए रखना चाहिए।

3. विद्यालय प्रबन्धक –

1. दृष्टिबाधित छात्रों का चिकित्सक मूल्यांकन होने के पश्चात उन्हें शासन द्वारा विकलांगता का प्रमाण–पत्र दिलाना चाहिए।
2. दृष्टिबाधित छात्रों के लिए शिक्षण एवं अन्य गतिविधियों के लिए उपकरणों की व्यवस्था करें।
3. संस्था में शारीरिक प्रशिक्षण अध्यापक की नियुक्ति करें जिससें विद्यार्थियों को अनुस्थिति ज्ञान एवं चलिष्णुता का प्रशिक्षण एवं शारीरिक गतिविधियां कराई जा सके।
4. विद्यार्थियों, अभिभावकों तथा शिक्षकों की माह के अंत में एक साथ मीटिंग रखें और विद्यार्थियों की समस्या का निराकरण करें।

4. मध्यप्रदेश सरकार – विकलांग संस्थाओं की और सरकार का व्यवहार बेरुखा है, अन्य राज्यों की सरकार विकलागों के लिए श्रेष्ठ काम कर रही है। मध्यप्रदेश में 20–22 साल से प्रत्येक बच्चे को मिल रही सहायता राशि अब जाकर 300 रु से बढ़ाकर 525 रु की गई वह भी आठ साल की मेहनत के बाद विकलांगो के लिए कार्य कर रही संस्था जनसमर्थन मिलने के वजह स चल रही है। जरुरी है कि सरकार अपना नजरिया बदले ऐसा भी पाया गया की संस्था को काम कर रहे शिक्षकों का वेतन हर माह न देते हुए दो माह या तीन माह में मिलता है। इस क्षेत्र में कार्य करने वाले शिक्षकों को विशेष लाभ

दिया जाना चाहीए लोगों का वेतन सामान्य से ज्यादा ही होना चाहीए।

1. म0प्र0 सरकार को दृष्टिबाधित विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति में वृद्धि करना चाहीए।
2. दृष्टिबाधित संस्थाओं में पढ़ाने वाले शिक्षकों को समय पर वेतन दिया जाना चाहीए।
3. दृष्टिबाधित संस्थाओं के लिए पाठ्य पुस्तकों तथा उपकरणों की व्यवस्था करनी चाहीए।
4. म0प्र0 सरकार को दृष्टिबाधित विद्यार्थियों के लिए विशेष पाठ्यक्रम का निर्माण करना चाहीए।
5. अन्य प्रतियोगिताओं की परीक्षाओं में दृष्टिबाधितों के पदो को बढ़ाया जाना चाहीए, तथा पदों को आरक्षित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भालेराव, यू: मध्यप्रदेश के शिक्षित दृष्टिहीनों का सामाजिक अध्ययन. गौरव पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1985.
2. शर्मा, आर: विशिष्ट शिक्षा का प्रारुप.आर लाल बुक डिपो, मेरठ, 2008.
3. भटनागर, ए.बी.एवं भटनागर, एम: मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन.आर.लाल बुक डिपो, मेरठ, 2005.
4. भार्गव, एम: विशिष्ट बालक.शिक्षा एवं पुनर्वास.एच.पी.भार्गव बुक हाउस, आगरा, 2011.
5. गेरेट, ई.एच: शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी के प्रयोग.कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1995.
6. पाल, एच.आर.एवं शर्मा, एम: मापन आकलन एवं मूल्यांकन.क्षिप्रा पब्लिशर्स, दिल्ली, 2009.
7. सिंह, एन.एवं अरोडा, पी: शैक्षिक अनुसंधान की विधियां.पद्मा पब्लिकेशन, जयपुर, 2008.
8. सिंह, एम: शिक्षा मनोविज्ञान.पी.एच.पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2010.
9. पाल, एच.आर, पाल, आर.एवं देवड़ा, आर: प्रयोगात्मक शिक्षा मनोविज्ञान. हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2012.
10. पाल, एच.आर: एवं पाल, ए: विशिष्ट बालक.मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल,.2010.
11. अग्रवाल, जी: विकलांगता समस्या और समाधान.निधि प्रकाशन, दिल्ली, 1981.
12. कौशिक, बी: विकलांग शिक्षा.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1977.
13. मिश्रा, वी: विकलांगों के अधिकार.कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, 2003.
14. चौहान, आर.एस: शिक्षक प्रशिक्षण लेखमाला.आल इण्डिया कन्फेडरेशनल ऑफ दि ब्लाइंड, रोहिणी, दिल्ली, 2004.
15. मिश्र, वी.के: विकलांगों के अधिकार.कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली, 2003.
16 आहूजा, एस: दृष्टिहीनों का शिक्षण तथा पूनवर्सन.एन.ए.बी.प्रकाशन, मुंबई, 1994.
17. एन.आई.वी.एच: हैण्डबुक फार दि टीचर्स ऑफ दि विजुअली हेण्डीकेप्ड. एन.आई.वी.एच, देहरादून, 1992.
18. बैस, एन.एस: एवं सूत्रकार, बी: विशिष्ट वर्ग के बालकों की शिक्षा.जैन प्रकाशन मंदिर, जयपुर, 2008.
19. पाल, एच.आर: प्रतिभाशालियों की शिक्षा: क्षिप्रा प्रकाशक, दिल्ली, 2011.
20. शर्मा, व्हाय: प्रतिभासम्पन्न एवं सृजनात्मक बालक पहचान, प्रकार एवं विशेषताएँ.कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2012.
21. शर्मा, एसपी: वाणी-दोषयुक्त एवं दृष्टि अक्षम बालक-कारण, पहचान एवं उपचार.कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2012.
22. शर्मा, एम.: विशिष्ट बालक-अवधारणा, विकास एवं शिक्षा. कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2014.
23. पाल, एस. एवं विश्वकर्मा, बी.: विशेष शिक्षा-शिक्षण कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2013.
24. दुबे, एल. एन. एवं बरोदे, बी. आर.: विशिष्ट बालक आरोही प्रकाशन, जबलपुर, 2008.
25. भनोट, एस.: श्रवण-क्षतियुक्त बालक- कारण, पहचान एवं उपचार. कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2012.
26. भार्गव, आर. एवं आराधना: विशिष्ट बालक तथा माता-पिता की शिक्षा. एच. आई. बी. एस., आगरा, 2012.
27. मंसुरी , आई.: दृष्टिबाधित शिक्षा संस्था का व्यक्ति इकाई अध्ययन अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2009
28. लाखोरे, राम.: मध्यप्रदेश में माध्यमिक स्तर के विकलांग बालकों की शिक्षा के लिए किये गये शासकीय प्रयासों का मूल्यांकन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2010
29. पारे, नम्रता.: कक्षा 5 वीं के दृष्टिबाधित बालकों हेतु गणित विषय पर विकसित गति विधि आधारित सामग्री का उपलब्धि व प्रतिक्रिया के संदर्भ में अध्ययन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2010.
30. भार्गव तृप्ति.: एकीकृत विद्यालय में अध्ययनरत् दृष्टिबाधित बालिकाओं एवं शिक्षिकाओं की शैक्षिक एवं समायोजन संबंधी समस्याओं का अध्ययन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2011.
31. जोशी कविता.: कक्षा 7 वी के दृष्टिबाधित बालकों के संस्कृत त्रुटियों के निवारण में अभ्यास-सत्र की प्रभाविता का अध्ययन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2011.
32. कुमारी, रिंकू.: विशिष्ट शिक्षा के शिक्षकों की समस्याओं का अध्ययन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2013.
33. जैन, प्रीति.: माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् दृष्टिबाधित बालक एवं बालिकाओं की वृद्धि शैक्षिक रुचि एवं समायोजन का विश्लेषणात्मक अध्ययन. अप्रकाशित एम.एड. लघु शोध प्रबंध, शिक्षा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, 2013.
34. Buch, M. B. (Ed.): Second Survey of research in Education. Society for educational Research & Development, Baroda, 1978
35. Buch, M. B. (Ed.): Fourth Survey of research in Education. N.C.E.R.T, New Delhi, 1988.
36. Buch, M. B. (Ed.): Fifth Survey of research in Education. N.C.E.R.T, New Delhi, 1992.
37. Goel, S. K.: Blindness and Visual Impairment. Delhi Socio psychic scientific information Bureau, 1985.

डी.एड. छात्राध्यापकों में गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ स्पष्ट करना

प्रमोद कुमार सेठिया * डॉ. महेश कुमार तिवारी **

शोध सारांश – शिक्षक प्रशिक्षण एवं शालाओं के अवलोकन के दौरान यह अनुभव में आया कि अधिकाश शिक्षक गणित को नीरस व बोझिल विषय मानते हैं, उनमें आत्मविश्वास की कमी दिखाई पड़ती है, वे स्वयं को पूरी तरह दक्ष नहीं मानते है। उनकी दृष्टि में गणित षिक्षण का मतलब अवधारणाओं को रटना अधिक समझना कम है। एन.सी.ई.आर.टी. ने अपन दस्तावेज NCF-2005 में गणित की प्रचलित प्रणालियों पर चिन्ता व्यक्त की है।

बच्चे गणित की मूल संरचना, अवधारणा को समझे तथा शिक्षक प्रत्येक बच्चे के साथ इस विश्वास के साथ काम करें कि प्रत्येक बच्चा गणित सीख सकता है। [1]

राष्ट्रीय दस्तावेज के उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिये प्रस्तुत शोध अध्ययन किया गया। शोध अध्ययनके निष्कर्षो से ज्ञात हुआ कि न्यादर्श के छात्राध्यापकों में रोचक गतिविधियों, सहायक सामग्री के उपयोग के माध्यम से मूलभूत अवधारणाओं का विकास हुआ है। छात्राध्यापकों के कठिनाई के बिन्दुओं का निदान कर गणित शिक्षण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना – डाइट में शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान एवं शाला अनुवीक्षण में प्राय: यह देखने में आता है कि प्राथमिक स्तर के शिक्षक गणित को एक नीरस, बोझिल एवं कठिन विषय मानते हैं एवं गणित विषय के शिक्षण में कठिनता अनुभव करते हैं और परिणामों से भयभीत रहते हैं। वे जल्दी ही गणित के अध्ययनअध्यापन से विमुख होना चाहते हैं। विद्यालयों में अधिकतर शिक्षकों ने गणित शिक्षण का लक्ष्य अंक ज्ञान, संख्याओं से जुड़ी संक्रियाएँ, मापन, दशमलव व भिन्न की जानकारी किसी प्रकार बच्चों को देकर उन्हें पास कराने तक सीमित कर दिया है। गणित के प्रति देखा जाए तो हमारे अधिकांश शिक्षकों में आत्मविश्वास की कमी दिखाई पड़ती है। वे गणित शिक्षण एवं उसके मूल्यांकन कार्य में यांत्रिक विधि का ही सहारा लेते हैं। वे बच्चों के ज्ञान को उनके विद्यालय के दैनिक जीवन से नहीं जोड़ते तथा पूरी शिक्षण प्रणाली को रटन्त प्रणाली पर आधारित बनाकर रखते हैं। वे यह मानकर चलते हैं कि गणित शिक्षण का मतलब बच्चों को विषयवस्तु पढ़ा देना मात्र है।

जबकि एक शिक्षक के रूप में हमारा कर्त्तव्य है कि बच्चों में गणितीय क्षमताओं का विकास करें, गणित शिक्षण को भयमुक्त एवं रूचिपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है कि शिक्षकों में गणित की मूलभूत अवधारणाओं जैसे–संख्या की समझ, संख्याओं पर संक्रियाएँ, मापन, भिन्न एवं दशमल संख्याएँ, प्रतिशत, ज्यामितीय आकृतियों की समझ हो। गणित शिक्षण को गतिविधि आधारित एवं दैनिक जीवन से जोड़कर पढ़ाएँ। सहायक शिक्षण सामग्री का अधिकाधिक उपयोग हो, गणित के प्रति सकारात्मक रूझान और रूचि विकसित करने के लिए गणितीय खेल, दैनिक जीवन से जुड़े प्रश्न एवं विविध गतिविधियाँ आयोजित करें।

शोध अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य डाइट के डी.एड. प्रथम वर्ष के नियमित छात्राध्यापकों की गणित विषय (प्राथमिक स्तर) की मूलभूत अवधारणाएँ स्पष्ट करना हैं। गणित विषय के अध्ययनअध्यापन को भयमुक्त, रुचिपूर्ण एवं प्रभावी बनाने के लिये न्यादर्श शिक्षकों को प्रेरित करना है। शिक्षकों में खेल विधि, गतिविधियों एवं सरल शिक्षण विधियों के माध्यम से गणितीकरण की अवधारणा विकसित करना है।

शोध अध्ययनकी परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य शिक्षकों (डी.एड. छात्राध्यापकों) में गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ विभिन्न गतिविधियों द्वारा स्पष्ट करना है। प्रस्तुत शोध अध्ययनके लिए निम्नलिखित परिकल्पना की गई हैं –

रोचक एवं गतिविधिपरक अवधारणात्मक शिक्षण से छात्राध्यापकों में गणित विषय के सातों मूलभूत दक्षता क्षेत्रों की समझ विकसित हो सकेगी।

समस्या कथन – प्रस्तुत शोध अध्ययनका समस्या कथन इस प्रकार है –

डी.एड. छात्राध्यापकों में गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ स्पष्ट करना।

शोध प्रविधि –

(अ) न्यादर्श – प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिये डाइट मन्दसौर के डी.एड. प्रथम वर्ष (नियमित) के 50 छात्राध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चयन किया गया। सभी न्यादर्श शासकीय सेवा में प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षक के रूप में अध्यापन कर रहे हैं। चयनित अधिकांश न्यादर्श 20–30 आयुवर्ग समूह के हैं एवं 1–3 वर्ष का प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण का अनुभव रखते हैं।

(ब) उपकरण – शोध समस्या के अध्ययन के लिये एक अवधारणा आधारित प्रश्नावली उपकरण के रूप में प्रयोजन में लाई गई। प्रश्नावली में 30 अवधारणाओं पर अधारित प्रश्न इस प्रकार लिये गये –

- संख्याओं की समझ पर आधारित – 6 प्रश्न
- संख्याओं की सक्रिया पर आधारित – 4 प्रश्न
- भिन्नात्मक संख्याओं की समझ पर आधारित – 5 प्रश्न
- दशमलव संख्याओं की समझ पर आधारित – 5 प्रश्न
- प्रतिशत की समझ पर आधारित – 5 प्रश्न

* वरिष्ठ व्याख्याता, डाइट, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ गर्ल्स कॉलेज ऑफ टीचर्स ट्रेनिंग, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) भारत

- मापन की समझ पर आधारित – 4 प्रश्न
- ज्यामितीय अवधारणाओं पर आधारित – 1 प्रश्न

प्रत्येक प्रश्न के 80 प्रतिशत भाग को सही हल करने एवं उस दक्षता से जुड़े सभी प्रश्न सही होने पर उसे दक्षता प्राप्ति माना गया।

(स) प्रक्रिया –

(i) न्यादर्श के छात्राध्यापकों का अवधारणा आधारित पूर्व परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण से न्यादर्श की कमजोरियों/कठिन बिन्दुओं (Hard spot) को जाना गया।

(ii) न्यादर्श के छात्राध्यापकों के साथ शोधकर्ता एवं डाइट के सहयोगी व्याख्याताओं द्वारा लगभग एक माह तक सहायक शिक्षण सामग्री के माध्यम से रोचक गतिविधि आधारित गतिविधियाँ कराई गई। गणित शिक्षण को भयमुक्त, रुचिपूर्ण बनाने का प्रयास किया गया। पूर्व परीक्षण में प्राप्त कठिन बिन्दुओं को हल करने का प्रयास किया गया। न्यादर्श में गणित शिक्षण के प्रति सकारात्मक रूझान विकसित करने एवं दैनिक जीवन से जोड़ने का प्रयास किया गया।

(iii) लगभग एक माह पश्चात् न्यादर्श के छात्राध्यापकों का अवधारणा आधारित पश्च परीक्षण लिया गया। पश्च परीक्षण की जाँच उपरान्त प्रदत्तों का संकलन एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये।

(द) प्रदत्तों का प्रकार एवं संकलन, विश्लेषण – न्यादर्श के छात्राध्यापकों में प्राथमिक स्तर पर गणित विषय की मूलभूत अवधारणाएँ स्पष्ट कर अधिगम उपलब्धि में सुधार हेतु क्रियात्मक अध्ययनकिया गया। पूर्व पश्च परीक्षण लेकर न्यादर्श के छात्राध्यापकों की दक्षता प्राप्ति का प्रश्नवार विश्लेषण किया गया।

निम्न सात मूलभूत दक्षता क्षेत्र क्रियात्मक अध्ययनहेतु लिये गये :

(A) संख्याओं की समझ, (B) संख्याओं पर संक्रियाएँ
(C) भिन्नात्मक संख्याएँ (D) दशमलव संख्याएँ
(E) प्रतिशत (F) मापन एवं
(G) ज्यामितीय आकृतियों की समझ,

(9) परिकल्पनाओं का सत्यापन – न्यादर्श के पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण में दक्षता क्षेत्रवार प्राप्त उपलब्धि एवं तुलनात्मक वृद्धि को सारणी क्रमांक 1 में प्रदर्शित किया गया है :

सारणी 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

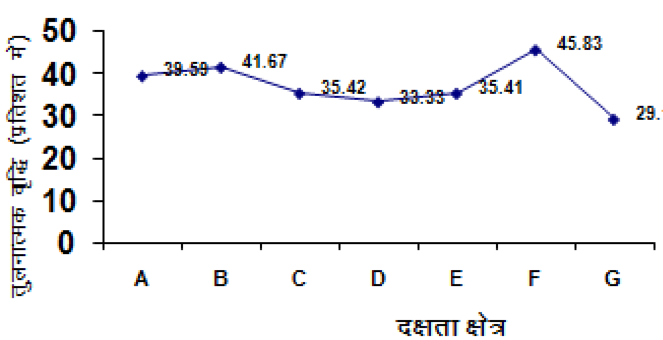

उपरोक्त ग्राफ में दक्षता क्षेत्रवार पूर्व एवं पश्च परीक्षण की तुलनात्मक वृद्धि को दर्शाया गया है।

सारणी 2 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी से स्पष्ट है कि पूर्व परीक्षण में न्यादर्श के 33.35 प्रतिशत छात्राध्यापक प्राथमिक स्तर के सात दक्षता क्षेत्रों में से किसी भी दक्षता क्षेत्र में निपुर्ण नहीं हैं। 31.25 प्रतिशत छात्राध्यापक केवल एक दक्षता क्षेत्र में, 12.50 छात्राध्यापक क्रमश: 2 व 3 दक्षता क्षेत्रों में निपुर्ण हैं। न्यादर्श के केवल 4.16 प्रतिशत छात्राध्यापक क्रमश: 5 व 6 दक्षता क्षेत्रों में एवं केवल एक छात्राध्यापक अर्थात् 2.08 प्रतिशत छात्राध्यापक सभी सात दक्षता क्षेत्रों में निपुर्ण हैं।

पश्च परीक्षण के आंकड़ों से स्पष्ट है कि केवल 8.33 प्रतिशत छात्राध्यापक सभी सात दक्षता क्षेत्रों में से किसी भी दक्षता क्षेत्र में निपुर्ण नहीं है। संपूर्ण न्यादर्श के केवल 8.33 प्रतिशत छात्राध्यापक एक दक्षता क्षेत्र में, 12.50 प्रतिशत छात्राध्यापक दो दक्षता क्षेत्र में, 12.50 प्रतिशत छात्राध्यापक तीन दक्षता क्षेत्र में, 14.58 प्रतिशत छात्राध्यापक चार दक्षता क्षेत्रों में, 10.41 प्रतिशत छात्राध्यापक पाँच दक्षता क्षेत्रों में एवं 6.25 प्रतिशत छात्राध्यापक छ: दक्षता क्षेत्रों में निपुर्ण हैं। संपूर्ण न्यादर्श के 27.58 प्रतिशत छात्राध्यापक सभी सात दक्षता क्षेत्रों में निपुर्ण हैं।

न्यादर्श के छात्राध्यापकों की दक्षता प्राप्ति की स्थिति (सारणी क्रमांक 2) से स्पष्ट है कि सात दक्षता क्षेत्रों में से चार, पाँच, छ: दक्षता रखने वाले छात्राध्यापकों की संख्या में वृद्धि हुई है। सभी सात दक्षताओं में निपुर्णता पाने वाले छात्राध्यापकों की संख्या में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
शून्य दक्षता रखने वाले न्यादर्श के छात्राध्यापकों की संख्या में 25.02 प्रतिशत एवं केवल एक दक्षता रखने वाले न्यादर्श के छात्राध्यापकों में 22.92 प्रतिशत की कमी हुई है अर्थात् छात्राध्यापकों की सभी दक्षता क्षेत्र में उपलब्धि बढ़ी है।

प्रदत्तों के विश्लेषण (सारणी क्रमांक 1 व 2) से स्पष्ट है कि पश्च परीक्षण में सातों दक्षता क्षेत्रों में तुलनात्मक रूप से न्यादर्श के छात्राध्यापकों की उपलब्धि में वृद्धि परिलक्षित हुई है। गणितीय गतिविधियों, सहायक शिक्षण सामग्री की उपयोगिता, अभ्यास की बारम्बारता के उपरान्त न्यादर्श के छात्राध्यापकों की उपलब्धि में वृद्धि होना क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्यों की प्राप्ति को दर्शाता है।
अतएव विश्लेषण से प्राप्त प्रदत्ता परिकल्पनाओं का सत्यापन करते हैं।

(10) निष्कर्ष – प्रस्तुत क्रियात्मक अध्ययनमें न्यादर्श के छात्राध्यापकों का प्राथमिक स्तर के सात दक्षता क्षेत्रों में पूर्व परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण में प्राप्त कमियों का शोधकर्ता एवं सहयोगी व्याख्याताओं द्वारा एक माह तक गतिविधियाँ करने, गणितीय प्रक्रिया का अभ्यास कराने, कठिन अवधारणाओं को सरल, सहज रूप में स्पष्ट करने के पश्चात् पुन: अवधारणा आधारित पश्च परीक्षण लिया गया। पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण के प्रदत्तों का विश्लेषण करने पर निम्नांकित निष्कर्ष प्राप्त हुए :

(i) क्रियात्मक अनुसंधान अन्तर्गत गतिविधियों के फलस्वरूप न्यादर्श के छात्राध्यापकों की संख्याओं की समझ दक्षता में 39.59 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(ii) संख्याओं पर संक्रिया दक्षता में तुलनात्मक रूप से 41.67 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(iii) भिन्नात्मक संख्याओं की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 35.42 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(iv) दशमलव संख्याओं की समझ एवं उन पर संक्रिया दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 33.33 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(v) प्रतिशत की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 35.41 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(vi) मापन (लम्बाई, वजन, धारिता, समय) दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप

से 45.83 प्रतिशत उपलब्धि परिलक्षित हुई।

(vii) ज्यामितीय आकृतियों की समझ दक्षता क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से 29.16 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हुई।

(viii) न्यादर्श के छात्राध्यापकों में दक्षता क्षेत्र की संख्यावार उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करने पर शून्य दक्षता प्राप्त करने वाले न्यादर्श के छात्राध्यापकों की संख्या में 25.02 प्रतिशत, केवल एक दक्षता रखने वाले न्यादर्श के छात्राध्यापकों की संख्या में 22.92 प्रतिशत की कमी हुई है। अर्थात् छात्राध्यापकों की उपलब्धि में वृद्धि हुई है। सभी सात दक्षता क्षेत्रों में उपलब्धि प्राप्त करने वाले छात्राध्यापकों की संख्या में भी 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

उपर्युक्त निष्कर्षो से स्पष्ट है कि न्यादर्श के छात्राध्यापकों में गणितीय रोचक गतिविधियों, सहायक सामग्री के उपयोग के माध्यम से मूलभूत अवधारणाओं का विकास हुआ है। छात्राध्यापकों की कठिनाई के बिन्दुओं को निदान कर गणित शिक्षण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया गया है।

सुझाव -

(1) गणित शिक्षण को भयमुक्त, रुचिपूर्ण एवं प्रभावी बनाने के लिये आवश्यक है कि शिक्षक गणित के प्रति व्याप्त भय को दूर करने के लिये विषयवस्तु की प्रकृति, बच्चों के स्तर को ध्यान में रखकर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का प्रबंधन स्थानीय आवश्यकतानुसार करें।

(2) शिक्षक आवश्यकतानुसार शिक्षण पद्धति में बदलाव कर बच्चों में गणितीकरण की अवधारणा विकसित करें।

(3) मूल्यांकन प्रक्रिया को भयमुक्त बनाते हुए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के अंग के रूप में अपनाये। सतत मूल्यांकन को बढ़ावा दें।

(4) गणित को यांत्रिक बनाने के बजाय ऐसी अवधारणा को विकसित करें जिससे बच्चे स्वयं व समूह में छोटे-छोटे प्रश्नों का निर्माण कर सकें, किसी समस्या के प्रति सोचने, तर्क करने एवं तर्क के आधार पर उत्तार खोजने का प्रयास कर सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पृष्ठ 49, NCF आधार पत्र.
2. कक्षा 1 से कक्षा 5 तक की प्रचलित पाठ्यपुस्तकें.
3. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, एन.सी.ई.आर.टी., नईदिल्ली

सारणी क्रमांक 1 पूर्व व पश्च परीक्षण में दक्षता क्षेत्रवार तुलनात्मक वृद्धि

		दक्षता क्षेत्र						
		संख्याओं की समझ	संख्याओं पर संक्रियाएँ	भिन्नात्मक संख्याएँ	दशमलव संख्याएँ	प्रतिशत	मापन	ज्यामितीय आकृतियाँ
		A	B	C	D	E	F	G
पूर्व परीक्षण	उपलब्धि	11.00	16.00	4.00	3.00	6.00	7.00	24.00
	%	22.91	33.33	8.33	6.25	12.50	14.58	50.00
पश्च परीक्षण	उपलब्धि	30.00	36.00	21.00	19.00	23.00	29.00	38.00
	%	62.50	75.00	43.75	39.58	47.91	60.41	79.16
तुलनात्मक वृद्धि (प्रतिशत में)		39.59	41.67	35.42	33.33	35.41	45.83	29.16

सारणी क्रमांक 2 न्यादर्श छात्राध्यापकों में दक्षता प्राप्ति विवरण

दक्षता क्षेत्रों की कुल संख्या	पूर्व परीक्षण में छात्राध्यापकों की संख्या		पश्च परीक्षण में छात्राध्यापकों की संख्या		अन्तर (प्रतिशत में)
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	
0	16	33.35	4	8.33	-25.02
1	15	31.25	4	8.33	-22.92
2	6	12.50	6	12.50	0.00
3	6	12.50	6	12.50	0.00
4	0	0.00	7	14.58	14.58
5	2	4.16	5	10.41	6.25
6	2	4.16	3	6.25	2.09
7	1	2.08	13	27.08	25.00

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों के दृष्टिकोण का अध्ययन

खेमचन्द *

प्रस्तावना – भारत की प्राथमिक शिक्षा प्रणाली अधिक प्राचीन है। विभिन्न युगों में इसका प्रारूप बदलता है। परन्तु पूर्व प्राथमिक से नर्सरी तथा किंडर गार्डन अर्थात के0जी0 कक्षाओं का प्रारम्भ आधुनिक शिक्षा प्रणाली की देन है। पूर्व प्राथमिक विद्यालयों में 2 से 5 वर्ष तक के बालको को शिक्षा दी जाती है। पूर्व प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था निजी या व्यक्तिगत स्तर पर की जाती है। राज्य द्धारा पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया है। प्राथमिक विद्यालय में 6 से 14 वर्ष तक के बालकों को शिक्षा प्रदान की जाती है तथा उसकी व्यवस्था स्थानीय संस्थाओं द्धारा की जाती है।

‘ भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 के अनुसार प्रत्येक राज्य सरकार को इस संविधान के प्रारम्भ (26 जनवरी 1945) से दस वर्ष की अवधि में सभी बालकों को 14 वर्ष की आयु तक नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने का प्रावधान है।

प्राथमिक शिक्षा को बेसिक शिक्षा कहते है। जिसमें कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा को सम्मिलित किया गया है। प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करना प्रत्येक बालक का मौलिक अधिकार की श्रेणी में रखा गया है।

शोध के उद्देश्य –

1. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक –अध्यापिकाओं की अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापक – अध्यापिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापक – अध्यापिकाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाऐं –

1. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया
2. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
3. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापक – अध्यापिकाओं कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
4. अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण –

1. **नि:शुल्क शिक्षा –** भारतीय संविधान के मूल अधिकार स्वरूप जो शिक्षा बिल्कुल मुफ्त रूप से प्रदान की जाये, जिसका कोई शूल्क न वसूला जाए, वह नि:शुल्क शिक्षा के दर्जे में आती है। इसे हमारी सरकार ने 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के सभी श्रेणी के बच्चो को नि:शुल्क प्रदान करने हेतु 1 अप्रैल 2010 से सम्पूर्ण देश में लागू कर दिया गया है।
2. **अनिवार्य शिक्षा –**जिस शिक्षा को प्राप्त करना हमारे संविधान के अनुरूप अनिवार्य कर दिया गया है, इस संदर्भ में 6 से 14 वर्ष आयु के वर्ग के बच्चों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य रूप से अनिवार्य रूप से ग्रहण शिक्षा का प्रावधान किया गया है। इस संविधान के अधिनियम के तहत कमजोर एवं उपेक्षित वर्गो के बच्चों के लिए शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध करना सुनिश्चित करना शिक्षकों की तैनाती में असंतुलन समाप्त करने एवं समुचित प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति कर शिक्षा को सुगमता प्रदान करना।

शोध की परिसीमाएं –

1. प्रस्तुत शोध अध्ययन को बून्दी जिले तक ही सीमित रखा गया है।
2. प्रस्तुत शोध अध्ययन में सरकारी प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों का चयन किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए कक्षा 7 व 8 का चयन किया गया है।
4. प्रस्तुत शोध अध्ययन में कुल 60 अध्यापक – अध्यापिकाओं का चयन किया गया है। जिसमें 30 शहरी तथा 30 ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाऐं शामिल की गई है।

शोध के चर :

1 **स्वतन्त्र चर –** शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय के छात्र – छात्राऐं तथा अध्यापक अध्यापिकाऐं।

2 **आश्रित चर –** नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि प्रयुक्त की गई है।

शोध का न्यादर्श –प्रस्तुत शोध कार्य हेतु न्यादर्श के रूप में बून्दी जिले के उच्च प्राथमिक स्तर के शिक्षक एवं विद्यार्थियो को (शिक्षक 60 (30 अध्यापक –30 अध्यापिकाऐं) तथा बालक 100 एवं बालिकाऐं 100 कुल 260 (शिक्षक 60विद्यार्थी 200)

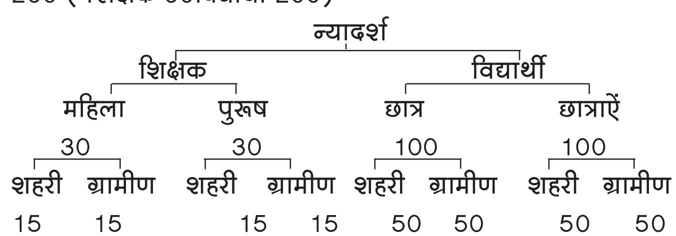

तालिका सं.1,2,3 व 4 (देखे अगले पृष्ठ पर)

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोधकार्य हेतु शोधकर्ता द्धारा स्वनिर्मित ‘अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति अभिवृति मापनी (विद्यार्थी) व ‘अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति अभिवृति मापनी (शिक्षक) का प्रयोग किया।

* शोधार्थी, कॅरियर पॉइन्ट यूनिवर्सिटी, कोटा (राज.) भारत

शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोधकर्ता में प्रदत्त विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण सांख्यिकी विधियॉ प्रयुक्त की गई है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या – परिकल्पना सं. 01 – अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा कार्यक्रम' के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

देखे तालिका संख्या 1 के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है, कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक एवं अध्यापिकाओं की अभिवृति मापनी से प्राप्त मध्यमान 58.9< 61.03 के बीच 'टी'मूल्य 1.35 प्राप्त हुआ, जो कि 'टी' मूल्य सारणी 0.050.01 स्तर पर 2.002.66 से कम है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: 'अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकृत की जाती है ।

परिकल्पना सं. 02 – अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

देखे तालिका सं. 2 के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अभिवृति मापनी से प्राप्त मध्यमान 57.3< 61.3 के बीच 'टी मूल्य 4.17 प्राप्त हुआ, जो कि 'टी'मूल्य सारणी 0.050.01 स्तर पर 1.972.60 से अधिक है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: 'अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' अस्वीकार की जाती है।

परिकल्पना सं. 03 – अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।'

देखे तालिका सं.3 के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की अभिवृति मापनी से प्राप्त मध्यमान <57.08 के बीच 'टी' मूल्य 1.16 प्राप्त हुआ, जो कि 'टी' मूल्य सारणी 0.050.01 स्तर पर 2.012.68 से कम है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापक – अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। अत: 'अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकार की जाती है।

परिकल्पना सं. 04 – अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी छात्र छात्राओं की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।'

देखे तालिका सं.4 के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है, कि अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी छात्र एवं छात्राओं की अभिवृति मापनी से प्राप्त मध्यमान 59.6<62.44 के बीच 'टी' मूल्य 2.44 प्राप्त हुआ, जो कि 'टी' मूल्य सारणी 0.050.01 स्तर पर 1.982.63 से अधिक है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी छात्र एवं छात्राओ की अभिवृति में कोई सार्थक अन्तर है।

अत: 'अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा कार्यक्रम के प्रति शहरी छात्र एवं छात्राओं की अभिवृति में कोई अन्तर नहीं है।' अस्वीकार की जाती है

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 सुखिया एवं मल्होत्रा (1979) : 'शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा ।

2 राय पारसनाथ : 'अनुसंधान परिचय' लक्ष्मीनारायण प्रकाशन, आगरा।

3 रायजादा एवं वर्मा (2008) : 'शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर ।

4 राजपूत जगमोहन सिंह (2001) : 'विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली ।

5 मल्होत्रा पी0एल0 एवं पारख सदाशिव (1986) : 'भारत में विद्यालयी शिक्षा, वर्तमान स्थिति और भावी आवश्यकताऐं' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली ।

6 कृष्णमूर्ति जे0 (1998) : 'स्कूलो के नाम पत्र' भाग – 1, कृष्णमूर्ति फाउण्डेशन, वाराणसी ।

7 आहूजा राम (2007):'सामाजिक अनुसंधान' रावत पब्लिकेशन, दिल्ली।

8 कुमार नरेन्द्र (2001) : 'राष्ट्रीय शिक्षा' विक्रम प्रकाशन, दिल्ली ।

9. शर्मा नरेन्द्रः 'तुलनात्मक शिक्षा' (विश्व की शिक्षा प्रणालियां एवं समस्याऐं) ।

9 पलीवाल ए0के0 (2009) : 'तुल्नात्मक शिक्षा' वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा।

तालिका सं.1

क्र.	स्तर	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य
1.	शहरी शिक्षक	30	58.90	5.23	1.35
2.	ग्रामीण शिक्षक	30	61.03	6.86	

तालिका सं.2

क्र.	स्तर	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य
1.	शहरी विद्यार्थी	100	57.33	6.55	4.17
2.	ग्रामीण विद्यार्थी	100	61.3	6.92	

तालिका सं.3

क्र.	स्तर	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य
1.	शहरी अध्यापक	15	60	327	1.16
2.	ग्रामीण अध्यापिकाऐं	15	57.8	6.59	

तालिका सं.4

क्र.	स्तर	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मूल्य
1.	शहरी छात्र	50	59.66	6.47	2.44
2.	ग्रामीण छात्राऐं	50	62.94	6.96	

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

इक्कीसवीं सदी में महिला सशक्तिकरण

डॉ. शुभ्रा श्रीवास्तव *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में इक्कीसवीं सदी में महिला सशक्तिकरण का अध्ययन किया गया है। हमारे देश का सर्वांगीण विकास तभी संभव है, जब महिलाओं की सभी क्षेत्रों में बराबर की भागीदारी हो। इसके लिये आवश्यक है कि महिलायें सुशिक्षित जागरूक एवं आत्मनिर्भर बनें।स्वयं प्रेरणा आत्मशक्ति के आधार पर ,स्वसंगठित होकर सशक्तिकरण की नवीन परिकल्पना की सूत्राधार बनें, जिसके लिये परम्परावादी समाज को भी बदलने की आवश्यकता है। वास्तव में सशक्तिकरण का यही स्वरूप समाज को नई दिशा दे सकेगा।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि, 'देश का विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: हो जायेगा'। महिला की सुदृढ़, सम्मानजनक स्थिति, उन्नत, समृद्ध, समाज का द्योतक है।

हमारे धर्म ग्रन्थों में कहा गया है– **'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता'।**

यह बात अलग है कि एक ओर जहॉ उसे पूजनीय माना गया, वहीं दूसरी ओर उसे अबला मान कर परम्परा एवं रूढ़ियों की बेड़ी में जकड़ा गया। हालांकि इसमें कोई मत वैभिन्य नहीं है कि स्वतंत्रता पश्चात संविधान में नारी समर्थन वाले अनेक कानूनों एवं विभिन्न प्रकार के सरकारी प्रयासों के कारण आज भारतीय महिलाओं की परिस्थितियों में पहले से गुणात्मक सुधार हुआ है।

प्रस्तावना –प्रश्न उठता है कि महिला सशक्तिकरण क्या है ? क्या महिला का सबल होना ही सब कुछ है ? इस बात की परख इस बात से की जानी चाहिये कि क्या नारी भय मुक्त होकर सम्मान के साथ, जिस लक्ष्य को पाना चाहती है, उसका प्रयास करके अपने गन्तव्य तक पहुॅच सकती है। इक्कीसवीं सदी में जब हम महिला सशक्तिकरण की बात करते है तो यह उन्हें विशेष अधिकार एंव कर्तव्य बोध कराने, समाज से जुड़े मुद्दों पर निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। यह अनवरत चलने वाली संपोषित विकास प्रक्रिया है, जिसका मूल उद्देश्य हाशियें के लोगों को मुख्यधारा में लाकर सत्ता संरचना में भागीदार बनाना है। महिलाओं का सामाजिक,राजनैतिक और सार्वजनिक जीवन में प्रतिनिधित्व, दक्षता में अभिवृद्धि, कार्यक्षेत्र और अन्यत्र उसके साथ किये जा रहे बुरे व्यवहार की समाप्ति, सुरक्षा आदि वे कार्य हैं जिनकी पूर्णता द्वारा सशक्तिकरण का वास्तविक लक्ष्य पाना संभव है। इस हेतु आवश्यक है–

1. महिलाओं की सकारात्मक सहभागिता **2.** स्त्रीशक्ति को जानना **3.** समन्वयात्मक दृष्टिकोण **4.** सामाजिक मूल्यों का रूपान्तरण **5.** समुचित योजनाओं का क्रियान्वन **6.** स्त्रियों की स्वयं पहल।

बालिकाओं की शिक्षा एवं सशक्तिकरण हेतु प्रयास – स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात स्त्री शिक्षा प्रसार व सशक्तिकरण हेतु समय–2 पर विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49), माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53), राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति (दुर्गाबाई देशमुख समिति 1958–1959), राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद (1959–60), भक्तवत्सलम समिति (1963–65) हंसा मेहता समिति (1964–65), कोठारी आयोग (1964–66), राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रथम (1968), राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वितीय (1986), जनार्दन रेडी समिति (1992) ने अनेक कार्यक्रम बनाये, सुझाव दिये। राजनैतिक सहभागिता हेतु संविधान संशोधन (73वें तथा 74वें) से ग्राम पंचायतों में चुनाव प्रक्रिया को पुर्नस्थापित करते हुए 33% आरक्षण की व्यवस्था की गई। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 में जहॉ लिंगभेद को प्रतिबंधित किया गया ,वहीं महिला परिस्थिति में सुधार, अधिकारों एवं रक्षा हेतु विभिन्न प्रकार के कानून और अधिनियम बनाये गये जैसे समान पारिश्रमिक (1976), प्रसूति सुविधा (1961), बाल विवाह निषेध, (1976), सती प्रथा निषेध (1987), घरेलूहिंसा संरक्षण (2005) अधिनियम, राष्ट्रीय महिला आयोग (1992), राष्ट्रीय महिला कोष (1993) आदि। 2001 में महिला सशक्तिकरण नीति पारित करके महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया।

आज अनेक ऐसे कार्य क्षेत्र जिन पर पुरूषों का ही एकाधिकार था , उसमें भी महिलायें आगे आने लगी है। शिक्षा, खेल, संचार प्रबन्धन, अतंरिक्ष, सेना ,वैज्ञानिक एवं राजनीति सभी क्षेत्रों में वे हर चुनौती को स्वीकार करके, आत्मविश्वास से आगे बढ़ रही है। मेधा पाटेकर, कर्णम मल्लेशवरी ,मैरीकाम, सायना नेहवाल, रेखा मेंनन, इंदिरा नुई, चंदा कोचर ,अरूधती भट्टाचार्य, सुनीता नारायण, टैस्सी थामस, किरन बेदी, इंदिरा हिंदुजा, सुरेखा यादव, प्रतिभा पाटिल, सुषमा स्वराज ,सुमित्रा महाजन आदि भारतीय महिलाओं के लिये गौरव एवं प्रेरणा स्त्रोत है।

सरकार द्वारा बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–17) में महिला शिक्षा और सशक्तिकरण पर विशेष बल दिया गया है, जिसका लक्ष्य है प्राथमिक स्तर पर शतप्रतिशत नामांकन, प्राथमिक शिक्षा पूरी करना, ड्राप आउट असमानताओं कम करना, अलग से माध्यमिक विद्यालय, उच्च शिक्षा संस्थान, विश्वविद्यालय, व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा संस्थान स्थापना, उच्च शिक्षा संस्थान में आरक्षण व्यवस्था, छात्रवास निर्माण, स्कूलों में शौचालय, पीने का पानी व अन्य भौतिक संसाधन उपलब्ध कराना है। कस्तूरबा गॉधी योजना (1997), कामकाजी महिलाओं सहित बच्चों की देखभाल हेतु हास्टल, रोजगारप्रशिक्षण सहायता कार्यक्रम स्टेप, (1986–87) स्वावलंबन (1982–83), स्वयं सिद्धा (2001), महिला समाख्या (1989) , बालिका समृद्धि योजना (1998), महिला उद्यमियों हेतु ऋण योजना, जेण्डर बजटिंग (2004–05), तकनीकी शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति,

* प्रवक्ता (बी.एड. विभाग) दिग्विजय नाथ पी.जी. कॉलेज, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

मौलाना आजाद राष्ट्रीय छात्रवृत्ति (2003), कन्या विद्याधन (2004), सावित्री बाई फूले योजना 2009, सबला योजना (2011-12), हमारी बेटी उसका कल, पढ़े बेटियॉ बढ़ी बेटियां, एवं बेटी बचाओं बेटी पढाओं (22 जनवरी 2015)योजनाओं द्धारा स्त्री शिक्षा के प्रसार और उन्नयन का निरन्तर प्रयास जारी है। 1947 में महिला साक्षरता 6% थी वही 2001 में 54.16% तथा 2011 में 65.46% होकर उत्तरोतर बढ़ती ही जा रही है जैसा कि तालिका से स्पष्ट है-

साक्षरता दर- 1951 से 2011 तक (प्रतिशत में)

वर्ष	व्यक्ति	पुरूष	महिला
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.30	40.40	15.35
1971	34.45	45.96	21.97
1981	4357	56.38	29.76
1991	52.21	64.13	39.29
2001	65.38	75.85	54.16
2011	74.04	82.14	65.46

विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर बालिकाओं द्धारा स्कूल छोड़ देने के कारण कम संख्या में लड़किया उच्च शिक्षा तक पहुॅच पाती है ,परन्तु उत्साह जन्य तथ्य यह है कि आज लड़कियॉ उच्च शिक्षा से जुड़े विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा प्राप्त कर अपना नाम रोशन करके ,विभिन्न क्षेत्रों में उच्च रैंक को भी प्राप्त कर रही है, सिविल सेवा 2014 के परिणाम से स्पष्ट है।

पचास के दशक में जहॉ 15 %प्रतिशत महिलायें संगठित एवं असंगठित क्षेत्र में नौकरियॉ करती थी, वही 2010 में लगभग 65 %महिलायें भारत के ग्रामीण एवं शहरी इलाकों में नौकरियॉ कर रही जिसमें उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। वर्तमान में आई0टी0 क्षेत्र में 20% महिला, 31% भारतीय श्रमिक महिला ,ग्रामीण क्षेत्र में 20% परिवारों की मुखिया महिलायें, 22% चार्टड एकाउंटेट, 16 % महिला पायलट ,96% असंगठित क्षेत्र में कार्यरत है। लोकसभा में 11.2 % महिला सदस्य है।

नौकरीपेशा महिलाओं की स्थिति

वर्ष	1900	1950	2009	2018
संख्या	51 लाख	1.84 करोड़	6.62 करोड़	7.8 करोड़ अनुमानित

शिक्षा द्धारा महिलाओं में जागरूकता, गत्यात्मक प्रेरणा, विश्वास का सूत्रपात हुआ , एवं महिला कार्यक्रमों का केद्र बिन्दु' महिला कल्याण से हट कर 'महिला सशक्तिकरण' की ओर हो रहा है।

वर्तमान चुनौतियॉ एवं सामाजिक मानसिकता - महिला अधिकारों के संरक्षण, सशक्तिकरण की दिशा में किये गये सरकारी, गैर-सरकारी प्रयासों के बावजूद भी महिला स्थिति में संतोषप्रद सुधार नहीं है। उनकी रूचिओं इच्छाओं वित्तीय क्रियाकलापों का नियंत्रण पुरूषों के हाथ में होने से उन्हे कैसे सशक्त किया जा सकता है ?पिछले 68 वर्षो में जो समस्या तेजी से उभरी है वह है **'औरत के जन्म लेने के अधिकार का हनन'** सन 2001 में जहॉ 0-6 आयु वर्ग में प्रति हजार शिशुओं की तुलना में स्त्री शिशु संख्या 927 थी, 2011 में 919 आ पहुंची है, आगे क्या होगा यह समझा जा सकता है। वर्ष 2011 की जनगणना से स्पष्ट है कि पांच साल से कम उम्र की आबादी में लिंगानुपात स्वतंत्रता के पश्चात के वर्षो में सबसे कम हैं।

भारत में बाल लिंगानुपात

जनगणना	बाल लिंगानुपात 0-6 वर्ष	संपूर्ण लिंगानुपात
1961	976	941
1971	964	930
1981	962	934
1991	945	927
2001	927	933
2011	919	943

आज राष्ट्रीय औसत प्रति हजार लड़को पर 920के करीब लड़कियॉ जन्म ले रही ,जबकि हरियाणा में यह 830 के करीब है ,बाकी देशों की तुलना करें तों 135 देशों के सर्वे में हमारा स्थान 105 वां है। कन्याभ्रूण हत्या के परिणामस्वरूप आज पश्चिमोत्तर भारत में लोग दूसरे राज्यों से दुल्हने खरीद कर शादी करने को मजबूर हैं ,नतीजन इन क्षेत्रों में लड़कियों के खरीदफरोख्त का व्यापार धड़ल्ले से पनप रहा है।

भारत में बालिकाओं की स्थिति पर **सेव द चिल्ड्रेन** की रिपोर्ट **विग्स 2014** के अनुसार ,देश में 18 साल से कम उम्र की बेटियों की संख्या 22.5 करोड़ है। निजी स्कूलों में एडमिशन के आंकड़े देखे तो बेटियां 45% है जबकि बेटे 55 % है, इस 10 प्रतिशत के अंतर को पाटना समाज व सरकार के लिये बेहद कठिन चुनौती है। रिपोर्ट के अनुसार देश की 90 फीसदी लड़कियॉ पढ़ाई पूरी नहीं कर पाती है ,वही लड़को के मुकाबले दोगुनी लड़कियां पढ़ाई बीच में ही छोड़ देती है । 2013-14 की श्रम ब्यूरो रिपोर्ट के अनुसार पुरूषों के बीच बेरोजगारी 4.1% रही जबकि महिलाओं में यह 7.7% है, यहॉ भी लिंग आधारित विभाजन देखने को मिला हैं। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट (जनवरी 2015) में भारत में घटते लिंगानुपात हेतु समाज एवं व्यवस्था दोनों को ही जिम्मेदार ठहराया गया।

पुरूष की तानाशाही प्रवृत्ति, महिलाओं की न्यूनतम राजनैतिक सहभागिता, प्रशासनिक लापरवाही, जटिल सामाजिक बंधन, गिरते मानवीय एवं सामाजिक मूल्य ,सहशिक्षा के प्रति संकुचित दृष्टिकोण, स्त्रियों का दोहरा दायित्व, माता- पिता का शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण, बालिका विद्यालय का अभाव , दहेज प्रथा उत्पीड़न, निर्धनता, पारिवारिक उपेक्षा, रोजगार के अवसरों की कमी व भेदभाव पूर्णसेवा शर्ते, घरेलू दायित्वों का बोझ, बेटी पराया धन जैसी मानसिकता, बालिका शिक्षा को फिजूलखर्ची मानना, अशिक्षा, बालविवाह, पर्दाप्रथा, धार्मिक संकीर्णता, सामाजिक असुरक्षा ,संसाधनों का अभाव, विवाहोपरान्त नौकरी छुड़वा देना, पुत्र को परिवार की संपत्ति एवं पुत्री को दायित्व मानना जैसी मानसिकता ,धारणाओं एवं कारणों से महिला स्थिति दयनीय तथा सोचनीय है।

यूनिसेफ की द स्टेट आफ द वर्ल्ड चिल्ड्रन शीर्षक में भारतीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति की रिपोर्ट 2012 के अनुसार ,भारत की 54 प्रतिशत महिलायें पति द्धारा पिटाई को उचित मानती है ,जबकि 37 प्रतिशत किशोर भी इसे उचित मानते है । समझा जा सकता है कि हमारा समाज किस हद तक आज भी पुरूष वर्चस्ववादी हैं कि महिलायें एवं किशोर बच्चे भी पुरूषों की तरह सोचते है ,जिसके मूल में है पारंपरिक समाजीकरण एवं अशिक्षा । देश में कानून बनने के बावजूद भी 2012 में महिलाओं के प्रति अपराध संख्या 2,44,270 से 2013 में बहकर 3,09,546 हो गयी जिसमें निरंतर वृद्धि हो रही है।

एक तरफ नारी जो ममत्व एवं त्याग की प्रतिमूर्ति है जिसने परिवाररूपी सामाजिक श्रृंखला को उन्नत किया है, वहीं दूसरी तरफ आज भी उसे उपभोग की वस्तु मानने वाले समाज में अनेक विसंगति और मिथ्या पुरूषार्थ के दबाव में सिसकती हुई, वह आज भी महिला सशक्तिकरण की तरफ आस लगायें बैठी है। कहने को हम 21वीं सदी के भारत की बात करते है, पर धरातल पर हालात नहीं बदले है।

सुझाव – किसी भी राष्ट्र की परम्परा, संस्कृति उस राष्ट्र की महिलाओं से ही परिलक्षित होती है, वे रचनात्मक शक्ति होती है। अत: आने वाले कल को सुधारने के लिए शिक्षा द्धारा सामाजिक जागरूकता लाकर पुरूष प्रधान समाज में महिला सोच मनोवृत्ति, रूढ़िवादी मान्यताओं, परम्पराओं, एवं सामाजिक परिवर्तन के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण में बदलाव से उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना, पुरूषों के समान अवसर प्रदान करना,समाज की मुख्यधारा से जोड़ना, सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाना,उनके व्यक्तिगत, विधिक अधिकार ,संविधान प्रदत्त सुरक्षा एवं प्राथमिकता की जानकारी देना एवं महिलाओं के साथ हो रहे अत्याचार एवं हिंसा की रोकथाम करना होगा। महिला अधिकारो की रक्षा हेतु प्रशासनिक तंत्र एवं पुलिस को सहयोगात्मक रवैया अपनाना होगा।यह सिर्फ योजनाओं के सहारे असंभव है। इसके लिये देश की शिक्षा व्यवस्था को ठीक करके गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करनी होगीं, महिला साक्षरता की दर में वृद्धि करना , प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के पाठयक्रम में उन्हें सशक्त बनाने हेतु विषय सामग्री जोड़ कर, सामाजिक, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने हेतु कौशल विकास करना होगा। जनसंचार के माध्यम से सोशल मीडिया नुक्कड नाटक संगोष्ठी, सम्मेलन का आयोजन कर महिला अधिकारो के प्रति उन्हे जागरूक एवं सशक्त बनाना होगा। न्यायपालिका की व्यापक सक्रियता एवं उपबन्धों का सरकारी तंत्र द्धारा बिना भेदभाव क्रियान्वन कर महिला स्थिति में सुधार लाने हेतु, सभी की जवाबदेही सुनिश्चित करना होगा। निष्ठापूर्वक कानूनों को लागू करते हुए समय समय पर मूल्यांकन कर घरेलू व सामाजिक स्तर पर सुधार लाने का सतत प्रयत्न करना होगा जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में अहम एवं प्रभावशाली कदम होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रो0 मोहन, मदन ,डॉ0 नीता सिन्हा, भारतीय शिक्षा की उदीयमान समस्याएँ, कैलाश प्रकाशन इलाहाबाद, 2005.
2. लाल रमन बिहारी, कृष्ण कान्त शर्मा, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, प्रकाशक विनय रखेजा, मेरठ, 2012.
3. रूहेला, प्रो0एस0पी0, विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 2007.
4. गुप्ता डॉ. एस0पी0, डॉ. अलका गुप्ता, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्यायें, प्रकाशक शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2009.
5. योजना, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अगस्त 2001, अक्टूबर 2006,दिसम्बर, 2012
6. जनगणना रिर्पोट, 2011, भारत सरकार.
7. शर्मा,ऋषमदेव,स्त्री सशक्तिकरण के विविध आयाम, प्रकाशक गीता प्रकाशन,हैदराबाद
8. व्होरा आशारानी ,भारतीय नारी दशा ,नेशनल पब्लिशिंग हाउस ,नई दिल्ली
9. कुरूक्षेत्र 2015, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार.
10. शर्मा प्रज्ञा ,महिला विकास और सशक्तिकरण आविष्कार पब्लिशर्स , जयपुर, 2003

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) July to September 2015, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Imapct Factor - 0.715 (2014)

ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक विद्यालयों में संसाधन संबंधित सुविधाओं का अध्ययन (मन्दसौर जिले के संदर्भ में)

जयदीप महार * योगिता सोमानी **

शोध सारांश - शाला भवन एवं साधन सुविधाएँ संबंधी जैसे- शाला में प्रत्येक कक्षा हेतु अलग-अलग कक्ष, शाला आकर्षण एवं सुन्दर, शाला में पुस्तकालय, शाला में पढ़ने हेतु पुस्तके, किताबें पढ़ना अच्छा लगना, पुस्तके दी जाती है, पानी की उचित व्यवस्था, खेल का मैदान, शौचालय की उचित व्यवस्था, सुविधा जनक फर्नीचर, सारणी में 300 विद्यार्थियों से उक्त बिन्दुओं की राय ज्ञात की गई। राय ज्ञात करने हेतु स्वंय शोधकर्ता ने विद्यालयों में जाकर यह संकलन किया प्राप्त दत्तों का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना - मध्यप्रदेश राज्य में प्राथमिक शिक्षा में क्या-क्या समस्या आ रही हैं, इससे अगर हम ज्ञात करले तो राज्य में साक्षरता का प्रतिशत बढ़ने में मदद मिलेगी। इसलिए शोधकर्ता ने मन्दसौर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों की प्राथमिक शालाओं की शैक्षिक सम्बंधित सुविधाओं को जानने का प्रयास किया गया है।

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में निम्न योजनाओं को चालु किया गया था।

1. सर्वशिक्षा अभियान (SSA)
2. मिड-डे मील योजना (MDMS)
3. शिक्षक-शिक्षा योजना (MDMS)

उद्धेश्य-

1. ग्रामीण शासकीय प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों की कक्षाओं सुविद्याओं का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण शासकीय प्राथमिक शालाओं के खेलने के लिए मैदान की सुविद्याओं का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण शासकीय प्राथमिक शालाओं के पानी की उचित व्यवस्था का अध्ययन करना।
4. ग्रामीण शासकीय प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों के फर्नीचर सुविद्याओं का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया जिसके अंतर्गत मन्दसौर जिले के दो विकासखण्डों की 30 ग्रामीण शालाओं का सर्वेक्षण किया गया।

न्यादर्श -

क्र.		प्रत्येक विद्यालय से न्यादर्श	कुल विद्यालयों से न्यादर्श	कुल संख्या
1	विद्यार्थी	10	10×30	300

उपकरण - प्रस्तुत शोध अध्ययन में समस्या से संबंधित तथ्यों व सूचनाओं को एकत्रित करने हेतु निम्न उपकरणों का निर्माण शोधार्थी द्धारा किया गया।

प्रदत्तो का संकलन - प्रदत्तों का संकलन शोध कार्य को सफल बनाने हेतु ऑकडों व जानकारी का संकलन आवश्यक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रदत्तों के संकलन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। शोधकर्ता ने शोध उपकरणों का निर्माण कर प्रदत्तों का संकलन किया हैं प्रदत्तों के संकलन की प्रक्रिया को नीचे वर्णित किया गया है।

शाला भवन एंव संसाधन सुविधाएँ संबंधी प्राप्त दत्तों का विवरण

	विषय वस्तु	आवृत्ति हॉ	आवृत्ति नही
1	आपकी शाला में अलग अलग कक्षा कक्ष है।	108(36%)	192(64.%)
2	आपकी शाला आकर्षक एवं सुन्दर है।	186(62.3%)	113(377%)
3	आपकी शाला में पुस्तकालय है।	092(30.6%)	208(69.4%)
4	पुस्तकालय में पर्याप्त पुस्तकें पढने के लिए है।	215(71.6%)	85(28.4%)
5	आपको किताबें पढ़ना अच्छा लगता है।	297(99%)	003(01%)
6	आपको पढ़ने हेतु पुस्तकें दी जाती है।	214(71.3%)	86(28.7%)
7	आपकी शाला में पानी की उचित व्यवस्था है।	288(96%)	012(04%)
8	आपकी शाला में खेलने के लिए मैदान है।	297(99%)	003(01%)
9	आपकी शाला में शौचालय की उचित व्यवस्था है।	169(56.3%)	131(43.7%)
10	आपकी शाला में फर्नीचर सुविधाजनक है।	061(20.3%)	239(79.3%)

सारणी के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष -

1. (36%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में सभी कक्षा कक्ष अलग-अलग है, जबकि (64%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में सभी कक्षाओं हेतु कक्षा कक्ष अलग-अलग नहीं पाये गये।
2. (62.3%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाएँ आकर्षण एवं सुन्दर थी, जबकि केवल (37.7%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाएँ आकर्षण एवं सुन्दर नहीं थी।

* सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र) भारत

3. (30.6%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शाला में पुस्तकें पढ़ने हेतु अलग से कक्ष है, जबकि (69.4%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में पुस्तके पढ़ने हेतु अलग से कोई कक्ष नहीं है।
4. (71.6%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में पढ़ने हेतु पुस्तके पर्याप्त थी, जबकि केवल (28.4%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में पर्याप्त पुस्तकें नही थी।
5. (99%) विधार्थियों की राय अनुसार उन्हें पुस्तकें पड़ना अच्छा लगता है, जबकि केवल (01%)ही ऐसे छात्र है, जिन्हें पुस्तकें पढ़ने में रूचि नही है।
6. अधिकांश (71.3%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनको उनकी शालाओं में पढ़ने हेतु पुस्तकें दी जाती है, जबकि केवल (28.7%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में छात्रों की संख्या अधिक होने से पुस्तकें सभी छात्रों को एक साथ नहीं मिल पाती है।
7. अधिकांश (96%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में उचित व्यवस्था थी, जबकि (04%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में पानी की उचित व्यवस्था नही थी।
8. (99%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में खेलने के लिए मैदान पर्याप्त है, जबकि (01%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में खेलने के लिए मैदान छोटा है।
9. (56.3%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में शौचालय की उचित व्यवस्था है, जबकि (43.7%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में शौचालय तो है, लेकिन टूट - फुट रहें है, चारों और गंदगी फैली है।
10. (20.3%) विधार्थियों की राय के अनुसार उनकी शालाओं में फर्नीचर सुविधा है, लेकिन (79.7%) विधार्थियों के अनुसार उनकी शालाओं में फर्नीचर सुविधा नहीं है, वे दरी या टाटपट्टी पर ही बैठते हैं।

शैक्षिक निहितार्थ - कुछ शालाओं में छात्रों की बैठक व्यवस्था का अभाव, पेयजल हेतु अनुउपलब्धता आदि भौतिक संसाधनों के अभाव की यथार्थता व्यक्त करते है जो एक गंभीर समस्या को जन्म देते है। अभिभावकों द्वारा बच्चों पर नियमित ध्यान नहीं देना, शिक्षकों द्वारा अपने कर्तव्यों का ईमानदारी पूर्वक निर्वहन नहीं किया जाना, शालाओं में भौतिक संसाधनों का अभाव,शिक्षकों में व्यावसायिक समर्पण की कमी,शिक्षकों का समय पर शाला न पहूँचना तथा अनियमित शाला संचालन,समाज के लोग व्यवधान उत्पन्न करते है।

प्रस्तुत शोध शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े उन सभी के लिए दिशा निर्दिष्ट करेगा जो राष्ट्रीय प्रगति में प्राथमिक शिक्षा के योगदान का सर्वोच्च वरीयता देते है। इनमें नीति निर्धारक शासन, प्रशासक, शाला -संचालक, प्रधानाध्यापक व शिक्षक संवर्ग सभी के लिए निहितार्थ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नेगी, अशोक कुमार (2005) प्राथमिक विद्यालयों में मध्याह्न भोजन कार्यक्रम की परिवर्तित व्यवस्था के तहत विभिन्न कवभाग समन्वयात्मक कार्यवाही एवं कठिनाई का अध्ययन (खण्डवा विकासखंड के संदर्भ में) -एम.एड-लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर
2. भटनागर,सुरेश : भारतीय शिक्षा एवं उनकी समस्याये, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
3. म्लानी कु. भारती (2005) : प्राथमिक शालाओं में नि:शुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण तथा मध्याह्न भोजन वितरण योजना का विद्यार्थियों के नामांकन एवं शैक्षिक उपलब्धि पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन (खण्डवा जिले के पुनासा विकासखंड के संदर्भ मे)-एम.एड-लघु शोध प्रबंध, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर
4. माथुर, एस.एस: शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा
5. मिश्रा लक्ष्मी: मध्यप्रदेश में शिक्षक शिक्षा मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
6. राय, पारसनाथ: अनुसंधान परिचय,लक्ष्मीनारायण अग्रवाल,आगरा-3, 1999
7. शर्मा, आर.ए.: अध्यापक शिक्षा, आर.लाल बुक डिपो मेरठ
8. शर्मा, आर.ए.: शोध प्रबन्ध लेखन, रॉयल बुक डिपो ,मेरठ
9. श्रीवास्तव, डी.एन: अनुसंधान विध्सियां साहित्य प्रकाशन आगरा 2004

****

ए.एल.एम. के क्रियान्वयन में आने वाली शिक्षकों की व्यवहारिक कठिनाइयों का अध्ययन

बालेन्द्र श्रीवास्तव * डॉ. एम.के. तिवारी **

प्रस्तावना – मनुष्य सदैव जिज्ञासु रहा है वह अपने आस–पास के परिवेश से बहुत कुछ देखकर सीखने का प्रयास करता है। जैसे जैसे मानव सभ्यता का विकास होता गया वह अपने प्रयासों से अबुझ पहेलियों को सुलझाता रहा है। साथ ही साथ वह अपने अनुभव एवं बुद्धि द्वारा संचित ज्ञान से आने वाली पीढ़ियों को अग्रेषित करता रहा है।

सीखने और सिखाने के जिन पारम्परिक तरीकों को मनुष्य ने अपनाया है उनमें समय और परिस्थिति के अनुसार निरन्तर परिवर्तन होता रहा है।

शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना। उक्त उद्देश्य को दृष्टिगत रखकर यह आवश्यक है कि शिक्षा ग्रहण करना विद्यार्थी के लिये एक आनन्ददायी प्रक्रिया है। यह तभी संभव हो सकेगा जब शिक्षक अपनी सक्रियता से कक्षा में ऐसे वातावरण का निर्माण करें जिससे सभी विद्यार्थी सक्रिय रूप से अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया में सहभागी बन सकें।

इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रख उच्च प्राथमिक स्तर पर (कक्षा 6 से 8) की शिक्षा के गुणात्मक उन्नयन के लिये सक्रिय अधिगम प्रविधि (Active Learning Methodology) को एक नवाचारी शिक्षण प्रणाली के रूप में अपनाया जा रहा है। इस विधि में शिक्षक के साथ–साथ विद्यार्थी भी पूर्ण रूप से सक्रिय रहकर कार्य करते है।

अभी तक प्रदेश के समस्त विद्यार्थियों को परम्परागत ढंग से शिक्षण दिया जाता था। सक्रिय अधिगम प्रविधि की सफलता को देखते हुऐं अब इसे प्रत्येक जिले के दो विकास खण्डों में लागू करने का निश्चय कर उसका क्रियान्वयन किया जा चुका है।

समस्या की आधारभूत पृष्ठभूमि –

1. समस्या की पहचान संबंधित शाला के प्रधानाध्यापक, संबंधित कक्षा के कक्षा शिक्षक, संबंधित विषय शिक्षक आदि से कक्षा गत शिक्षण के समय शिक्षक को आने वाली व्यवहारिक कठिनाईयों को पूछकर साथ ही बच्चों के पालकों/अभिभावकों से पूछकर जो कठिनाईयाँ सामने आई। इस प्रकार समस्या की पहचान की गई। शिक्षक के सामने एक ओर व्यवहाहिक कठिनाई कि ए.एल.एम. आधारित शिक्षण कार्य जब कक्षा में चल रहा होता है। तब यह प्रविधि समूह शिक्षण पर आधारित होने से बच्चों को कक्षा में पर्याप्त बैठक व्यवस्था न होने के कारण हमारे शिक्षक को कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।
2. समस्या का विस्तृत क्षेत्र कक्षा शिक्षण, संबंधित कक्षा का शिक्षण कक्ष, बच्चों की सहभागिता, शिक्षक की सक्रियता, बच्चों के उपलब्धि स्तर आदि पर पड़ने वाला प्रभाव है।

समस्या का निराकरण – संबंधित विषयवस्तु के साहित्य उपलब्ध होने के कारण बच्चों के शिक्षण पर पड़ने वाला प्रभाव अच्छा देखने को मिलता है। शिक्षक को अपने कक्षा शिक्षण के दौरान पाठयोजना तैयार मिलती है। जिससे शिक्षक बेहतर तरीके से अपनी विषय वस्तु को भलीभॉति पूर्वक बच्चों को समझाने में सफल रहता है। पाठ योजना के नो आयाम तथा पॉच प्रारूप तैयार किये गये है। जिसमें चार प्रारूप कक्षा शिक्षण में संबंधित विषय जैसे– हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि विषयों के लिए चार प्रारूप –

1. स्व–अध्ययन (SELF STUDY)
2. सह–अध्ययन (PAIRED STUDY)
3. SQ4R प्रारूप
4. चित्र, चॉक व चर्चा प्रारूप (DIAGRAM, CHALK AND TALK)

आदि प्रारूप है लेकिन गणित विषय के लिए केवल एक ही प्रारूप है –

1. TIGER -

T- TEACHER AS A FACILITATOR	– शिक्षक सुविधादाता के रूप में
I - INDIVIDUAL WORK	– व्यक्तिगत कार्य
G - GROUP WORK	– समूह कार्य
E- EVALUATION	– मूल्यांकन
R - REINFORCEMENT	– प्रतिपुष्टि (अतिरिक्त बल)

जो कि गणित विषय की अवधारणाओं को स्पष्ट करने के लिए अपर्याप्त है। इस प्रकार गणित विषय के लिए कम से कम चार प्रारूप निर्माण कर साहित्य में ओर सम्मिलित किये जाने चाहिए थे जिससे कक्षा 6 से 8 तक के विद्यार्थियों को गणित की अवधारणाओं को गणित विषय के शिक्षकों को गणित की अवधारणाओं को समझाने में व्यवहारिक कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़े। साथ ही शिक्षकों के तथा बच्चों के मध्य विषयवस्तु रूचिकर लगने लगे। क्योंकि कक्षा में बच्चे सभी स्तर के होते है। ए.एल.एम. का उद्देश्य भी यही है कि सक्रिय अधिगम प्रविधि (ACTIVE LEARNING METHODOLOGY) के माध्यम से बच्चे बेहतर गणित विषय की अवधारणाओं को भलीभॉति समझ सके। और हमारा शिक्षक भी कक्षा में बच्चों के गणित विषय सीखाने में जो व्यवहारिक कठिनाईयां आती है। उनसे बचा जा सकेगा।

संबंधित विषय का प्रारूप तैयार होने से बच्चों की सहभागिता संख्या

* प्राध्यापक, डाईट शाजापुर रिसर्च स्कालर पहेर विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ कन्या शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

में अभिवृद्धि होगी। विद्यार्थियों को गणित विषय की कठिन प्रश्नावली को भी सीखना आसान हो जायेगा। प्रत्येक बच्चे के लिए गणित विषय की अवधारणाऐें समस्या मूलक नहीं होगी। साथ–साथ शिक्षक भी सक्रिय रूप से अध्यापन कार्य सम्पादित करेगा।

प्राचीन काल में शिक्षा का अर्थ केवल बच्चों के मस्तिष्क को ज्ञान से भरना था। बच्चों को कुछ तथ्यों और सिद्धांतो को कंठस्थ करना पड़ता था और यही उसकी शिक्षा की इतिश्री मान ली जाती है। पूर्व में शिक्षा बालकेन्द्रित न होकर ज्ञान केन्द्रित थी। किन्तु वर्तमान समय में शिक्षा से तात्पर्य उपदेश देना या सूचना देना नहीं है और नही काल्पनिक सुदूर भविष्य को ध्यान ने रखकर ही बालक को शिक्षा देना है अपितु ए.एल.एम. तो एक आनंददायी प्रक्रिया समझी जाती है जिससे शिक्षार्थी के व्यक्तित्व एवं भविष्य का निर्माण हो सके।

ए.एल.एम. शिक्षण प्रक्रिया के अन्तर्गत आनंद की इसी अभिवृत्ति को विकसित करने के उद्देश्य से पूर्व माध्यमिक (कक्षा 6 से 8) स्तर पर । CTIVE LEANING METHOTOLOGY (सक्रिय अधिगम प्रविधि) को अपनाया गया है जिसमें विद्यार्थी एक सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में तथा ASSESSMENT) करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि जिन उद्देश्यों (AIM¡) की प्राप्ति किस स्तर तक हुई है। इसलिए अध्ययन हेतु इस शिक्षक

शोध उद्देश्य –

1. ए.एल.एम. प्रविधि में शिक्षकों की अवधारणात्मक समझ का अध्ययन करना।
2. ए.एल.एम. योजना के क्रियान्वयन में पी.टी.ए. की भूमिका का अध्ययन करना।
3. ए.एल.एम. के संबंध में विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षकों को आने वाले कठिनाईयों को जानना।
4. ए.एल.एम. प्रविधि के क्रियान्वयन में आ रही कठिनाईयों को दूर करने हेतु सुझावो का अध्ययन करना।

- **समस्या का समाधान से औरों को निम्न प्रकार से सहायता हो सकेगी –**
- **अभिभावकों –** समस्या का समाधान हो जाता है तो स्थानीय या वहॉ के समुदाय के अभिभावकों के अध्ययन बच्चों का उपलब्धि–स्तर अधिक रहेगा। अभिभावक मानसिक रूप से अपने बच्चे की ओर से संतुष्ट रहेगे। जब अभिभावक बच्चों में मूलभूत दक्षता का विकास होते देख वहॉ के शिक्षकों के प्रति आत्मीय/भावनात्मक जुड़ाव होगा।
- **शिक्षक –**शिक्षकों में अपने अध्यापन के दौरान कक्षा शिक्षण में आने वाली व्यवहारिक कठिनाईयों की समस्या कर निदान हो जाता है तो हमारे शिक्षकों के शिक्षण कार्य की सक्रियता में अभिवृद्धि हो जायेगी। बच्चों में कौशलों के विकास में भी वृद्धि होगी। शिक्षण के दौरान सहभागिता में भी वृद्धि होगी।

अन्य लोगों की अन्य लोगों में संबंधित शालाओं के प्रधानाध्यापक, अन्य शिक्षक साथी, छात्र/छात्राऐं, पालक शिक्षक संघ के सदस्य, स्थानीय लोग, विद्यालय के वरिष्ठ अधिकारी वर्ग जैसे जनशिक्षक, जनशिक्षा केन्द्र प्रभारी, बी.ए.सी., बी.आर.सी.सी., विकासखण्ड शिक्षा अधिकारी, जिला परियोजना समन्वयक, डाईट, जिला शिक्षा अधिकारी आदि लोगों पर शिक्षण में आने वाली व्यवहारिक कठिनाईयों की समस्या के समाधान का अच्छा प्रभाव देखा जा सकेगा। वे अपने–अपने क्षेत्र में शिक्षा का स्तर ऊँचा होने से प्रदेश देश को प्रतिभावान विद्यार्थी दे सकेगा। साथ ही परम्परागत शिक्षण एवं ए.एल.एम. आधारित शिक्षण के प्रभावों में अन्तर परिलक्षित होते देख सकेगा।

शोध परिकल्पना –

1. शिक्षकों में ए.एल.एम. की अवधारणा की समझ है।
2. ए.एल.एम. प्रविधि से अध्यापन कार्य करा रहे शिक्षकों को कोई व्यवहारिक कठिनाईयां नहीं है।
3. पालक शिक्षक संघ के सदस्य एवं अभिभावक, बच्चों की शिक्षा में रूचि नहीं रखते है।
4. ए.एल.एम. अन्तर्गत बच्चों में नवीन अधिगम का विकास होगा।
5. ए.एल.एम. प्रविधि वाले विद्यालयों के शिक्षकों द्वारा पर्याप्त सहायक सामग्री का उपयोग किया जा रहा है।

परिसीमन –समस्या का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है किन्तु उक्त शोध कार्य डाईट स्तर पर किया जा रहा है । अतः सीमित समय व सीमित साधनों में उपयुक्त परिणाम प्राप्त हो सके तथा विषय वस्तु का अधिक फैलाव न हो, इसलिए शोध कार्य । A.L.M. शिक्षण प्रविधि में शिक्षकों की व्यवहारिक कठिनाईयों को जानने के लिये शाजापुर जिले की वर्ष 2009–10 में दस चयनित माध्यमिक शालाओं का चयन किया गया है।

शोध की विधियां – सर्वेक्षण विधि

A.L.M. प्रविधि के क्रियान्वयन तथा शिक्षकों की व्यवहारिक कठिनाईयों में अध्ययन के शोध की प्रकृति सर्वेक्षणात्मक है शोध अध्ययन में जिला शाजापुर जिले की चयनित माध्यमिक शालाओं को सम्मिलित किया गया है जहां सक्रिय अधिगम प्रविधि से अध्ययन कार्य चल रहा है।

न्यादर्श का चयन A.L.M. प्रविधि के क्रियान्वयन में शिक्षकों की व्यवहारिक कठिनाईयों में अध्ययन करने हेतु क्षेत्र का परिसीमन कर अच्छे न्यादर्श की विशेषताओं को दृष्टिगत रख कर शाजापुर जिले की दस शासकीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन कार्य कराने वाले शिक्षकों को न्यादर्श के लिए चुना गया है।

न्यादर्श – शाजापुर जिले में कुल 711 शासकीय माध्यमिक विद्यालय है। इनमें से **10** ऐसे माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया जायेगा जहाँ सत्र 2009.10 से ही A .L.M. आधारित शिक्षण चल रहा है ।

शोध उपकरण – शोध अनुसंधान के उद्दश्यों को ध्यान में रखकर परिकल्पनाओं के आधार पर अच्छे शोध उपकरण की विशेषताओं को दृष्टिगत रखकर उपकरणों (स्वनिर्मित प्रश्नावली अवलोकन तालिका तथा स्वनिर्मित प्रश्न पत्र आदि) का निर्माण किया गया है।

समंक संकलन – समंक संकलन हेतु प्रश्नावली अवलोकन तालिका एवं स्वनिर्मित प्रश्न पत्र आदि को विद्यालयों में अध्ययन कार्य कराने वाले शिक्षकों एवं विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के अभिभावकों द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का संकलन किया गया है।

समंक विश्लेषण– विद्यालयों में अध्ययन कार्य कराने वाले शिक्षकों एवं विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के अभिभावकों से प्राप्त प्रदत्तों का संकलन एवं सारणीयन करने के उपरान्त समंकों का विश्लेषण किया गया है।

निष्कर्ष – उद्देश्यवार विश्लेषण करने से शिक्षक को अपने अध्यापन के अन्तर्गत वर्तमान में आने वाली व्यवहारिक कठिनाईयों में निम्न प्रकार से सुधार होगा।

- ए.एल.एम.प्रविधि से पढ़ाने के कारण शिक्षकों की अवधारणात्म समझ विकसित होगी।
- ए.एल.एम.योजना के क्रियान्वयन में पी.टी.ए. की भूमिका सक्रिय होगी।

- बच्चों के उपलब्धि स्तर में वृद्धि होगी।
- शैक्षाणिक माहौल विषयवस्तु के अनुकूल रहेगा।
- बच्चों की संबंधित विषयों के पढ़ने में रूचि रहेगी।
- सीखने के अवसर अधिक होगे।
- शिक्षकों को अपने कक्षा शिक्षण के दौरान आने वाली व्यवहारिक कठिनाईयों का सामना नहीं करना पड़ेगा।
- विद्यार्थियों की मूलभूत दक्षता में अभिवृद्धि होगी।
- ए.एल.एम. एक ऐसी प्रविधि है जो छात्रों को मौका देती है।
- ए.एल.एम. शिक्षण के लिए बेहतर माहौल सृजित करती है।
- ए.एल.एम. में अपनाए गये छात्र क्रियाशीलता द्वारा कक्षा शिक्षण को आनंददायी बनाया जा सकता है।
- ए.एल.एम. प्रविधि से शिक्षण कार्य करना तुलनात्मक दृष्टि से श्रेष्ठ है।
- ए.एल.एम. प्रविधि अच्छे परिणाम दे सकती है।

उपयुक्त बिन्दुओं के आधार पर जो परिणाम प्राप्त हुए है इस आधार पर इस प्रविधि को पूरे म.प्र. में लागू करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. ए.एल.एम.संर्दशिका राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल ।
2. ए.एल.एम. पाठयोजना भाग-1 एवं भाग-2 राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल।

****

उच्च शिक्षा में नैतिक शिक्षा की आवश्यकताएँ

डॉ. ऋतु पोरवाल *

प्रस्तावना – समाज के प्रचलित तरीके ही हमारे अच्छे-बुरे कर्मो के पहचानने के आधार होते है, क्योंकि हमारे समस्त विचारों के वे ही आधार रहते है इसलिए किसी शास्त्र का अध्ययन किये बिना ही हम दुसरों के और अपने कर्मो की प्रशंसा या निन्दा किया करते है। आज शिक्षा के क्षेत्र में आई गिरावट के कारण विभिन्न प्रकार के मूल्यों में आई गिरावट है। किसी भी दिन कोई सा भी समाचार पत्र पढ़िऐ कुछ खबरें एक सी लगती है बस पात्रों के नाम, स्थान भिन्न-भिन्न होते है। जैसे किसी सरकारी कर्मचारी के घर से आय से अधिक सम्पत्ति का प्राप्त होना, शिक्षित युवकों द्वारा अवैधानिक हैकिंग, फर्जी तरीके से मेडिकल कॉलेज में प्रवेश, अपनी ही सहपाठी का अश्लील एमएमएस बनाना तथा दंगे फैलाना इत्यादि। यह सभी घटनाऐं हमारे समाज का विकृत चेहरा प्रदर्शित करती है। भारतीय समाज की इस स्थिति के लिए कहीं न कहीं शिक्षा प्रणाली भी जिम्मेदार है क्योंकि वर्तमान शिक्षा तंत्र का मूलभूत उद्देश्य केवल डिग्रीधारी युवक व युवतियों की संख्या में वृद्धि करना मात्र ही रह गया है। जबकि किसी भी देश की शिक्षा प्रणाली का मूल उद्देश्य ऐसी युवा पीढ़ी की रचना करना होना चाहिए जो देश के आर्थिक विकास में सहायक होने के साथ-साथ उसके सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में भी सहयोगी हो तथा जिस पर समाज का हर वर्ग गर्व कर सकें।

आज के युवाओं में मानवीयता , ईमानदारी, दूसरों के प्रति आदर, सच्चरित्र, सहिष्णुता, रचनात्मकता, उत्तरदायित्व भावना का अभाव तीव्रता से परिलक्षित होता है जिसका प्रमुख कारण युवा पीढ़ी में नैतिक मूल्यों का गिरता स्तर प्रतीत होता है। अत: एक बार फिर उच्च शिक्षा स्तर पर नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है।

नैतिक मूल्यों के समावेश से हम व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करते हुऐ उसे संस्कारों का प्रणेता बनाने की दिशा में अग्रसर कर सकते है। नैतिक मूल्यों की महत्ता के संदर्भ में कतिपय बिन्दुओं को अवलोकनार्थ प्रस्तुत किया गया है-

- हिसंक घटनाओं की रोकथाम हेतु आवश्यक।
- चरित्र निर्माण में सहायक।
- उच्च आदर्शो की स्थापना।
- स्वस्थ समाज की स्थापना हेतु महत्वपूर्ण।
- एकता की भावना का विकास करने में ।

युवाओं में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता –

1. युवाओं में नैतिक मूल्यों की शिक्षा उन्हें स्व-अनुशासित करने के साथ-साथ स्वतंत्र सोचा रखने वाले व्यक्तित्व के रूप में विकसित करने में भी सहायक होगी।
2. आज का युवा वर्ग अपने कृत्यों से न केवल दुसरों को चोंट पंहुचाता है वरन् खुद भी नैराश्य की अंधी गलियों में भटक कर मृत्यु का वरण कर रहा है। ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि युवाओं को जीवन में उच्च मूल्यों से परिचित करवाया जाऐ ताकि वह अपने जीवन को सार्थक बना सके।
3. युवाओं में नैतिक मूल्यों की शिक्षा उन्हे विपरित परिस्थितियों में उचित निर्णय लेने में सहायक होती है साथ ही वस्तु स्थिति को निष्पक्ष भाव से देखने व शांति व सहृदयता के साथ परिणामों को स्वीकार करने की शक्ति भी प्रदान करती है।
4. आज विश्व का प्रत्येक देश आंतकवाद के दुष्परिणामों को झेल रहा है । आतंकवाद का जहर फैलाने के लिए युवाओं के अपने मार्ग से भटकाया जा रहा है ऐसी स्थिति में युवाओं को विश्वबंधुत्व की भावना से परिचित करवाने हेतु अतिआवश्यक है कि उन्हे सदैव अंहिसा, सहिष्णुता के गुणों से पोषित किया जाऐ।
5. यह सर्वविदित सत्य है कि प्रतियोगी वातावरण मानव को अपनी आंतरिक शक्तियों से परिचित करवाता है। जिसके बल पर वह उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता है परन्तु वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने प्रतियोगिता का ऐसा वातावरण तैयार किया है जिसमें अव्वल आना ही युवाओं का एक मात्र उद्देश्य हो गया है और नैतिक मूल्यों के अभाव ने इस स्थिति को ओर अधिक विस्फोटक बना दिया है।

समस्याऐं – इस शीर्षक के अंतर्गत उन समस्याओं का वर्णन किया गया है जो उच्च शिक्षा में नैतिक शिक्षा के क्रियान्वयन में अवरोध उत्पन्न करती है-

- महाविद्यालयीन प्राध्यापक नैतिक मूल्यों की शिक्षा के संबंध में उदासीन होते है उनका मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों को पारम्परिक विषयों में पारंगत बनाने तक ही सीमित होता है।
- वर्तमान में युवाओं का प्रमुख उद्देश्य रोजगार प्राप्त करके भौतिक सुविधाओं से सम्पन्न होकर जीवनयापन करना होता है इस स्थिति में नैतिक मूल्यों की शिक्षा के महत्व से अपरिचित रहते हुऐ वे इसके प्रति उदासीन होते है।
- हमारे देश में विभिन्न संरचना के विश्वविद्यालय है जिनके पाठयक्रमों व शिक्षण पद्धति में एकरूपता का अभाव है जिसके फलस्वरूप नैतिक शिक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में जोड़ना कठिन कार्य है।
- वर्तमान में निजी महाविद्यालयों का संचालन बड़े -बड़े व्यावसायिक घरानों द्वारा किया जा रहा है जिनका प्रमुख उद्देश्य शिक्षा व्यवसाय द्वारा लाभ अर्जित करना है ऐसी स्थिति में उन्हे नैतिक शिक्षा को उच्च शिक्षा का अंग बनाने हेतु सहमत करना चुनौतिपूर्ण कार्य है।

सुझाव –

- महाविद्यालयीन शिक्षकों को यह प्रयास करना चाहिए कि वह अपने परम्परागत विषयों के शिक्षण के दौरान ही उस विषय से संबंधित नैतिक ज्ञान को भी प्रसारित करें।

* अतिथि विद्वान, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद (म.प्र.) भारत

- 'नैतिक शिक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में पहचान दिलवाने की दिशा में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को आवश्यक कदम उठाने चाहिए व इस संबंध में दिशा निर्देश सभी विश्वविद्यालयों को प्रेषित करने चाहिए।
- महाविद्यालयीन स्तर पर नैतिक मूल्यों के प्रसार हेतु चरित्र निर्माण, नुक्कड़-नाटक, समाज-सेवा कार्यक्रमों को बढ़ावा देना चाहिए।
- नैतिक शिक्षा को शिक्षा की मुख्यधारा में जोड़ने हेतु 'मानव संसाधन मंत्रालय को प्रमुख भूमिका निभानी चाहिए व समस्त राज्यों से संवाद स्थापित करके एकराय स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए।

निष्कर्ष – शिक्षक राष्ट्र के निर्माता है विद्यार्थी भविष्य के प्रतीक है तथा शैक्षिक संस्थाऐं पवित्र स्थान है जहां विद्यार्थी अपने चरित्र व जीवन का निर्माण करते है। एक ऐसे समाज की रचना करना जिसमें हिंसा, लालच, भ्रष्टाचार, ईर्ष्या, आतंकवाद जैसी बुराईयों का कोई स्थान न हो, स्वप्न सा प्रतीत होता है। इस स्वप्न को पूरा करना मुश्किल जरूर है परन्तु असंभव नहीं, इसे संभव बनाया जा सकता है नैतिक मूल्यों की शिक्षा के बीज बोकर अर्थात् नैतिक मूल्यों की शिक्षा पाठ्यक्रम के माध्यम से स्कूल व महाविद्यालयों द्वारा देकर ।

इस कार्य में महाविद्यालयों के शिक्षकगणों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता । जिस प्रकार से श्री कृष्ण ने सारथी बनकर गीता के उपदेशों द्वारा अर्जुन को महाभारत के धर्मयुद्ध में विजयी बनाया उसी प्रकार शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों को सदैव नैतिक मूल्यों की शिक्षा देने हेतु तत्पर होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिक्षा उत्थान, दीनानाथ बत्रा, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली
2. www.ascd.org/publications/books/198190/chapters/moral.education.aspx
3. www.education.com
4. Books.google.com/moral-problems.inhigher-education
5. www.studymode.com/subjects/importance-of-moral-education

****

Comparative Analysis Of Physical, Physiological And Psychological Variables Among Government, Government Aided And Private School Students In Uttar Pradesh

Dr. Ramneek Jain * Nikhil Kumar Rastogi **

Abstract - Sports and games play a vital role in improving the physical fitness of each individual. To achieve this purpose the researcher selected three hundred subjects from three districts of Uttar Pradesh such as Agra, Lucknow and Mathura. The students were taken from UP board and CBSE syllabus of education in Uttar Pradesh during the year 2014-2015. The age of the students ranged from 15 to 17 years. All the students are taken from government, government aided and private schools of the three districts in Uttar Pradesh. Physical, physiological and psychological variables were selected for the study. Leg strength, speed, flexibility were taken as physical variable. Resting pulse rate, blood pressure and vital capacity were taken as physiological variable. Aggression, anxiety and achievement motivation were the psychological variables.The mean, standard deviation and F ratio were calculated by the Statistical Package for Social Sciences (SPSS) software. For statistical procedure the Analysis of Variance (ANOVA) was used to find out the significance difference among government, government aided and private schools of physical, physiological and psychological variables. Whenever the obtained F ratio was found to be significant Scheffe's test was applied as a Post Hoc Test to find out the paired mean differences. The level of significance was fixed at 0.05.

Keywords - Physical, physiological and psychological variables.

Introduction - Blood pressure is the pressure that being exerted by the blood on the walls of the arteries. There are two types of pressure. One is systolic which the high pressure is and the second one is diastolic pressure which is the lowest pressure. It is the measure of the force that the heart needs to push blood through the body. Vital capacity as a pulmonary measure often used to represent the capacity of the lungs. It is defined as the largest volume of air that can be exhaled after the deepest possible inhalation (Clarke, 1971). Aggressive behavior is quite visible in sport. To observe aggressive sport behavior, we could attend a basketball game and watch players "Fight" for rebounds, or we could watch runners throw elbows and for the position in the 1,500 meter race (Gill, 2000). Aggression affects performances and other sport behaviors either immediately or over a period. Aggression influences our thoughts and feelings about the sport experience. Anxiety is considered to be a normal reaction to a stressor. It may help someone to deal with a difficult situation by promoting them to cope with it. When anxiety becomes excessive, it may fall under the classification of an anxiety disorder. Motivation in education is calculating the interest of the students in that particular subject. Achievement motivation is an expectancy of finding satisfaction in mastering challenging & difficult performan ce.

Methodology

Selection of Subjects - In this study 300 (three hundred) subjects were selected from three districts of Uttar Pradesh such as Agra, Lucknow and Mathura.

Selection of Variables - The variables selected for this study were as follows:-

1- Physical Variable -
Leg Strength
Speed
Flexibility

2- Physiological Variable -
Resting Pulse Rate
Blood Pressure
Vital Capacity

3- Psychological Variable -
Aggression
Anxiety
Achievement Motivation

Statistical Technique -Analysis of Variance (ANOVA) was used to find out the significance difference.

Results Of The Study

See all Tables in last page

Discussion Of Findings

The findings of this study indicate that -

1. There was a significant difference in leg strength between government and private school students and government aided and private school students. But there was an insignificant difference between government and government aided school students on leg strength.
2. There was a significant difference in speed between government and private school students and government aided and private school students.

* Head and Assistant Professor (Physical Education) Shri J.J.T. University,Jhunjhunu (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Physical Education) Shri J.J.T. University,Jhunjhunu (Raj.) INDIA

3. There was an insignificant difference between government and government aided school students in maximum speed.
4. There was a significant difference in flexibility between government and private school students and government aided and private school students.
5. There was an insignificant difference between government and govt. aided school students in flexibility.
6. There was a significant difference in resting pulse rate between government and private school, government aided and private school students and government and government aided school students.
7. There was an insignificant difference in systolic blood pressure between government and private school, government aided and private school students and government and government aided school students.
8. There was an insignificant difference in diastolic blood pressure among government, government aided and private school students.
9. There was a significant difference in vital capacity between government and private school, government aided and private school students and government and government aided school students.
10. There was a significant difference in aggression between government and private school and government and government aided school students.
11. There was an insignificant difference in aggression between government aided and private school students.
12. There was a significant difference in anxiety between government and private school students, government aided and private school students.
13. There was a significant difference in achievement motivation level between government and private school students, government aided and private school students and government and government aided school students.

Conclusion

1. In this study, the investigator found out that there was a significant difference in leg strength between government school students and private school students and government aided and private school students in U.P.
2. There was an insignificant difference in leg strength between government and govt. aided school students.
3. The government and government aided school students having better leg strength than private school students.
4. There was a significant difference in maximum speed between government school students and private school students and govt. aided and private school students.
5. There was an insignificant difference in maximum speed between government and govt. aided school students.
6. The government and government aided school students having better speed than the private school students.
7. It may conclude that there was a significant difference in flexibility between government school students and private school students and government aided and private school students.
8. There was an insignificant difference in flexibility between government and govt. aided school students.
9. It is also concluded that the government and government aided school students having better flexibility rather than private school students.
10. There was a significant difference in resting pulse rate among all the three kinds of school students such as government, govt. aided, & private school in Ker ala.
11. The government school students having a better resting pulse rate than the other two kinds of school students.
12. The investigator found out that there was an insignificant difference in diastolic blood pressure among all the three kinds of school students such as govt., govt.aided, & private.
13. It is also concluded that there was an insignificant difference in systolic blood pressure among all the three kinds of school students such as government, government aided, and private schools in Uttar Pradesh.
14. It is concluded that there was a significant difference in vital capacity among all the three kinds of school students such as government, govt. aided, and private.
15. It is concluded that there was a significant difference in vital capacity among all the three kinds of school students such as government, govt. aided, and private.
16. The government school students having a better vital capacity than the other two kinds of school students.
17. There was a significant difference in psychological variable such an aggression between government and government aided and govt. and private school students.
18. It is also concluded that there was an insignificant difference in aggression between government aided and private school students.
19. The government aided and private school students having low level aggression when compare to the government school students.
20. The investigator found out that there was a significant difference in anxiety among all the three kinds of school students such as government, govt. aided, and private.
21. It is also concluded that there was a significant difference in achievement motivation among all the three kinds of school students such as government, government aided, and private school in Uttar Pradesh.
22. The private school students having a good achievement motivation when compared to other two kinds of school students.

References :-

1. Alif, V., Hultsch, D., & Meermann, D. (2007).Physical fitness in children with developmental coordination disorder, Res Q Exerc Sport,78 (5), p.438-450.
2. Abdullah, M.C., Elias, H Mahyuddin R.& Uli, J. (2009). Adjustments among first year students in a Malaysian v University.European Journal of Social Science.8 (3) pp.496-505.
3. Bhagirathi, S. E. (2011). Relationship of anxiety and achievement motivation to goal keeping among secondary, school level girl Hockey players.Journal of Exercise Science and physiotherapy, 4 (2), pp.115-118.
4. Bhupinder Sing.,Onkar Singh.,& Baljinder Sing Bal. (20 12).Comparative study of achievement motivation & loc- us of control of university level team & individual sports International journal of education & research, 2 (2), pp.27-30.
5. Carron,& K. S Spink. (1992). Team Building in an exercise setting.The sports psychologist, pp. 8-18.
6. Chandra Saha, G., & Mukhopadhyay, M. P. (2011). “A Comparative Study of Physical Fitness Reaction Ability and Kinesthetic Perception among National Level

Gymnasts Kho-Kho Players and Professional Chow-Dancers", Asian Journal of Physical Education and Computer Science, .5 (1) p.p.63-66

7. Daniel Puciato, W³adys³aw Mynarski., & Renata Szygu³a. (2011). Motor Development of Children and Adolescents Aged 8–16 Years in View of Their Somatic Build and Objective Quality of Life of Their Families. Journal of human kinetics.28, pp.45-53.

8. Delextrat, A., & Cohen, D. (2009)."Strength, power, speed, and agility of women basketball players according to playing position."Journal of Strength and conditioning Research, 23 (7), p.p1974-81.

Table No.01 - Analysis of Variance on Leg Strength of Government, Govt. Aided & Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
61.32	60.79	57.09	Between Groups	1062.13	2	531.06	20.09*
			Within Groups	7850.54	297	26.43	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.02 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Leg Strength

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	.53000	.767
	Private	4.23000*	.000
Government Aided	Government	-.53000	.767
	Private	3.70000*	.000
Private	Government	-4.23000*	.000
	Aided -	3.70000*	.000

*Significant at 0.05 level of significance.

Table No.03 - Analysis of Variance onSpeed of Government, Government Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
7.61	7.66	7.93	Between Groups	6.18	2	3.09	11.01*
			Within Groups	83.39	297	0.08	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.04 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Speed

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	-.06000	.726
	Private	-.33010*	.000
GovernmentAided	Government	.06000	.726
	Private	-.27010*	.002
Private	Government	.33010*	.000
	Aided	.27010*	.002

Table No.05 - Analysis of Variance onFlexibility of Government, Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
18.75	18.02	16.34	Between Groups	305.45	2	152.72	13.60*
			Within Groups	3335.15	297	1 1.23	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.06 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Flexibility

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	.73000	.307
	Private	2.41000*	.000
GovernmentAided	Government	-.73000	.307
	Private	1.68000*	.002
Private	Government	-2.41000*	.000
	Aided	-1.68000*	.002

Table No.07 - Analysis of Variance on Resting Pulse Rate of Govt., Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
72.43	73.50	74.50	Between Groups	214.33	2	107.16	13.36*
			Within Groups	2382.51	297	8.02	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.08 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Resting Pulse Rate

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	-1.07000*	.029
	Private	-2.07000*	.000
GovernmentAided	Government	1.07000*	.029
	Private	-1.00000*	.046
Private	Government	2.07000*	.000
	Aided	1.00000*	.046

Table No.09 - Analysis of Variance onSystolic Blood Pressure of Govt., Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
119.56	121.30	121.61	Between Groups	244.21	2	122.10	2.37
			Within Groups	15275.43	297	51.43	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.10 - Analysis of Variance onDiastolic Blood Pressure of Govt., Govt. Aided & Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
76.16	76.39	77.42	Between Groups	90.05	2	45.02	1.93
			Within Groups	6941.59	297	23.37	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.11 - Analysis of Variance onVital Capacityof Government, Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
3.36	3.25	3.11	Between Groups	3.23	2	1.62	179.37*
			Within Groups	2.67	297	0.009	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.12 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Vital Capacity

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	.11630*	.000
	Private	.25385*	.000
GovernmentAided	Government	-.11630*	.000
	Private	.13755*	.000
Private	Government	-.25385*	.000
	Aided	-.13755*	.000

Table No.13 - Analysis of Variance onAggression of Government, Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
18.66	16.63	16.64	Between Groups	273.38	2	136.69	15.82*
			Within Groups	2566.79	297	8.64	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.14 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Aggression

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	2.03000*	.000
	Private	2.02000*	.000
GovernmentAided	Government	-2.03000*	.000
	Private	-.01000	1.000
Private	Government	-2.02000*	.000
	Aided	.01000	1.000

Table No.15 - Analysis of Variance onAnxiety of Government, Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
20.44	17.95	22.64	Between Groups	1098.42	2	549.21	115.94*
			Within Groups	1406.88	297	4.74	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.16 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Anxiety

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	2.48543*	.000
	Private	-2.19870*	.000
GovernmentAided	Government	-2.48543*	.000
	Private	-4.68413*	.000
Private	Government	2.19870*	.000
	Aided	4.68413*	.000

Table No.17 - Analysis of Variance onAchievement Motivation of Govt., Govt. Aided and Private School Students

Mean			Source of Variance	Sum of Squares	DF	Mean Squares	F
Govt.	Govt. Aided	Private					
19.67	25.73	28.43	Between Groups	4025.04	2	2012.52	104.93*
			Within Groups	5696.33	297	19.18	

*Significant at 0.05 level of significance $_{(2, 297)\ (0.05)}$ = 3.03

Table No.18 - Scheffe's Post Hoc test for the difference between the mean on Anxiety

Groups	Groups	Mean Difference	Significant
Government	Aided	-6.06000*	.000
	Private	-8.76000*	.000
GovernmentAided	Government	6.06000*	.000
	Private	-2.70000*	.000
Private	Government	8.76000*	.000
	Aided	2.70000*	.000

✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽

विकास का सुख पर्यावरण

डॉ. पी. पी. पाण्डेय *

प्रस्तावना – दुनिया भर में मौसम का उथल –पुथल कहीं सुनामी तो कहीं कहर, कहीं सुखा कही वर्फबारी। वर्ष 2009 का पांचवा वर्ष सबसे गर्मसाल रहा, यह निष्कर्ष निकाला विश्व मौसम विज्ञान संगठन में गर्म हो रही धरती का सबसे अधिक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ रहा है। भारतीय सन्दर्भ में यह चेतावनी अत्यधिक महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्यों कि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधार शिला कृषि है। सतत् विकास द्वारा लोगों को जीवन में सुधार लाया जा सकता है जिससे आर्थिक पर्यावरण व सामाजिक उत्थान के सभी अवयव समावेशित हो, इस प्रकार हरित अर्थव्यवस्था को बढावा देने में सक्षम है। वर्तमान आर्थिक विकास माडल सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि मात्र पर ध्यान केन्द्रित करता है। आज की व्यवस्थाए यह सुनिश्चित नहीं करती कि पाल्यूसन फैलाने वाला पर्यावरण ह्रास की पूरी कीमत अदा करे, इस प्रकार हमारा बाजार/व्यवसाय प्रकृति द्वारा प्रदत्त सेवाओं को नजर अंदाज करता है। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि सब कुछ इंतजार कर सकता है लेकिन कृषि नहीं। कृषि एवं जलवायु परिवर्तन का भीषणतम प्रकोप सर्वहारा वर्ग पर पड़ रहा है जिसकी आय का 50 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा अनाज खरीदने पानी व स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से अपने को बचाने में खर्च होता है। ऐसा अनुमान है कि सूखे के कारण खरीफ की फसल में 7.5 प्रतिशत तक मुख्य फसल चावल एवं अन्य अनाज दलहन तिलहन में लगभग 19.7 प्रतिशत तक कमी की संभावना हो सकती है। भारत में खाद्य उत्पादनों में 5 प्रतिशत कमी की संभावना एवं जी0डी0पी0 में 01 प्रतिशत तक प्रभावित करेगी। इस मात्रा में खाद्यान्न उत्पादकता में कमी बहुत ही हानिकारक है क्यों कि विगत कई वर्षो से मानसून की स्थिति ठीक नही रही है। इस वर्ष मानसून के समय में बदलाव की वजह से 51 प्रतिशत तक कृषि भूमि प्रभावित हुई है। 10 प्रतिशत आर्थिक विकास की दर को तभी बनाए रखा जा सकता है जबकि देश में कृषि उत्पादन सही समय पर अच्छे तरीके से हो। स्थिति और भी गंभीर होने के संकेत है क्यों कि तापमान बढ़ने से रबी की फसल को नुकसान होने की आशंका व्यक्त की जा रही है। तापमान में एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि से भारत में 7 मिलियन टन गेहुँ के उत्पादन में कमी आयेगी जिससे 1.5 विलियन डालर का वित्तीय नुकसान होने की संभावना है। तापमान में बढ़ोत्तरी से देश के कई इलाकों में इसका असर देखने को मिल रहा है। एक अध्ययन के अनुसार यदि तापमान में एक से चार डिग्री सेल्सियस तक वृद्धि होती है तो भोज्य पदार्थो के उत्पादन में 30 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। जैसे भारत में चावल का वार्षिक उत्पादन 90 मिलियन टन है। तापमान बढ़ने से इससे 2020 तक 6.7 प्रतिशत, 2050 तक 15.1 प्रतिशत 2080 तक 31.1 प्रतिशत तथा आलू में 14 प्रतिशत तक कमी आने की संभावना से इंकार नही किया जा सकता है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव फसलो की पौष्टिकता को प्रभावित करेगा। खाद्यान्न कम वजन के होगे। फलस्वरूप प्रति हेक्टेयर उत्पादकता प्रभावित होगी। फल एवं सब्जियों के पेड़–पौधों में फल तो खिलेंगे किन्तु फल या तो कम आयेगे या कम वजन और पौष्टिकता वाले होगे, उनकी पौष्टिकता प्रभावित होगी। वासमती एवं दूसरे प्रकार के चावलों पर खुशबू प्रभावित होगी।

तापमान वृद्धि से समुद्र का जल स्तर बढ़ने से तटीय इलाकों में रहने वाले करोड़ो लोग पहले तो अपने जल स्त्रोंतो को क्षारीय हो जाने की समस्या झेलने को मजबूर होगे और फिर उनके खेतो और घरों को समुद्र निगल जायेगा। सामुद्रिक सतह के तापमान में 3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होने से बहुत से समुद्री जीव–जन्तु ऐसे स्थानों में चले जायेगे जहॉ पर वह पहले कभी नहीं रहे। हिमालय के ग्लेसियर प्रतिवर्ष 30 मीटर की दर से घटने लगेगे जिससे उत्तर भारत के राज्यों में खेती के लिए पानी का संकट पैदा हो जायेगा। आने वाले वर्षो में केवल इन दो बदलावों से करीब पाच करोड़ भारतीय प्रभावित होगे। इनके अधिसंख्यक ग्रामीण से शहरों की ओर पलायन बढेग़ा। एक तरफ जलवायु परिवर्तन का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से कृषि उत्पादन पर पड़ा है तो अप्रत्यक्ष प्रभाव आय की हानि और अनाजों की कीमतों खासतौर से दलहन फसलो पर पड़ा है। हरित अर्थव्यवस्था सही संस्थागत सुधारों और विनियामक के माध्यम से कर और व्यय के आधार पर आर्थिक नीतियों और उपायों के माध्यम से वर्णित समस्याओं में सुधार का राह बनाती है। हरित अर्थव्यवसाय के लिए एक लम्बा रास्ता तय करना होगा वही विश्व के कई देश '**राष्ट्रीय हरित विकास**' या कम कार्बन आधारित आर्थिक रणनीति अपनाकर नेतृत्व प्रदान कर रहे व विकास और उत्पादकता बढ़ाने के लिए स्थाई तरीको से सफलता की ओर अग्रसर है। ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन मामले में अभूतपूर्व रूप से बढ़ा है। दूसरी तरफ यह भी सज्ञान में आ रहा है कि हम जल, जमीन, जंगल और अन्य प्राकृतिक संसाधनों के इस्तेमाल में अपने ग्रह ही अधिकतम सीमा पार कर रहे है।

- ऐसे नीतियॉ व नियम हो जो कि आर्थिक एवं अन्य जोखिमों को चिन्हित कर सके।
- नये बाजार व उद्योग की स्थायी अवधि।
- नवाचार में जन सहभागिता–
- बदलाव के लिए जन–जागरूकता आवश्यक है।
- विकास के नये सूचक जो जी0डी0पी0को पूर्ण बनाये रखने के लिए–
- सरकारी निर्णयों में पारदर्शिता व भागीदारी आवश्यक है।
- राजनैतिक नेतृत्व– एक सतत एवं समावेशित हो
- हमें जीवन की ऐसी योजना विकसित करनी हागी जो टिकाउ साबित होगी।
- वाटर हार्वेस्टिंग, जल संरक्षण, नमी संरक्षण, भूजल दोहन की योजनाए लागू हो।
- खाद्य सुरक्षा के लिए बीज भंडारण के आधुनिक तकनीको का अध्ययन करना।

'चिड़िया कितनी उड़े आकाश, दाना है – .... धरती के पास'

* विभागाध्यक्ष एवं पूर्व डीन, शासकीय महाविद्यालय, अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.) भारत

Assesment Of Awerness About Pattern Making Software In Micro, Small And Medium Scale Apparel Manufacturing Units In Indore Region

Dr. Sonal Bhati *

Abstract - This paper is aimed at awareness regarding pattern making software in apparel manufacturing units in Indore region. The purpose of the study is to find out technical advancement knowledge related to the field of CAD/CAM, Their functions, advantages, working process and uses in apparel manufacturing units. For data collection three types of apparel industries were selected for sample, as per MSME guideline. Primary data were collected by interview schedule method, whereas for the secondary data, previous researches used as a source. After collection of data, chi-squire statistical analysis test were apply for research findings. The research were found in the results that there are significant difference of awareness about pattern making software in apparel manufacturing units in Indore region.
Key words - pattern making software, CAD/CAM, apparel manufacturing units.

Introduction - Pattern making software is a technically advanced tool of production section. During the production of apparel, sampling section prepares a sample as per the specification of tech pack, received from buyer. According to the written information in the tech pack, sampling section creates a sample pattern with the help of pattern making software. On the basis of this pattern, sampling section makes a pre approved sample for approval in the pre production meeting. After approval of the sample, pattern grading is done on the pattern making software. On the basis of grading requirement, more patterns are created. After grading the sample pattern, the design is put in to the marker making software; this software specifies the setup of the pattern in the actual fabric by using marker making planning. This software reduces the wastage of the raw material.

Working Sequence of CAD Section in Apparel Industry

Receiving of pattern parts
|
Taking the image of pattern in CPU by digitizer
|
Moderizing of all pattern parts by the software (Moderizer)
|
Aligning all size pattern parts in the marker by the software (Diamino)
|
Completing the marker
|
Taking approval from CAM section
|
Bringing out the marker through plotter.

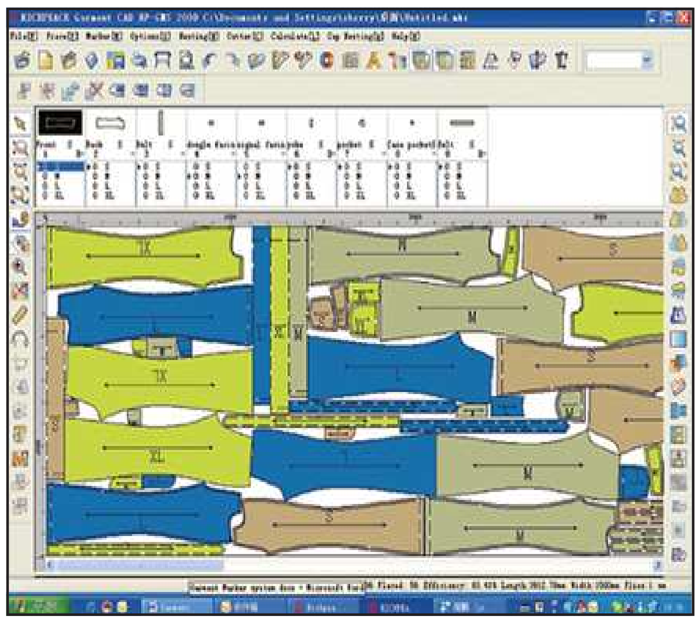

(Figure 1.1) Working Flow Chart of CAD Section in Apparel Industry, Rahat Khan, Dept. of Apparel Manufacturing, Atish Dipankar University of Science and Technology

Procedure of CAD Section: In CAD section at first the pattern put on the digitizer to take clear image of the pattern part inside the CPU. After making all required size patterns using the "Diamino" software pattern parts are aligned in the mini marker. Then it is sent to CPU of CAM section for approval and checking the length & width of marker and pattern parts alignment. After getting approval from CAM section then printer is used to print out the whole real marker then this marker as well as mini marker are provided to the CAM section for cutting the fabric.

* H.O.D. (Fashion Technology) Govt. Women's Polytechnic College, Indore (M.P.) INDIA

Review Of Literature - In the research report by Shuhel Ahmmed,25/5/2015, Apparel manufacturing management and technology has stated that some of the advantages of pattern making software in readymade garment manufacturing units are to save 60% of manpower and time, 30% of cardboards and the efficiency of this software is four times more than the traditional methods of the industry. W. Cheng and Z. L. Cheng, "Applications of CAD in the Modern Garment Industry",2012, has researched on the Computer Aided Design (CAD) technology, which is being utilized in the textile and clothing industry, this simplify the overall process and shorten the cycle from design to manufacturing. This greatly improves the manufacturing efficiency and also the garment quality. This paper presents the trend of 3D Garment CAD technology, analyzes the intelligent apparel CAD systems, including parametric design, Combination of artificial intelligence and CAD and the closely relationship between CAD and the Internet. In the study based on Anthropometry, Apparel Sizing and Design, a author, Y.A.Lee, researched on "Computer design and digital fit of clothing". discusses clothing design and fit based on the development of computer-related technology and its use for designing and improving the fit of clothing. The chapter first reviews the role and application of computer technologies in clothing design and fit assurance, such as computer-aided design (CAD), three-dimensional (3D) body scanning, virtual simulation and the use of sizing systems. The chapter then describes ways of integrating computer-related technologies with clothing design processes to resolve current design and/or fit issues and promote sustainability in the fashion industry for the future. The Comparison of the Manual and CAD Systems for Pattern Making, Grading and Marker Making Processes, Ziynet Ondogan, Cetin Erdogan, January / March 2006, in the study, the following results were obtained on the basis of the CAD and manual methods. In the preparation of main size patterns, the manual system seems to be superior due to the fact that the main size patterns are prepared in advance manually and then digitized. These methods were pre-ferred since the system operators do not have sufficient qualifications. The results obtained in the first stage are associated with the above mentioned application. Prasanta Sarkar Jun 15, 2012,Has stated that, There are a number of CAD software solution providers who have developed CAD systems. But only a few names are popular in the fashion industry. Widely used CAD systems in the apparel industry are listed below. AccuMark Pattern Design Software by Gerber Technology, CAD.Assyst by Human Solution Assyst AVM, Modaris by Lectra Systems, Optitex Pattern Design software by Optitex, TUKAcad by Tukateck Inc., Fashion Cad by Cad Cam Solutions Australia Pty. Ltd, SDS-ONE APEX3 from Shima Seiki, PAD System, GT CAD by Genuine Technology and Research Limited.

Methodology - This study is an empirical study. The objective of the study is to assess the awareness about pattern making software in micro, small and medium scale apparel manufacturing units in Indore region. the hypothesis of the study is, there will be no significance awareness counted of pattern making software in micro, small and medium scale apparel manufacturing units in Indore region. As per the registration under 1722(E) notification,10 micro,10 small and 10 medium scale industries were selected by purposively sampling technique. For collection of qualitative analysis, interview schedule were used as primary data. Some secondary information was gathered from Review of literature, research journals, by self practical approach to the industry and internet. Collected data were further calculated by chi-square analysis method. In the end result and discussion was presented on the basis of formulated hypothesis.

Result And Discussion - The American apparel manufacturing association report (1992), "impact of technology on apparel", claimed that the apparel industry in USA uses only 40% of the total potential of the state of art and technology, 50% of the US firms do not use the latest technology and remaining firms only achieve 80% utilization of the full potential of the technology deployed. The Knowledge and development of latest technology in the developing countries is substantially lower than the western world. To analyses or assess the knowledge of respondents related to patternmaking software, chi-value obtained 50.135, which is significant.

Table 1 (see in next page)

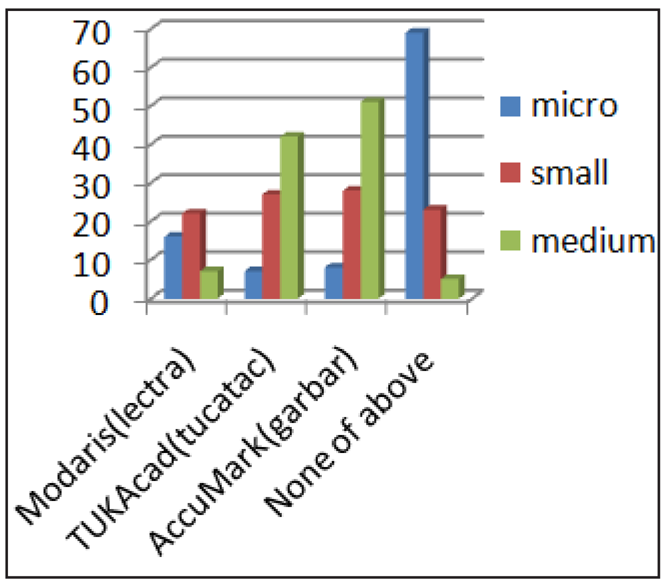

(Figure 1.2)

This graph shows that in the categories of maximum used brand by Indore ready made garment manufacturing units are Moderis by Lectra, Tukacad by tucatac and AccuMark by Garbar Company. To inquire about awareness, knowledge and at present use of Modaris(lectra) software in the industry were found 16% micro, 22%small and 7% medium scale industries have aware, knowledgeable and some of them are using this software for production. 7% micro, 27%small and 42% medium scale industries have aware, knowledgeable and some of them are using

Tucacad(tucatac) software for production. 8% micro, 28%small and 51% medium scale industries have aware, knowledgeable and some of them are using AccuMark(garbar) software for production. Whereas 69% micro, 23%small and 0% medium scale industries have no awareness and none of them are using this software for production.

Today's world is fashion world; every aspect of fashion is guarantee of success. To fulfilling the dreams of industries, designers work hard manually as well as on computers. Pattern making software is the tool of providing required quality in very short period of time to the product. There are significant difference found in between the industries in Indore region, regarding awareness, knowledge and uses of pattern making software. Hence the hypothesis is rejected.

As per research findings and some descriptive type answers during the interview, facts and figures were found that the price of industrial versions of pattern making software is very high. Hence, though the micro and small apparel manufacturing units have the awareness and knowledge regarding pattern making software but they can't afford said software because of its high price. Government agencies, institutions and software companies are promoting this technology by providing training facilities to the existing staff in the industry. But industries are not fully computer friendly, so they hesitate adopting this technology on primary level. To find the pattern making software trained human resources are difficult task for the apparel manufacturing industries in Indore region. Up-skilling is the only solution of this task as per research.

Conclusion - Due to the changing needs of the Indore readymade garment manufacturing industry, along with domestic and export oriented market, more flexibility within CAD systems is seen. Pattern making software distributers are giving more and more discounts ,Free service and support system ,free upgrades And today's versions have the ability to communicate in a variety of ways and to interface with a variety of systems. Pattern making software is an innovative approach to Garment manufacturing technology, Pattern & Marker making as well as Fashion simulation which enables Fabric & Garment producers to be dynamically adaptable to the fast and even changing needs of the fashion oriented 'Global Market 'which used is getting competitive.

References :-

1. (Figure 1.1) Working Flow Chart of CAD Section in Apparel Industry, Rahat Khan, Dept. of Apparel Manufacturing, Atish Dipankar University of Science and Technology.
2. Shuhel Ahmmed,25/5/2015, Apparel manufacturing management and technology in AMMT campus, SHANTO-MARIAM UNIVERSITY OF CREATIVE TECHNOLOGY Dhaka, Bangladesh. shuhel16@hotmail .com
3. W. Cheng and Z. L. Cheng, "Applications of CAD in the Modern Garment Industry", Applied Mechanics and Materials, Vols. 152-154, pp. 1505-1508, 2012.
4. Y.A.Lee, researched on "Computer design and digital fit of clothing". Woodhead Publishing Series in Textiles, 2014, Pages 305-319.
5. Ziynet Ondogan, Cetin Erdogan, "The Comparison of the Manual and CAD Systems for Pattern Making, Grading and Marker Making Processes", Ege University, Engineering Faculty, Textile Engineering Department, 35100 Bornova-Izmir, TURKEY, E-mail: ondoganz@ egenet.com.tr, E-mail: erdogan@textil.ege.edu.tr, FIBRES & TEXTILES in Eastern Europe January / March 2006, Vol. 14, No. 1 (55).
6. Prasanta Sarkar, editor and founder, Textile Engineer, Postgraduate in Fashion Technology from NIFT, New Delhi. CAD Systems for Apparel Industry, Jun 15, 2012 .

Table 1 : Assesment Of Awerness About Pattern Making Software

S.no	Particular	micro	small	medium	Chi-value	df	Asymp. sig
1.	Modaris(lectra)	16	22	7	50.135	2	0.000
2.	TUKAcad(tucatac)	7	27	42			significant
3.	AccuMark(garbar)	8	28	51			
4.	None of above	69	23	0			

****

सरकारों का मूल्यांकन- क्या हों आधार

डॉ. आदित्य कुमार सिंह*

प्रस्तावना – किसी भी लोकतांत्रिक देश में यह बहुत आवश्यक होता है कि सरकार के द्वारा किए गए कार्यों का निष्पक्ष ढंग से मूल्यांकन हो, मूल्यांकन करने के आधार क्या हों? मूल्यांकन में किन बिंदुओं को शामिल किया जाए, सरकार के मूल्यांकन का आधार क्या उनके घोषणा पत्र को बनाया जाए, या उन चुनावी मुद्दों को बनाया जाए जो चुनाव लड़ते समय पार्टी के द्वारा जनता से किए गए थे।यदि चुनाव घोषणा पत्र को मूल्यांकन का आधार माना जाए तो 80% चुनावी मुद्दे गरीबी, बेरोजगारी, किसान, मजदूर और कर्मचारियों की समस्याओं को लेकर होते हैं और दूसरा सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या भारत जैसे देश में सरकारों के मूल्यांकन का आधार चुनावी मुद्दे और चुनावी घोषणा पत्र में किए गए वादे होते हैं या फिर जाति, धर्म, भाषा, संप्रदाय जैसे सामाजिक विभेद जिनके चलते स्वस्थ मूल्यांकन की कल्पना करना बेईमानी होगा। चुनाव के समय तमाम पत्र–पत्रिकाओं में तत्कालीन सरकार के 5 वर्ष के कार्यों का लेखा–जोखा प्रकाशित किया जाता है टीवी चौनल्स पर सरकार के कार्यों का मूल्यांकन करने के लिए तमाम विशेषज्ञ आमंत्रित किए जाते हैं वैसे भारत में सर्वे सर्वेक्षणों पर फ्लॉप साबित होने का लंबा इतिहास रहा है। उदाहरण के लिए 2004 में किसी ने उम्मीद नहीं जताई थी कि कांग्रेस की सरकार बन रही है लेकिन ऐसा हुआ।[1]इसके बावजूद इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि सर्वे सर्वेक्षणों के कारण बने माहौल से ही सरकारें बनती और बिगड़ती हैं यह सर्वे सर्वेक्षण किन आधारों पर सरकार का मूल्यांकन करते हैं यह निश्चित नहीं है लेकिन यह निश्चित जरूर है यह सर्वे सर्वेक्षण मतदान व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

सरकारों का मूल्यांकन करने के लिए केवल आंतरिक स्तर ही नहीं होता बल्कि उनके मूल्यांकन का एक बाह्यस्तर भी होता है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सरकार का प्रदर्शन कैसा रहा है, अंतरराष्ट्रीय जगत में सरकार ने किस प्रकार की साख बनाई है सामान्य परिस्थितियों में प्राय: अंतरराष्ट्रीय संबंध काफी हद तक ऑटोमोड में होते हैं अर्थात सरकार बदलने के साथ दूसरे देशों के साथ संबंधों में कोई खास परिवर्तन नहीं आता।[2] वैश्विक भूख सूचकांक (जीएचआई)की रिपोर्ट में भारत को 'खतरनाक स्तर' वाले देश की श्रेणी में रखा गया है भारत अभी भी पाकिस्तान और बांग्लादेश से पिछड़ रहा है और 65 में स्थान पर बना हुआ है। जी एच आई के अनुसार भारत में 40 फ़ीसदी से ज्यादा बच्चे औसतन कम वजन के हैं। जबकि वास्तविकता यह है आजादी के बाद से लेकर आज तक सरकारों ने गरीबी मिटाने और कुपोषण को खत्म करने के लिए विभिन्न तरह की योजनाओं का क्रियान्वयन किया लेकिन गरीबी और कुपोषण को मापने की पद्धति गलत है।[3] जिन सूचकांकों पर किसी देश की रेटिंग तय होती है अगर उनके मापने की पद्धति गलत हो तो हम सही नतीजे तक कैसे पहुंच सकते है सरकारों का मूल्यांकन कोई एकतरफा प्रक्रिया नहीं है किसके लिए बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना होगा कहा जाता है कि लोकतंत्र में यदि मजबूत विपक्ष नहीं है तो सरकार निरंकुश हो जाती है सरकार को ठीक ढंग से काम कराने के लिए मजबूत विपक्ष का होना अति आवश्यक है यहां एक बात और गौरतलब है कि भारत में योजनाओं का निर्माण जितना जनकल्याण को ध्यान में रखकर किया जाता है उससे कहीं ज्यादावोट को ध्यान में रखकर किया जाता है उदाहरण के लिए आजाद भारत की किसी भी सरकार की यह पहली परियोजना है जिसके खत्म होने की कोई तारीख नहीं है इसे पूरा ना होने के लिए कोई जवाबदेही नहीं होगा इसमें हुई गलतियों का कोई भी जवाब मांगना संभव नहीं होगा। जिसकी घोषणा प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने 7 मई 2010 को लोकसभा में कि जब पक्ष और विपक्ष के सभी दलों और सांसदों ने एक राय से 2011 की जनसंख्या में जाति को जोड़ने की मांग की तो प्रधानमंत्री ने कहा कि सरकार सदन की भावना का ख्याल रखेगी और कैबिनेट इस बारे में जल्द ही निर्णय लेगी।[4] इस तरह की जनगणना से जाति विशेष की संख्या का अनुमान हो जाएगा उनके लिए जन कल्याण की योजनाएं बने या ना बने यह महत्वपूर्ण नहीं है लेकिन संख्या ज्ञात होने से वोट की राजनीति को किस प्रकार अंजाम दिया जाए यह आसान हो जाएगा।

वैज्ञानिक तकनीक किसी भी देश को शिखर पर पहुंचा सकती है इसलिए सरकारों का प्रयास रहता है कि वह तकनीकी रूप से मजबूत और आत्मनिर्भर हों। यह वह क्षेत्र है सरकारों के मूल्यांकन का यह वह क्षेत्र है जो वास्तविक रुप से दिखाई तो नहीं पड़ता लेकिन देश की सुरक्षा और व्यवसायिक प्रगति इस पर पूरी तरह से निर्भर होती है तकनीक में यदि नई सोच लेकर काम किया जाए तो तरक्की के जबरदस्त मौके मिल सकते हैं।[5] कि हम उस तकनीक का प्रयोगकहां और कैसेकर रहे हैं भारत में फ्री डाटा ने हमारे नव युवकों को आभासी दुनिया से जोड़कर सही किया या गलत इसका मूल्यांकन सटीक तरीके से नहीं हो सकता लेकिन इतना तय है कि भारतीय युवा पीढ़ी अब अपने आप में जी रही है तो क्या इसके लिए शिक्षा जिम्मेदार है हमारे शिक्षण संस्थान हमारी युवा पीढ़ी को सही दिशा में ले जा रहे हैं या नहीं इसका भी मूल्यांकन होना चाहिए कुछ प्रगतिशील स्कूलों ने स्कूल में शराब पीने के चलन को रोकने के लिए नए तरीके अपनाने पर जोर दिया है पब्लिक हेल्थ फाउंडेशन ऑफ इंडिया ने मई 2012 में एक **अध्ययन** में पाया की बॉलीवुड की 59 फिल्मों में शराब पीने के दृश्य का असर करीब 4000 किशोरों पर हुआ। [6]

भारत विविधताओं वाला देश है यहां अनेक प्रकार की भाषाएं हैं, बोली है, धर्म है, संप्रदाय हैं, जातियां हैं, न जाने कितने रीति रिवाज है, परंपराएं हैं, खानपान है, पहनावा है। यह विविधता ही दुनिया में हमारी पहचान है इसीलिए सरकारों का मूल्यांकन करते समय हमें विविधता की एकता के सूत्र को समझना

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (राजनीति शास्त्र) स्वामी शुकदेवानंद महाविद्यालय, शाहजहांपुर (उ.प्र.) भारत

होगा वह सरकार एक बेहतर सरकार होगी जिसमें सब को एक साथ लेकर चलने की ताकत हो भारत में विकास की प्रक्रिया अलग-अलग जगह पर अलग-अलग तरह से बड़े शहरों और राजधानियों में रहने वाले लोग जन सुविधाओं को और तकनीक को पुराना समझने लगते हैं गांव में रहने वाले लोगों का एक बड़ा तबका तब तक उस तकनीक और सुविधा से वाकिफ भी नहीं होता इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि नीतियां सबके लिए एक जैसी बनती है उनका क्रियान्वयन भी समान रूप से होता है लेकिन फायदा मिलते मिलते भेदभाव का भाव आ जाता है। भारत में उच्च शिक्षा प्राप्त करके भारतीय युवा विदेश में नौकरी करना चाहते हैं अमेरिकी जनगणना बताती है कि अमेरिका में करीब 30 करोड़ की आबादी में लगभग 4 करोड़ अप्रवासी हैं उनमें से करीब 28 लाख भारतीय मूल के हैं यह संख्या कुल आबादी के 1% से कम है लेकिन यह तथ्य तब चौंकाने वाला लगता है जब पता चलता है कि इस छोटी-सी आबादी की उपलब्धियां इससे कई गुना ज्यादा है। चर्चित पत्रिका फोर्ब्स का एक हालिया लेख बताता है कि आबादी का 1% से भी कम होने के बावजूद भारतीय अमेरिका के कुल इंजीनियरों का 3% है सॉफ्टवेयर इंजीनियरों का वे 7% हैऔरडॉक्टर्स का 8% है।[7] ऐसा नहीं है कि यह सब प्रतिभा अमेरिकी देन है बल्कि यह भारत से प्रतिभा पलायन है जिस प्रतिभा का मूल्यांकन भारतीय संदर्भ में होना चाहिए था भारतीय सरकारों के उपेक्षा के चलते आज भी यह प्रतिभा पलायन बदस्तूर जारी है।

भारत में सरकारों के मूल्यांकन का आधार सामान्य और विशेषीकृत दो प्रकार का है जहां सामान्य मूल्यांकन देश की गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, अज्ञानता, भ्रष्टाचार, असंतुलित विकास एक सामान्य जीवन स्तर जीने लायक सुविधाएं मुहैया कराने से है एक सफल सरकार इन समस्याओं को दूर करने के प्रयास करती है और यदि यह सब किसी देश में यह समस्या नहीं हैऔर वहां सामाजिक समर्थन, स्वस्थ जीवन प्रत्याशा, सामाजिक स्वतंत्रता, उदारता और भ्रष्टाचार की अनुपस्थिति है इन्हीं सब आधारों पर विश्व प्रसन्नता रिपोर्ट की रैंकिंग तैयार की जाती है इसलिए किसी भी सरकार की के कार्यों का मूल्यांकन उस देश में रहने वाली जनता की खुशी के स्तर से तय होना चाहिए सरकार के विशेषीकृत मूल्यांकन में मुख्य रूप से अर्थव्यवस्था और उस देश की मुद्रा स्थिति को देखा जाता है कि सरकार ने अर्थव्यवस्था को और मुद्रा अवमूल्यन को कितना बचा कर रखा है रुपया कमजोर होने का मतलब आयात का महंगा होना और और आयात महंगा होने का तलब है कीमतों में बढ़ोत्तरी, और इसका सबसे ज्यादा असर ईंधन की कीमतों पर पड़ता है।[8] भारत जैसे देश जहां इसका भुगतान डॉलर से होता है ऐसी स्थिति में डीजल और पेट्रोल की कीमतें बढ़ेंगी, माल ढुलाई बढ़ेगी, जिसका सीधा मतलब होता है महंगाई, सब्जियों और फलों की कीमतों में वृद्धि, और इस सब का सीधा मतलब होता है आम आदमी से जनता से।

शिक्षा, स्वास्थ्य, समृद्धि किसी भी सरकार के लिए ऐसे मानदंड है जिन को पूरा करने के लिए सरकार हर तरह के प्रयास करती है किसी भी लोक कल्याणकारी राज्य में स्वास्थ्य शिक्षा और समृद्धि ऐसे महत्वपूर्ण विषय हैं जिस पर सरकार का संपूर्ण भविष्य निर्भर करता है यह भारत जैसे देश के लिए विकास एक चुनौती है जहां हम भाषा,धर्म, जाति, संप्रदाय जैसी मानसिकता को ध्यान में रखकर सरकारों का चयन करते हैं और फिर सरकारों को दोष देते हैं कि सरकार इन ठीक से काम नहीं कर रही यदि हम अपने मूल्यांकन का स्तर और तरीका सही कर ले तो आने वाला भविष्य उज्जवल होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रईस अहमद लाली , नरेंद्र मोदी अगले प्रधानमंत्री? शुक्रवार 21 से 27 मार्च 2014, पृष्ठ- 17
2. बृजेश सिंह, प्रधानमंत्री मोदी, तहलका, 28 फरवरी 2014,पृष्ठ-19
3. उत्सापटनायक, भूख और कुपोषण का आंकड़ा गड़बड़ है, शुक्रवार, 31 अक्टूबर 2013, पृष्ठ - 21
4. संतोष कुमार, कभी न खत्म होने वाली गिनती, इंडिया टुडे, 18 जुलाई 2012, पृष्ठ 40
5. अदिति पै, तकनीक से दिखाते करामात, इंडिया टुडे, 18 जुलाई 2012, पृष्ठ-79
6. दमयंतीदत्ता, छलकते पैमाने में डूबते युवा, इंडिया टुडे, 4 जुलाई 2012, पृष्ठ -15
7. विकास बहुगुणा, विश्व शक्ति के देसी खिवैया, तहलका, 28 फरवरी 2014, पृष्ठ -39
8. हिमांशु शेखर, अभी और है हिचकोले,तहलका, 31 अक्टूबर 2013, पृष्ठ- 31

****

Psychological Bullying, An Age Group, Upbringing and Societal Study

Dr. Sarita Mathur*

Introduction - Bullying has been conceptualised as a distinct type of aggression characterised by a multifaceted form of mistreatment seen mostly at schools and at work. The most widely employed definition of bullying emphasises persistent and repeated negative actions intended to intimidate or hurt a weaker person. Bullying includes acts of deliberate physical aggression (e.g. knocks, punches and kicks), verbal aggression (e.g. name calling and threats), relational aggression (e.g. social isolation and rumour spreading) and cyber aggression (e.g. text messaging and e-mailing hurtful messages or pictures). The negative interaction must occur relatively often (roughly on a weekly basis) and over a prolonged period of time (often 6 months). Given the seriousness of bullying, prevention of childhood and adolescent bullying has long been considered an important social and clinical problem.

Indian society, with multifarious classes, castes, socio economic conditions, diversities of cultures and languages, etc, can create situations of supremacy, power to dominate or defeat the weaker.

Several risk factors were identified. Being obese, low self-assessed position in school class, overprotective parents, low self-esteem, low sense of coherence and low socioeconomic status were risk factors for being bullied at school. Being overweight, smoking, low self-assessed position in class, low sense of coherence and low socioeconomic status were risk factors for being bullied at work.

The prevalence of bullying: The prevalence of bullying among adolescents across schools, colleges and institutes is as significant as 32 to 38%. The results indicate that too many pupils suffer from being victims of aggressive acts intended to hurt them.

The consequences of being bullied: The consequences of childhood bullying victimization are serious. Both cross-sectional and longitudinal studies have found that being a victim of bullying is associated with long-term psychological problems, including loneliness, general and social anxiety, diminished self-esteem, increased depressive symptoms and more frequent use of pain medication. Surprisingly, the studies reveal that victims as well as bullies goes through similar symptoms of mild to severe psychological states affects [4–6]. The victim of bullying is an important risk factor for suicidal behaviour in adolescence and early adulthood.

Not surprisingly, many antibullying programmes and interventions have been implemented in an attempt to reduce the prevalence of being bullied. Unfortunately, the success of intervention programmes to prevent or mitigate bullying in childhood and adolescence has been limited. A synthesis of the existing research on antibullying programmes concluded that the majority of programmes yielded no significant reductions in self-reported bullying, and therefore only cautious recommendations could be made.

Theoretical references: Given the limited efficacy of bullying intervention programmes, the purpose of the present study was to more closely investigate multiple risk factors for bullying. Identifying risk factors can provide a basis for designing intervention programmes to prevent or reduce bullying among children and adolescents.

Studies on bullying at schools have identified several risk factors such as gender, age and deviate appearance of the victim; personal characteristics such as low self-esteem and lack of adequate coping skills; social status among peers and socioeconomic status in society. However, bullying is a complex phenomenon, and there is no single explanation for why some children are bullied by others. Furthermore, bullying is conceptualised as a distinct type of aggressive behaviour, and psychological theories of aggression assert that the occurrence of aggression can seldom be reduced to one single factor but is more likely to be influenced by several factors simultaneously. Aggressions, like other forms of complex behaviour, stem from the interplay of a wide range of personal, situational and social factors. Therefore, aggressive behaviour such as bullying occurs as a result of interactions between the persons involved and factors in the social context that may either facilitate or mitigate the risk of such behaviour. Although a detailed discussion of the causes of aggression is beyond the scope of this paper, it is important to underline the complexity of the task of identifying risk factors that are relevant in understanding bullying at schools and workplaces.

* Lecturer (Psychology) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

Several risk factors for being bullying at schools have been identified (for a review see, but most studies identifying risk factors for bullying have included only a limited number of risk factors in their statistical models. All the risk variables may be correlated with each other, but some may be more important than others in predicting bullying. Therefore, the present study will simultaneously examine several different risk factors in young people related to their individual and personal levels, social levels and socioeconomic levels in order to identify the most important risk factors for bullying at schools and workplaces. This knowledge may be important in order to prevent bullying.

Preventing bullying may be good for the bullied as well as for the bullies in term of the negative psychological outcomes for both parties.

Risk factors for bullying: Potential risk factors for bullying at the individual level include gender, age, physical appearance and health behaviour. Regarding gender, the results are inconsistent, and no substantial gender differences have been observed among adolescents in terms of the frequency of being bullied either at school or at work. With respect to age, results from both cross-sectional and longitudinal studies on bullying at schools show that the prevalence of bullying tends to fall with age during adolescence.

When teens are asked why some adolescents are bullied, a common response is the deviant appearance of the victim. Overweight and obesity have been found to be associated with an increased risk of being bullied in both cross-sectional studies and cohort studies. Also, bullying has been found to be related to underweight in adolescents, and even short pupils are at greater risk of being bullied. Apparently, any deviance from the physical norm may increase the risk of being bullied. Being a smoker also has been found to increase the risk of being bullied, but the results of studies on the relation between smoking and bullying are inconsistent.

At the personal level, self-esteem has been found to be associated with bullying. Self-esteem refers to the global and evaluative view of oneself, and low self-esteem is associated with a variety of psychological dysfunctions, whereas high self-esteem is associated with social adeptness, leadership, higher levels of adjustment and good social skills. Therefore, because of poor social skills and low levels of adjustment, it seems plausible that low self-esteem may be a risk factor for being bullying. It is, however, unclear whether low self-esteem is a risk factor for bullying or a consequence of being bullied. Thus, it is unclear whether low self-esteem is a risk factor for or a consequence of being bullied. Furthermore, most studies are cross-sectional in design, making causal interpretations difficult. In this study, self-esteem was conceptualised as a risk factor, because it is considered to be a general internal presentation of social acceptance and rejection and a measure of social functioning. Thus, low self-esteem could be a risk factor for being a target of bullying.

Studies have demonstrated associations between an increased risk of being bullied and conflicts with parents and being from a family characterised by a punitive, conflicting and nonsupportive parenting style. Additionally, victims' homes have been found to be characterised by a higher level of criticism and fewer rulesand having authoritative parents who rarely value their children and tend not to give them the opportunity to speak up for themselves. Overly protective parenting style could be a risk factor for bullying as well because parents who are overly protective of their children and do not let them handle conflicts with peers by themselves may contribute to the causation of bullying. However, the causal direction is unclear because of the cross-sectional design of these studies, and protective parenting could also be an outcome of bullying.

One consequence of inadequate parenting style or poor family functioning may be children's insufficient coping strategies. For instance, a study found a clear relation between perceived parenting practices and coping in offspring. These researchers found that parenting characterised by warmth and acceptance involved both a high degree of parental monitoring but also parental demands for age-appropriate behaviour. Thus, the child may learn that events are to some degree controllable. The result of the study was that the children of parents using an accepting and warm parenting style more often used problem-focused coping strategies than did children who reported that their parents used other rearing styles. Therefore, one of the consequences of inadequate parenting style or poor family functioning may be inadequate coping skills and lack of social skills needed in order to resolve conflicts in the peer group or with work colleagues due to lack of experience with conflict resolution in the family. Based on this background, we sought to examine whether poor family functioning and overprotective parents predict bullying later at school or work.

The associations between bullying and coping have been examined in several studies, and the results show that victims of bullying lack adaptive coping strategies and more often use avoidant coping or similar strategies that might be considered similar. For instance, one study found that victims of bullying rarely asked for help or talked about what happened, but instead remained passive. Another study found a positive association between emotionally oriented coping strategies and victimisation. Thus, it seems relevant to study the association between coping and bullying.

Regarding coping strategies, it is important to include the victims' appraisal of the bullying situation because appraisals, according to the transactional theory of stress, determine the coping response, and thus victims' perceptions of control become important for the implementation of coping strategies.

Finally, the socioeconomic status in society is also related to bullying, and research has revealed that exposure to bullying is patterned by socioeconomic status because adolescents from lower socioeconomic status families are at higher risk of being bullied.

One explanation could be that inequalities in society may lead to more widespread approval of behaviours associated with social status differences such as bullying. Furthermore, growing up in a low social status family might be associated with more stress in the form of unemployment, divorce, illness and moving, which might affect children's adaptive skills, again possibly increasing the risk of being bullied.

Results: Analysis shows the prevalence of being bullied at age 14–15 at school and age 17–18 at school and at work. At age 17–18, it appeared that bullying was more prevalent in the school context than at the adolescents' workplaces. A very low number of individuals were exposed to weekly bullying behaviour; less than 10 % of those reporting any bullying were bullied weekly or more often.

The strongest association observed for bullying at work was gender; boys had a more than twofold higher risk of experiencing bullying in the adjusted analysis. Having experienced bullying at school at age 14–15 raised the risk of being bullied at work, and this was also seen for bullying at secondary school.Parental relations also predict experiencing bullying: having more troublesome relationships with parents characterised by conflict and lack of communication raised the risk of bullying at work. The effects of Body Mass Index, daily smoking and measures of social position in the peer group were all diluted after mutually adjusted for each other and for the experience of bullying at age 14–15. There was still, however, a slightly elevated risk for obese adolescents to experience bullying at work, even if the estimate was somewhat fragile.

Conclusion: The results show that the most important risk factors for being bullied at age 17–18, whether at work or in school, were being a boy and previously being bullied. This result stresses the importance of early prevention of bullying at schools. In addition, having overprotective parents was a risk factor for being bullied at school. Being overweight, smoking, experiencing low family function and having low socioeconomic status were additional risk factors for being bullied at work.

In summary, the increased risk for being bullied seems to be embedded first and foremost in individual and personal characteristics, to a lesser degree in the social context, but most importantly, in the experience of previously being bullied.

Reference:-

1. Cook CR, Williams KR, Guerra NG, Kim TE, Sadek S. Predictors of bullying and victimization in childhood and adolescence: A meta-analytic investigation. SchPsychol Q. 2010;25(2):65–83.

****

Studies on the Flowering Phenology of *Indigoferalinifolia* (L.f.) Retz at Sanganer Aerodrome Site of Jaipur District of Rajasthan

Ashok Nagar* Ashwani Kumar Verma** Laxmi Meena***

Abstract - The legumes are important sources of food and fodder. Phenology of a plant is an important branch of science revealing the germination, vegetative growth, flowering and seed maturation phases. The present investigation was done at Sanganer aerodrome area of Jaipur city of Rajasthan state. The presence and phenology of plant *Indigoferalinifolia* was studied taking into consideration of various phonological parameters at different stages of its life cycle. The results of the study shown that *Indigoferalinifolia* completes its life cycle in about five months (Second week of July to second week of November). All the mature seeds remain dormant till the next rainy season and do not germinate in the winter even if rain occurs.
Keywords- Phenophases, flowering, germination, growth.

Introduction - The legumes form one of the largest families of flowering plants making third in terms of worldwide occurrence with about 600 genera and 18000 species. Our knowledge of the beneficial association of rhizobia with leguminous plants in utilising atmospheric Nitrogen is very recent when compared to the very long period that leguminous crops have been cultured and valued for food and soil enrichment. Phenology is the calendar events in the life history of the plant. These events also known as phenophases, are depicted with the help of phenograms. These phenophases are usually well coordinated with environmental conditions and strongly influenced by seasonal fluctuations. Thus, desert plants exhibit phenologies that are closely related to moisture availability and temperature (Nilson, 1981). They have accepted favourable conditions by a rapid response. Long periods of dormancy and inactivity in unfavourable conditions. The responses are characteristics far each species under a given regime. Thus, phenlogical developments may be considered as a representation of the physiological and morphological adaptations by the species to utilise resources and grow at a particular place and time (Kemp and Gardetto, 1983). Differences in these adaptations in different species provide strategies by which a species could be adapted for growth at different times. Within the habitat, there by partitioning the limited resources available their environment. During recent years, there has been greater emphasis on the phenological studies and extensive literature and technology have been accumulated (Leith, 1970, 74, Leith and Radfond 1971).

Methodology and Study Area: The he study was carried out at Jaipur. (26° 48N Lat and 75° 48E long 436m, above msl) which lies in the semi arid part of western India. The study site is located inside the Sanganer aerodrome (secondary runway), about 10 km. far from the University and lies in the southern part of the main city. The study area was fragmented into three sites viz. site 1, site 2 and site 3 on the basis of nature of vegetation and diversity of plants. The phenological events taken into consideration are germination, vegetative growth, flowering and seed maturation. Seed dispersal and senescence of the individual observations were made by visiting the sites every day, and at least 10 plants were used for recording observations.

Results and Discussions: The phenological events such as germination, vegetative growth, flowering and seed maturation were observed and noted. Seed dispersal and senescence of the individual plants were observed per day. Some observations were taken from experimentally grown plants as well. From the results, ecological life cycles of the individuals were outlined and the phenograms were constructed (Fig. 1).

The seeds of *Indigoferalinifolia* germinate in the last week of June, after two-three showers. Few seedlings emerge and first leaf appears after 2-3 days of seedling emergence and then second leaf makes its appearance within next two days. In about forty days the plant attains full vegetative growth flowering starts immediately after the vegetative growth i.e. first week of August and it continues upto first week of November, although flowering is also seen in a few plants in the first week of December. Meanwhile the process of fruit formation begins in September and fruits attain maturity by

* Deptt. of Botany, Raj Rishi Govt. College, Alwar (Raj.)
** Deptt. of Botany, Raj Rishi Govt. College, Alwar (Raj.)
*** Deptt. of Botany, Raj Rishi Govt. College, Alwar (Raj.)

the last week of October. Seed dispersal takes place as soon as the fruits attain maturity and the process is affected by the dehiscence of fruit from both the sutures, the characteristic of leguminoseae, by this time the process of senescence is started and the individuals die by the second week of November.

The importance of the phenological observations was emphasized by Leith (1970) and detailed phenological observations have been made in India at Varanasi (Singh 1967), Kurukshetra (Singh and Yadav 1974) and Jaipur (Bhardwaj (1976), Sharma (1977), Pradhan 1981, Khan and Bhardwaj (1986), Kushwaha 1990, Pullariah T. (1995), and Bansal (1981). These observations provide more information about the ecological behaviour of an organism than several expensive and time consuming experiments therefore, the phenological observations of wild legumes *I. linifolia* have also been taken in detail. *I. linifolia* is an annual plant that germinate in June flower in August and completes its life cycles in about five months. Infact life cycle of plants is highly affected by the atmospheric temperature and occurrence of rains.

From the results, ecological life cycles of the individuals were outlined and the phenograms were constructed (Fig. 1). Thus, Indigoferalinifolia completes its life cycle in about five months (Second week of July to second week of November). All the mature seeds remain dormant till the next rainy season and do not germinate in the winter even if rain occurs.

Fig. 1.Phenograms of Indigoferalinifolia showing different phenophases (see below)

References:-

1. Nilson, E.T. (1981). Productivity and nutrient cycling in the early postburnchhaparal species lotus scoparius. In: Proceedings on the symposium on Dynamics and Management of Mediterranean Type Ecosystems, United Stated Department of Agriculture, San Diego, California, pp.673.
2. Kemp, P.R. and P.E. Gardetto. (1983). Photosynthetic pathway types of evergreen rosette plants on the Chihuan desert. Oecologia. 55: 149-156.
3. Leith, H. (1970). Phenology in productivity studies, p.29-41. In: Reichle, D.E. (ed.) Analysis of temperate forest Ecosystem. Springer, Berlin.
4. Leith, H. (1974). Phenology and seasonality modelling. Ecological Studies, Vol. 8. Springer Verlag, New York.
5. Leith, H. and J.S. Radford. (1971). Phenology, resouuce management and syngraphic computer mapping. Bioscience. 21: 62-69.
6. Singh, J.S. (1967). Seasonal variation in composition, plant biomass and net community production in the grassland at Varanasi, p.631-654. In R. Misra and B. Gopal (eds.). Proceedings of the Symposium on Recent Advances in Tropical Ecology. Varanasi.
7. Singh, J.S. and P.S. Yadav. (1974). Seasonal variation in composition, plant biomass and net primary productivity of a tropical grasland at Kurukshetra, India. Ecological Monographs. 4: 351-376.
8. Bhardwaj, N. (1976). Studies of Tephrosia species with special reference to their population dynamics. Ph.D. Thesis, University of Rajasthan, Jaipur (India).
9. Pradhan, V.N. (1981). Study of stand structure, net primary production and nitrogen dynamics of a semi-arid grassland near Jaipur, (Rajasthan), Ph.D. Thesis, University of Rajasthan, Jaipur (India).
10. Khan, T.I., N. Bhardwaj and K.P. Sharma (1986). Phenological studies of wild legumes. Acta Ecol. 8(2): 54-58.
11. Kushwaha, S.P.S. (1990). Ecological studies of Phragmiteskarka (Retz.) Trin. exSteud. With emphasis on primary production and nutrient dynamics. Ph.D. Thesis, University of Rajasthan, Jaipur, (India).
12. Pullariah T. (1995). Embryology of Indigofera (Fabaceae) Taiwania 40: 391-402.
13. Bansal R.P. and D and Sen (1981). Differential germination in seats of the Indian arid zone. Phytotaxonomica, 16 (2) 317-330.

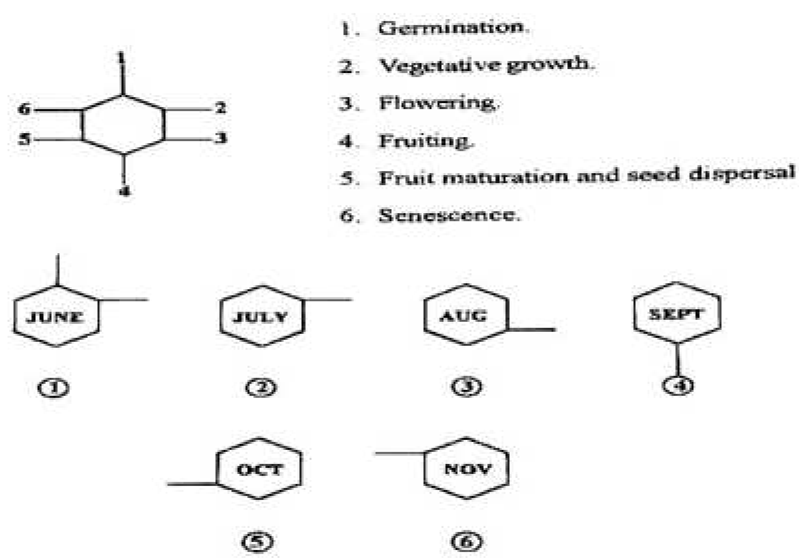

Fig. 1 : Phenograms of *Indigofera linifolia* showing different phenophases

एक तत्व की ही प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन

डॉ. हजारी लाल मौर्य*

प्रस्तावना – महाकवि जयशंकर प्रसाद ने ये पक्तियाँ 'कामायनी' के प्रारम्भ में ही लिखी हैं। कामायनी के कथानक में ये जल के प्रवाह को देखकर लिखी गई हैं परन्तु गहराई से इन पक्तियों के विभिन्न आयामों पर विचार करें तो दर्शन के कई प्रश्न एक साथ उठते हैं। क्या हैं वे प्रश्न आइये देखें।

पहला प्रश्न है चेतना क्या है? दूसरा, क्या चेतना जड़ के सापेक्ष है? तीसरा जड़ या चेतन कहना सिर्फ भाषा का छल है या एक पूर्ण सत्य? चौथा, दोनों में प्रधानताकेवल एक तत्व की ही है? और पाँचवा, क्या उस तत्व (भौतिकता) को 'एक' कहना उचित है? छायावादी रहस्यवाद की श्रेष्ठता इन पंक्तियों में एक सम्पूर्णता के साथ दिखाई देती है। इस सोच की वैज्ञानिकता ही हिन्दू, बौद्ध, जैन, इस्लाम या ईसाइयत् के विभिन्न मतों में प्रचलित रसस्यवाद और रहस्यवादी अवधारणाओं से पृथक करती है।

मानक हिन्दी कोश में लिखा है 'चेतना शब्द चित+युच–अन–टाप् से मिलकर बना है जिसका अर्थ है मन की वह शक्ति या वृत्ति जिससे जीव या प्राणी को आन्तरिक (अनुभूतियों, भावो, विचारों आदि) और बाह्य (घटनाओं) तत्वों का या बातों का अनुभव या भान होता है। क्रिया के रूप में चेतना का अर्थ होता है ऐसी स्थिति में होना कि बुरे परिणामों या बातों से बचकर अच्छी बातों की ओर प्रवृत्त हो सके। हिन्दी साहित्यकोश में लिखा है 'चेतन मानस की प्रमुख विशेषता चेतना है अर्थात् वस्तुओं, विषयों एवं व्यवहारों का ज्ञान। चेतना की प्रमुख विशेषताएँ हैं निरन्तर परिवर्तनशील अथवा प्रवाह, इस प्रवाह के साथ–साथ विभिन्न अवस्थाओं में एक अविच्छिन्न एकता और सहचर्य। चेतना का प्रभाव हमारे अनुभव वैचित्र्य से प्रभावित होता है और चेतना की अविच्छिन्न एकता हमारे व्यक्तिगत तादात्म्य के अनुभव से।' इन दोनों परिभाषाओं में आत्मगत रूप पर ही विचार किया गया है अर्थात् यस्व' के सापेक्ष शेष विश्व से तादात्म्य।

'चेतना' के धारक 'स्व' का जीवधारी होना आवश्यक मानते हुए हिन्दी विश्व कोश में कहा गया है– 'चेतना जीवधारियों में रहने वाला वह तत्व है जो उन्हें निर्जीव पदार्थों से भिन्न बनाता है। दूसरे शब्दों में हम उसे मनुष्य की जीवन क्रियाओं को चलाने वाला तत्व कह सकते हैं। चेतना स्वयं को और अपने आसपास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।' चेतन को जड़ से पृथक करते हुए विज्ञान भी मानती है कि चेतना वह अनुभूति है जो मस्तिष्क में पहुँचने वाले अभिगामी आवेगों से उत्पन्न होती है।

इन परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि (क) चेतना मानव अथवा जीवधारियों में उपस्थित तत्व या बोध है। (ख) चेतना की कोई पूर्व पीठिका या शर्त नहीं मानी गई। (ग) जीवधारियों के अलावा अन्य पिण्डों में चेतना की उपस्थिति नहीं मानी गई। (घ) इसे मस्तिष्क की क्रिया माना गया। (ङ) चेतना और बुद्धि में विशेष अन्तर नहीं माना ।गया।

ये बिन्दु चेतना का विस्तार एवं सीमाएँ हैं। जीवधारियों में ंयह चेतना अपने को मृत्यु से बचाकर सुखी करने के लिए, अपना पोषण और अपनी हित साधना अर्थात् स्वार्थ के लिए होती है। अमीबा से लेकर (अब तो वायरस) लेकर मानव तक अपनी चेतना के द्वारा इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति करते दिखाई देते है। इस चेतना के उपकरण हैं आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा। इन ज्ञानेन्द्रियों का विकास शनै–शनै हुआ। जीवों के इन स्वार्थों का फलक कभी छोटा तो कभी विस्तृत हो जाता है। भयंकर अकाल में माँ द्वारा अपने बच्चों का भक्षण नितान्त 'निजी' स्वार्थ है तो शहीदों की कुर्बानी राष्ट्रीय स्वार्थ है। व्यक्ति से परिवार, मोहल्ला, ग्राम, क्षेत्र, जिला, प्रान्त, राष्ट्र, महाद्वीप या विश्व स्तर तक इन यस्वार्थो' का फलक विस्तृत हो सकता है। इसी प्रकार की स्वार्थपरता को रामचन्द्र शुक्ल धर्म की ऊँची नीची भावभूमियाँ कहते हैं। परन्तु प्रायः ही देखने में आता है कि निर्जीव वस्तुएँ भी अपने अस्तित्व की रक्षा में संघर्ष करती है। नदी के बहाव में पड़ा पत्थर अपने को टूटने से बचाता है। गिरते झरनों के आस–पास पानी की बूँदें पानी पर ही लुढकते हुए अपना अस्तित्व बचाने का प्रयास करती है। मृत शरीर अपने को सड़ा कर विखेर देता है। भौतिक पिण्ड अपनी नियमित गतियाँ करते है। चन्द्रमा, पृथ्वी, सूर्य और ब्रह्माण्ड की इस गति में क्या किसी चेतना का वास नहीं है?

इन सवालों पर विचार करने से लगता है कि इन सब क्रियाओं के पीछे किसी 'अन्य शक्ति' का हाथ है और जब तक मानव ने अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभूत के अलावा किसी अन्य भौतिक सत्ता को नहीं स्वीकारा अर्थात् अपनी ज्ञानेन्द्रियों की लघुतम और उच्चतम सीमाओं का ज्ञान जब तक नहीं हुआ, यह माना जाता रहा कि इस चेतना की उपस्थिति हमारे अन्दर किसी अन्य 'शक्ति' के अंश के रूप में है। प्राचीन दार्शनिक अधिकांशत चेतना के बजाय 'आत्मा' की संकल्पना का उपयोग करते थे। इस प्रकार का दर्शन जो चेतना को भौतिकी से स्वतन्त्र मानना था 'प्रत्यय वाद' कहलाया। प्रत्ययवादियों से जो भी 'जिज्ञासाएँ' की जायें वे उनका उत्तर विचित्र विचित्र संज्ञायुक्त प्रत्ययों की स्थापना करके और रहस्यमय ढंग से समझाकर देते हैं। हमारे यहाँ ईश्वर आत्मा, ब्रह्म, परमात्मा, माया, योगमाया, ब्रह्मा विष्णु महेश, कुण्डलिनी, त्रिकुटी, ओउम आदि कई अवधारणाएँ इसी प्रत्ययवाद पर टिकी हैं। जिनकी प्रस्थापनाओं और अनुयायियों के संघ बनाने में भारत की महत्वपूर्ण श्रम शक्ति न केवल भूत में नष्ट हुई बल्कि वर्तमान में भी सतत जारी है।

दूसरा दर्शन चेतना को भौतिकी पर ही आधारित मानता था। कार्यकारण सम्बन्धों को देखते हुए प्रकृति में भौतिकी को प्रमुखता देने वाले

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, कोटपूतली, जिला जयपुर (राज.) भारत

दार्शनिक भौतिकवादी कहलाये। चार्वाक और बुद्ध आदि ऐसे प्राथमिक वैज्ञानिक थे। लेकिन आश्चर्यपूर्ण लगने वाले कार्यों, घटनाओं एवं व्याधातों के रहस्य न सुलझा पाने से वे लोग चेतना की पूर्ण भौतिकी विकसित करने में असफल हुए।

आधुनिक विज्ञान के विकास के साथ ज्यों-ज्यों ज्ञानेन्द्रियों की भौतिक सीमा ज्ञात होती गई, मसलन गुरूत्व बल, चुम्बकत्व एवं विद्युत का ज्ञान करने की कोई इन्द्री हमारे पास नहीं है, कान 20 आवृत्ति प्रति सैकिण्ड से कम ओर 20000 आवृत्ति से अधिक की ध्वनि नहीं सुन सकते, आँख केवल कुछ प्रकाशों की उपस्थिति में ही देख सकती है, चेतना की भौतिकवादी संकल्पना भी विकसित होती गई। परन्तु चेतना की भौतिकी का विकास अभी भी शैशवावस्था में ही है। कार्लमार्क्स ने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के रूप में इसकी घोषणा की जिसे बाद में आइस्टीन, डार्विन आदि की खोजों ने पुष्ट किया। दृष्टव्य है कि मार्क्स चेतना को जीवन का पर्याय नहीं मानता बल्कि उसे 'स्वबोध' का पर्याय मानता है। जैसे जीवन (जीवों) की अपनी विशिष्टताएँ है पदार्थो की भी अपनी विशिष्टताएँ है। जैसे कृत्रिम रूप से 'जीवन' तैयार नहीं किया जा सका है वैसे ही सोना प्लेटिनम आदि भी नहीं बनाये जा सके है।

भौतिकवाद में परावर्तन केउच्चतम रूप में चेतना- वसीली क्रोपीविन नाम के विद्वान ने लिखा है कि 'चेतना के सार को समझने की कुंजी लेनिन की इस प्रस्थापना में निहित है कि सारे भूतद्रव्य में परावर्तन का एक ऐसा गुण होता है जो सारतः संवेदन का सजातीय है।' दैनिक जीवन में हम देखते हैं कि वस्तुओं और जीवों में जगत की हलचलों को (व्याधातों को) परावर्तित करने की क्षमता होती है। यानी बाह्य प्रभावों केकारण परिवर्तित होकर कुछ विशेष ढंगों से उनको 'अंकित' कर सकते है। एक वस्तु पर दूसरी द्वारा डाले गये तथा पहली द्वारा कुछ समय तक धारित यह परिवर्तन या यप्रभाव' परावर्तन कहलाता है। समस्त भूत द्रव्य में यह परावर्तन अन्तर्जात होता है, भिन्न-भिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करता है इन्हें भौतिक रासायनिक या जैविक उत्परिवर्तन कह सकते है।

अजैय जगत में परावर्तन विशुद्ध रूप से यान्त्रिक होता है। मसलन, हथौड़े से पत्थर पर चोट किये जाने से हथौड़ा पुनः उठल सकता है या पत्थर टूट जो सकता है या ध्वनि, विद्युत अथवा अन्य तरंगों में ऊर्जा का रूपान्तरण हो जा सकता है।

जीवन की 'उत्पत्ति' के बाद परावर्तन के अधिक जटिल रूपों का विकास होने लगा। वास्तव में चेतना की विरचना के जैविक पूर्वाधारों में पहला था पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति तथा मनुष्य के आविर्भाव तक उसका विकास और दूसरा जीवित अंगियों की परावर्तन क्षमता का विकास। विज्ञान का दावा है कि जीवन जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं के जरिये अजैव भूत द्रव्य से उत्पन्न हुआ। सरलतम जैविक यौगिक हाइड्रोकार्बन आद्य सागर की दशाओं में बने। बाद में वे जटिलीकरण तथा गुणात्मक परिवर्तनों से प्रोटीनों तथा न्यूक्लिक अम्लों में विकसित हो गये। एक डेढ़ अरब वर्ष पूर्व यह उच्च आणविक बायोपोलीमर तथा कथित ऐसे सहपुंजों में विकसित हो गये जो उपापचयन तथा स्वपुनरुत्पादन करने में सक्षम होते थे। इस प्रकार धीरे-धीरे जटिल संरचना वाली कोशिका बन गई। इस प्रकार भूत द्रव्य की चेतना से ही जैविक विकास सम्भव हुआ। उस भूत द्रव्य की चेतना को गुरूत्वाकर्षण, चुम्बकीय आकर्षण-विकर्षण, प्रकाश ग्राह्यता-परावर्तनता, विद्युत चालकता-ग्राह्यता, रासायनिक संयोजन आदि कई रूपों में व्याख्यायित करने पर भी भौतिकविद अभी किसी पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सके। लेकिन अब उस सबके भौतिक होने पर कोई संशय नहीं रहा। शरीर रचना विज्ञान के विशेषज्ञ इस प्रश्न पर विचार करते हैं कि मनुष्य के हाथ ने मस्तिष्क का निर्माण किया या मस्तिष्क ने मनुष्य के हाथ का? मनुष्य का हाथ सब जीवों में सबसे विकसित उपांग है। यह भौतिक आवश्यकताओं द्वारा आन्तरिक परावर्तन का श्रेष्ठ उदाहरण है।

परावर्तन आन्तरिक और बाह्य दो प्रकार का होता है। आन्तरिक से आशय है वंशानुक्रम में स्थानान्तरण, जैसे पूँछ की आवश्यकता घट जाने से पूंछ का लुप्त हो जाना तथा अन्य जैविक उत्परिवर्तन तथा बाह्य परावर्तन से आशय है सामाजिक संरचना के प्रति अनुकूलन, जैसे भाषा, प्रत्ययों, दर्शन आदि की समझ।

चेतना का विकास- आधुनिक मानवीय चेतना किसी एक कोशिकीय जीव की तुलना में अति विकसित है। पृथ्वी पर करीब पचास लाख वर्ष पूर्व मनुष्य की उत्पत्ति के अनुकूल जलवायवीय तथा अन्य दशाओं के कारण महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये। जंगलों का भयंकर विनाश हुआ। मनुष्य को पेड़ों से उतर कर धरती पर विचरण हेतु बाध्य होना पड़ा। इसमें या तो वे हिंसक पशुओं का शिकार हो गये या अपनी रक्षा में लकड़ी पत्थर का उपयोग करने लगे। औजारों की एक श्रृंखला बन गई। मेहनत की अधिक आवश्यकता ने मनुष्य के दोनों हाथ चलने के कार्य से स्वतन्त्र करा लिए। भोजन को मुँह तक पहुँचाने की जिम्मेदारी हाथों के सम्हाल लेने से जबड़े का आकार धटकर मस्तिष्क (ललाट) बाहर की ओर उभर आया। यह श्रम ही था जिसने शरीर और मस्तिष्क को, सम्पूर्ण परावर्तक उपकरण को विशिष्ट मानवीय गुण प्रदान किये। श्रम के इन विशिष्ट गुणों का विकास समाज के बीच ही हुआ। सामुहिक श्रम की आवश्यकता (शिकार, कृषि आदि में) ने भाषा की आवश्यकता उत्पन्न की जिससे वस्तुओं तथा घटनाओं को संज्ञायित किया जाने लगा। जो शब्द वस्तुओं और घटनाओं का द्योतन करने के लिए इस्तेमाल किये जाते थे बाद में वे उन घटनाओं और वस्तुओं के स्थानापन्न हो गये और मनुष्य उनके प्रति वैसी ही अनुक्रिया करते जैसी उनके द्वारा द्योवित वस्तुओं और घटनाओं के प्रति।

शब्दों की सहायता से वास्तविकता का परावर्तन खास तौर से परावर्तन का मानवीय रूप है। जीवजन्तु अपने आसपास की वास्तविकता को उसी वास्तविकता के संकेतों द्वारा परावर्तित करते हैं। यही एक मात्र विशेषता है जो मनुष्य को अन्य, प्राणियों से विशिष्ट बनाती है। एक नवजात शिशु प्राथमिक संकेत प्रणाली तो समझता है लेकिन द्वितीयक संकेत प्रणाली अर्थात् शब्दों द्वारा अनुक्रिया करने की प्रणाली, को शनै-शनै उपार्जित करता है। यदि बालक समाज के सम्पर्क में नही रहे तो इस मानवीय चेतना का विकास पूर्णतः असम्भव है। भेड़ियों द्वारा पालित मानव शिशु इसका उदाहरण हैं। यही नहीं अन्य भाषाओं और लिपियों के मामले में हम सब भी इसका उदाहरण है।

मनुष्य की प्राथमिक संकेत प्रणाली में चित्र प्रतिरूप आदि को शामिल किया जाता है और द्वितीय संकेत प्रणाली में शब्द और लिपि है। इसका परावर्तन आन्तरिक नहीं बल्कि बाह्य होता है अर्थात् भाषायी लक्षण मनुष्य के वंशकूटों (जीनों) में मूल भावनाओं यथा आहार, निद्रा, भय मैथुन, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष आदि की तरह प्रकट नहीं होते। बाह्य परावर्तन का अर्थ है हिक मनुष्य पहले वस्तु देखता है फिर उसका सम्बन्ध शब्द से जोड़ता है फिर शब्द सुनता तो वस्तु की वस्तुगतता मस्तिष्क में उभरती है। भौतिक वस्तुओं का नामकरण एक सरल विधि है लेकिन अमूर्त अवधारणाएँ व्यक्ति अपनी कल्पना या दूसरों की परिभाषाओं या सामाजिक व्यवहार से ही समझता

है। धर्म, जाति, नैतिकता, भोतिकता, चेतना, आत्मा, जड़ता, ज्ञान, बुद्धि आदि ऐसे ही शब्द हैं।

महाकवि प्रसाद ने अपनी पंक्तियों में पाठक को ही यह छूट दी कि 'कहो उसे जड़ या चेतन'। वास्तविक घटनाओं की तरह चेतना की सत्ता की भी अपनी ही विधियाँ तथा रूप हैं जिनके बाहर उसका कोई अस्तित्व नहीं होता। भाषा चेतना की सत्ता की ऐसी ही एक विधि है अर्थात् सम्पूर्ण मानवीय सामाजिक चेतना भाषा रूपी शरीर में ही मूर्तमान है। इसका अर्थ यह भी है कि भाषा की उत्पत्ति ठीक तब हुई जब चेतना की उत्पत्ति हुई। भाषा और चेतना का एक दूसरे से पृथक, अस्तित्व नहीं हो सकता है इस बात का सुस्पष्ट प्रमाण यह तथ्य है कि जो बच्चे किसी कारण से भाषा नहीं सीख सके उनमें चेतना (सामाजिक) नहीं होती है।

भाषा संज्ञादान का जो कार्य करती है द्वितीय संकेत प्रणाली के संदर्भ में यह अधूरा होता है। वस्तु अच्छी और बुरी दोनों, उपयोग सापेक्ष हो सकती हैं परन्तु विश्व की किसी भी भाषा में ऐसे शब्द नहीं हैं जो अच्छे-बुरे, छोटे-बड़े, मोटे-पतले आदि विरोधी भावों की एक साथ अभिव्यक्ति दे सके। इसीलिए मार्क्स में भौतिकवाद को वस्तुगत रूप में ग्रहण करते समय इसे द्वन्द्वात्मक कहा। इसीलिए प्रसाद ने जड़ ओर चेतन दोनों विशेषण प्रदान कर दिये।

कहने का आशय यह है कि हम जीवन में घटनाओं और वस्तुओं को उनके वस्तुगत रूप में ग्रहण न करके आत्मगत रूप में ग्रहण करते हैं। उदाहरणार्थ आत्मगत रूप में संखिया यदि रोगमुक्त करे तो दवा, औरमार दे तो जहर कहा जायेगा लेकिन अपने वस्तुगत रूप में वह क्या है इस पर हम विचार नहीं करते। आधुनिक विज्ञान ने हमें वस्तुगत अध्ययन करना सिखाया अवश्य है परन्तु कई बार देखा गया कि विज्ञान के 'प्रवक्ता' ही आत्मगत 'अध्ययन' को प्रचारित करते पाये जाते हैं।

इस सब विवेचन के परिप्रेक्ष्य में हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि एक चेतना समस्त भौतिक जगत (जैव-अजैव) में हो रही घटनाओं या व्याधातों के प्रति प्रभावित पिण्ड या जीव द्वारा परावर्तित अनुक्रियात्मक संवेदन है। अजैव जगत में यह अपेक्षाकृत सरल है तथा जैव जगत में अत्यन्त कठिन। दूसरा, जब जड़ और चेतन में सम्वेदन के स्तर पर विभेद नहीं किया जा सकता तो वह एक दूसरे के सापेक्ष नहीं है बल्कि, तीसरा, कहना चाहिये कि जड़ या चेतन का भेद भाषा की ऐसी मजबूरी है जिसमें द्वन्द्वात्मक शब्दावली है ही नहीं अत: अभिव्यक्ति एकांगी या एकपक्षीय ही होती है। दोनों में प्रधान तत्व वही एक होते हुए भी आत्मगत रूप में, यस्वबोध' के दृष्टिकोण से, दोनों का अनुक्रियात्मक सम्वेदन अलग-अलग है। दोनों पर पड़ने वाला भौतिक प्रभाव अलग-अलग होने से उनका स्वरूप अलग-अलग तरह से परिवर्तित होता है अत: व्याधानों का परावर्तन भी अलग है। एक ही सीढत्री से हम ऊपर और नीचे जा सकते है किन्तु कथन हमेशा एक पक्षीय होता है जहाँ कथनकर्ता खड़ा है।

अन्त में मैं इतना कहना चाहूँगा कि हिन्दू समाज में रहते हुए हम इस प्रकार संस्कारित हो गये हैं कि रहस्यवादी अवधारणाओं से पीछा छुड़ाने में कई सौ वर्षो का महत्वपूर्ण श्रम गँवाना पड़ेगा। प्रकृति अजेय है यह वस्तुगत सत्य है परन्तु मानव आत्मगत सत्य के अहंकारवंश इसे स्वीकार न करके, पता नहीं कब तक, प्रकृति को जीतने की कोशिश करेगा। विज्ञान एक समस्या को सुलझाता है तो उसके 'सह उत्पादन' स्वरूप दसियों नई समस्या खड़ी कर लेता है। इस प्रक्रियागत सच्चाई से हमने ये निष्कर्ष निकाले हैं कि हमारी अन्तिम शरणगाह रहस्यवाद ही है। नतीजतन अंधेरे जंगल में राह तलाशने के चक्कर में घूम फिर कर पुन:पुन: वहीं आकर ठहर जाते रहेंगें और पता नहीं कब तक, इस तथ्य को जानने वाले हमारे रहस्यवादी 'गुरू' हमारा शारीरिक, मानसिक व आर्थिक शोषण करते रहेंगें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानक हिन्दी कोश, रामचन्द्र वर्मा, भाग-2
2. हिन्दी साहित्य कोश, धीरेन्द्र वर्मा, भाग-1
3. वही, वसीली क्रो पीविन
4. वही
5. कामायनी, जयशंकर, प्रसाद

****

मालतीमाधव में प्रणय-चित्रण

डॉ. कौशल्या शर्मा *

प्रस्तावना - भवभूति के वीररसप्रधान महावीरचरित एवं करुणरस प्रधान उत्तररामचरित नाटक में प्रणय का यथावसर चित्रण हुआ है, तथापि प्रणय को पूर्णतया विकसित करने का अवसर कवि को श्रृंगारप्रधान मालतीमाधव में मिला है। मालती माधव 10 अंकों का प्रकरण है, जिसमें पद्मावती के राजमन्त्री भूरिवसु की कन्या मालती तथा विदर्भ के राजमन्त्री देवरात के पुत्र माधव के प्रणय-विवाह की काल्पनिक कथा है। इसमें प्रेम के दोनों पक्षों संयोग एवं वियोग का विस्तारपूर्वक वर्णय किया है। प्रेम अकस्मात् प्रादुर्भूत होता है वह किसी बाह्य कारण की अपेक्षा नहीं करता और न ही उसमें किसी प्रकार का स्वार्थ निहित रहता है।

प्रेम की उत्पत्ति युगपत् अथवा पूर्वापर दोनों प्रकार से ही हो सकती है। मालतीमाधव में पूर्वापर प्रेम का उदाहरण प्राप्त होता है। मालती के हृदय में माधव के दर्शन से और मदयान्तिका के हृदय में मकरन्द के गुण-श्रवण से प्रेम उत्पन्न होता है, उनके इस प्रेम से माधव तथा मकरन्द अनभिज्ञ हैं। भवभूति के अनुसार प्रेम का प्रादुर्भाव प्रथम दर्शन में ही हो जाा है। माधव मदनोद्यान में मालती के प्रथम दर्शन से उसकी ओर आकृष्ट हो गया था और मकरन्द शार्दूल से मदयन्तिका के प्राणों की रक्षा करते समय उसके प्रथम दर्शन से ही उसमें आसक्त हो गया था।

प्रेम प्रादुर्भूत होने पर माधव का ध्यान मालती की विभिन्न श्रृंगार-चेष्टाओं पर जाने लगा। उसके कटाक्ष माधव के हृदय में दृढ़ता से प्रविष्ट हो गये -

'यान्त्या मुहुर्वलितकन्धरमाननं त -
दावृत्तवृन्तषपत्रनिभं वहन्त्या।
दिग्धोऽमृतेन च विषेण च पक्ष्मलाक्ष्या
गाढं निखात इव मे हृदये कटाक्षः।'[1]

प्रेम की प्रारम्भिक अवस्था में माधव की मनःस्थिति का मोहक चित्रण किया है - 'निश्चयात्मक ज्ञान को लड्.घन करने वाला, समस्त वाक्यों का अगोचर, पुनर्जन्म में और इस जन्म में भी जो अनुभव मार्ग में नहीं प्राप्त हुआ है, विवेक के विनाश से बढ़े हुए महामोह से विशम कोई अनिर्वाच्य विकार अन्तःकरण को जड़ बनाता है और ताप को भी उत्पन्न करता है।[2] प्रेम की तीव्रतम अवस्था का चित्रण करते समय भी भवभूति ने कहीं लोक-व्यवहार एवं मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया है। माधव से वियुक्त मालती प्राणों का परित्याग करने हेतु तत्पर है, किन्तु कुल-प्रतिष्ठा पर कलंक नहीं लगाना चाहती है।[3]

भवभूति विशुद्ध प्रेम में विश्वास रखते हैं। उनके प्रणयी पात्र अपने प्रेम में दृढ़ हैं, उनका प्रेम शुद्ध, स्वाभाविक और निर्मल है। उसमें मदान्धता या काम-लिप्सा नहीं है। महाकवि ने इस प्रेम का विकास दोनों अवस्थाओं में किया है - विवाह के पूर्व और विवाह के पश्चात्। दोनों ही अवस्थाओं, विषेषतः विवाह के पश्चात् कृत प्रणय-चित्रण अत्यन्त गम्भीर है। वह केवल ऊहात्मक नहीं है, अपितु उसका आधार अन्तस्तल की अनुभूति है।

मालती माधव में प्रेम-कथा की उन्मुक्त भावना के साथ प्रकृति की व्यापक अवतारणा हुई है। गाढ उत्कण्ठा वाली प्रौढ केरलदेशीय स्त्रियों के कपोलों के सदृश निर्मल पाण्डुवर्ण वाले पत्रों से युक्त, नागवल्ली (पान) के लता समूहों से वेष्टित, फलवाले और झुके हुए सुपारी के वृक्षों से युक्त, कक्कोली फल खाने वाले सुन्दर पक्षियों के शब्द से सम्बद्ध और वायु से संचलित बीजपूरों के वेष्टन युक्त उद्यान प्रदेश की भूमि के भाग तुम दोनों की अतिशय प्रीति को उत्पन्न करेंगे।[4] भवभूति की दृष्टि में सुसमृद्ध उद्यान प्रणय में वृद्धि करता है, किन्तु वही प्राकृतिक सौन्दर्य प्रेमीजनों की वियुक्तावस्था में विरह वेदना को तीव्र कर देता है।

मकरन्द इसी विश्वास के साथ कि प्रकृति के सौन्दर्य का निरीक्षण करने से वियोगी माधव की वेदना कम हो जायेगी, प्रकृति के सुखदायी रूप की ओर अपने मित्र का ध्यान आकर्शित करता है,[5] किन्तु प्रकृति का आनन्दमय रूप भी वियोग की दशा में दुःखद प्रतीत होता है। माधव कहता है - 'नये तापिच्छ वृक्षों के सदृश नीलवर्ण वाले अनेक और उन्नत होने वाले मेघों से युक्त ठण्डी हवा से प्रक्षिप्त नये जलकणों वाली इन्द्रधनु से सम्पन्न, मद से अव्यक्त मधुर शब्द से युक्त मयूरों के कोलाहलों से शब्दायमान दिषाओं को इस समय मैं कैसे देख सकूंगा ?'[6] वह वायु को उपालम्भ देता है कि 'आप जलपूर्ण मेघों को भ्रमण कराइए, चातकों को सन्तुष्ट कराइए, केका शब्द करने में उत्कण्ठित मयूरों को नचाइये और केतकी वृक्षों को प्रौढ़ बनाइए। परन्तु हे निर्दय ! मूर्च्छा पाकर दुःख का निवारण करते हुए विरही जन में पुनः चैतन्य रूप रोग को उत्पन्न कर, आप किस फल की इच्छा करते हैं।[7]

विरह वेदना की असह्यता के कारण जीवन के प्रति निरपेक्ष माधव शीघ्र मृत्यु प्राप्त करने के लिये जिन विविध साधनों का प्रयोग करता है, उनकी कल्पना सुन्दर, एवं उपयुक्त है - 'मुकुलों से सम्पन्न, शब्द करते हुये कोकिलों से युक्त कोमल आम के पेड़ में मृत्यु के लिये दृष्टिपात करता है, बकुलपुष्प के सौरभ से सुवासित वायु बहने के मार्ग में मृत्यु के लिये अपने शरीर को प्रेरित करता है, आर्द्र कमलिनी पत्रमात्र को उत्तरीय के तौर पर धारण करता हुआ (माधव) म्लान शरीर वाला होकर दावानल की प्रीति से मृत्यु के लिये चन्द्रकिरणों को बारम्बार आश्रय लेता है।[8]

प्रेमीजनों के परस्पर सौन्दर्य विषयक विचार भी उत्कृष्टतम होते हैं।

* व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा. राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

मालती की रमणीयता, सौन्दर्य-सृजन के उपकरण एवं स्रष्टा के विषय में माधव की कल्पना द्रष्टव्य है -

'सा रामणीयकनिधेरधिदेवता वा
सौन्दर्यसारसमुदायनिकेतनं वा।
तस्या: सखे नियतमिन्दुसुधामृणाल-
ज्योत्स्नादि कारणमभून्मदनश्च वेधा:।।'[9]

उपर्युक्त पद्य के पूर्वार्ध से उसकी रमणीयता एवं सौन्दर्य का अनुमान किया जा सकता है। अन्तिम दो पंक्तियों में कवि ने उन उपकरणों की (जिनसे मालती के अंग-प्रत्यंग का निर्माण किया गया था) तथा उसके निर्माता की कल्पना की है। चन्द्र से मुख का, सुधा से अधर का, मृणाल से भुजाओं का और ज्योत्सना से लावण्य का निर्माण किया गया। ऐसे रूप से स्रष्टा कामदेव ही हो सकते हैं, ब्रह्मा नहीं।

मालती के कपोल की कान्ति के वर्णन[10] एवं मालती के आलिंगन के प्रभाव के वर्णन में भवभूति की कल्पना समृद्धि का अनुमान किया जा सकता है।

प्रणयवृद्धि में सखा-सखी के हास परिहास की ओर भी भवभूति का पूरा ध्यान है। मालती माधव के प्रथम अंक में सखियाँ मदनोद्यान में माधव की ओर अंगुली से निर्देश कर मालती से कहती हैं - 'भर्तृदारिके ! दिष्ट्या वर्धामहे, यदत्रैव कोऽपि कस्या अपि तिष्ठति।' द्वितीय अंक में लवंगिका को मालती कहती है कि 'सखि! कहीं ऐसा तो नहीं कि जिन्हें तुम उनकी श्रृंगार-चेष्टाएँ समझ रही हो, वे उनके स्वाभाविक विलास हों ?' तब लवंगिका मुस्कराकर कहती है -

'त्वमपि स्वभावेनैव तस्मिन्नवसरेऽसंगीतकं नर्तितासि।'[11]

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि मालती माधव में प्रणय-चित्रण अत्यन्त हृदयाकर्शक है। भवभूति के प्रणय का आधार नायक-नायिका के गुण हैं। बाह्य सौन्दर्य की अपेक्षा अन्त: सौन्दर्य को प्रणय का आधार बनाया है, जो कि उचित भी है। मालती अनुपम सुन्दरी तो है ही शालीनता, वात्सल्य, सहनशीलता, स्वाभिमान एवं लज्जाशीलता आदि महनीय गुणों से भी मण्डित है। गुणों पर आधारित प्रणय विवाह से पल्लवित एवं पुष्पित होता हुआ जीवनपर्यन्त उत्तरोत्तर विकसित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भवभूति-मालती माधव, 1/30
2. वही, 2/2
3. वही, 1/31
4. वही, 6/19
5. वही, 9/13, 16
6. वही, 9/18
7. वही, 9/42
8. वही, 3/12
9. वही, 1/22
10. वही, 8/5
11. वही, 2/पृष्ठ 91

****

Constraints in Adoption of the Improved Cultivation Practices of Mungbean Crop in Pisagan Panchayat Samiti Blcok of Ajmer District

Dr. Govind Prakash Acharya*

Introduction - Mungbean is an important pulse crop of India. It is also in important Kharif pulse crop of Rajasthan and covers nearly 11.8 percentage of total mungbean area in India. Production and productivity of Mungbean in Ajmer District is very low in comparison to other pulse crops. Famrers are facing various problems in adoption of improved practices of mungbean cultivation. It was therefor felt necessary to find out the problems faced by the farmers in constraints in adoption of improved practices of mungbean production.

Mungbean is one of the important rainfed kharif crop of Rajasthan. It shared about 38.8 per cont of total pulse area of Rajasthan but contributes only 2.5 per cent of the Total production of the state. The productivity of mungbean is very low in comparison to other pulse crops in the state. The low yield shows that new technologies generated at Research Institutes and Agricultural Universities have not been integrated in the farming practices of the farmers in order to convert them into production accomplishment. Many constraints are responsible for low adoption of the technologies. Keeping this in view, a study was undertaken to find out the constraints in adoption of improved agricultural practices of mungbean crop.

Green gram is an excellent source of high quality protein with easy digestibility, consumed as whole grains, dal and sprouted in variety of ways. As value addition, splitand dehusked, fried in fat, fetch good value as snacks. After harvesting the pods, green plants are fed to the cattle. The husk of the seed also used as cattle feed.

The total area covered under moong in India was 30.41 lakh hectares with a total production of 14.24 lakh tonnes.

Top States in Green gram/Moong production

1. Rajasthan - 26%
2. Maharashtra - 12%
3. Odisha - 12%
4. Andhra Pradesh - 9%
5. Karnataka - 7%
6. Madhya Pradesh - 7%
7. Tamilnadu - 7%
8. Bihar - 5%
9. Gujarat - 4%
10. Uttar Pradesh - 3%
11. Jharkhand - 1%
12. Other States - 7%

The highest yield was recorded by the state of Punjab (838 kg/ha) followed by Jharkhand (680 kg/ha) and Tamil nadu (675 kg/ha). The National yield average was 468 kg/ha.

In 2010, global mungbean production was approximately 3.5 million metric tons. Mung beans (Vigna radiata) are primarily self-pollinating, but they can also experience some degree of cross-pollination through insect activity. The main types of crosses that mung beans can undergo are intraspecific crosses, meaning crosses between different individuals of the same species (Vigna radiata). These crosses can lead to genetic variation within mung bean populations.

Methodology : The present study was conducted in 4 villages of Pisagan Panchayat Samity block of Ajmer District of Rajasthan state. Among all the villages of selected panchayat samiti, 4 villages were selected randomly, 20 farmers were selected from each villages. Thus eighty farmers were selecvted for investigation. The data were collected with the help of structured interview schedule.

Results & Discussion : Table-1 indicated that non-availability of high yielding varieties at proper time was the main constraint in adoption of high yielding varieties of mungbean crop (85%) Mundhva (1991) also pointed out non-availability of improved seed of the crop as the main constraint. The second constraint was lack of knowledge as reported by 60 percent farmers. The other constraints were high cost of seed (50%) and lack of money (20%).

Poor knowledge was the main constraint (90%) followed by high cost of pesticides (61.25%), non-availability of pesticides (35%) and lack of money (21.25%) in adoption of seed treatment practice, In adoption of recommended seed rate, lack of knowledge was main constraint as reported by 56 percent A farmers, Mundhva (1991) found that farmers were lacking knowledge about correct use of recommended

*Lecturer (Agricultural-Extension) Govt. College, Uniara, Distt. Tonk (Raj.) INDIA

seed rate which led to decrease in yield. Another constraint was non-availability of seed. Lack of moisture was the main constraint as reported by 45 per cent farmers followed by lack of knowledge (37.5%) and lack of sowing implements (25%) in the adoption of timely sowing activity of mungbean crop. **Table 1**

Regarding less use of chemical fertilizer, ack of assured irrigation was the most important constraint as reported by 92.50 per cent farmers. High cost of fertilizer (70%) was the second constraint (70%). Similar finding was also reported by Kunnal et al. (1984). The other constraints perceived by the farmers were no credit facilities (30%), non-availability of fertilizer in time (15%) and lack of money (12.5%). In the use of plant protection chemical, lack of knowledge (85%) and high cost of plant protection chemical (65%) were the first and second constraints. These findings are in agreement with those of Mundhva and Patel, 1991. The third constraint was non-availability of plant protection chemicals (50%) followed by high cost of plant protection equipment (45%) no credit facilities (20%) and lack of money.

Conclusion : Based on these results, it can be concluded that non-availability of high yielding varieties at proper time, lack of knowledge, lack of assured irrigation, high cost of input and lack of credit facilities were the major constraints in adoption of improved practices of mungbean crop. The study suggest that there is need of educating the farmers about improved practices. The supply of required input to the farmers on reasonable cost at proper time needs to be insured to boost up the production of the mungbean crop in Rajasthan.

References:-

1. Kher, S.K. (1991). "Constraints in adoption of improved technology in rainfed Maize Ind. J. Extn. Edu. 27 (102): 121-123,
2. Kunnal, L.B., Itnal, C.J. and Krishnaswami, M.K. (1984). "Adoption of new technology in dryland sorghum crop production". Ind. J. Extn. Edu. 20 (3 & 4): 60-62.
3. Mundhva, A.B. and Patel, H.L. (1991). "Constraints in adoption of rainfed wheat technology in Bahal area of Gujarat State". Maha. J. Extn. Edu. 10 (1): 23-29.
4. Chaturvedi, D. (1970) " A study on knowledge and adoption of improved practices of cauliflower among farmers of udaipur district (Raj.) M.Sc. (Ag.) thesis, RAU, Bikaner.

Table - 1 : Constraints in adoption of improved agricultural practices of mungbean crop :

S.	Particulars	No. of Farmers (N=80)	Percentage
1	**High Yielding Varieties**		
	i. Non-availibility of high yielding varieties of proper time	68	85.00
	ii. Lack of knowledge	48	60.00
	iii. High cost of seed	40	50.00
	iv. Lack of Money	16	20.00
2	**Seed Treatment**		
	i. Lack of knowledge	72	90.00
	ii. High cost of pesticides	49	61.25
	iii. Non-availibility of pesticide	28	35.00
	iv. lack of money	17	21.25
3.	**Seed Rate**		
	i. Lack of knowledge	45	56.00
	ii. Non-availibility of seed	24	30.00
4.	**Time of sowing :**		
	i. Lack of moisture	36	45.00
	ii. Lack of knowledge	30	37.50
	iii. Lack of sowing instruments	20	25.00
5.	**Chemical Fertilizer**		
	i. Lack of assured irrigation	74	92.50
	ii. High cost of fertilizer	56	70.00
	iii. Lack of knowledge	48	60.00
	iv. No credit facilities	24	30.00
	v. Non-availibility of fertilizer in time	12	30.00
	vi. Lack of money	10	12.50
6.	**Plant Protection measures**		
	i. Lack of knowledge	68	85.00
	ii. High cost of P.P. chemicals	52	65.00
	iii. Non-availibility of P.P. Chemicals	50	50.00
	iv. High cost of P.P. equipment	36	45.00
	v. No credit facilities	16	20.00
	vi. Lack of money	12	15.00

MONGODB : Role in Bigdata

Rajesh Soni*

Abstract - Amount of data is increasing day by day. Big data i.e. huge data from various sources cannot be managed by traditional tools. This paper attempt to study the use of MongoDB in bigdata.
Keywords: Bigdata, MongoDB, Map reduce, document.

Introduction - Big data refers to data sets that are too large to be dealt with by traditional application software. Data with many entries may differ in the size offer greater statistical power. Though used sometimes loosely partly due to a lack of formal definition, the best interpretation is that it is a large body of information that cannot be comprehended when used in small amounts only.

In this context the need for new type of technology is required. Data are collected in various format such as text, audio, video, image etc. These data are not in structured form such as in RDBMS .

MongoDB develop by MongoDB Inc 2009 . MongoDB is a source-available, cross-platform, document-oriented database program. Classified as a NoSQL database product, MongoDB utilizes JSON-like documents with optional schemas.Document oriented database approach open the new dimension and play the vital role in BigData.[2]

Features of MongoDB : MongoDB is an open-source document database and leading NoSQL database. MongoDB is written in C++. MongoDB is a cross-platform, document oriented database. MongoDB use one to many relationship[3]

Terminologies:

Collection - Collection is a group of MongoDB documents. It is the equivalent of a RDBMS table. Collections do not enforce a schema. Documents within a collection can have different fields. Typically, all documents in a collection are of similar or related purpose.

Document - A document is a set of key- value pairs. Documents have dynamic schema. Dynamic schema means that documents in the same collection do not need to have the same set of fields or structure

High Performance – MongoDB provides high performance data persistence. In particular, it supports for embedded data models reduces I/O activity on database system, indexes support faster queries and can include keys from embedded documents and arrays.

High Availability – MongoDb's replication facility, called replica set, provides automatic failover and data redundancy. A replica set is a group of MongoDB servers that maintain the same data set, providing redundancy and increasing data availability.

Horizontal Scalability – MongoDB provides horizontal scalability as part of its core functionality. Sharding distributes data across a cluster of machines.

MongoDB widely used in bigdata . its features support the bigdata technology effectively.

Table 1: Comparision of SQL and MongoDB

SQL	MongoDB
RDBMS	Document oriented database
Table	Collection
Row/Column	Bson
Group by	Aggregation

Table 2 : MongoDB major Releases [2]

Major Releases	Features
2009	Launch
Dec 2009	More indexex per collection Map/ reduce Store javascript function
Aug 2010	Replica set IPv6 support
March 2013	Geospatial support V8 javascript engine Hashed index

As bigdata maybe structured, semistructured, unstructured and data are collected from various sources. Huge amount of data in bigdata. Earlier data base technologies cannot handle the big data technology.

MongoDB play important role in big data. Mongodb easily implemented and integrated with bigdata. MongoDB very useful in real time application.

Limitation: MongoDB consume large amount of memory due to lack of join operation so in result duplication of data i.e. replication.

Conclusion: Every technology have pros and cons so MongoDB also have some disadvantage. Newer version of MongoDB will free from its cons. In todays word demantd

*Lecturer, B.N.P.G.Girls' College, Udaipur (Raj.) INDIA

of Mongodb increases as big data technology expanded .

References:-

1. https://www.thegeekstuff.com/2014/01/sql-vs-nosql-db/
2. https://en.wikipedia.org/wiki/MongoDB
3. https://www.mongodb.com/docs/manual/introduction/
4. R. Agrawal, J. Kiernan, R. Srikant, and Y. Xu. Hippocratic databases. In 28th International Conference on Very Large Data Bases (VLDB), 2002.
5. R. Cattell. Scalable SQL and NoSQL Data Stores. SIGMOD Rec., 39(4):12– 27, May,2011

****